इंगलैंड में स्थानीय प्रशासन

[LOCAL GOVERNMENT IN ENGLAND]

हरीशचन्द्र शर्मा एम० ए०

भारत मे स्थानीय प्रशासन, फ्रांस मे स्थानीय प्रशासन, इगलैण्ड
मे स्थानीय प्रशासन, भारत मे लोक प्रशासन, तुलनात्मक
लोक प्रशासन आदि पुस्तको के लेखक

एव

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की विचारभूमि, लोक प्रशासन के नये
क्षितिज आदि पुस्तकों के सहलेखक

राजनीतिशास्त्र विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

प्रकाशक :
कॉलेज बुक डिपो
त्रिपोलिया, जयपुर

प्रथम संस्करण 1968

मूल्य : Rs. 20.00

मुद्रक
कालेज प्रेस
जयपुर

विषय-सूची

OUR OTHER PUBLICATIONS

1. राजनीतिक विचारों का इतिहास (1966) Rs 16 00
(Political Thought from Plato to Burke)
By : Dr. Prabhu Dutt Sharma, M. A., Ph. D. (U. S. A.)
University of Rajasthan, Jaipur.

2 आधुनिक राजनीतिक विचारों का इतिहास (1967) 20 00
(Modern Political Thought)
(From Bentham to the Present Day)
By : Dr. Prabhu Dutt Sharma, M. A., Ph. D. (U. S A.)

3. तुलनात्मक राजनीतिक संस्थाएं (1966) 16 00
(Comparative Political Institutions)
By : Dr. Prabhu Dutt Sharma, M. A., Ph. D. (U. S. A.)

4 अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की विचारभूमि (1967) 20 00
(Theory of International Politics)
By · Dr Prabhu Dutt Sharma, M. A., Ph. D. (U. S. A.)
& H. C. Sharma, M. A.

5 लोक प्रशासन के नये क्षितिज (1967) 20 00
(Principles of Public Administration)
By : Dr. Prabhu Dutt Sharma, M. A., Ph. D. (U S A)
& H. C. Sharma, M. A

6 राजनीतिक निबन्ध (1966) 10.00
(Political Essays)
By : Dr. Prabhu Dutt Sharma, M. A., Ph. D (U S A)

7 भारत में लोक-प्रशासन (1966) 16·00
(Public Administration in India)
By : H. C. Sharma, M. A.

8. तुलनात्मक लोक प्रशासन (1967) 20 00
(Comparative Public Administration)
(With special reference to the Administration in U. K., U S. A., France and U S S. R.)
By : H. C. Sharma, M. A.

OUR OTHER PUBLICATIONS

9 भारत में स्थानीय प्रशासन (1968) 20.00
(Local Govt. in India)
By : Prof Harish Chandra Sharma

10 इंगलैन्ड में स्थानीय प्रशासन (1968) 20 00
(Local Govt in England)
By : Prof H C. Sharma

11 फ्रांस में स्थानीय प्रशासन (1968) 20.00
(Local Govt. in France)
By : Prof H. C. Sharma

12. अमेरिका में स्थानीय प्रशासन (1968) 20.00
(Local Govt. in America)
By : Prof. H C. Sharma

13 अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (प्रथम भाग) 16.00
(International Relations from 1919 upto 1945)

14. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (द्वितीय भाग) 16.00
(International Relations from 1945 upto Present day)

15. विश्व के प्रमुख संविधान (1968) 16.00
(*A Comparative Study of U. S. A., U. S. S. R., U K, Switzerland, Japan and France*)

१

ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सरकार का विकास

[THE DEVELOPMENT OF LOCAL GOVERNMENT IN GREAT BRITAIN]

ग्रेट ब्रिटेन मे सरकार का रूप एकात्मक है। वहा सत्ता को विभिन्न इकाइयो मे विकेन्द्रित करके उनको स्वतन्त्र एव स्वायत्त सत्ता के अधीन सेवाओ का सचालन करने की व्यवस्था नही की गई है। समस्त कार्यपालिका शक्तिया केन्द्रीय सरकार के हाथ मे रहती है और वही प्रशासन के लिए अतिम रूप से उत्तरदायी है। किन्तु इसका अर्थ यह नही कि ग्रेट ब्रिटेन मे स्थानीय सरकार का कोई महत्व ही नही है, बल्कि एक प्रजातन्त्रात्मक देश मे इन सस्थाओ का अस्तित्व अनिवार्य रूप से रहता है और ये स्थानीय जीवन की मूलभूत दैनिक आवश्यकताओ का निर्वाह करने मे महत्वपूर्ण रूप से योगदान करती है। यह कहा जाता है कि स्थानीय स्वायत्त सरकार के निकायों के बिना कोई भी प्रजातन्त्रात्मक सरकार सफल नही हो सकती। जिस प्रकार से एक बड़े स्तर के व्यापार के लिए राष्ट्रीय स्तर पर एक केन्द्रीय इकाई होती है जो कि सम्पूर्ण देश से सम्बन्धित व्यापारिक समस्याओ पर विचार करती है और देश के विभिन्न भागो मे उसकी विभिन्न शाखाए होती हैं जिनके माध्यम से वह अपनी आज्ञाओ को क्रियान्वित करती है। यही स्थिति प्रशासन के क्षेत्र मे भी रहती है। केन्द्रीय सरकार अपने प्रशासनिक उत्तरदायित्वो का पालन करने के लिए स्थानीय शाखाओ की सहायता लेती है। स्थानीय शाखाओ का रूप एव सगठन प्रत्येक देश की विशेष परिस्थितियो, मूल्यो, राजनैतिक अवस्थाओ, आर्थिक स्थितियो एव जनता के चरित्र आदि बातो से प्रभावित रहता है। किसी भी देश मे ज्यो-ज्यो प्रशासनिक स्थिति बदलती जाती है और राजनैतिक चुनौतियों का रूप परिवर्तित होता जाता है त्यो-त्यो स्थानीय सरकार के रूप में भी समायोजन की दृष्टि से आवश्यक परिवर्तन करने होते हैं और इस प्रकार उनके विकास की गति समय के साथ-साथ आगे बढ़ती जाती है।

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार को भी विकास की विभिन्न श्रेणियों में होकर गुजरना पड़ा है। वहा के राजनैतिक जीवन में जो उथल-पुथल हुई और जिस प्रकार निरंकुश राजाशाही ने संवैधानिक राजतन्त्र का रूप धारण किया और देश में रक्तहीन क्रांतियां हुई, उसी प्रकार वहा स्थानीय सरकार के रूप में भी वांछित परिवर्तन किए गए। यदि हम ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के वर्तमान रूप का अध्ययन करना चाहे तो उसके ऐतिहासिक विकास पर एक दृष्टि डालनी होगी। मि० जॉन जे० क्लार्क (John J Clarke) के कथनानुसार किसी भी मानवीय संस्था को उस समय तक नहीं समझा जा सकता जब तक कि उसके ऐतिहासिक संघो का अध्ययन न किया जाए। भविष्य की प्रगति की रेखाओं पर विचार करते समय अतीत के विकास के भण्डार को ध्यान में रखना होता है।* कुछ-कुछ यही बात दूसरे शब्दों में मि० एल० गोल्डिंग (L Golding) ने कही है। उनके शब्दों में स्थानीय सरकार की वर्तमान व्यवस्था का अध्ययन प्रारम्भिक काल से ही स्थानीय सरकार के विकास के ज्ञान द्वारा सुगम बना दिया जाता है।† स्थानीय सरकार के स्वरूप एवं अर्थ भी समय-समय पर बदलते रहते हैं। केन्द्रीय सरकार एवं स्थानीय निकाय दोनों के कार्यों के बीच पर्याप्त असमानताएं वर्तमान है। स्थानीय निकाय मुख्य रूप से जन-व्यवस्था की रक्षा, गरीबी को मिटाना, आवश्यकतानुसार सड़कों की रचना करना तथा जन सफाई का कार्य आदि से सम्बन्धित रहती है। जनसंख्या बढ़ जाने से तथा वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास हो जाने के कारण जो परिवर्तन आए हैं तथा औद्योगीकरण ने जिन नवीन चुनौतियों को हमारे सामने रखा है उन सब के फलस्वरूप ग्रेट ब्रिटेन का सामाजिक परिवेश अत्यन्त जटिल हो गया और इसके परिणामस्वरूप नई एवं परिवर्तित सेवाएं आवश्यक समझी जाने लगी। साथ ही उन्हें सम्पन्न करने की नई तकनीकों का विकास किया गया। स्थानीय क्षेत्र में जो कुछ भी विकास हुए वे सब आवश्यक रूप से स्थानीय सरकार के विषय नहीं थे, उदाहरण के लिए बड़े अस्पतालों की स्थानीय क्षेत्र में जड़ें गहरी होती है तथा वे वहा के जीवन का अभिन्न भाग होते हैं। किन्तु स्थानीय सत्ता द्वारा न तो उनके धन का प्रबन्ध किया जाता है और

---

*"No human institution is intelligible apart from its historical associations, and consideration of the lines of future progress demands that stock should be taken of past developments."

—*John J. Clarke*, The Local Government of the United Kingdom, Sir Isaac Pitman & Sons Ltd., 1955, P. 30.

†"A study of the present system of the Local Government is greatly facilitated by a knowledge of the development of the Local Government from earliest times."

—*G. Golding*, Local Government, English University's Press, London, 1955, P. 9.

न ही उन्हे प्रशासित किया जाता है । इसी प्रकार से डाकघर आदि संस्थाए भी स्थानीय जनता की पर्याप्त सेवा करती हैं किन्तु इन पर केन्द्रीय सरकार का प्रत्यक्ष नियन्त्रण रहता है ।

ग्रेट ब्रिटेन मे स्थानीय स्तर पर आज जो संस्थाएं दिखाई देती हैं उनमे से कई एक तो वर्तमान समय की उपज हैं । उनका संविधान, शक्तियां एवं कर्त्तव्य आदि की व्यवस्था वर्तमान कानूनो द्वारा की गई है। किन्तु फिर भी स्थानीय सरकार का वर्तमान ढांचा बहुत कुछ प्रशासन के उन्हीं क्षेत्रो पर निर्भर है जो कि सेक्सन या नार्मन समयों मे वर्तमान थे । आज ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार का जो रूप हमारे सामने है वह किसी भी एक निर्णय या एक कार्य का परिणाम नही है और न ही उसका किसी तार्किक या घटनाओ की सामजस्यपूर्ण शृंखला द्वारा निर्माण किया गया है । नए समय की आवश्यकताओ के प्रभाव ने और अनुभवो से प्राप्त शिक्षाओ ने इसके विकास मे एक महत्वपूर्ण भाग लिया है । यदि हम स्थानीय सरकार के विकास पर एक विहंगम दृष्टि डाले तो पाएगे कि ज्योंही यहा के समाज ने सामन्तशाही से एक व्यापारिक राज्य के रूप मे परिवर्तन किया और चर्च तथा लार्ड की छत्रछाया मे काउन्टी पर आधारित सगठनो की इकाइया विकसित हुई, त्योंही स्थानीय सरकार के इतिहास का प्रारम्भ हो गया । प्रारम्भ मे रचित स्थानीय निकाय केन्द्रीय सरकार के व्यापक नियन्त्रण के विषय थे । कुछ स्थानीय संस्थाओ को उनकी अपनी शक्तियां भी एक सीमा तक प्राप्त थी । उन संस्थाओ मे मुख्य रूप से काउन्टी न्यायालय थे जहा कि लोग न्यायिक एवं प्रशासनिक उद्देश्य से मिला करते थे । उनके अतिरिक्त हन्डरेड तथा बारो न्यायालय और कस्बो मे व्यापार एवं कलाओ को नियमित करने वाले गिल्ड व्यापारी भी थे । इन सभी को आंशिक रूप से थोडी-बहुत शक्तियां प्राप्त थी । उन सभी संस्थाओ ने ऐसे समय मे स्थानीय आवश्यकताओ को पूर्ण करने की व्यवस्था की जब कि उनके बीच परस्पर पर्याप्त दूरी थी और वहा व्यवस्था बनाए रखने, न्याय का प्रशासन करने तथा सामाजिक दायित्वों को निभाने की पर्याप्त व्यवस्था नहीं थी । उस स्थिति मे इन स्थानीय निकायो को पर्याप्त महत्वपूर्ण समझा जाता था । ग्रेट ब्रिटेन मे स्थानीय सरकार की संस्थाओ के ऐतिहासिक विकास को कई भागो मे विभाजित करके देखा जा सकता है । अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से हम इसे प्राचीन काल, नार्मन काल मध्ययुग, अठारहवी शताब्दी का युग, औद्योगिक क्रान्ति के प्रभाव का युग, उन्नीसवी शताब्दी की स्थानीय सरकार, बीसवी शताब्दी मे स्थानीय सरकार आदि भागों मे विभाजित कर सकते हैं ।

प्राचीन काल

ग्रेट ब्रिटेन का इतिहास किसी ऐसे देश का इतिहास नही है, जहा के लोगो ने अपना जीवन समुद्री डाकुओ एवं लडाई करने वाले लोगों के रूप मे प्रारम्भ किया हो; किन्तु ये लोग जब इस द्वीप पर आये तो एक सामान्य स्वभाव मे एकीकृत होने के लिए तैयार थे । ये चरित्र एवं एकता की दृष्टि से भी काफी आगे बढ़े हुए थे । इस देश मे विभिन्न जातियो ने अपना जीवन प्रारम्भ किया और आपस मे मिल कर के इस तरह से रहने लगे

जिस प्रकार के एक देश कि नागरिकों को रहना चाहिए। प्रोफेसर स्टब्स (Stubbs) ने लिखा है कि ये लोग विश्वास की भावना से परिपूरित होते हैं और उनमें लालच इतना नही होता। जब एंग्लो-सेक्सन एवं ब्रिटिशवासियों के बीच संघर्ष समाप्त हो गया तो आक्रमणकारियों ने भूमि को जोतने के लिए बसना प्रारम्भ कर दिया। जब रोम वाले लोग चले गए तो ब्रिटेन एक ऐसा द्वीप रह गया जो कि जंगलों से, तूफानों से, और बाढ़ के प्रकोपों से भरा हुआ था। किन्तु यहा के लोगों ने धीरे-धीरे सड़कें बनाई, बगीचे बनाए और भवन खड़े कर लिये। जब यहा पर जीवन का प्रारम्भ करने वाले लोग आए थे तो उनके पास सिवाय साहस के कुछ भी नही था।

यह कहा जाता है कि ऐंग्ल्स सेक्सन्स तथा जूट लोगो ने अपने मूल-निवास स्थान मे जीवन को ग्राम्य समाज के रूप मे प्रारम्भ किया तथा उस समय प्रत्येक गाव का एक अपना न्यायाधीश या सैनिक नेता होता था। जब ब्रिटेन को विजय करने के लिए विभिन्न जातिया एक सामान्य नेता के अधीन एकीकृत हो गईं तो वहा राजाशाही का प्रारम्भ हो गया। इस प्रकार हैंगिस्ट (Hengist) के लड़के केण्ट (Kent) मे राजा हो गए, एला (Ella) के लड़के ससैक्स (Sussex) मे राजा बना दिए गए जब कि पश्चिमी सेक्सनो ने कैरडिक (Cerdic) को अपना राजा चुना। प्रारम्भ मे अंग्रेजी राज्य राजा के आधीन सैनिक मुखिया अथवा एल्डरमैन द्वारा प्रशासित होते थे। इनमे से प्रत्येक अधिकारी राजधानी के प्रशासन की सरकार के प्रति उत्तर-दायी होता था। राजा द्वारा रीव्स (Reebes) की नियुक्ति की जाती थी जो कि शाही सम्पत्ति की देखभाल करते थे और अपने जिले से बकाया को वसूल करते थे। बड़ी राजधानियो को धीरे-धीरे शायरो मे विभाजित कर दिया जाता था तथा प्रत्येक मे एक एल्डरमैन और एक शायर-रीवी (Shire-Reeve) होता था। क्षेत्र की सर्वोच्च-परिषद का नाम विटेनागमट (Witaugemot) या बुद्धिमान लोगो की परिषद (Council of the wise men) होता था। इस रीवी परिषद का पूर्वगामी माना जा सकता है। इस परिषद मे राजा, एल्डरमैन तथा राजा के कुछ शपथ गृहण किये हुए साथी होते थे जिन्हे गेसिथ्स (Gesiths) कहा जाता था। इसकी सभाएं आम सभाएं हुआ करती थी और सामान्य जनता को इस के निर्णयो पर स्वीकृति या अस्वीकृति देने का अधिकार था। राजाशाही निर्वाचित हुआ करती थी किन्तु विटन (Witan) द्वारा कभी भी ऐसे व्यक्ति को इस पद के लिए नामजद नहीं किया जाता था जो कि शाही परिवार का सदस्य न हो। स्थानीय सरकार की मुख्य समस्याओ पर शायर—मूट (Shire Moot) मे विचार किया जाता था जो कि कुछ-कुछ काउन्टी परिषद जैसी होती थी। इसकी बैठकें महीने मे एक बार होती थी जब कि जिले के एल्डरमैन तथा रीवी एक शायर के स्वतन्त्र व्यक्ति को बुलाते थे और उनकी सहायता से झगड़ों को सुलझाते थे। प्रत्येक (Freeman) को मत देने तथा अपने विचार प्रकट करने का अधिकार था। छोटे स्थानीय मामलों को फ्रीमैनो द्वारा गाव की सभाओं मे ही सुलझा लिया जाता था। गावो के ये मूट आज की जिला और पेरिश परिषदो से मिलते थे। प्रत्येक समाज के लिए एक

फ्रैंक प्लेज व्यवस्था (Frank Pledge System) भी होती थी जो कि एंग्लो-सेक्सन संविधान के अन्तर्गत दस व्यक्तियों की एक संस्था होती थी जिनके द्वारा शान्ति की रक्षा के लिए कार्य किया जाता था।

प्रारम्भ मे जहा एंग्लो-सेक्सन लोग रहे वह मुख्य रूप मे देहाती और कृषि से सम्बन्धित क्षेत्र था क्योंकि रोम वालो ने जो कस्बे बनाए थे उनको नष्ट किया जा चुका था और उनके अवशेष भी समाप्त हो गए थे, किन्तु ज्यो-ज्यो जन-संख्या बढती गई और कारीगरी का विकास होता गया त्यो त्यो कस्बो को केन्द्रीय महत्व प्राप्त होता गया। यहा के निवासी मुख्य रूप से औद्योगिक कार्यों मे प्रवृत हो गए, यद्यपि कुछ लोग अब भी पशु चराने एव खेती करने के कार्य मे संलग्न थे। इन कस्बो का स्थानीय प्रशासन टाउन मूट (Town Moot) द्वारा किया जाने लगा। बड़े कस्बो मे जो मूट (Moot) कार्य करते थे वे बारो परिषद की तरह और जो छोटे कस्बो मे कार्य कर रहे थे उनको नगर जिला परिषद (Urban District Council) का पूर्वज माना जा सकता है। आस-पडोस के कई एक कस्बे मिल करके एक निकाय की रचना कर लेते थे जिसे हन्डरेड (Hundred) कहा जाता था। अन्य नागरिक संस्थाओ की भाति इस संस्था का जन्म भी एक सैनिक संगठन के रूप मे हुआ। इस संस्था का नामकरण यह क्यो हुआ–इसके बारे मे कहा जाता है कि सम्भवतः यह उस क्षेत्र के नाम से निकला होगा जिसमे कि एक सौ भू-भाग हो। उत्तरी काउन्टीज मे इसको एक वार्ड के स्काटिश नाम से पुकारा गया। उत्तर पूर्वी काउन्टीज मे इसे वापेनटेक (Wapentake) नाम से जाना गया। कई प्रदेशो मे प्रादेशिक प्रकृति या विभाजन का विशेष रूप से प्रयोग किया गया। यार्कशायर मे हमे रिचमण्ड-शायर रिपनशायर, हेलमशायर, आईजलैण्डशायर, नारहमशायर आदि देखने को मिलते हैं। इस बात का कोई ऐतिहासिक प्रमाण नही मिलता कि कस्बे से ऊपर के स्थानीय विभाजन को शायर ही कहते थे। स्थानीय सरकार के प्रारम्भिक इतिहास मे हन्डरेड का स्थान टाऊनशिप (Township) मे तुरन्त ऊपर था। इनमे से अनेक को न्यायिक प्रशासन, शान्ति एव सुरक्षा के लिए एक संघ मे गठित कर लिया जाता था। हन्डरेड के संविधान का निर्णय प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त के आधार पर किया जाता था। प्रत्येक टाउनशिप मे एक सौ मूट होते थे जिनका प्रतिनिधित्व इनके कस्बा-रीवी द्वारा किया जाता था तथा चार से लेकर दस तक कस्बे के व्यक्ति भी प्रतिनिधित्व करते थे। जब कभी टाउनशिपो के बीच कोई झगडा होता था तो उसे पंच फैसले के लिए हन्डरेड मूट मे रख दिया जाता था। अधिक खतरनाक अपराधो तथा जीवन मरण के मामलो से सम्बन्धित फैसला इसी के द्वारा किया जाता था। इसे हन्डरेड के लिए कानून बनाने का उतना ही अधिकार था जितना कि प्रत्येक पृथक गाव के सम्बन्ध मे गावो के मूट को हुआ करता था। इस प्रकार से एंग्लो-सेक्सन स्थानीय सरकार की व्यवस्था स्वतन्त्र एव प्रजातन्त्रात्मक थी। इस सम्बन्ध मे यह उल्लेखनीय है कि वर्तमान स्थानीय सरकार का रूप इस व्यवस्था से बहुत कुछ मिलता-जुलता सा है। यह व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि इसमे सुधार मुश्किल से ही किया जा सकता है। वर्त-

मान समय मे स्थानीय प्रशासन के पास कार्यपालिका न्यायिक कार्य नही हैं। यह एक अन्तर माना जा सकता है जो कि वर्तमान को अतीत से अलग करता है। आज यदि स्थानीय प्रशासन की आज्ञाओ या कानूनों का पालन नही किया जाता तो किस के लिए न्यायालय मे अपील करनी होती है। एंग्लो-सेक्सन समय मे यह प्रक्रिया अत्यन्त सरल थी।

नार्मन काल

जब विलियम नार्मन ने शासन सत्ता सम्भाली तो उसने ग्राम सभाओ [Folk Moots] को समाप्त कर दिया। उसने देखा कि शक्ति के स्थानीय केन्द्र बहुत प्रभावशाली है और इनके रहते हुए वह सत्ता का प्रयोग मनचाहे ढग से नही कर पाएगा। टाउनशिप केवल गाव बन कर रह गये और शायर-मूट के स्थान पर मेनर न्यायालय [Manor Court] स्थापित किए गए जहा कि सचालक द्वारा मेनर लार्ड के प्रतिनिधि के रूप मे कार्य किया गया। इन न्यायालय के निर्णयो को बेलिफ [Bailiff] द्वारा क्रियान्वित किया जाता था। कभी-कभी बेलिफ की सख्या एक से अधिक भी हुआ करती थी और ऐसी स्थिति मे एक प्रमुख [Major] बेलिफ होता था जिसे केवल मेजर भी कह दिया जाता था। मेजर से ही बाद मे मेयर [Mayor] शब्द की उत्पत्ति हुई है। हन्डरेड न्यायालयो को समाप्त नही किया गया किन्तु उन्हे नियमित रूप से मिलने के लिए निर्देशित किया गया। यदि इनमे सदस्य अनुपस्थित रहते थे तो उनको दण्डित किया जा सकता था। सन् १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने हन्डरेड न्यायालयो के स्थान पर जिला परिषद [District Council] की स्थापना की। ये न्यायालय बाद मे चल कर राजा के न्यायालय [King's Court] बन गए और वहा जो न्यायाधीश बैठते थे वे तथ्य की दृष्टि से नही तो कम से कम सैद्धान्तिक रूप मे क्राउन के सेवक बन गए। जितने भी स्थानीय अधिकार-क्षेत्र थे उन सभी का झुकाव केन्द्रीय शक्तियों की ओर हो गया।

सन् १३०० के बाद शेरिफ [Sheriff] के अधिकार एवं स्तर घट गए तो शान्ति के न्याय [Justice of the Peace] ने सत्ता गृहण कर ली। यद्यपि नार्मन काल मे सेक्सन काल की सभी नागरिक सस्थाओ को बदल दिया गया किन्तु धार्मिक सस्थाए प्राय. पूर्ववत: बनी रही। पेरिश का पादरी अपनी शिक्षा एवं विशेषाधिकार के द्वारा जनता के अधिकारों पर पर्याप्त शक्ति रखता था। वह अपने सभी पेरिशवालो को चर्च मे बुला सकता था जहा कि जमीनदार और किसान, स्त्री और पुरुष सभी समानता की दृष्टि से मिलते थे। यहा जनता की स्वतन्त्रताओं के बारे मे विचार-विमर्श किया जाता था और पादरी से यह आशा की जाती थी कि वह गरीबो का पक्षपाती बन कर उनके हितो का ध्यान रखेगा। चर्च की सभाओ मे इस प्रकार की बैठक करने का रिवाज एक सभा के प्रति उत्तरदायी था जिसे कि वेस्ट्री [Vestry] कहा जाता था।

चौदहवी शताब्दी मे आकर नए आर्थिक परिवर्तनों ने राष्ट्रीय सामाजिक जीवन को प्रभावित करना प्रारम्भ किया। इसके परिणाम-स्वरूप स्थानीय सरकार के प्रशासन मे भी भारी परिवर्तन हुए।

धीरे-धीरे सामन्तशाही व्यवस्था की जड़ें हिलने लगी। मेनोरियल व्यवस्था मे श्रमिक को सामन्तशाही मालिक की जमीन के साथ बाध दिया जाता था। वह मेनर को छोड नही सकता था और नही बिना स्वीकृति के अपने व्यवसाय को बदल सकता था। इसके बदले में मजदूर को सामान्य भूमि का एक भाग और एक झोपडी दी जाती थी। जब तक परिस्थितिया सामान्य बनी रही उस समय तक यह व्यवस्था भी चलती रही। किन्तु विदेशी शत्रुओ से रक्षा की आवश्यकता ने इस व्यवस्था को चुनौती दी। चौदहवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे जब इंगलैण्ड मे प्लेग फैला तो भारी सख्या मे उसमे मौतें हुई। मेनरो के पास मजदूर नही रहे, मजदूरो की बहुत कमी आ गई। माग और पूर्ति की शक्तियो ने मजदूरो को सौदेबाजी करने की शक्ति दी और वे अब अधिक रोजनदारी तथा अच्छी दशाओ के लिए एक जगह से दूसरी जगह जाने लगे। परिवर्तन के ज्वार को रोकने के लिए व्यवस्थापिका द्वारा प्रयास किए गये किन्तु सब असफल रहे। पुरानी परिस्थितियो को दुबारा से लादने के लिए मजदूरो के सम्बन्ध मे कई प्रकार के कानून बनाए गए। मजदूरो की मागो पर रोक लगाने के लिए भूस्वामियो ने कई एक कदम उठाये। जमीन पर खेती नही की जाने लगी और उसे भेड चराने के काम मे लाया जाने लगा। जो सामान्य भूमिया थी उन्हे भी इसी काम मे लिया गया; इसके परिणामस्वरूप ऊन का उत्पादन बढ गया। मजदूर लोग कस्बो की ओर भागने लगे जहा पर कि नए कारखाने खुल रहे थे। इस प्रकार एक कृषक क्रान्ति ने जन्म लिया। इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप राजपत्रित बारोज का विकास होने लगा। राजा द्वारा कस्बों को जो चार्टर दिये गये उनसे उसे पर्याप्त आर्थिक लाभ हुआ; किन्तु साथ ही बैरनो (Barons) की शक्ति बढने लगी। राजा को दिए जाने वाले भुगतानो के कारण भुगतान करने वाले को उन भुगतानो से स्वतन्त्र कर दिया गया जो कि सामन्तशाही व्यवस्था से सम्बन्धित थे। निगम निकाय को जो विशेषाधिकार मिले, उसने उनका दुरुपयोग किया और परिणामस्वरूप कुप्रशासन का जन्म हुआ। इसी से प्रभावित होकर सन् १८३५ के नगर निगम अधिनियम द्वारा सुधार करने की आवश्यकता महसूस की गई।

मध्य युग

नार्मन समय को प्रायः मध्य युग मे ही सम्मिलित किया जाता है। नार्मन काल मे शेरिफ की सत्ता इतनी बढ गई कि उसे प्रान्तीय वायसराय कहा जाने लगा। वह प्रायः एक काउन्टी का गृह-स्वामी होता था। वह राजा की जायदाद से होने वाली आय को इकट्ठा करता था। इसके अतिरिक्त अन्य बकाया एवं न्यायिक भुगतानो की भी उगाई करता था, साथ ही राजा के हितो का ध्यान रखता था। यद्यपि शेरिफ एक शाही अधिकारी था किन्तु कभी-कभी वह तानाशाही रूप मे व्यवहार करता था। इस प्रकार मध्य युग का इगलैण्ड मुख्य रूप मे कृषि प्रधान था, औद्योगिक कस्बे बहुत कम थे और जनसख्या विस्तृत रूप से फैली हुई थी। स्थानीय सरकार की दृष्टि से पूरे देश को कई काउन्टियो मे विभाजित किया जाता था, प्रत्येक काउन्टी का प्रशासन अब भी क्राउन द्वारा नियुक्त नगराधिप या शेरिफ द्वारा किया जाता

था। वह यद्यपि पूर्ण रूप से प्रान्तीय वायसराय नहीं था किन्तु वह सभी शायरों तथा फ्रीमैनों से बने काउन्टी न्यायालय की अध्यक्षता करता था। उसके कार्य आंशिक रूप से न्यायिक थे किन्तु वह मुख्यतः काउन्टी के लिए स्थानीय सत्ता थ।। उसके बाद में हन्डरेड होते थे। प्रत्येक हन्डरेड में एक हन्डरेड न्यायालय होता था जिसकी बैठकें प्रति माह होती थी। इसकी अध्यक्षता जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है वेलिफ द्वारा की जाती थी जिसको कि नगराधिपति नियुक्त करता था। हन्डरेड न्यायालय जमीन से सम्बन्धित झगड़ों को तय करते थे और वे प्रारम्भिक फौजदारी कानून व्यवस्था अर्थात् फ्रेन्क प्लेज को क्रियान्वित करने के लिए भी उत्तरदायी थे। फ्रेन्क प्लेज व्यवस्था के आधीन सभी व्यक्तियों को दस-दस की टोलियों में बांट दिया जाता था और प्रत्येक टोली के प्रत्येक व्यक्ति को एक दूसरे के साथ अच्छे व्यवहार के लिए पारस्परिक रूप से उत्तरदायी बनाया जाता था। नगराधिपति का यह एक कर्त्तव्य माना जाता था कि वह प्रत्येक हन्डरेड न्यायालय का वर्ष में दो बार निरीक्षण करे और यह देखे कि क्या दस व्यक्तियों वाले समूह (Tithing) बने हुए हैं, क्या वे पूर्णत. मजबूत है तथा यदि इसके किसी भी सदस्य ने कोई अपराध किया है तो क्या उसको उपयुक्त दण्ड दिया गया है। मध्ययुगीन स्थानीय सरकार के पदसोपान में सबसे छोटा क्षेत्र 'विल' (Vill) था। प्रत्येक विल क्षेत्र प्राय: मेनर के सहवृत होता था। जिन विलों को राजा द्वारा शाही चार्टर के आधार पर विशेषाधिकार प्रदान कर दिए जाते थे उन्हें बारो मान लिया जाता था। जब प्रत्येक बारो को एक संसदीय चुनाव क्षेत्र मान लिया गया और उसे कामन्स सभा के लिए एक सदस्य भेजने का अधिकार दिया गया तो यह प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गया कि अमुक कस्बा बारो है या नहीं है। मध्य युग के उत्तर काल में चार्टर बारो का सर्वेसर्वा बन गया। मध्य युग के समाप्त होते ही नगराधिपति की शक्तियां खतरे में पड़ गई। सन् ११९४ में काउन्टी न्यायालय द्वारा नगराधिपति की सत्ता को कम करने के लिए कोरोनरों (Coroners) को नियुक्त किया जाने लगा। शाही न्यायालय की न्याय के क्षेत्र में बढ़ी हुई शक्तियों ने स्थानीय न्यायालयों तथा प्रशासन के महत्व को कम कर दिया। चौदहवी शताब्दी को सामाजिक अव्यवस्था एवं नागरिक मुसीबतों का समय माना जाता है। इसके परिणामस्वरूप जो अनुशासनहीनता एवं कानून के अभाव की स्थिति पैदा हुई उसके कारण स्थानीय शान्ति के रक्षकों की नियुक्ति की जाने लगी।

एडवर्ड तृतीय के शासनकाल में विभिन्न काउन्टियों में शान्ति की स्थापना का कार्य इन शान्ति रक्षकों को सौंपा गया। ट्यूडर काल आते ही नगराधिप को स्थानीय सरकार के मुखिया पद से हटा दिया गया और यह पद शान्ति के न्यायाधीशों (Justices of the peace) को सौंप दिया गया। इन शान्ति के न्यायाधीशों को अनेक प्रकार के प्रशासकीय एवं न्यायिक कर्त्तव्य सौंप दिए गये। शान्ति के न्यायाधीशों की नियुक्ति क्राउन द्वारा एक विशेष काउन्टी के लिये की जाती थी और इनको प्रीवी परिषद द्वारा नियन्त्रित किया जाता था। कुछ बारोज को अपने न्यायाधीश नियुक्त करने का अधि-

कार मिला हुआ था। सामन्तशाही के समाप्त होने के कारण मेनोरियल न्यायालय भी शक्तिहीन बन गये और इनकी शक्तिया शान्ति के लिये न्यायाधीशो को सौंप दी गई। चौदहवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध के अन्तिम दिनो (१३४८–४९) मे प्लेग के कारण देश की आर्थिक व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई। ऐसी स्थिति मे शान्ति के न्यायाधीशो को ही यह कार्य सौंपा गया कि इस सकट के समय जो श्रमिक व्यवस्थापन किया गया है उसे क्रियान्वित करे। इसी प्रकार एलिजाबेथ प्रथम के शासनकाल मे जब गरीबो को सार्वजनिक कोष मे मुक्ति दिलाने की व्यवस्था का विकास किया गया तो सरकार ने नई नीति के प्रभावशाली प्रशासन के लिए शान्ति के न्यायाधीशो की ओर देखा। अठारहवी शताब्दी मे शान्ति के न्यायाधीश का कार्यालय और भी अधिक महत्वपूर्ण बन गया क्योकि उस समय स्थानीय न्याय काउन्टी का मूल आधार बन गया था। शान्ति के न्यायाधीश को मध्य युग से वर्तमान युग के सक्रमण काल का अधिकारी बताया जाता है। यह उस समय की विशेषता है जब कि सौलहवी शताब्दी के बाद पेरिश (Parish) ने स्थानीय सरकार की इकाई के रूप मे दुबारा स्थान ग्रहण कर लिया। ज्यो-ज्यो समय गुजरता गया शान्ति के न्यायाधीश कामन्स सभा के सदस्य बनते चले गये। इस निकाय द्वारा जो कार्य सम्पन्न किये जाते थे वे पेरिश के क्षेत्र के लिए अपर्याप्त समझे जाने लगे। इस के परिणामस्वरूप न्यायाधीशो ने कानून पास करके तथा पेरिश के कर्त्तव्यो को सम्पन्न न करने की अपनी असमर्थता को स्वीकार करके उन्होने अपने ही न्यायालय के एक भाग को नए एव अधिक विस्तृत कर्त्तव्यो का निर्वाह करने का दायित्व सौंप दिया। इस प्रकार उन्होने काउन्टी की सडको तथा पुलो की मरम्मत करने के लिए काउन्टी अधिकारियो की नियुक्ति की तथा एक प्रकार से काउन्टी सरकार (County Govt) की व्यवस्था को प्रारम्भ किया।

सत्रहवी एव अठारहवी शताब्दी के अधिकाश समय मे इगलैण्ड की स्थानीय सरकार बहुत कुछ सीमा तक दुखपूर्ण स्थिति मे रही। स्थानीय सरकार का मुख्य कार्य अभागो को राहत देना था और यह कार्य पेरिश पर छोडा गया। पूरे देश को लगभग १५००० पेरिशो मे विभाजित कर दिया गया जिसमे कि खेती करने वाली समाज की बिखरी हुई जनता रहती थी। प्रत्येक पेरिश मे प्राय चालीस से साठ परिवार तक रहते थे। इसके जो निवासी वेस्ट्री के सदस्य होते थे वे हर ईस्टर को बैठक करते थे। वेस्ट्री (Vestry) उस क्षेत्र के सभी निवासियो का प्रतिनिधि निकाय नही होता था पेरिश के अधिकारियो मे मुख्य रूप से चर्चवार्डन, कास्टेबल, सडको का सर्वेक्षणकर्त्ता और गरीबो पर दृष्टि रखने वाले होते थे। ये सभी अधिकारी अवैतनिक होते थे और ये सेवाए आवश्यक होती थी। इसलिए पेरिश के अधिकाश लोग चर्चवार्डन के पद को छोड कर अन्य पदो को ग्रहण करने मे हिचकिचाते थे। चर्चवार्डन के पद को थोडा सम्मान मिला हुआ था। पेरिश एव ऐसा क्षेत्र होता था जो कि चर्च के चारो ओर रहने वाली जनसख्या का केन्द्र होता था और इसीलिए दो, तीन या चार चर्चवार्डनों को धार्मिक एव नागरिक क्षेत्रो मे कुछ कार्य सौंपे जाते थे। इनको वेस्ट्री द्वारा प्रति वर्ष

निर्वाचित किया जाता था और इनका काम केवल चर्च की मरम्मत करना अथवा उसे सजाना या उसमें सीटो का ठीक तरह से रखना ही नही था वरन् यह गरीबो को राहत देने वाले पर्यवेक्षको के साथ भी मिलकर कार्य करते थे। पेरिश कास्टेबल की नियुक्ति न्यायाधीशों द्वारा की जाती थी तथा वह उनके निर्देशन मे रहकर कार्य करता था। वह पेरिश मे कानून और व्यवस्था की स्थापना के लिए उत्तरदायी होता था। पेरिश वेस्ट्री द्वारा न्यायाधीशों को कुछ व्यक्तियो की एक सूची प्रस्तुत की जाती थी जिसमे से न्यायाधीशो द्वारा सडको के सर्वेक्षणकर्त्ता छाटे जाते थे। कुछ अपवादो को छोड कर प्रत्येक पेरिशवासी को साल मे छः दिन सडको पर परिश्रम करना होता था। सडक सर्वेक्षणकर्त्ताओ का यह कर्त्तव्य होता था कि वे देखें कि क्या ऐसा श्रम प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किया गया है, जो नही करे उस पर जुर्माना किया जाना चाहिये। ये सभी अधिकारी स्थानीय न्यायाधीशों के घनिष्ट पर्यवेक्षण के आधीन कार्य करते हैं। यद्यपि इस सकठन मे प्रजातन्त्रात्मक स्थानीय सरकार का रग दिखाई देता है किन्तु वास्तविकता यह है कि पेरिश वेस्ट्रियो की शक्तिया अत्यन्त सीमित थी। मुख्य नियन्त्रण न्यायाधीशो के हाथ मे रहता था। न्यायाधीशो की नियुक्ति क्राउन द्वारा होती थी। वह अपनी खुशी से कभी भी इन्हे हटा सकता था। इन्हे प्रिवी परिषद द्वारा निर्देशित किया जाता था। असल मे वे केन्द्रीय सत्ता के साधन मात्र थे जिनके हाथ मे स्थानीय सरकार पर नियन्त्रण रखने की शक्तिया नही थी। गृह युद्ध के दौरान स्थानीय सरकार पर प्रिवी परिषद का शक्तिशाली केन्द्रीय नियन्त्रण बढ गया। जेम्स द्वितीय ने स्थानीय सरकार मे कुछ परिवर्तन किये जिनके परिणामस्वरूप बारोज पर केन्द्रीय नियन्त्रण बहुत बढ गया। किन्तु सन् १६८८ की क्रान्ति के बाद यह एक निश्चित सिद्धान्त बन गया कि केन्द्रीय सरकार स्थानीय सरकार के मामलों मे कम से कम हस्तक्षेप करेगी।

अठारहवी शताब्दी मे स्थानीय सरकार बहुत कुछ स्वायत्तशासी बन गई। न्यायाधीशो को उनके जिलो मे प्रशासन की पूरी शक्तिया प्रदान की गई। राजा के बैन्च के न्यायालय ने उन पर केवल नाममात्र का नियन्त्रण रखा। क्वार्टर सैशन अब भी एक मुख्य न्यायिक-निकाय था, किन्तु जनसख्या की वृद्धि के कारण, व व्यापार उद्योग एव यातायात बढने के कारण, प्रकाश, सडक पुल नालियो आदि की माग के कारण इसको प्रशासकीय कर्त्तव्य भी सौंपे गये। इन समस्याओ पर विचार करने के लिए न्यायिक प्रक्रिया को अपर्याप्त समझा गया। अतः यह प्रथा प्रारम्भ की गई कि क्वार्टर सेशन पहले तो न्यायिक कार्य करे और उसके बाद न्यायाधीश काउन्टी का कार्य करने के लिए आपस मे विचार-विमर्श करे। इस शताब्दी मे कुछ विशेष सेवाओ के लिए उन क्षेत्रो मे सामयिक सत्ताए बनायी जिनसे कि वर्तमान स्थानीय सरकार के क्षेत्र मेल नही खाते। ससद ने भी स्थानीय अधिनियमो द्वारा आयुक्तो के विभिन्न निकाय स्थापित किये जो कि आशिक रूप से करदाताओं एव न्यायाधीशों तथा नगरपालिका निगमो के अधिकारी प्रतिनिधियो द्वारा नियुक्त किये जाते थे। इनके द्वारा ऐसे विषयों पर विचार किया जाता था जैसे गलियों की सफाई, सडकें,

ये कर लेने की शक्ति भी रखते थे। ये जनसख्या के उन नये केन्द्रो के लिए उपयोगी थे जो कि समय के साथ-साथ उदित हो रहे थे और जिनका कोई नगर-पालिका सगठन या बॉरो स्तर नही था।

स्थानीय न्यायाधीशो के अठारहवी शताब्दी के विभिन्न प्रकार के कर्त्तव्यो को देखने के बाद इसमे कोई आश्चर्य नही होता कि उन्हे सर्वेसर्वा कहा जाता है। शान्ति के न्यायाधीश काउन्टी के लार्ड लेफ्टीनेन्ट द्वारा नामजद किये जाने पर लार्ड चान्सलर द्वारा नियुक्त किये जाते थे। उनके कर्त्तव्य प्रशासकीय, न्यायिक एव व्यवस्थापन सम्बन्धी भी थे। ये अवैतनिक कार्यकर्ता वर्ष मे चार बार त्रै-मासिक सत्रो पर मिलते थे। देहाती क्षेत्रो मे उल्लेखनीय न्यायाधीश क्लर्जीमैन होता था। न्यायाधीशो मे से कुछ लोग सजग प्रशासक होते थे किन्तु इनमे से अधिकाश सकीर्ण मस्तिष्क वाले अकार्यकुशल, कैथोलिक तथा ऐसे लोग होते थे जो कि कट्टर व अस्वीकारात्मक प्रकृति के होते थे। शहरी क्षेत्रो मे कुछ न्यायाधीश अकुशल एव भ्रष्टाचारी होते है तथा न्याय का व्यापार करके कमाते है।

जब मजदूरो को उनकी भूमि से वचित कर दिया गया और उनको असुविधाए देने के लिए विभिन्न व्यवस्थापन किये गये तो उनकी हालत काफी बदतर हो गई। उनके घर और भूमि छूट गये। केवल यही नही वरन् उनकी जीविका के साधन भी अनिश्चित हो गये। इनमे से अनेक ने अपने घरबार और गाव छोड़े तथा यहा से वहा पर्यटन किया। ऐसे लोगो के साथ मिलकर जरूरतमन्द और प्रभावित व्यक्तियो ने भी समस्या को बदतर बना दिया। जब हैनरी तृतीय के शासनकाल मे गोनास्ट्रियो को समाप्त कर दिया गया, उपयुक्त एव अनुपयुक्त सभी अभागे राष्ट्र के कधो पर भार बन गये। इस बुराई का फैलाने के लिए उत्तरदायी और भी अनेक कारण थे। खराब फसल एव मुद्रा के अवमूल्यन ने खाद्य वस्तुओ के मूल्यो को बहुत बढा दिया। ऐसी स्थिति मे गरीबो को राहत देने के लिए उठाये जाने वाले कदम महत्वपूर्ण बन गये। गरीबो के पर्यवेक्षको द्वारा मूल्यांकन किये गये। इस प्रकार जो कानून बनाये गये उन सबको मिलाया गया और गरीब-राहत अधिनियम १६०१ (Statute 43 Eliz, C 2—The Poor Relief Act, 1601) द्वारा सशक्त बनाया गया। अठारहवी शताब्दी के प्रारम्भ तक स्थानीय सरकार के विकास की गति अत्यन्त धीमी थी और वह मुख्य रूप से गरीबो को राहत देने से सम्बन्धित थे। उसके बाद उद्योगों मे एक आश्चर्यजनक परिवर्तन आया जिसे कि औद्योगिक क्रान्ति कहा जाता है। अठारहवी शताब्दी के अन्तिम तथा उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भिक दिनो मे फैक्ट्रियो का तीव्र गति से विकास हुआ और नये बडे कस्बे बनने लगे। औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप स्थानीय सरकार के कार्य बढ गये। इसके अतिरिक्त बीमारिया फैल जाने से, वैज्ञानिक ज्ञान का विकास हो जाने से, और राजनैतिक जीवन मे परिवर्तन हो जाने से भी स्थानीय सरकार के उत्तरदायित्वो मे परिवर्तन आये। कृषि प्रधान ग्रेट ब्रिटेन जब एक महान औद्योगिक शक्ति बना तो अनेक नयी समस्याए पैदा हो गई

जिनको सुलझाने के लिए अठारहवी शताब्दी की स्थानीय सरकार की व्यवस्था पूर्णत: अनुपयुक्त थी। जब अधिकाश जनसख्या यार्कशायर, लकाशायर तथा मिडलैण्ड आदि औद्योगिक नगरो एव नव-स्थापित फैक्ट्रियो के नगरो मे केन्द्रित होने लगी तो इससे अनेक गम्भीर प्रशासकीय कठिनाइया उत्पन्न हो गई। स्थानीय सरकार की जिस व्यवस्था को बिखरी हुई जनसख्या वाले देहाती क्षेत्रो के लिए सगठित किया गया था और जो अपना कार्य करने के लिए अवैतनिक पैरिश अधिकारियो पर निर्भर रहती थी वह घनीभूत औद्योगिक क्षेत्रो की समस्याओ को सुलझाने मे सफल नही हो सकी। अब उस पर अनेक नये उत्तरदायित्व आ गये, जैसे--अधिक मात्रा मे शरण देना, बीमारियो को रोकना तथा नदियो को बाधना, गन्दी बस्तियो को समाप्त करना, सगठित अत्याचारो को दबाना आदि। नये औद्योगिक क्षेत्रो मे स्थानीय सरकार के पतन को रोकने के लिए यह जरूरी हो गया कि अधिक से अधिक सामयिक निकाय बनाये जायें।

उन्नीसवीं शताब्दी—इस शताब्दी को ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के इतिहास मे सुधार की शताब्दी कहा जाता है। १८३२ के सुधार अधिनियम के बाद स्थानीय सरकार के क्षेत्र मे सुधारो की एक कडी को प्रारम्भ किया गया। १८३२ के सुधारो के परिणामस्वरूप ससदीय मताधिकार को बदल दिया गया और अनेक राजनैतिक बुराइयो का दूर कर दिया गया। इसके परिणामस्वरूप ग्रेट ब्रिटेन की सरकार धनिक लोगो के हाथ से निकलकर मध्यम वर्ग के हाथो मे चली गई। यह स्वाभाविक था कि सुधार अधिनियम के पास होते ही स्थानीय सरकार व्यवस्था को अधिक प्रजातन्त्रात्मक एव कुशल आधार पर विकसित करने की माग की जाती। स्थानीय सरकार के सुधारो को १८३४ के निर्धन भूमि सुधार अधिनियम (Poor Land Amendment Act) के द्वारा प्रभावित किया गया तथा बारोज को पुनर्गठित करने वाले नगरपालिका नियम द्वारा अधिनियम १८३५ ने भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्य किया। इन सब सुधारो को करते समय विह्‌ग (Whig) सरकार मि० बैन्थम द्वारा दिये गये दार्शनिक कार्यक्रम से प्रभावित थी। मि० बैन्थम का विचार था कि ऐतिहासिक परम्पराओ को पूरी तरह से भुला दिया जाय और स्थानीय सरकार के क्षेत्रो का नियोजन पूर्णत: व्यवहारिक उपयोगिता के आधार पर किया जाय। उसने स्थानीय निकायो के जनप्रिय चुनाव का समर्थन किया, किन्तु साथ ही इनकी क्रियाओ को केन्द्रीय विभागो द्वारा कठोरतापूर्वक नियन्त्रित, निर्देशित और निरीक्षित करने की भी बात कही। रोयल कमीशन की रिपोर्ट के बाद १८३४ का गरीब कानून सशोधन अधिनियम पास किया गया। गरीबो से सम्बन्धित कानून के सुधार करने की बात बहुत पहले से चल रही थी।

नैपोलियन के युद्धों ने देश के आर्थिक जीवन पर एक बड़ा भार डाला और इसके परिणामस्वरूप मूल्य बढ़े। १७६५ के बसत मे इन बढ़े हुए भावो के कारण देश के विभिन्न भागों में खाद्य सम्बन्धी आन्दोलन हुए। १७६५ के बाद काउन्टी के न्यायाधीशों के द्वारा कृषक मजदूरों की राजदारी मे एक निश्चित स्तर पर निर्धन सहायता को जोडना जरूरी हो गया। यह

सहायता रोटी के मूल्य और प्राप्तकर्त्ता के परिवार के आधार पर दी गई थी। १८३२ मे रोयल कमीशन को गरीब कानून के प्रशासन के सम्बन्ध मे जाच करने के लिये इस कारण नियुक्त किया गया क्योकि गरीब राहत के कार्यों पर खर्चा बढता जा रहा था। इस अधिनियम मे सुधार हो जाने के बाद पेरिस जो कि ऐलिजाबेथ प्रथम के शासन काल से ही गरीब कानून प्रशासन की इकाई थी, अब बदल दिया गया और उसके स्थान पर पेरिसों के सघ या समन्वय को रखा गया। इसको प्रशासित करने वाले निकाय सरक्षको का एक निर्वाचित मडल था जिसे कि अपना कार्य सम्पन्न करने के लिए सवैतनिक कार्य अधिकारी नियुक्त करने की शक्ति दी गई। अब तक स्थानीय सरकार के कार्यो का सचालन बहुत कुछ स्थानीय सस्था पर छोड दिया गया था किन्तु १८३४ के अधिनियम के द्वारा गरीब कानून आयुक्तो के रूप मे एक शक्तिशाली केन्द्रीय निकाय गठित किया गया। इसे सरक्षको के स्थानीय मडल पर नियत्रण की विस्तृत शक्तिया दी गई। यह आशा की गई थी कि प्रशासन के क्षेत्र को व्यापक बनाने से तथा केन्द्रीय नियन्त्रण का बढाने से गरीब कानून के प्रशासन मे पर्याप्त मितव्ययिता हो जायगी। यह लक्ष्य अगले कुछ वर्षो मे कुछ सीमा तक पूरा हुआ। १८३४ के अधिनियम के द्वारा यह व्यवस्था की गई कि इगलैण्ड और विल्स के प्रत्येक पेरिस या निर्धन कानून सघ मे एक सुयोग्य मेडीकल व्यक्ति नियुक्त किया जाय और सन् १८३६ मे जन्म, मृत्यु, शादी आदि को पजीकृत करने के बारे मे एक अधिनियम बनाया गया जिससे मृत्यु सख्या का साख्यकीय अध्ययन सम्भव हो गया।

जिस समय रोयल कमीशन निर्धन अधिनियम से सम्बन्धित जाच के बारे मे अपनी रिपोर्ट तैयार कर रहा था उसी समय बारोज के कार्यों की जाच करने के लिए एक अन्य रायल कमीशन नियुक्त किया गया। इन नगर पालिकाओ मे से अधिकाश नगरपालिकाए अब भी उन चार्टरो पर निर्भर थी जो कि हैनरी अष्टम और १६८८ की क्रान्ति के बीच म दिये गये थे। एक बारो को प्राप्त सामान्य विशेष अधिकारो मे मुख्य उल्लेखनीय यह थे कि वे कामन्स सभा को अपना प्रतिनिधि भेज सकते थे बाजार खोल सकते थे, व्यापारियो पर टाल (Toll) लगा सकते थे और वे स्वय के न्यायालय चला सकते थे। न्यायालय न्याय का प्रशासन सबसे अधिक मूल्यवान अधिकार क्षेत्र समझा जाता था क्योकि इसमे बारो के न्यायपालिका अधिकारी ही मामलों को तय कर सकते थे तथा न्यायालय से सम्बधित फीस या जुर्माना भी उन्ही को प्राप्त होता था। अधिकाश बारोज मे प्रशासकीय निकाय के सदस्यगण पूरे जीवन भर तक सेवा करते थे और उनके रिक्त स्थानों की पूर्ति सहवृत्ति द्वारा की जाती थी। बहुत कम बारोज को आधुनिक अर्थ मे प्रजातन्त्रात्मक नगरप निकाए कहा जा सकता था। उनके जो सदस्य होते थे वे धार्मिक एव राजनैतिक क्षेत्रो मे कट्टर पक्षपात रखते थे। नगरपालिकाओं के दान से सम्बन्धित प्रशासन मे भी पक्षपात दिखाया जाता था। बारो के धनिकतन्त्र का सम्बन्ध मुख्य रूप से न्याय के प्रशासन निगम की सम्पत्ति के प्रबन्ध आदि से था। स्थानीय सरकार के मुख्य कार्य उदाहरण के

लिए ये थे - गरीबो को राहत पहुंचाना, सडको की मरम्मत करना, जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करना आदि। ये सभी कार्य व्यक्तिगत पेरिसो के अवैतनिक पेरिस अधिकारियो द्वारा प्रयुक्त किये जाते थे जिन मे प्रायः कस्बे का विभाजित किया जाता था।

अठारहवी शताब्दी के मध्यकाल मे जिन बारोज की जनसख्या बढ रही थी वहा स्थानीय सरकार को कुछ अन्य महत्वपूर्ण कार्य भी सौंप दिये गये। अधिकाश नगरपालिकाए टोरी (Tory) थी और इसलिये ह्विग सरकार ने सुधार से सम्बन्धित विचार करने मे कोई समय नही लगाया। १८३३ मे नियुक्त रायल कमीशन मे उन्नीस बैरिस्टर थे। इनमें से अधिकाश की सहानुभूति विग्ह के प्रति थी। इन्होने पूरे देश का दौरा किया और सूचना एकत्रित की। नगरपालिकाओ से सम्बन्धित रायल कमीशन की रिपोर्ट मे यह कहा गया था कि इंगलैण्ड और वेल्स मे नगर निगमो के सविधान को निश्चित रूप से प्रमाणित करना कठिन होगा। यह निश्चित है कि इन सस्थाओ मे से अनेक की स्थापना व्यवहार मे कानून द्वारा निर्धारित होने से पहले ही हो चुकी थी। आयोग यह नही खोज पाया कि बारोज के चुनाव क्षेत्र बनाने मे किसी सामान्य सिद्धान्त को अपनाया गया है और न ही वह यह जान सका कि किसी भी काल मे पूरे क्षेत्र के अन्दर नीति की या सामान्य कानून अधिकार की एक ही व्यवस्था का प्रभुत्व रहा हो। नगरपालिका निगम अधिनियम १८३५ ने दो सौ छियालीस कस्बो मे से एक सौ अठहत्तर के लिये सरकार की एक जैसी व्यवस्था की स्थापना की। राजनैतिक बुराइयो को दूर किया गया, प्रशासकीय एव न्यायिक शक्तिया पृथक-पृथक की गई, व्यापार पर से एकाधिकार को हटाया गया, रेट देने वालो के मताधिकार को बढाया गया और बारो आडिट व्यवस्था को प्रारम्भ करके वित्तीय प्रशासन को पुनर्गठित किया गया। एक विशेष निरीक्षक समिति के आधीन बारो की पुलिस शक्ति को रखा गया। १८३५ के नगर निगम अधिनियम मे अनेक सुधार किये गये और अन्त मे इन सब को १८८२ के नगर निगम अधिनियम मे समूहीकृत कर दिया गया। १८३५ के अधिनियम ने तीन वर्ष के लिये पारषदो के निर्वाचन की व्यवस्था की। पारषदो के द्वारा ऐल्डरमैनो के निर्वाचन का भी प्रावधान रखा गया जिनकी सख्या पारषदो की सख्या का एक तिहाई थी। ऐल्डरमैन को छः वर्ष के लिए निर्वाचित किया जाता था। पहले बारो मे शान्ति के न्यायाधीशो का निर्वाचन नगरपालिका द्वारा किया जाता था, बाद में इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया। अधिनियम के अनुसार इनको क्राउन के द्वारा नियुक्त किया जाता था।

१८३५ के बाद स्थानीय सरकार के कार्यो का क्षेत्र बढ गया किन्तु अनेक नई समस्याए पैदा हो गई। नई सामयिक स्थानीय सत्ताए बनाई गई और इन्हे स्थित ढाँचे पर थोप दिया गया। इस काल मे स्थापित स्वास्थ्य के स्थानीय मण्डल, सडक मडल, स्कूल मडल तथा स्कूल उपस्थिति समिति आदि अनेक सामयिक सत्ताएं उत्पन्न हुई, उनके बीच क्षेत्रों एवं कार्यों की दृष्टि से अतिराव था। इन सत्ताओ की वित्तीय व्यवस्था बहुत कुछ

असमन्वित थी और इनमें से कोई भी सत्ता स्थानीय रुचि को आकर्षित करने मे पर्याप्त महत्वपूर्ण नहीं थी। १८८५ मे स्थानीय सरकार की बनावट के सम्बन्ध मे यह ठीक ही कहा गया था कि उसमें क्षेत्रों, मताधिकार सत्ताओं और रेट की उलझनें थी। सामयिक सत्ताओं द्वारा जो प्रशासकीय भ्रम पैदा किया गया था उसे मिटाने के लिये स्थाई स्थानीय सत्ताएं बनाई गई। १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने काउन्टी परिषद और काउन्टी बारो परिषदों की रचना की तथा १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने शहरी एवं देहाती जिला परिषदें, पेरिस परिषदें और पेरिस बैठकें स्थापित की। १९०२ के शिक्षा अधिनियम ने शिक्षा के उत्तरदायित्वों को स्कूल मण्डलों एवं स्कूल उपस्थिति समितियों से लेकर अन्य स्थानीय सत्ता को स्थानान्तरित कर दिया। १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने गरीब कानून संरक्षकों को समाप्त कर दिया और उनके कार्यों को काउन्टी परिषदों तथा काउन्टी बारो परिषदों को हस्तान्तरित कर दिया। काउन्टी सरकार के सुधार को उस समय पूरा माना गया जबकि बारोज का पुनर्गठन कर दिया गया।

सन् १८३० के बाद शान्ति के न्यायाधीशों को काउन्टी का प्रशासक बनाने के विरुद्ध प्रतिक्रिया होने लगी; और १८३१ तक न्यायाधीशों को अनेक महत्वपूर्ण अधिकारों से वंचित कर दिया गया। न्यायाधीशों की अलोकप्रियता का मुख्य कारण यह था कि काउन्टी सरकार के लिए प्रतिनिधित्वपूर्ण रूप का भारी समर्थन किया गया। न्यायाधीशों के स्थान पर एक निर्वाचित सत्ता को लाने का प्रथम प्रयास १८३६ मे किया गया किन्तु देहाती जनता की गरीबी एवं अशिक्षा के कारण यह प्रयास सफल न हो सका और वहां प्रजातन्त्रात्मक सरकार की स्थापना का कार्य अत्यन्त कठिन हो गया। फिर भी ट्रेड यूनियन वालों तथा सुधारवादी विचारकों के निरन्तर प्रयासों के परिणामस्वरूप यह भी स्पष्ट हो गया कि प्रतिनिधित्वपूर्ण मार्ग की ओर काउन्टी सरकार के सुधारों को अधिक दिन तक रोका नहीं जा सकता। १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने उन प्रशासकीय कार्यों को रेट देने वाले लोगों द्वारा चुनी गई काउन्टी परिषद को सौंप दिया गया जिनका प्रयोग पहले शांति के न्यायाधीशों द्वारा त्रैमासिक सत्रों में किया जाता था। पचास हजार से अधिक जनसंख्या वाले कस्बों को काउन्टी के नियंत्रण से बाहर कर दिया गया तथा उन्हें काउन्टी बारोज बना दिया गया। इनकी अपनी एक निर्वाचित परिषद होनी थी। इन काउन्टी बारोज ने अपने क्षेत्रों में समस्त स्थानीय सरकार-की सेवाओं का उत्तरदायित्व सम्भाल लिया।

स्थानीय सत्ताओं के संविधान एवं शक्तियों से सम्बन्धित सुधार—ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सत्ताओं के संविधान एवं शक्तियों के क्षेत्र में समय समय पर अनेक सुधार किये गये। इस दृष्टि से महत्वपूर्ण अधिनियमों में सर्वप्रथम उल्लेखनीय १८८२ का नगर निगम अधिनियम है। १८३५ के नगर निगम अधिनियम के बाद इस समय तक बयालीस अधिनियम और पास हो चुके थे। १८८२ के अधिनियम ने उन सभी को और अन्य सभी अधिनियमों को आंशिक रूप से संयुक्त कर लिया। इस अधिनियम द्वारा तत्कालीन

स्थिति मे अधिक परिवर्तन नही किया गया किन्तु फिर भी इसका मूल्य इस बात मे निहित है कि इसने सभी अधिनियमो को समूहीकृत कर दिया। १८२६ का अधिनियम केवल उन बारोज पर लागू होना था जो कि उस अधिनियम की 'ए' और 'बी' अनुसूचियो मे दिये गये थे। १८७६ मे उन बारोज को जाच करने के लिए एक रायल कमीशन नियुक्त किया गया, जिनका कि सुधार नही हुआ था। इस आयोग ने सौ से भी अधिक ऐसे कस्बो को खोजा जिन पर कि १८३५ का अधिनियम लागू नहीं होता था। इनमे से ७४ पर अधिनियम के प्रावधान लागू किये जा सकते थे और ३२ को बारोज के लिए उपयुक्त नही समझा गया। १८८२ के नगर निगम अधिनियम ने इन प्रस्तावो को क्रियान्वित किया और बारो सरकार की एक जैसी व्यवस्था की स्थापना की।

दूसरा उल्लेखनीय अधिनियम १८८८ का स्थानीय सरकार अधिनियम था। इस अधिनियम ने स्थानीय सरकार और बोर्ड के इतिहास मे एक नये युग का प्रारम्भ किया। इस अधिनियम के द्वारा शाति के न्यायाधीशो की प्रशासकीय सत्ता निर्वाचित निकायो को देने के अतिरिक्त और भी कई महत्वपूर्ण कार्य किये गये। इसने सरकारी कोष और स्थानीय सत्ताओ के बीच वित्तीय प्रबन्धो का पुनर्गठन किया। काउन्टी परिषदो को यह शक्ति दी गई कि वे अपने कार्यों को सम्पन्न करने की शक्ति को समितियो अथवा आन्तरिक स्थानीय सत्ताओ को हस्तान्तरित कर सकें। काउन्टी-कान्सटेबलों का नियन्त्रण काउन्टी परिषदो को नही सौपा गया। इसे एक स्थायी सयुक्त समिति के हाथो मे रखा गया जिसमे कि त्रै-मासिक सत्र द्वारा नियुक्त न्यायाधीश होते थे तथा काउन्टी परिषद द्वारा नियुक्त पारषद होते थे। दोनों की सख्या को बराबर रखा गया। राजधानी प्रदेशों पर लागू करते समय इस अधिनियम को सशोधित कर दिया गया। यह प्रावधान रखा गया कि लन्दन मे अलग से एक नगराधिप हो, एक शांति का आयोग हो, एक त्रै-मासिक सत्र न्यायालय हो और एक सैनिक समापति हो। वैस्ट्री तथा जिला बोर्डों को अप्रभावित छोड दिया गया और इन पर १८६६ के लदन सरकार अधिनियम मे विचार किया गया।

एक तीसरा महत्वपूर्ण अधिनियम १८६४ का स्थानीय सरकार अधिनियम था। इस अधिनियम का उद्देश्य उन प्रस्तावो को प्रभावपूर्ण बनाना था जो कि १८८८ के अधिनियम मे रखे गये थे। इसके द्वारा काउन्टी जिलो मे देहाती एव शहरी जिला परिषदो की स्थापना की गई। इस अधिनियम को किसानो का चार्टर भी कहा जाता है, क्योकि इसके द्वारा पेरिस मिटिंग एव परिषदो की व्यवस्था करके प्रजातन्त्रात्मक स्थानीय सरकार का प्रचार किया गया। देहाती पेरिसो में यह प्रावधान रखा गया कि प्रत्येक पेरिस मीटिंग बुला सके जो कि उस पेरिस के मतदाताओ की सभाएं होती थीं। अधिक जनसख्या वाले पेरिसों मे यह व्यवस्था की गई कि पेरिस परिषदो का निर्वाचन किया जाए और उन्हें पेरिस मीटिंगो की शक्तियां सौंपने के अतिरिक्त कुछ शक्तिया और दी जायं। स्थानीय सरकार के रूप एवं शक्तियों मे सुधार की दृष्टि से १८६६ का लदन सरकार अधिनियम भी महत्वपूर्ण है।

इस अधिनियम का उद्देश्य यह था कि अनेक वैरिट्यों एव जिला बोर्डों के स्थान पर कुछ स्थानीय सत्ताएं बनाई जाय जो कि स्थानीय सरकार के आधुनिक सिद्धान्तो के अनुरूप हो। लदन को अट्ठाईस राजधानी बारोज मे विभाजित किया गया। नयी बारो परिषदो का सविधान उन्हीं सिद्धान्तों पर आधारित था जिन पर कि प्रान्तीय बारो परिषद निर्भर थी किन्तु इनमें कुछ अन्तर था। एल्डरमैन की सख्या पारषदों की सख्या का छटा भाग कर दी गई। परिषद मे अधिक से अधिक दस एल्डरमैन और साठ पारषद हो सकते थे। पारषद मे से एक-तिहाई प्रतिवर्ष सेवा निवृत्त हो जाते थे। लदन, सूरे, केन्ट, एसक्स, मिडिल सैक्स आदि की काउन्टी परिषदों को लदन क्षेत्र मे किसी भी परिवर्तन को सुनने की शक्ति दी गई। क्षेत्र के अन्दर एव बीच मे आने वाले मदिरो को नगर के अन्तर्गत ही माना गया। १९०२ मे शिक्षा अधिनियम पास किया गया और स्कूल बोर्डों तथा स्कूल उपस्थिति समितियो को समाप्त कर दिया गया। १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने सरक्षको की बोर्ड को समाप्त कर दिया और इस प्रकार स्थानीय सरकार के सगठन का कार्य सम्पन्न किया गया।

लदन सरकार अधिनियम १९६३ के द्वारा लदन काउन्टी परिषद को अनेक कार्यों के लिए उत्तरदायी ठहराया गया जैसे शिक्षा, कल्याण, वित्तीय स्वास्थ्य, नियोजन, बच्चो की देखभाल, अग्नि रक्षा, गृह निर्माण, गदी बस्तियो की सफाई, बड़े पार्क, मुख्य नालियां और सार्वजनिक नियत्रण के अनेक कार्य आदि। राजधानी बारोज को जो उत्तरदायित्व सौंपे गये वे थे गृह निर्माण, जन-स्वास्थ्य, पुस्तकालय, मनोरजन, सड़कें एव सार्वजनिक कार्य, छोटे खुले मैदान आदि। इन्ही के द्वारा रेट (कर) लगाये जाते थे। ये अपने अधिमानो मे लदन काउन्टी परिषद की आवश्यकताओं का अनुमान लगा लेते थे। लदन क्षेत्र मे सामान्यत: लदन सरकार के इलाके मे आने वाली सेवाओं पर विशेष प्रबन्ध किये जाते थे। राजधानी की पुलिस शक्ति का उत्तरदायित्व गृह सचिव पर होता था और इसे क्राउन द्वारा नियुक्त आयुक्त द्वारा आन्तरिक रूप मे प्रशासित किया जाता था। लगभग पद्रह मील के घेरे पर तथा आठ मिलियन जनसख्या पर इसका अधिकार था।

इसके अतिरिक्त लदन सत्ता का बदरगाह (The Port of London Authorities), थेम्स की बोर्ड (The Thames Conservancy Board), लदन यातायात कार्यपालिका (London Transport Executive), राजधानी जल बोर्ड (The Metropolitan Water Board) आदि विभिन्न सत्ताए लदन के प्रशासन से सम्बन्धित कार्य करने लगी। लदन की स्थानीय सरकार साठ साल से भी अधिक समय तक अपरिवर्तनशील बनी रही। इस समय मे परिवर्तन एव प्रसार की प्रक्रिया जारी रही। जनसख्या बहुत बडी मात्रा मे अर्द्ध शहरी इलाको की ओर बसने लगी। सडक और रेल के यातायात ने इस प्रक्रिया को सहारा दिया किन्तु जब सडको पर खतरनाक रूप से भीड रहने लगी और रेलो के द्वारा बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा नही किया गया तो उद्देश्य पूरा न हो सका। जब राजधानी का प्रसार हो गया तो लदन काउन्टी परिषद का क्षेत्र अवास्तविक बन गया। बीसवी शताब्दी के

मध्य मे विशाल लदन क्षेत्र की स्थानीय सरकार का उत्तरदायित्व अनेक सत्ताओ को दिया गया। इनमे छ: काउन्टी, तीन काउन्टी बारो, अठाईस राजधानी क्षेत्र बारोज तथा अनेक गैर-काउन्टी बारो और शहरी जिले थे। एक रायल कमीशन ने इस व्यवस्था मे परिवर्तन के लिए अनेक सुझाव प्रस्तुत किये। इन सिफारिशो को बहुत कुछ स्वीकार कर लिया गया और १८६३ के लदन सरकार अधिनियम मे इन्हे मान लिया गया जिसके अनुसार विशाल लदन परिषद् की स्थापना की गई और ३२ बारोज बनाये गये। लदन नगर को पुनर्गठित नही किया गया किन्तु केवल नयी व्यवस्था मे सयुक्त कर लिया गया। एक सामान्य परिषद् लदन बारो के कार्यों का निर्वाह करती है। विशाल लदन की सामान्य आवश्यकताओ एव सेवाओ का उत्तरदायित्व विशाल लदन की परिषद् को सौंपा गया।

बीसवीं शताब्दी में स्थानीय सरकार—स्थानीय सत्ताओ से सम्बन्धित कानूनों को सरलीकृत करके उनकी बनावट मे पुनर्गठन किया गया। बीसवी शताब्दी मे स्थानीय सरकार से सम्बन्धित जो अधिनियम पारित किये गये उनका विवरण क्लार्क महोदय द्वारा दिया गया है। इनमे से मुख्य निम्न प्रकार हैं :—

शिक्षा अधिनियम (१९०२ से १९२१ तक)—सन् १९०२ मे मि० बाल्फर का शिक्षा अधिनियम पारित हुआ। इसने स्कूल बोर्डों एव स्कूल उपस्थिति समितियो को समाप्त कर दिया और शिक्षा के नियन्त्रण को नयी स्थानीय शिक्षा सेवाओ को हस्तान्तरित कर दिया गया। उच्च शिक्षा से सम्बन्धित सभी विषयो के लिए काउन्टी तथा काउन्टी बारो परिषदो को उत्तरदायी बनाया गया। प्राथमिक शिक्षा के लिए शहरी जिला परिषदें उत्तरदायी बनाई गई। कुछ मामलो मे काउन्टी तथा काउन्टी बारो परिषदो को सभी प्रकार की शिक्षा के लिए उत्तरदायी बनाया गया। स्थानीय शिक्षा सत्ता ने एक शिक्षा समिति नियुक्त करदी थी जो कि शिक्षा मण्डल द्वारा स्वीकृत प्रशासन के कार्यक्रम के अनुरूप होती थी। जो व्यक्ति परिषद् के सदस्य नही होते थे उनको भी समिति मे नियुक्त किया जा सकता था किन्तु समिति मे बहुमत परिषद् के सदस्यो का ही होता था। १९०२ से १९१४ तक शिक्षा सम्बन्धी विकास के क्षेत्र मे विशेष सेवाए सामने आयी। १९०६ मे स्थानीय शिक्षा सत्ताओ को यह शक्ति दी गई कि वे जरूरतमन्दो के लिए भोजन का प्रबन्ध कर सकें। १९०७ मे उन्हे विद्यार्थियो के स्वास्थ्य एव सुन्दर जीवन के लिये प्रयास करने की शक्ति भी दी गई। वे खेल के केन्द्र, स्कूल के स्नानगृह एव बगीचे, कैम्प, वजीफे देना आदि कार्यों से सम्बन्धित कर दिये गये। मेडीकल देखभाल का कर्तव्य भी उन पर डाल दिया गया। १९१० मे उन्हे व्यवसायिक निर्देशन देने का प्रबन्ध किया गया। मानसिक कमजोरी अधिनियम १९१३ के अन्तर्गत उन्हे यह शक्ति दीगई कि सात साल से ऊपर वाले छात्र मानसिक रूप से कमजोर हों उनकी सोलह वर्ष तक अलग प्रकार देखभाल की जाय। १९१९ के पुस्तकालय अधिनियम द्वारा यह प्रावधान रखा गया कि काउन्टी बारों के बाहर यदि अधिनियम को लागू किया जाये तो ऐसा काउन्टी की परिषदों द्वारा हो किया जा सकता है। १९२१ के

शिक्षा अधिनियम ने ससद के लगभग बाईस अधिनियमो को एकीकृत कर दिया।

स्थानीय सरकार अधिनियम, १६२६—इस अधिनियम का उद्देश्य स्थानीय सरकार की तत्कालीन व्यवस्था मे सुधार करना था। इसने सरक्षको के मडल को समाप्त कर दिया और उसके कार्यो को काउन्टियो की परिषदो तथा काउन्टी बारोज को सौप दिया। इसके अतिरिक्त निर्धन कानून सघो को भी मिटा दिया गया। इस प्रकार का प्रावधान रखा गया कि शिक्षा, मानसिक कमजोरी, अस्पताल, बालकल्याण आदि से सम्बन्धित निर्धन कानून को भविष्य मे हस्तान्तरित किया जा सके।

निर्धन कानून अधिनियम, १६३०—निर्धन कानून व्यवस्थापन को एकीकृत करने का कार्य १६२७ के निर्धन कानून अधिनियम द्वारा किया गया। १६२६ के अधिनियम द्वारा कई मौलिक परिवर्तन किये गये क्योकि १६२७ के अधिनियम ने कई बातो को अधूरा छोड दिया था और उन्हे एकीकृत किया जाना जरूरी था।

स्थानीय सरकार अधिनियम, १६३३—सन् १६३० मे स्वास्थ्य मत्री द्वारा स्थानीय सरकार और जन-स्वास्थ्य को एकीकृत करने वाली समिति नियुक्त की गई। इस समिति के प्रयासो के परिणामस्वरूप यह अधिनियम पास हुआ। यह समिति स्थानीय सरकार पर रायल कमीशन के अध्ययन के परिणामस्वरूप नियुक्त की गई थी। इस आयोग ने यह सिफारिश की थी कि एकीकरण का कार्य शीघ्र ही हाथ मे लिया जाय। यह अधिनियम सामान्यत: लदन पर लागू नही होता था।

जन-स्वास्थ्य अधिनियम, १६३६—यह अधिनियम स्थानीय सरकार और जन-स्वास्थ्य एकीकरण-समिति की दूसरी अन्तरिम रिपोर्ट के बाद पास किया गया। इस रिपोर्ट के साथ ही स्वास्थ्य मत्री ने जन-स्वास्थ्य विधेयक का प्रारूप भी जनवरी १६३६ मे ससद के सम्मुख प्रस्तुत किया।

गृह निर्माण अधिनियम, १६३६—इससे पूर्व गृह निर्माण के क्षेत्र मे पास किये गये अधिनियम १६२५ मे एकीकृत कर लिये गये थे और बचे हुए अधिनियमो को १६३६ मे एकीकृत कर लिया गया।

स्थानीय सरकार की सेवाओं का इतिहास
[The History of Local Government Services]

स्थानीय सरकार द्वारा व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से जो सेवाएं सम्पन्न की जाती हैं वे सामाजिक एव आर्थिक नीतियो पर आधारित रहती हैं। इनको स्पष्टत: समझने के लिए इनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझना जरूरी है। स्थानीय सरकार की जो सेवाए इस समय प्राप्त होती हैं उनमे से अधिकाशत: तुलनात्मक रूप से नयी हैं किन्तु कई एक उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक भाग मे पैदा हुई हैं। यह कहा जा सकता है कि वे पूर्णत: औद्योगिक क्रान्ति के परिणाम हैं। कुछ सेवाएं ऐसी भी हैं जैसे-बाजारो की व्यवस्था या जल वितरण का कार्य आदि जो कि मध्य युग से ही चली आ रही हैं, किन्तु औद्योगिक क्रान्ति के बाद अनेक नयी सेवाओ की आवश्यकता हुई ताकि इस यान्त्रिक युग मे रहन-सहन के नये तरीको के अनुसार इन

सेवाओं का होना जरूरी था। औद्योगिक युग के प्रारम्भिक समय में स्थानीय सत्ताओं की सेवाएं दो विरोधी मार्गों पर विकसित हुई। सर्वप्रथम एक औद्योगिक सभ्यता की कुछ अपनी आवश्यकताएं होती है जिनके अनुसार वह सरकारी सेवाओं की मांग करती है। उदाहरण के लिए प्रतियोगी व्यक्तिगत उद्यम उस समय तक कार्य नहीं कर सकते जब तक कि राज्य द्वारा जीवन और सम्पत्ति की सुरक्षा का प्रबन्ध न किया जाय।

इसके अतिरिक्त उत्पादन की गति को तेज करने के लिए प्रकाश, अच्छी गतियां आदि उपयुक्त दशाएं प्रदान करना भी जरूरी था। जब औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप बड़े आकार के शहर बनने लगे तो इन स्थानों पर सफाई सेवाओं की आवश्यकता अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गयी। गरीब हो चाहे धनवान, समाज के हर व्यक्ति का अस्तित्व स्थित रहने लगा कि उसे सफाई की सेवाएं पर्याप्त मात्रा में प्रदान की जा रही हैं या नहीं। नगरपालिका सेवाओं की स्थापना की एक दूसरी प्रेरणा उन सामाजिक बुराइयों की प्रतिक्रिया से प्राप्त हुई जो कि औद्योगिकरण के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई थी और व्यक्तिवादी आर्थिक सिद्धान्तों के फलस्वरूप जिनका प्रसार हुआ था। यह प्रतिक्रिया उन्नीसवीं शताब्दी तक बनी रही। इसके परिणामस्वरूप अनेक सामाजिक सेवाएं उत्पन्न हुई–इनमें से कुछ को राज्य के हाथों में सौंपा गया और कुछ को स्थानीय सत्ताओं को दिया गया। इस प्रकार की सेवाओं की स्थापना के लिए पहल प्राय: स्थानीय सत्ताओं द्वारा की गई और निर्धन कानून तथा स्थानीय व्यक्तिगत अधिनियमों के सहारे उन्होंने अनेक प्रयोग किये। संसद ने बाद में इस प्रयोग को मान्यता दी और इन सामाजिक प्रयासों को राष्ट्रीय स्तर प्रदान किया। आज ये सामाजिक सेवाएं विशुद्ध रूप से स्थानीय सरकार की ही विषय रही हैं।

व्यक्तिवादी विचारधारा के विरुद्ध जो प्रतिक्रिया हुई उसके परिणामस्वरूप स्थानीय सरकार की सेवाओं में एक नयी श्रेणी और जुड़ गई जिसे व्यापारिक सेवाएं कहा जा सकता है। इनमें जल-वितरण, गली-यातायात आदि को लिया जा सकता है। ये उद्यम चाहे व्यक्तिगत हाथों में रहें अथवा कम्पनी के हाथों में, ये आर्थिक उद्यम होते हैं, इनको सार्वजनिक उपयोगिता के उद्यम भी कहा जा सकता है। इस प्रकार की सेवाओं का इतिहास उस समय प्रारम्भ होता है जब कि औद्योगिक क्रान्ति वाले नये नगरों के लिए गैस तथा जल पहुंचाने का प्रबन्ध किया गया। व्यक्तिवादी आर्थिक विचारधारा से प्रभावित होने के कारण ये क्षेत्र व्यक्तिगत उद्योगों के लिए भी खुले छोड़ दिये गये। इसके परिणामस्वरूप एक ही गली में तीन या चार प्रतियोगी कम्पनियां बन जाती थीं। यह प्रक्रिया इतनी अपव्ययपूर्ण रही कि व्यक्तिवादी आर्थिक सिद्धान्त को इस क्षेत्र से वापस खींचना पड़ा। इस प्रकार की प्रतियोगिता होने पर सेवाओं के मूल्य लागत से थोड़े ही ज्यादा हो पाते थे। इस प्रतियोगिता का उस समय तक अन्त नहीं था जब तक कि अधिक सम्पत्ति वाली कम्पनी इस प्रकार एकाधिकार न करने। प्रतियोगिता के परिणामस्वरूप शीघ्र ही सहयोग हुआ और स्थानीय एकाधिकार हो गया। इन सेवाओं का अन्तिम पहलू यह था जब कि उपभोक्ताओं ने स्थानीय सत्ताओं के माध्यम

से संसद के एकाधिकार को विनियमित करने के लिए बाध्य किया। व्यक्तिगत अधिनियमों से उन्होंने कम्पनियों को खरीदने की शक्ति प्राप्त करली और उन्हें स्वयं ही संचालित किया। युद्धोत्तर राष्ट्रीयकरण की दिशा में किये जाने वाले प्रयासों में नगरपालिका का एवं कम्पनी के गैस तथा विद्युत उद्योगों को एकीकृत कर दिया गया और इन्हें राज्य के स्वामित्व एवं संचालन में ला दिया गया। इस समय स्थानीय व्यापार सेवाओं का क्षेत्र पहले की अपेक्षा संकीर्ण है।

स्थानीय सरकार की सेवाओं का विकास
[The Development of Local Government Services]

प्रारम्भ में स्थानीय सरकार को मुख्य रूप से नियमन कार्य शक्तियों एवं पुलिस अधिकार प्राप्त थे; किन्तु जब स्थानीय सरकार की इकाइयों में सुधार किया तो उनका कार्य क्षेत्र भी बदला। जब संशोधित नगरपालिका बारों का संगठन हुआ तो उसको प्रभावात्मक रूप से नवनिर्वाचित बारो परिषदों का मुख्य कार्य प्रशासन का सौंपा गया। ये निरीक्षकों की समिति द्वारा और नयी पुलिस सत्ता द्वारा इस कर्त्तव्य को पूरा कर सकते थे। यह कहा जाता है कि प्रारम्भ में स्थानीय सरकार के कार्य केवल पुलिस कार्य ही नहीं थे वरन् महारानी ऐलीजाबेथ के समय से ही चले आ रहे निर्धन कानून के अतर्गत जो सेवाएं सम्पन्न की जाती थी वे पुलिस सेवाएं नहीं थी। यह कहना यद्यपि कुछ सत्यता रखता है किन्तु असल में इन सेवाओं का प्रारम्भिक रूप भी सामाजिक सहायता या मानवता की भावना से प्रेरित होने की अपेक्षा अनुशासनात्मक अधिक था। बाद में नगरपालिका प्रशासन के क्षेत्र में किये गये विकासों ने इसे मानवीय बनाया।

स्थानीय सरकार की सेवाओं का प्रसार सर्वप्रथम उस समय प्रारम्भ हुआ जब कि कस्बे की सफाई के लिए मि० चाडविक और साइमन [Chadwick & Simon] के नेतृत्व में आन्दोलन छेड़ा गया। परिणामस्वरूप १८४८ का जन स्वास्थ्य अधिनियम पारित किया गया। १८६६ के सफाई प्रायोग ने इस विषय पर कानून बनाने के लिए ध्यान आकर्षित करने को कहा। अगले कुछ वर्षों में इस दिशा में अनेक प्रयास किये गये। १८७५, १८९०, १९०७, १९२५ और १९३६ में जनस्वास्थ्य से सम्बन्धित व्यवस्थापन किया गया। शहर की सफाई के लिए छेड़े गये आन्दोलन की भांति सार्वजनिक शिक्षा से सम्बन्धित आन्दोलन भी पर्याप्त प्रभावपूर्ण रहा। इस सेवा के लक्ष्य अनेक प्रकार के होते हैं; इनको प्रारम्भिक रूप से साम्प्रदायिक और सामाजिक सेवा कहा जा सकता है। प्रारम्भ में मजदूर वर्ग को स्वेच्छापूर्ण संस्थानों द्वारा शिक्षा प्रदान की जाती थी। स्वेच्छापूर्ण शिक्षा व्यवस्था की जड़ें पर्याप्त गहरी जम गई और कई शताब्दियों तक शिक्षण की नीति को दी जाने वाली सहायता के प्रसार से सम्बन्धित रखा गया। सन् १९०२ के शिक्षा अधिनियम ने यह बताया कि स्वेच्छापूर्ण स्कूलों को कुछ सहायता अवश्य दी जानी चाहिए। सन् १९४४ के शिक्षा अधिनियम द्वारा भी स्वेच्छापूर्ण शिक्षा व्यवस्था को बनाये रखा गया यद्यपि उसमें अनेक परिवर्तन कर दिये गये।

शिक्षा सेवाओं के अतिरिक्त सामाजिक चेतना एवं मजदूर वर्ग के दबावों ने भी सामाजिक सेवाओं को जन्म देने के लिए आन्दोलन चलाया। इसके परिणामस्वरूप वर्तमान शताब्दी में अनेक सेवायें पैदा हुईं। सन् १८९० में जब गृह-निर्माण अधिनियम पास किया गया तो गृह-निर्माण के क्षेत्र में सेवाओं का प्रारम्भ हुआ। प्रथम विश्व युद्ध के बाद कई एक कारणों से मजदूर के लिए घरों की समस्या मुख्य बन गई। इस सम्बन्ध में संसद द्वारा अनेक अधिनियम पास किये गये। वर्तमान शताब्दी में ही अनेक ऐसी मेडीकल सेवाओं का प्रारम्भ हुआ जिनका मूल उद्देश्य समाज की रक्षा करना नहीं था वरन् व्यक्ति का कल्याण करना था। छूत की बीमारियों पर नियन्त्रण के सम्बन्ध में १८७५ में अधिनियम बनाया गया और उसके बाद स्कूलों की मेडीकल सेवा गर्भवतियों एवं बालकों के कल्याण के लिए व्यवस्था आदि के सम्बन्ध में व्यवस्थापन किये गये। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में गैस, जल, विद्युत एवं गली-यातायात का नगरपालिकीकरण कर दिया गया। गैस और जल के क्षेत्रों में नगरपालिका सेवाएं व्यक्तिगत उद्यमों को समाप्त करने के बाद स्थापित हुईं। जल-वितरण का कार्य बहुत कुछ स्थानीय सत्ताओं के हाथ में आ गया।

नगरपालिका द्वारा नागरिकों को प्रदान की जाने वाली विभिन्न सेवाओं को मुख्य रूप से चार भागों में विभाजित किया जा सकता है। नगरपालिका सेवाओं के विकास के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि इनमें औद्योगिक क्रान्ति के बाद से सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक शक्तियों का प्रभाव प्रतिबिम्बित होता है। यही कारण है कि इन सभी को एकरूप नहीं माना जा सकता। एक सेवा के सम्बन्ध में व्यवस्थापिका ने जो ढंग अपनाया वह दूसरी सेवा के सम्बन्ध में अपनाये गये ढंग से भिन्न था। संसद ने स्थानीय सत्ताओं द्वारा इन सेवाओं के संचालन के लिए जो नियम बनाये वे भी एक जैसे नहीं थे। विभिन्न सेवाओं को जिन समूहों में बांटा जा सकता है वे हैं-सुरक्षात्मक सेवाएं, सामुदायिक सेवाएं, सामाजिक सेवाएं एवं व्यापारिक सेवाएं।

सुरक्षात्मक सेवाओं (Protective services) में पुलिस सेना तथा अग्निरक्षा सेवा को लिया जा सकता है। इनके अतिरिक्त इसमें वह विनियमन कार्य एवं निरीक्षणात्मक कार्य भी आता है जो कि इनके द्वारा सफाई, भवन विनियमन, खाद्य वितरण का नियन्त्रण, माप और तौल का निरीक्षण तथा ऐसे ही अन्य कार्यों से सम्बन्ध रखता है। पुलिस सेवाओं एवं अग्नि-रक्षक सेवाओं के लिए शर्तें राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित की जाती हैं किन्तु इन शर्तों को स्थानीय सत्ताओं द्वारा क्रियान्वित किया जाता है। इन दोनों सेवाओं के व्यय का एक भाग राज्य द्वारा विनिमय किया जाता है और दूसरे भाग के लिए स्थानीय सत्ताएं अपने राजस्व में से प्रबन्ध करती हैं। अन्य सुरक्षात्मक सेवाओं के संचालन का व्यय सामान्यतः स्थानीय सत्ताओं पर ही पड़ता है और वे इनका प्रशासन करने में पूरी तरह से स्वतन्त्र रहती हैं। इस सम्बन्ध में उन पर केन्द्रीय पर्यवेक्षण नहीं रहता। इसी प्रकार की सेवाएं सामुदायिक सेवाएं (Communial services) हैं। इनको सामुदायिक

सेवा इसलिए कहा जाता है क्योकि इन सेवाओ की सभी स्थानीय निवासियो को आवश्यकता रहती हैं। ये सेवाए उन सभी की सेवा करती है और सभी निवासियो द्वारा सामूहिक रूप से इनका भुगतान किया जाता है। राज्य द्वारा केवल कुछ सडको के सम्बन्ध मे अनुदान दिया जाता है। देहाती सफाई के सम्बन्ध म अनुदान दिया जाता है, इसके अतिरिक्त अन्य सभी सेवाए वहा के निवासियो द्वारा ही प्रबन्धित की जाती हैं। इन सेवाओ मे हम सार्वजनिक सफाई, सार्वजनिक प्रकाश, नालियो की व्यवस्था, गलियों और सडको की व्यवस्था आदि को ले सकते हैं। इन सेवाओ के स्थानीय जनता द्वारा प्रबन्ध का एक ऐतिहासिक कारण है। ये सेवाए शहरी जीवन की आवश्यक दशाओ को उत्पन्न करती हैं। ये प्रायः स्वेच्छापूर्ण सस्थाओ द्वारा प्रारम्भ की गई थी, बाद मे नगरपालिका क्षेत्र मे ज्यो ज्यों विकास हुए इन सेवाओ की स्वेच्छापूर्ण प्रकृति को बनाये रखा गया।

प्रारम्भ मे इन सेवाओ का प्रबन्ध करने के लिए प्रमुख व्यक्तियों की सस्थाए बनादी जाती थी। ये प्रमुख व्यक्ति नगर-प्रायुक्त बन जाते थे और दी जाने वाली किसी विशेष सेवा के लिए रेट (कर) लगाने की शक्ति रखते थे। रेट को इसलिए रखा जाता था क्योकि किए गये खर्चे को सही-सही आकना बडा कठिन होता है; क्योकि वह वास्तविक सम्पत्ति जिसका कि मूल्याकन किया जाता है और जिसके ऊपर रेट आधारित रहती है वह उप-भोक्ता द्वारा उपयुक्त की गई एव उसके द्वारा चुकाये गये मूल्य, दोनो मे अनुपात हो जाता है। ये सेवाए उन पडोसियो के लिए प्रदान नही की जाती थी जो इनका खर्चा सहन नही करते थे किन्तु उनके लिए प्रदान की जाती थी जो इनका भार वहन कर सकते थे। उस समय औद्योगिक क्रान्ति के नये कस्बो के अधिकाश निवासी अत्यन्त गरीब होते थे और वे इन आरामदायक सुविधाओं को सहन नही कर सकते थे। धीरे-धीरे इस प्रकार की सेवाओ को पूरे कस्बे मे सचालित करने की नीति बन गई। स्थानीय सरकार का ज्योही विकास हुआ उसने इन सेवाओं पर लगाये गये अनेक रेटस को एक ही सामान्य रेट मे समूहीकृत कर दिया। इन सेवाओं को सामुदायिक सेवाए इसलिए भी कहा जा सकता है क्योकि समाज द्वारा प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता के अनुसार उनकी सेवा की जा रही है और व्यक्ति बदले मे अपनी भुगतान करने की योग्यता के अनुसार भुगतान कर रहा है। एक बार स्थानीय अधिकार मे दे देने के बाद इन सेवाओ का उत्तरदायित्व स्थानीय संस्थाओ पर ही आ जाता है और वे ही इन्हे अपनी इच्छानुसार प्रदान करती हैं। इनकी मात्रा भी स्थानीय आवश्यकता के अनुसार तय होती है। शहर से दूर के प्रदेशो मे सेवाओ की इतनी आवश्यकता नही होती। पूर्णतया देहाती इलाको मे प्रकाश की सेवा की आवश्यकता हो सकती है किन्तु वहा नालो की व्यवस्था इतनी महत्वपूर्ण नही होती।

सेवाओं के तीसरे समूह को सामाजिक सेवाए कहा जा सकता है। इसमे शिक्षा सम्बन्धी सेवाओ से मिलती-जुलती सेवाए आती हैं। गृह-निर्माण, बाल कल्याण तथा अन्य कल्याणकारी सेवाए जैसे गूगे, बहरे, अधो एव वृद्धो की रक्षा आदि। इस प्रकार की सेवाओं द्वारा जनता के एक बडे

के शब्दों मे इस देश मे स्थानीय सरकार हमारी परम्पराओं मे गहरी जड़ जमा चुकी है और हमारे प्रजातन्त्र की रचना का यह एक भाग है।*

स्थानीय सरकार और राष्ट्रीय सरकार का एकीकरण

(The Integration of Local Govt. and National Government)

स्थानीय सरकार महत्वपूर्ण है। यह समय की आवश्यकता और स्थानीय जनता की उपयोगिता की दृष्टि से अपरिहार्य है। इतना होने पर भी इसकी कुछ अपनी समस्याएं एवं कठिनाइयां हैं। स्थानीय संस्थाओं मे व्यवहार करते समय वहा के लोगो का दृष्टिकोण अपनी स्थानीय सीमाओं मे संकुचित हो जाता है और वे आगे की बात कम सोच पाते हैं। उनके विचार का स्वरूप मुख्य रूप से तात्कालिक परिणाम एव स्थानीय आवश्यकताएं रहती है। अपने क्षेत्र की जरूरतो के बारे मे सोचते-सोचते तथा उनको पूरा करने के लिए प्रयास करते-करते उनका दृष्टिकोण इतना संकुचित हो जाता है कि वे समस्याओं पर व्यापक एव राष्ट्रीय दृष्टिकोण से विचार नही कर पाते। कई बार राष्ट्रीय सरकार के हित, स्थानीय आवश्यकताओं एव मूल्यों से टकराते हैं। इस प्रक्रिया से देश का सामान्य विकास तो रुकता ही है किन्तु साथ ही देशप्रेम एव राष्ट्रभक्ति की भावनाएं भी एक सीमा तक मर्यादित होती हैं। राष्ट्रीय सरकार एवं स्थानीय निकायों के बीच अनेक बातों को लेकर मनमुटाव पैदा हो जाता है। उदाहरण के लिये आकार और क्षेत्र का औचित्य, वित्त कार्यों का प्रसार तथा स्थानीय प्रशासन का सामान्य स्तर आदि पर विचार करते समय यह मनमुटाव और भी बढ जाता है।

स्थानीय निकायों मे कार्य करने वाले पारषद एवं अधिकारी लोग भी इस विरोधपूर्ण स्थिति से सजग रहने की अपेक्षा अधिक सन्देहशील बन जाते हैं। वैसे यदि देखा जाय तो स्थानीय सरकार और राष्ट्रीय सरकार की कार्य-विधि मे कोई स्पष्ट विभाजित रेखा नही है इसलिए उनमे मनमुटाव या भेद-भाव उत्पन्न नही होना चाहिए। सरकार के दोनों स्तरों मे वे ही नागरिक होते हैं, उनका अन्तिम लक्ष्य एक जैसा होता है अर्थात् राष्ट्र को ऐसा बनाना जहा पर कि अच्छा जीवन पनप सके। स्थानीय सरकार को जिन स्थानो से सम्बन्ध रखना होता है वे साधारण रूप से प्रदेश या क्षेत्रीय नहीं हैं वरन् ऐसे स्त्री और पुरुषो के समूह जो कि पडौसियो की तरह से रह रहे है और यह अनुभव करते हैं कि केन्द्रीय सरकार के शासन मे रहने वाले अन्य लोगो से वे कुछ भिन्न हैं और इसलिए वे अपनी वास्तविक आवश्यकताओं एव अपने विचारो के अनुरूप एक जैसे नियम बनाने की स्वेच्छा का दावा करते हैं। कई बार जब स्थानीय कार्यों मे अव्यवस्था होने लगती है तो उन्हे राष्ट्रीय सरकार द्वारा सम्भाल लिया जाता है और दूसरे अवसरो पर जब राष्ट्रीय सरकार कुछ असुविधा का अनुभव करती है तो वह अपने कार्य

"Local Government in this country is firmly rooted in our traditions and forms part of the frame-work of our democracy."

—*Clarke*, Op. Cit. Page 57.

स्थानीय सत्ताम्रों को सौंप देती है। सन् १९४७ मे कार्य से सम्बान्धत मत्रालय के गृह निर्माण के कार्यो की सभी लाइसेन्स देने की शक्तिया स्थानीय निकायों को हस्तान्तरित करदी गई थी, क्योंकि स्थानीय सरकार यथा-स्थान होने के कारण कालाबाजारी को रोकने मे अधिक योग्य रहती है और लाइसेंस से सम्बन्धित शक्तियो का दोहरे रूप से उत्पन्न भ्रम भी पैदा नही होने पाता।

आजकल कई कारणों से केन्द्रीयकरण की ओर प्रवृत्ति बढ रही है, क्यो कि जब हम व्यवस्था की स्थापना करना चाहते हैं तो इसके लिए एक जैसे नियम बनाने होते हैं, ऐसे नियम बनाने की शक्ति केन्द्रीय संसद को प्रदान करनी होती है। तथा केन्द्रीय नागरिक सेवा और न्यायालय भी धीरे-धीरे महत्व मे आने लगते हैं इससे केन्द्रीय प्रवृत्ति प्रारम्भ हो जाती है। आधुनिक राज्य को जो विभिन्न प्रकार की क्रियाएं सौंपी गई हैं और प्रत्येक विशेष शाखा में जो उसकी रुचि जागृत की गई है उसके कारण केन्द्रीय सरकार को खतरा बढ गया है; इसकी प्रतिक्रियास्वरूप स्थानीय सरकार स्वतन्त्रता की माग करती है। केन्द्रीयकरण के पक्ष मे बचत का तर्क दिया जाता है किन्तु यह बचत सबसे ज्यादा हानिकारक होती है। सरकारी कार्यो मे बचत का अर्थ होता है खर्चीले सेवको को कम से कम सख्या मे रखा जाय और उनके द्वारा सेवित व्यक्तियो की सख्या बढा दी जाय। इसके परिणामस्वरूप सरकार अपने आदेशो एव परामर्शों को लिखित रूप मे प्रदान करेगी। इस प्रक्रिया के द्वारा नौकरशाही का प्रभाव बढेगा। इस नौकरशाही के खतरे को रोकने के लिए स्थानीय सरकार मुख्य कार्यालय पर बहुत बडा स्टाफ नियुक्त कर लेगी और स्थानीय स्तर पर भी इनकी सख्या को बढा लेगी किन्तु ऐसा करने पर सरकार का व्यय बहुत बढ जायेगा। इस प्रकार केन्द्रीयकरण की हानिया तो हैं किन्तु फिर भी वर्तमान परिस्थितियो मे यह स्वाभाविक सा होता जा रहा है।

स्थानीय एव केन्द्रीय सरकार के कार्यों में कोई विभाजित रेखा नहीं है, क्योकि केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति बहुत बढती चली जा रही है और इसकी प्रतिक्रिया के रूप मे स्थानीय स्वतन्त्रता एवं स्वायत्तता की माग भी जोर पकड रही है, क्योकि राष्ट्रीय एव स्थानीय सरकारो के बीच मन-मुटाव बढता जा रहा है और स्थानीय अराजकता एव अव्यवस्था पर रोक लगानी है तथा इसी प्रकार के अन्य कारणो से आजकल यह जरूरी समझा जाने लगा है कि स्थानीय सरकार एव राष्ट्रीय सरकार के निकायो का एकीकरण कर दिया जाय।

केन्द्रीय एव स्थानीय सरकारो के बीच मनमुटाव के कई कारण हैं प्रथम तो यह है कि केन्द्रीय सरकार की नीतियाँ चाहे स्थानीय सत्ताओ के कितने भी अनुकूल क्यो न हो किन्तु उनके तरीको एव तकनीकों मे अन्तर रहता ही है। स्थानीय एवं केन्द्रीय सत्ताओं मे कार्य करने वाले व्यक्ति अलग अलग प्रकृति, शिक्षा एवं अनुभव वाले होते हैं। किसी भी व्यक्ति को ऐसे तथ्यो एवं मतो को स्वीकार करने के लिए बाध्य नही किया जा सकता जिनमें कि वह स्वयं विश्वास नही करता। ज्ञान को विकसित किया जा

सकता है किन्तु रुचि को बदलना बड़ा कठिन होता है। स्थानीय जीवन की सीमाओं में रहते हुए जिस सत्य का साक्षात्कार होता है वह सत्य उससे भिन्न होता है जो कि राष्ट्रीय स्तर के तथ्यों पर आधारित है। दूसरे, स्थानीय एवं व्यक्तिगत परिस्थितियों में जो अन्तर रहता है वह भी अत्यन्त प्रभाव डालता है। इस सम्बन्ध में हरमन फाइनर लिखते हैं कि भौगोलिक दृष्टि से, आर्थिक दृष्टि से तथा व्यवहार, रीति रिवाज, बोलचाल एवं स्थानीय परम्पराओं के सम्बन्ध में विभिन्नतापूर्ण क्षेत्र में फैले हुये चालीस मिलियन लोगों के बीच उद्देश्य, चरित्र एवं व्यवहार के अन्तर रहना जरूरी है।* इसका अर्थ यह हुआ कि देश में जितने हजार स्थानीय प्रतिनिधि निकाय होंगे उनके बीच उतनी ही विभिन्नताएं होंगी।

केन्द्रीय एवं स्थानीय संस्थाओं के बीच सदैव हितों का संघर्ष रहा है। केन्द्रीय सरकार अधिक से अधिक नियन्त्रण रखने का प्रयास करती रही और स्थानीय सरकारें स्वायत्तता की मांग करती रही हैं। केन्द्रीय सरकार एवं स्थानीय सरकार के बीच जो विरोध की भावना है और कटुता उत्पन्न करने के कारण हैं उनको केवल तभी दूर किया जा सकता है जब कि दोनों इकाइयों का एकीकरण कर दिया जाये। स्थानीय सत्ताएं और केन्द्रीय सरकार एक ही सरकार व्यवस्था के आवश्यक भाग हैं। उनका आर्थिक सम्बन्ध एक सावयवी में भागीदार तथा सहयोगी का है जो कि एक सामान्य लक्ष्य रखते हैं तथा उस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए एकीकृत संस्थाओं की व्यवस्था रखते हैं। यह बात तथ्यों से स्पष्ट होती है कि स्थानीय सरकार के निकाय सरकार की बनावट के एकीकृत भाग होते हैं तथा वे उन कार्यों में सहयोग प्रदान करते हैं जो कि स्वयं उनसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। इस सन्दर्भ से अधिक या बाहर उनका कोई कार्य नहीं होता तथा उनको एवं उनकी समस्याओं को केवल उनमें ही पहचाना जा सकता है। सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन के युग में स्थानीय सत्ताओं का यह एकीकृत रूप और भी अधिक महत्वपूर्ण बन जाता है। केन्द्रीय स्तर पर जो सेवाएं प्रदान की जाती हैं वे अन्तिम रूप से स्थानीय जनता को ही प्राप्त होती हैं।

इसके अतिरिक्त कई एक केन्द्रीय अधिनियमों में स्थानीय विषयों को समाहित कर लिया जाता है। उदाहरण के लिए सन् १९४५ के जल अधिनियम को लिया जा सकता है जिसकी प्रथम धारा में कहा गया था कि स्वास्थ्य मन्त्री का यह कर्तव्य होगा कि वह जल के स्रोतों की रक्षा एवं उचित प्रयोग को प्रोत्साहन दे तथा इंगलैण्ड और वेल्स में जल वितरण का प्रबन्ध करे तथा उसके निर्देशन एवं नियन्त्रण में पानी के जल उद्योगों के प्रभावशाली क्रियान्वयन को जल से सम्बन्धित राष्ट्रीय नीति के अनुसार

---

*"In a population of fourty million, ... tered over an area diversified, egeologically, topo-graphically, economically and in relation to manner, customs, dialect and Local tradition. They are found the differences of purpose, character and behavio..."

—Herman F... Op. Cit P. 7.

सचालित करे। कहने का अर्थ यह है कि स्थानीय निकायो के कार्य पर केन्द्रीय निकायो का पर्याप्त नियन्त्रण एव निर्देशन रहने का प्रावधान है। इस वस्तु स्थिति से यह नही समझा जाना चाहिये कि ग्रेट ब्रिटेन के स्थानीय निकायो के अपने स्वय के कोई कार्य ही नही हैं अथवा उनका महत्व केवल उसी बात मे है कि वे केन्द्रीय निकायो के सहयोग में कार्य करें।' उनके स्वय के भी कार्य होते हैं किन्तु वे अपेक्षाकृत कम है तथा कम महत्वपूर्ण है। ग्रेट ब्रिटेन के स्थानीय प्रशासन का सही-सही विकास तथा उसकी वित्तीय सस्थाओ को उस समय तक ठीक तरह से नही समझा जा सकता जबकि हम यह मान कर चले कि स्थानीय सत्ताए एक ही जीवित सावयवी के विभिन्न सेल हैं। यह दृष्टिकोण उन्नीसवी शताब्दी मे नही पाया जाता था। आज भी इस दृष्टिकोण का कुछ लोगो द्वारा विरोध किया जाता है। यदि किसी प्रतिवेदन अथवा जाँच मे इसका उल्लेख भी किया जाता है तो बडे अप्रत्यक्ष रूप मे। यद्यपि स्थानीय सरकार के जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य समझे जाते है वे है शिक्षा, जनसहयोग, जनस्वास्थ्य, पुलिस एव सडको का प्रशासन, आदि। इन विभिन्न सेवाओ के क्षेत्र मे स्थानीय निकाय अन्य सत्ताओ से अलग रहकर एकीकृत दृष्टिकोण अपनाए बिना कार्य नही कर सकती। यह सही है कि स्थानीय स्वतन्त्रता का अपना महत्व होता है किन्तु उनके कार्य एव इच्छा एक स्वतन्त्र सीमा मे रह कर ही सम्भव बन सकती है।

हरमन फाईनर ने चार प्रमुख कारण ऐसे बताये हैं जिनके परिणाम-स्वरूप ब्रिटिश स्थानीय सरकार का अधिक पूर्ण एकीकरण सम्भव बनता है। इनमे प्रथम कारण है सरकार की विभिन्न सेवाओ के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान का विकास। स्थानीय परिषदो द्वारा जो विभिन्न सेवाए प्रदान की जाती है उन सेवाओ की मात्रा अत्यन्त व्यापक हो गई है। पहले इन सेवाओ का क्षेत्र व्यक्तिगत अधिक था। उदाहरण के लिए निर्धनो की राहत के क्षेत्र मे सन् १८३४ की स्थानीय सरकार इस मान्यता के आधार पर सचलित होती थी कि कुछ लोग अभागे इसलिए हैं क्योकि उनके कुछ व्यक्तिगत नैतिक अभाव हैं। और अभागेपन के कारण व्यक्तिगत थे इसलिए उनका इलाज करने के लिए यन्त्र भी स्थानीय हो सकता था। किन्तु बाद मे उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध एव बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ मे आर्थिक एव समाजशास्त्री वि॰॰पणो ने यह बताया कि अभाव का कारण केवल व्यक्तिगत नही होता कि॰ु यह अनेक प्रादेशिक दशाओ एव राष्ट्रीय परिस्थितियो मे उत्पन्न होता है। अकार्यकुशल शिक्षा व्यवस्था, अपर्याप्त जन-स्वास्थ्य प्रशासन एव रा॰ृय तथा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम बाजार का विघटन आदि भी इसके कारण होर ॰॰। जब किसी दोष के कारण स्थानीय नही है तो उनका इलाज कर ॰थानीय हो सकता है। ज्यो—ज्यो देश अधिक से अधिक घनिष्ट एकीकृ॰ ॰मा॰ज बनता चला जा रहा है त्यो-त्यो स्थानीय प्रकृति महत्वहीन ब॰ ॰चली जाती है। उचित सरकारी प्रबन्ध जल्दी या बाद मे उसी व्यवस्था को ॰पना लेता है जो कि वैज्ञानिक है। जब सन् १९३४ मे बेरोजगार सह॰ ॰॰ अधिनियम पास हुआ तो अनेक स्थानीय उत्तरदायित्वों को केन्द्रीय सत्॰ ॰ के लिए हस्तान्तरित कर दिया गया। स्थानीय सेवाओं के एकीकरण का ॰हरण स्वास्थ्य सेवाओ से दिया जाता है।

प्रारम्भ मे जन स्वास्थ्य सेवाओ की बनावट पर्याप्त प्रतिबन्धित थी क्योकि उस समय बीमारियो का कारण बुरी गन्ध, सडने वाली चीजो आदि को माना जाता था तथा सरकार का मुख्य कार्य यह था कि जिन चीजो से दुर्गन्ध पैदा होती है वह उन्हे हटा दे और साफ पानी का प्रवन्ध करे। इस प्रकार जन स्वास्थ्य की मुख्य समस्याये, जल वितरण नालियाँ एवं नालो के प्रवन्ध आदि से सम्बन्धित थी। इसे तुलनात्मक दृष्टि से एक सीमित क्षेत्र का कार्य कहा जा सकता है। किन्तु ज्योंही जर्मनी और फ्रान्स के प्राणी शास्त्रियो ने अपनी खोज की त्यो ही यह सिद्ध हो गया कि सार्वजनिक बीमारियो का कारण वे सब लोग हैं जो कि कीटाणुओ को अपने ऊपर लेकर चलते हैं, अपने कपडो मे लगा लेते है या अपने घर मे रखते हैं। इस प्रकार यह सिद्ध हो गया कि प्रत्येक व्यक्ति तथा प्रत्येक वस्ती राष्ट्रीय महामारी का सम्भावित कारण है। अत: यह जरूरी हो गया कि उन व्यक्तियो पर नियन्त्रण रखा जाए जो कि बीमारी फैला सकते हैं। इस प्रकार जन स्वास्थ्य से सम्बन्धित उपायो का क्षेत्र स्थानीय न होकर राष्ट्रव्यापी हो गया स्वास्थ्य के क्षेत्र मे अन्य विकासो ने इस क्षेत्र मे आने वाली सेवाओ के रूप को और भी व्यापक बना दिया। ठीक यही बातें शिक्षा, सडक, प्रशासन आदि विभिन्न क्षेत्रो मे भी लागू होती है। पुलिस के द्वारा अपराधो के अवरोध एव प्रतिरोध के बारे मे ये बातें अत्यन्त स्पष्ट हैं। आजकल के अपराधी वैज्ञानिक उपायो एव बुद्धि को अपनाते हैं तथा बचने के द्रुतगतिपूर्ण साधनो को काम मे लेते हैं। ऐसी स्थिति मे पहले जैसी स्थानीय पुलिस व्यवस्था अपराधों को रोकने मे सफल नही हो सकती।

एकीकरण का एक अन्य कारण सचार एवं यातायात के साधनो का विकास है जिसके परिणामस्वरूप मार्ग की दूरी अत्यन्त कम हो गई है। स्थानीय सरकार के पक्ष मे मुख्य तर्क यह दिया जाता था कि वह यथास्थान रह कर समस्या को अच्छी प्रकार से सुलझा सकती है। इस प्रकार एक स्थान पर स्थानीय सरकार को उतना ही महत्वपूर्ण माना जाता था जितना कि वहा से केन्द्रीय सरकार होती थी। यदि प्रशासन करने वाला निकाय दूर होता है तो वह तत्कालीन परिस्थितियो एवं दशाओ का सही ज्ञान प्राप्त नहीं कर पाता। उसके निर्णय एव नीतिया भी सम्भवतः अनुपयुक्त ही रहेगी। मि० फाईनर ने लिखा है कि जिस समय केन्द्रीय सरकार के पास इसके अतिरिक्त कोई चारा नही था कि वह मेनचेस्टर या न्यूकॅसिल तक स्वयं व्यक्तिगत रूप से यात्रा करे जिसमे कि लगभग एक सप्ताह लगता था और यदि वह सन्देशवाहक भेजे तो उसके लौटने मे पूरे पन्दरह दिन लगते थे। ऐसी स्थिति मे सरकार का उचित क्षेत्र अनिवार्य रूप से छोटा रखना पडता था। दूसरे शब्दो मे एक बस्ती को इस अनुपात मे अकेला छोडना पडता था जिसमे कि वह केन्द्रीय सरकार द्वारा पहुच एव समझ के बाहर हो। आज मेनचेस्टर या न्यू कॅसिल तक टेलीफोन के माध्यम से केवल कुछ मिनटों मे ही पहुंचा जा सकता है और आवश्यकता के समय केन्द्रीय अधिकारी केवल छ: घन्टे मे उसका दौरा कर सकते हैं। आवागमन एवं सचार के साधनो ने केन्द्र तथा उसकी स्थानीय इकाइयों के बीच का अन्तर दूर कर दिया है।

स्थानीय एव राष्ट्रीय सरकार के एकीकरण का एक तीसरा कारण यह भी है कि सरकार के समष्टिवादी सिद्धान्त (Collectivist Principle) ने सामाजिक एकता को बढा दिया है। उन्नीसवी शताब्दी मे व्यक्तिवादी सिद्धान्त का प्रभाव था। उस समय प्रत्येक व्यक्ति एव प्रत्येक बस्ती को अपने भाग्य का स्वामी स्वय होना चाहिए था। यह जितना अधिक हो सके उतना ही समाज के हित मे था। दूसरो के प्रति उसके कोई कर्त्तव्य न थे किन्तु बाद मे 'अधिक से अधिक सख्या को अधिक से अधिक प्रसन्नता' का बेन्थम का सिद्धान्त समष्टिवाद को लाने का कारण बना। प्रगति के विचार एव प्रजातन्त्र के विकास ने व्यक्तिवाद को प्रभावहीन बना दिया। स्थानीय सरकार के क्षेत्र मे सुधार करने के लिए जो विभिन्न अधिनियम पास किए गए उनके द्वारा स्थानीय स्तर पर मताधिकार बढाया गया, स्वास्थ्य एव शिक्षा के क्षेत्र मे विकास हुए तथा स्थानीय सत्ताओ के रूप एव सगठन मे भी अनेक परिवर्तन किए गए। इसके बाद स्थानीय सरकार की सेवा एव बनावट मे समष्टिवादी भावना से प्रभावित होकर निरन्तर विकास होते रहे।

एकीकरण का चौथा कारण धन की वृद्धि को माना जा सकता है। स्थानीय सरकार के विकास मे इस तत्व का भी पर्याप्त प्रभाव रहा। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि विचार केवल तभी सफल या सार्थक बन पाते हैं जबकि उन्हे साकार करने के लिए मानवीय एव भौतिक साधन उपलब्ध हो। ज्ञान विस्तृत होता है किन्तु पहल करने के लिए प्रेरणा का होना जरूरी है और सरकार के विकास में यह परमावश्यक है। उन्नीसवी शताब्दी के ग्रेट ब्रिटेन मे धन की पर्याप्त वृद्धि हुई किन्तु उतनी ही तीव्र गति से जनसख्या भी बढ गई। जो लोग धनवान होते हैं प्राय: वे ही उदार बन पाते हैं और अच्छे तौर-तरीके सीखने का उन्हें पर्याप्त अवसर मिलता है। धन के बढ जाने से लोग उसे सार्वजनिक कार्यों मे लगाने के लिए तत्पर रहने लगे और यदि वे न करते तो ऐसा करने के लिए उन्हे मजबूर किया जाता। किन्तु जो धन प्राप्त हुआ या उसका प्रयोग बडे स्तर के सगठन द्वारा बचतपूर्ण सिद्धान्तो के आधार पर किया जाना चाहिए था, जो कि उन्नीसवी शताब्दी के अन्त मे विकसित हुए। धन की वृद्धि के कारण स्थानीय सत्ताओ के अधिकार मे वृद्धि अवश्य हुई किन्तु उनकी स्वतन्त्रता प्रतिबन्धित हो गई।

सामाजिक परिवर्तनों का स्थानीय सरकार पर प्रभाव
[Effect of Social Changes on Local Government]

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के स्वरूप, सगठन एवं कार्यों पर वहा की सामाजिक, आर्थिक एव राजनैतिक परिस्थितियो का व्यापक प्रभाव पडा। पिछले सौ वर्षों मे अनेक तत्वो ने उस मार्ग का निर्धारण किया जिसे कि स्थानीय सरकार द्वारा अपनाया गया तथा उन समस्याओ का उल्लेख किया जो कि उस मार्ग मे आई। इस दृष्टि से उल्लेखनीय मुख्य-मुख्य सामाजिक परिवर्तनों मे सर्वप्रथम जनसख्या की वृद्धि है। सन् १८७१ मे इंगलैण्ड तथा-वेल्स की जनसख्या लगभग २३ मिलियन थी, सन् १९०१ मे यह ३२ मिलियन हो गई, सन् १९३१ मे ४० मिलियन और १९६१ मे ४६

मिलियन हो गई। जनसंख्या मे यह वृद्धि पूरे देश मे एक ही अनुपात में नही हुई।

सन् १८८० और १६३० के बीच मे देश के आसपास की जनसंख्या अर्थात् उन इलाको की जनसंख्या जो कि शहर से दूर थे, शहरो की ओर खिंच आए और इस प्रकार देहाती इलाको के नाम पर शहरी इलाको की जनसंख्या पर्याप्त घना हो गई। शहरी क्षेत्रो मे, विशेषकर बड़े शहरो मे, बढती हुई जनसख्या को बसाने के लिए स्थान की समस्या पैदा हुई और देहाती क्षेत्र मे करदाताओ की कमी महसूस की जाने लगी। कारखानों एवं जनसख्या के इस प्रसार से उत्पन्न नई परिस्थितियो का सामना करने के लिए स्थानीय सरकार के क्षेत्रों को पर्याप्त रूप से परिवर्तित नही किया गया। इसके फलस्वरूप कस्बे तथा देश की सरकार मे और काउन्टी बारो परिषद एवं काउन्टी परिषद के बीच मन मुटाव पैदा हो गए। एक दूसरा सामाजिक परिवर्तन जिसका हम पहले भी वर्णन कर चुके हैं, यह था कि सचार के साधनो मे पर्याप्त विकास हो गया। स्थानीय सरकार की इकाईया हमेशा इस बात से प्रभावित होती रही हैं कि लोग कितनी सरलता से यात्रा कर सकते हैं। यातायात के साधनों के विकास के बाद स्थानीयता की मान्यता मे ही भारी परिवर्तन हो गया। सन् १६०० में देहाती जिला अधिकारी अपने जिले की बातो को इतनी निकटता से नही जान पाता था जितना कि आज। काउन्टी अधिकारी अपनी काउन्टी के मामलो को व्यक्तिगत रूप से जान सकता है। विकसित यातायात का अर्थ है कि छोटी सत्ताओ ने अपने अधिक से अधिक कार्य बड़े भाइयो के हाथ मे सौंप दिए और बड़ी स्थानीय सत्ताओं ने प्रमुख सेवाए केन्द्रीय सरकार के हाथो मे दे दी। एक तीसरा सामाजिक परिवर्तन दवाइयो के क्षेत्र मे हुआ। अनेक प्रकार की दवाइयो का आविष्कार हो जाने के कारण मृत्यु दर पर प्रतिबन्ध लग गया और इसके परिणामस्वरूप जनसख्या मे वृद्धि हुई। अठारहवी शताब्दी के प्रारम्भ से ही औषधि व्यवसाय अधविश्वास एव अधकार से हट कर विज्ञान के प्रकाश मे आया। धूल और बीमारी मे सम्बन्ध स्थापित किया जाने लगा और यह प्रयास किया जाने लगा कि साफ पानी दिया जाए, नालियो की अच्छी व्यवस्था की जाए और गन्दगी को दूर करने का प्रयास किया जाए।

उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे वैज्ञानिक विकासो के फलस्वरूप यह स्पष्ट हो गया कि प्रत्येक व्यक्ति बीमारी का कारण बन सकता है क्योकि वह कीटाणुओ को अपने साथ लेकर चलता है। यह समझा जाने लगा कि प्रत्येक व्यक्ति प्लेग फैलाने की सामर्थ्य रखता है और यदि उसे पर्यवेक्षित न किया गया तो वह सारे राष्ट्र को प्रभावित कर सकता है। इसके परिणामस्वरूप स्थानीय सत्ताएं व्यक्तिगत स्वास्थ्य की ओर अधिक ध्यान देने लगीं और केन्द्रीय पर्यवेक्षण के आधीन कम से कम वैज्ञानिक स्तर के अनुरूप उन्हें बनाने का प्रयास करने लगी। एक चौथा परिवर्तन शिक्षा के क्षेत्र में विकास है। जब शिक्षा के कार्य को राज्य ने अपने हाथ मे ले लिया तो स्थानीय सरकार की स्थिति मे पर्याप्त परिवर्तन आया। सन् १८७० के पूर्व शिक्षा से सम्बन्धित प्रावधान बहुत कुछ स्वेच्छापूर्ण सगठनों के हाथों मे थे।

इन सगठनो को राज्य के अनुदान द्वारा सहायता दी जाती था । सन् १६०
के शिक्षा अधिनियम ने यह प्रावधान रखा कि जहा स्वैच्छापूर्ण सगठन पर्याप्त रूप से कार्य नही कर रहे है वहा स्थानीय स्कूल मण्डल द्वारा स्कूल खोले जाएं । सन् १६०२ के शिक्षा अधिनियम ने स्कूल मण्डलो को समाप्त कर दिया और उनकी शक्ति काउन्टी परिषदो एव काउन्टी बारो परिषदो को सौंप दी । बडी गैर-काउन्टी बारो परिषदो एव शहरी जिला परिषदो को केवल प्राथमिक शिक्षा का अधिकार दिया गया । शिक्षा सेवाओ मे पर्याप्त व्यय होता है इसलिए इनके सचालन का कार्य स्थानीय सरकार की केवल बडी इकाइयो को सौंपा गया क्योकि छोटी सत्ताओ के द्वारा उच्च शिक्षा न तो प्रदान की जा सकती है और न ही ऐसा करना उपयोगी है । ज्यो-ही शिक्षा का प्रचार हुआ तथा उसमे अधिक धन व्यय करने की आवश्यकता हुई त्यो ही शिक्षा के कार्य को बडी इकाईयो को सौंपने की प्रवृत्ति ने जोर पकडा । शिक्षा का उत्तरदायित्व बहुत कुछ काउन्टी परिषदो एव काउन्टी बारा परिषदों पर आकर पडा ।

इन सब परिस्थितियों ने मिलकर एक लोचशील नीति अपनाने को प्रेरित किया । इन सभी परिवर्तनो के कारण स्थानीय सरकार का जो क्षेत्र सामने आया उसके लिए तत्कालीन कार्य अनुपयुक्त थे । समय की बदलती हुई परिस्थितियो ने लोगो के जन-जीवन मे भारी परिवर्तन किया और उनकी आवश्यकताओ को बढाया । ऐसी स्थिति मे स्थानीय सरकार को ऐसा होना था जो कि आवश्यकताओ को सन्तुष्ट कर सके । दूसरे शब्दो मे एक ऐसे यन्त्र की आवश्यकता प्रतीत होने लगी जिसके द्वारा स्थानीय सरकार की व्यवस्था को परिवर्तित परिस्थितियो के अनुकूल होने के लिए तैयार किया जा सके । सन् १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने जिन कस्बो को काउन्टी बारो का स्तर प्रदान किया उनमे से कुछ ऐसे थे जो कि इन बदली हुई परिस्थितियो मे वाञ्छित कार्यों को सम्पन्न करने के लिए अपर्याप्त सिद्ध हुए । ये उस समय और भी अपर्याप्त लगने लगे जब कि आगे के अधिनियमों ने उनके ऊपर अतिरिक्त कार्यों का भार डाल दिया । सन् १८८८ मे कुछ ऐसे भी कस्बे थे जिनकी जनसख्या पचास हजार से कम थी और जो काउन्टी बारो का स्तर प्राप्त नही कर सके, किन्तु बाद मे इन कस्बो की जनसख्या पर्याप्त बढ गई और उन्हे भी यह स्तर प्रदान कर दिया गया ।

ब्रिटेन की स्थानीय सरकार की वर्तमान व्यवस्था मे एक बडा भारी भ्रम है । कैन्टरबरी (Canterbury) और बर्मिंघम (Bermingham) दो काउन्टी बारो हैं । इनकी जनसख्या के बीच भारी अन्तर है । पहले की जनसख्या तीस हजार है जब कि दूसरे की ग्यारह लाख छः हजार है किन्तु फिर भी दोनों को एक जैसी शक्तिया और कर्त्तव्य सौंपे गए हैं । इसी प्रकार से कई एक बडी जनसख्या वाले प्रदेशो को कम जनसख्या वाले प्रदेशों का मातहत बना दिया है । आज स्थिति ऐसी आ गई है जिसमे कि काउन्टी और काउन्टी बारो के बीच सघर्ष होना स्वाभाविक एव अवश्यम्भावी है । इसका कारण यह है कि यदि वर्तमान काउन्टी बारो अपनी सीमाओ मे प्रसार करे या नए

काउन्टी बारो की रचना की जाए किन्तु ऐसा केवल तभी किया जा सकता है जब कि स्थित काउन्टी की भौगोलिक सीमाओं पर आघात किया जाए। दूसरी ओर बदलती हुई सामाजिक परिस्थितियां एवं दबाव, काउन्टी बारो के विकास को आवश्यक भी बना सकते है। ऐसा हो जाने पर काउन्टी का क्षेत्र घट जाता है उसके करो की मात्रा कम हो जाती है और उसकी जनसंख्या भी कम हो जाती है। क्षेत्र कम हो जाने के बाद काउन्टी की सेवा के सम्बन्ध मे जो प्रावधान थे उनके सम्बन्ध मे कई कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती है। एक मोटे अनुमान के अनुसार यह कहा जा सकता है कि जब से १८८८ का अधिनियम पारित हुआ उस समय से काउन्टियो ने काउन्टी बारोज के प्रसार या निर्माण की वजह से लगभग आधी मिलियन एकड भूमि, लगभग बीस मिलियन पौंड कर का राजस्व तथा तीन मिलियन से भी अधिक जनसंख्या को खोया है। ऐसी स्थिति मे काउन्टी परिषद द्वारा पूरी तरह से नए काउन्टी बारोज बनाने या स्थित का प्रसार करने का प्रयास किया जाता है।

ब्रिटिश स्थानीय सरकार की विशेषताएं
[The Characteristics of British Local Government]

प्रत्येक मानवीय सस्था देश, काल एवं परिस्थितियो के अनुसार अपनी स्वय की विशेषताएं रखती है। ब्रिटिश स्थानीय सरकार की भी कुछ अपनी विशेषताएं है जो कि वहा के लोगो के चरित्र, आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक स्थिति तथा देश की भौगोलिक बनावट आदि से निर्धारित हुई है। वहा की स्थानीय सरकार की सर्वप्रथम विशेषता यह बताई जाती है कि इसकी प्रकृति विकासशील है। आज वहा स्थानीय सरकार का जो रूप हमे मिलता है वह सदियो के विकास का परिणाम है, यह क्रमिक गति से एवं धीरे-धीरे हुआ। ब्रिटेन की अन्य सस्थाओ की भाति स्थानीय सरकार को भी इतिहास का शिशु कहा जाता है। प्रारम्भ मे स्थानीय स्तर पर जो सगठन जिस रूप मे भी कार्य करते थे उनसे स्थानीय सरकार का जन्म हुआ। स्थानीय सत्ताओ का निर्माण भी विकास की विभिन्न श्रेणियो मे होकर गुजरा है। जिस समय उनको स्थापित किया गया था उनका उद्देश्य एवं रूप कुछ और ही था। बाद मे समय की माग एवं परिस्थितियो की आवश्यकताओ ने उनको अपने अनुकूल समायोजित होने के लिए प्रभावित किया। इनमे से किसी भी सस्था को केन्द्रीय सरकार द्वारा एक दिन मे या किसी एक कानून द्वारा नही बना दिया गया।

ब्रिटिश स्थानीय सरकार की एक दूसरी विशेषता यह मानी जाती है कि इसकी रचना लिखित कानून द्वारा हुई। ससद ने समय-समय पर अधिनियम पास कर के इनके सविधान एवं उत्तरदायित्वो का स्वरूप निर्धारित किया। प्रत्येक स्थानीय सत्ता जो भी कार्य करती है उसके लिए उसे ससद के कानून की सत्ता प्राप्त है। वह ऐसा कोई कार्य नही कर सकती जिसे करने के लिए कानून द्वारा उसे शक्ति न सौंपी गई हो।

मि० हरमन फाईनर द्वारा ब्रिटिश स्थानीय सरकार की मुख्य रूप मे तीन विशेषताएं बताई गई हैं। उनके कथनानुसार प्रथम और हमारे क्रम मे चतुर्थ विशेषता स्थानीय सरकार मे प्राप्त विकेन्द्रीयकरण है। मि० फाईनर के

मतानुसार ब्रिटिश स्थानीय सरकार केन्द्रीयकरण के गम्भीर खतरे के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया है। इसलिए यह स्वाभाविक था कि इसका रूप विकेन्द्रित होना। मि० फाईनर के शब्दों में विकेन्द्रीयकरण का अर्थ एक ऐसी व्यवस्था से है जिसमें सरकार के स्थानीय एवं केन्द्रीय अनेक केन्द्र होते हैं तथा प्रत्येक को स्वतन्त्र अस्तित्व एवं कार्यों का अधिकार प्राप्त होता है।* वर्तमान ब्रिटिश स्थानीय सरकार की रचना में काउन्टी बारोज को पूर्णतः स्वतन्त्र निकाय बनाया गया है। कुछ अपवादों को छोड़ कर काउन्टी द्वारा शेष भाग की सेवा की जाती है। नगरपालिका बारोज को भी अधिकांश स्वतन्त्र शक्तियां प्राप्त है। उनके क्षेत्र में कुछ कार्य काउन्टी परिषद द्वारा सम्पन्न किए जाते हैं जैसे कि प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा, पुलिस, जनस्वास्थ्य तथा बड़ी सड़कें आदि। शहरी जिलों [Urban Districts] में भी इन शक्तियों का प्रयोग काउन्टी परिषद द्वारा किया जाता है वरन् वे स्वतन्त्र निकाय होते हैं। जैसे देहाती जिलों को अपेक्षाकृत कम कार्य प्राप्त होते हैं। वे शिक्षा सेवाओं, पुलिस कार्यों एवं महत्वपूर्ण सड़कों के सम्बन्ध में कोई महत्वपूर्ण शक्ति नहीं रखते हैं। पेरिस मीटिंग्स तथा पेरिस परिषदों के पास पर्याप्त ज्ञान एवं आर्थिक साधन नहीं होते हैं इसलिए उनको स्वतन्त्र शक्ति प्राप्त नहीं होती।

विकेन्द्रीयकरण की जो परिभाषा मि० फाईनर ने दी है उसके आधार पर वे कहते हैं कि यह संदिग्ध है कि इस प्रकार की व्यवस्था कभी इस देश में रही हो। असल में विकेन्द्रीयकरण का यह रूप कानून अथवा व्यवहार की दृष्टि से यहां कभी भी नहीं रहा। स्थानीय संस्थाएं अपने प्रारम्भिक काल में उन दायित्वों को पूरा करने के लिए उत्तरदायी थी जो कि केन्द्रीय सरकार द्वारा उसे सौंपे गए थे। यद्यपि यह सच है कि वे अविनियमित क्षेत्र में बहुत कुछ स्वेच्छा एवं स्वतन्त्रता का प्रयोग करते थे। नगरपालिका बारोज में १८३५ में जब सुधार किए जाने पर जो स्थिति बनी वह इस कथन से भिन्न नहीं थी। फिर भी यह कहा जाता है कि यदि विकेन्द्रीयकरण स्थानीय प्रशासन की विशेषता नहीं है तो उसे होना चाहिए। इसी विचार के आधार पर समाज के लोग स्थानीय सरकार की स्वतन्त्रताओं का सम्मान कर पाए थे। ब्रिटिश स्थानीय सरकारों की स्थिति का सही वर्णन करते हुए हरमन फाईनर ने यह लिखा है कि हमारे यहां विकेन्द्रीयकरण नहीं है वरन् पूर्ण स्वतन्त्रता का एक छोटा भाग है, जो कि मुख्यतः राष्ट्रीय इच्छा पर आधारित संगठित एकीकरण के साथ मिल कर इसे स्वतन्त्र इच्छा द्वारा स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल क्रियान्वित करने का प्रयास करता है। इस व्यवस्था को क्या नाम दिया जाना चाहिए हम नहीं जानते।†

---

*"By decentralization is meant a system in which there are many centres of Government, local and central, each with a recognized right of independent existence and functions."

—*Herman Finer*, Op Cit., p. 20.

†"We have not Decentralization, but a small sphere [of almost complete freedom, side by side with an organi-

पाचवें, ब्रिटिश स्थानीय सरकार की एक अन्य विशेषता यह है कि स्थानीय सत्ताए अपने कानून एव प्रादेशिक क्षेत्र मे अन्य स्थानीय सत्ताओ के नियत्रण से स्वतन्त्र रहती हैं। इसके कुछ अपवाद भी हैं। हरमन फाइनर लिखते हैं कि इगलैण्ड की स्थानीय सत्ताए उन निकायो द्वारा नियन्त्रित नही की जाती जो कि केन्द्रीय सत्ता एवं उनके बीच मे होती हैं।* ये निकाय प्रत्यक्ष रूप से ससद और केन्द्रीय विभागो द्वारा नियन्त्रित होते हैं। इसके मुख्य रूप से ये अपवाद हैं–[i] अधीनस्थ सत्ताओ द्वारा कुछ मामलों को प्रस्तावित करने के लिए काउन्टी परिषद की स्वीकृति प्राप्त करनी होती है। [ii] काउन्टी परिषद कुछ मामलो मे स्थानीय सत्ताओं की अवहेलना कर सकती है चूकि इसे ऐसा करने का अधिकार है। [iii] काउन्टी परिषद को अन्य स्थानीय सत्ताओ की भाति कुछ मामलों मे समान अधिकार है। [iv] काउन्टी परिषद विशेष मामलो मे अधीनस्थ सत्ताओ पर सामान्य निरीक्षण रखती है। पदसोपान वाली एव गैर पदसोपान वाली स्थानीय सरकार की व्यवस्थाओ मे केन्द्रीय तथा स्थानीय सत्ताओ के बीच सम्बन्ध का अन्तर होता है तथा यह अनुदान, आडिट एव निरीक्षण आदि प्रश्नो को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करता है।

ब्रिटिश स्थानीय सत्ताओ की एक छटी विशेषता यह है कि उनकी प्रकृति सयुक्त होती है; यहा तक कि शक्तिहीन पेरिस भी पर्याप्त सयुक्त प्रकार की शक्तियो का प्रयोग करती है। इसका अर्थ यह नही है कि वे सारे कार्य स्वय करती है किन्तु यह है कि वह विशेष रूप से किसी एक कार्य को करने के लिए बाधित नही है। उनको सामयिक [Adhoc] सत्ताए प्राप्त नही है। आज ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सत्ताए पूरी तरह से या संयुक्त रूप से अनेक सेवाओ के लिए उत्तरदायी रहती हैं। यह स्थिति १८३४ से लेकर १९३० तक के विकासो का परिणाम है। १८२० तक स्थानीय सरकार की मुख्य सत्ताए जैसे काउन्टी बारो एव पैरिस आदि कई एक मिलेजुले कार्य करती थी। इनमे से कुछ की तुलना आज के कार्यों मे की जा सकती है। उस समय विशेषीकृत प्रकृति की केवल कुछ ही सत्ताए थी जिन्हे केवल विशेष कार्य सौंपे गये थे; जैसे विकास आयुक्त, चौकसी एव प्रकाश मडल, निर्धनो का सरक्षक मडल आदि। १८३१ मे स्वास्थ्य का स्थानीय मडल बनाया गया। इसी प्रकार से अभावग्रस्तों की सहायता के लिए, शहरी एव ग्रामीण सफाई के लिए, सडको के लिए तथा शिक्षा के लिए कुछ विशेष सत्ताओ का

zed integration founded mainly on a national will, mitigated by predescretion to adopt and apply it to local circumstances. What name to give, we do not know."

—*Herman Finer*, Op. Cit , p. 21.

* "In England, the Local authorities are not controlled by bodies intermediate between them and the central authority."

—*Herman Finer*, Op. Cit. P. 19.

सगठन किया गया। इनमे से प्रत्येक कार्य के लिए अलग-अलग प्रशासकीय निकाय बनाया गया। इस प्रकार स्थानीय संस्थाओं के कार्यों को अनेक छोटे २ निकायों मे बाट दिया गया जो कि अधिकार-क्षेत्र एवं स्रोतों की दृष्टि से अल्प थे। इस व्यवस्था के अपने कई दुष्परिणाम रहे। प्रत्येक की वित्तीय व्यवस्था अलग-अलग थी और उसमें समन्वय नहीं था। एक की नीति का अन्यों की नीति से कोई सम्बन्ध नहीं था। समन्वय के अभाव में इसके सम्बन्ध केन्द्रीय सत्ता के साथ आवश्यक रूप से जटिल एवं भ्रमपूर्ण थे। कोई सत्ता अपने आप मे ऐसी नहीं कि वह पर्याप्त रूप से स्थानीय रुचि को आकर्षित कर सके। इस सारी स्थिति को देखने के बाद मि० गोसेन (Gosche) ने स्थानीय सत्ताओं के, केन्द्रीय सत्ताओं के साथ वित्तीय एवं प्रशासकीय सम्बन्धों का वर्णन करते हुए यह उक्ति कही जो कि अत्यन्त लोकप्रिय है कि हमारे यहां सत्ताओं के सम्बन्ध में उपद्रव है, रेट के सम्बन्ध मे उपद्रव है, और इन सब उपद्रवों से भी बदतर क्षेत्रों के सम्बन्ध मे उपद्रव है।†

इस सम्बन्ध मे वस्तुस्थिति का सही अध्ययन करते हुए तथा उनके परिणामों से अवगत रहते हुए जॉन स्टूअर्ट मिल (John Stuart Mill) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'प्रतिनिधि सरकार' (Representative Government) मे जो कुछ भी लिखा वह अत्यन्त महत्वपूर्ण था। उन्होंने बताया कि मुख्य सिद्धान्त के अनुसार एक स्थानीय क्षेत्र मे सभी स्थानीय कार्यों को करने के लिए एक ही निर्वाचित निकाय होना चाहिए; इसके विभिन्न भागों के लिए अलग-अलग निकाय नहीं। श्रम-विभाजन का यह अर्थ नहीं होता कि प्रत्येक कार्य को छोटे २ भागों में बाट दिया जाय। इसका अर्थ केवल यही है कि एक व्यक्ति जिन कार्यों को अच्छी प्रकार से सम्पन्न कर सके उन्हें एक ही निकाय के हाथों में दिया जाये और उन कार्यों को अलग कर दिया जाये जो कि दूसरे व्यक्ति द्वारा अच्छी प्रकार सम्पन्न किये जा सकते हैं। निर्वाचित निकाय का यह अर्थ नहीं होता कि वह स्वयं कार्य करे बल्कि उसका कार्य तो केवल यह देखना है कि जो कार्य सौंपा गया है वह ठीक प्रकार से सम्पन्न होता रहे और किसी भी आवश्यक कार्य को बिना किए नहीं छोड़ा जाये। एक ही निकाय मे एक बस्ती के सभी कार्यों को एकीकृत करने का एक अन्य कारण भी है, वह यह है कि जब एक निम्न मानसिक स्तर वाले व्यक्ति द्वारा स्थानीय संस्थाओं को सदैव संचालित किया जाता है तो उनमे पर्याप्त अपूर्णता आजाती है और वे प्रायः असफल हो जाते हैं। इसलिए यह उपयोगी रहेगा कि इन संस्थाओं की प्रकृति अनेकरूपी रहे। इससे ये संस्थाएं अधिक लाभदायक रहेंगी और साथ ही ये नागरिकों की राजनैतिक सामर्थ्य एवं सामान्य बुद्धि के लिए एक प्रशिक्षणशाला का कार्य भी करेंगी।

---

†"We have a chaos as regards authorities, a chaos as regards rates, and a worse chaos than all as regards areas."
—*Goscher*, Reports and Speeches on Local Taxation, 1872, P. 190.

जब कार्यों को अलग-अलग रखा जाता है तो उन्हे सम्पन्न करने के लिए किसी एक व्यक्ति को ढूढना बड़ा मुश्किल पड जाता है, जैसे कि किसी नाला-आयोग के लिए या मार्ग निर्माता मडल के लिए सदस्यों के स्थान पर सामाजिक या बौद्धिक दृष्टि से उच्च वर्ग के लोगो को नियुक्त नही किया जा सकता। यह उचित भी नही है क्योंकि जिन लोगो की योग्यताओ का पूरे देश को लाभ उठाना चाहिए या पूरे क्षेत्र को लाभान्वित होना चाहिए यदि उनको एक कोने मे डाल दिया जाय।

सन् १८८८ के बाद इन सत्ताओ के बीच समन्वय की नीति ने जन्म लिया। यह विकास तत्कालीन भ्रम एव कठिनाइयो को दूर करने के लिए किया गया। इसके अतिरिक्त पुराने निकायो को नये कार्य सौंपना अधिक सरल था अपेक्षाकृत इसके कि उन्हे करने के लिए नये निकायो की रचना की जाती। इसके बाद एक सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया कि स्थानीय जनता के हितो की रक्षा तब अच्छी प्रकार की जा सकती है जब कि सारे देश मे सयुक्त सत्ताओ की स्थापना की जाय। यह विचारधारा सामयिक [Adhoc] या कार्यात्मक सत्ता के विपरीत थी। इसके अनुसार स्थानीय सत्ताओ को छ: वर्गो मे विभाजित कर दिया गया, ये थे-काउन्टी, काउन्टी परिषद, नगरपालिका या गैर-काउन्टी बारो, शहरी जिले, देहाती-जिले और पैरिस। यह स्थिति सन् १९४७ तक काफी प्रभावशील रही।

सातवें, ब्रिटिश स्थानीय लोक प्रशासन की विशेषता यह बताई जाती है कि यहा राष्ट्रीय एव स्थानीय स्तर की सत्ताओ के बीच समन्वय की दृष्टि से एकीकरण का जन्म हो रहा है। यह एकीकरण वर्तमान परिस्थितियो की एक अनिवार्य उपज है। प्रारम्भ मे स्थानीय सरकार एवं केन्द्रीय सरकार को परस्पर विरोधी समझा जाता था किन्तु आज स्थिति बदल चुकी है और सरकार के इन दोनो रूपो को केवल विरोधी ही नही समझा जाता बल्कि एक दूसरे का पूरक माना जाता है। केन्द्रीय सरकार की अतिशय नियन्त्रण की माग और स्थानीय सरकारो की अतिशय स्वतन्त्रता की माग के बीच विरोध के कारण पहले जो स्थिति पैदा हो गई थी उसके फलस्वरूप इन दोनो इकाइयो के बीच पारस्परिक कटुता की भावना ने जन्म लिया। किन्तु समय के प्रभाव ने ऐसी स्थिति ला दी जिसमें कि ये दोनो एक दूसरे के सहायक और हिस्सेदार बन गये। दोनो ने राष्ट्रीय जीवन को श्वेत बनाना अपना उद्देश्य स्वीकार कर लिया।

आठवें, अग्रेजी स्थानीय सरकार की एक अन्य विशेषता उसके प्रतिबन्धित क्षेत्र मानी जाती है। स्थानीय सत्ताओ के अनेक कार्य-क्षेत्र होते हैं। इन कार्यों को सम्पन्न करने के लिए अलग-अलग सस्थाए नियुक्त करदी जाती हैं जो कि एक दूसरे से पृथक रहती हैं। इनमे से प्रत्येक सगठन अपने आपको सही सिद्ध करने की कोशिश करता है और उसके मतानुसार केवल वही सर्वोच्च सत्ता होती है। इन संगठनों की विभिन्नता मुख्य रूप से चार तरीकों से सामने आती है, ये हैं-क्षेत्र, जनसख्या, वित्तीय

स्थिति और कार्य। कार्यों के क्षेत्र मे जो विभिन्नता होती है उनको पहचानना बड़ा मुश्किल पड़ता है, किन्तु अन्य क्षेत्रो की विभिन्नताओं को आसानी से जाना जा सकता है। स्थानीय सत्ताओ के बीच जो मतभेद एवं विभिन्नताओं का अस्तित्व रहता है वह एक दृष्टि से अपरिहार्य माना जाता है। ये सभी एक अव्यवस्थित ऐतिहासिक विकास के परिणाम है। शताब्दियों के लम्बे समय मे इन सत्ता के भवनो मे यहा तहा कुछ हिस्से जोड़े गये और कुछ ईंटें कुछ स्थानो से हटाली गई। इस प्रकार एक लम्बे नियोजन के परिणाम-स्वरूप इन सेवाओ का वर्तमान रूप हमारे सामने आया। उन्नीसवी शताब्दी का मध्यकाल गुजरने के बाद कुछ नये क्षेत्र बनाये गये जैसे शहरी और देहाती जिले तथा नगरपालिका बारो और काउन्टी बारो का प्रसार किया गया।

नवें, ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन की एक अन्य विशेषता यह है कि इसमे समिति व्यवस्था का अतिशय प्रयोग किया जाता है। प्र॰ लास्की (Lasky) एवं अन्य के कथनानुसार ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार समितियो द्वारा एवं समितियो के माध्यम से सचालित की जाती है। प्रो॰ फाइनर के मतानुसार समितिया स्थानीय सरकार के वास्तविक कारखाने होती हैं। इनका प्रायः समस्त कार्य समितियो द्वारा सम्पन्न किया जाता है। स्थानीय निकायो की परिषद् समितियो के माध्यम से कार्य करती है। ये समितिया प्रायः पाच प्रकार की होती है - स्थायी समितिया (Standing Committees), सुझावदात्री समितिया (Persuasive Committees), विशेष एवं सामयिक समितिया (Special and Alhoc Committees), कानूनी समितिया (Statuatory Committees) और उप समितियाँ (Sub-Committees)। इन समस्त समितियो के द्वारा स्थानीय सत्ताए अपने विभिन्न उत्तरदायित्वो को सम्पन्न करने का प्रयास करती हैं। वित्तीय समितियो द्वारा विभिन्न स्थानीय निकायों के बीच समन्वय स्थापित किया जाता है।

दसवें, दलीय राजनीति को ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन की विशेषता कहा जाता है। वैसे सैद्धान्तिक रूप से कई बार इस बात का समर्थन किया जाता है कि स्थानीय स्तर पर दलीय राजनीति को सक्रिय नहीं बनाना चाहिये, क्योंकि इससे लाभ होने की अपेक्षा हानियां अधिक होने की सम्भावना होती है। क्षेत्रीय जनता दलीय आधार पर विभाजित हो जाती है और स्थानीय विषयो के सचालन के लिए जिस एकता की आवश्यकता होती है तथा जो सहयोगपूर्ण प्रयास अनिवार्य होते है वे सम्भव नही हो पाते। सैद्धान्तिक रूप से यह सब ठीक होते हुए भी व्यावहारिक रूप से उतना उपयोगी नही रहता और न ही व्यावहारिक रूप से सम्भव बन पाता है। ग्रेट ब्रिटेन मे यह एक स्पष्ट तथ्य है कि कई एक स्थानीय सत्ताओ मे दलीय राजनीति सक्रिय रूप से कार्य करती है। उनमे राजनैतिक दल अच्छी प्रकार से सगठित रूप मे प्राप्त होते हैं। चुनाव प्रायः दलीय आधार पर लड़े जाते हैं। ये दल (Parties) अपने राजनैतिक सगठनो के द्वारा सदस्यो पर दलीय अनुशासन का प्रयोग करते हैं फिर भी कुछ संगठन राजनैतिक दलों के हस्तक्षेप से मुक्त रहते हैं। उदाहरण के लिये देहाती क्षेत्र मे एवं कुछ

काउन्टी परिषदें, किन्तु ऐसे संगठनों की संख्या बहुत कम है और सामान्य रूप से दलीय राजनीति का प्रभाव रहता है। बड़े औद्योगिक क्षेत्रों की काउन्टियों में जो स्थानीय सरकार की सत्ताएं कार्य करती हैं वे राजनैतिक दलों से प्रभावित रहती हैं। सन् १९४५ के बाद से ही राष्ट्रीय एवं कुछ स्थानीय दल, स्थानीय चुनावों में अधिक रुचि दिखा रहे हैं।

ब्रिटिश स्थानीय सरकार की ग्यारहवीं विशेषता यह है कि इसमें एकरूपता का अभाव रहता है। एक इकाई, दूसरी से संविधान एवं बनावट की दृष्टि से पर्याप्त अन्तर रखती है। उनके नियम और उपनियम अलग-अलग होते हैं। कभी तो एक स्थानीय निकाय को जनसंख्या के आधार पर संगठित किया जाता है और कभी प्रदेश के आधार पर। दूसरे अवसरों पर वित्त अथवा अन्य कोई आधार रो पर इन निकायों को संगठित किया जाता है।

बारहवें, ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के सम्बन्ध में एक विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि उसके विभिन्न निकायों का क्षेत्र परस्पर अतिव्याप्त करता है। इस व्यवस्था में कई बार ऐसा हो जाता है कि एक काउन्टी बरो के नागरिक को समस्त सेवाएं उसकी काउन्टी बारो परिषद द्वारा प्रदान की जाती हैं जबकि एक बारो का नागरिक या शहरी जिले का नागरिक यह पाता है कि उसकी कुछ सेवाएं बारो या शहरी जिलों वालों द्वारा प्रदान की जाती हैं और अन्य सेवाएं काउन्टी परिषद द्वारा प्रदान की जाती हैं। इस उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि क्षेत्रों एवं कार्यों की दृष्टि से विभिन्न स्थानीय सत्ताओं के बीच स्पष्ट विभाजन नहीं है।

तेरहवें ग्रेट ब्रिटेन में शहरी एवं देहाती क्षेत्रों के प्रशासन के बीच पर्याप्त अन्तर है। दोनों क्षेत्रों में सेवा के लिये अलग अलग सत्ताएं प्रदान की जाती हैं। ऐसा कई दृष्टियों से आवश्यक माना जाता है जैसे कि प्रदान की हुई सेवाएं स्थानीय आवश्यकताओं के अधिक अनुरूप बन पाती हैं। यह आर्थिक दृष्टि से भी कम खर्चीली रहती है। देहाती क्षेत्रों के वित्तीय साधन क्षीण एवं कमजोर होते हैं और शहरी क्षेत्रों की तुलना में उनकी सामर्थ्य बहुत कम होती है।

चौदहवें, ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के राजस्व का मुख्य साधन रेट (कर) होती है। रेट एक प्रकार का स्थानीय कर है जो सम्पत्ति के वार्षिक मूल्य पर लगाया जाता है। जब किसी सम्पत्ति का व्यक्ति द्वारा लाभ के साथ स्वामित्व किया जाता है तो स्थानीय सत्ता द्वारा उससे एक प्रकार का किराया वसूल किया जाता है। इस प्रकार के कर सर्वप्रथम गरीबों को राहत प्रदान करने के लिए प्रारम्भ किये गये थे। सन् १६०१ में महारानी ऐलिजाबेथ के शासनकाल में निर्धन अधिनियम पारित किया गया था जिसके अनुसार पर्यवेक्षकों द्वारा अधिनियम के लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास करना था। सामान्य रेट मद के लिए आवश्यक होती है। एक देहाती जिला परिषद को विशेष रेट लगाने का अधिकार होता है ताकि वह क्षेत्र की अनेक रूपी आवश्यकताओं को पूरा कर सके। लगाये गये रेट की उपयुक्तता एवं न्याय पूर्णता को देखने के लिए स्थानीय मूल्यांकन न्यायालय होते हैं जो कि नागरिकों की रेट से सम्बन्धित अपीलों एवं विरोधों को सुनते हैं।

२

स्थानीय सरकार का क्षेत्र एवं बनावट

[THE AREA AND STRUCTURE OF LOCAL GOVERNMENT]

स्थानीय सरकार के विभिन्न स्तर होते हैं। इन स्तरों के बीच प्राय उच्चतर एवं निम्नतर का सम्बन्ध रहता है। यह सम्बन्ध प्रायः एक पिरामिड के समान समझा जाता है और इसमें उच्चस्तर पर स्थित निकाय, निम्नस्तर वाले निकायो पर पर्यवेक्षण एवं नियन्त्रण रखते हैं, किन्तु यह स्थिति प्रत्येक अवसर पर जरूरी नही है, अर्थात् यह आवश्यक नहीं है कि नीचे के स्तर पर उच्चस्तर का सदैव ही नियन्त्रण रहे। जब स्थानीय सरकार के विभिन्न स्तरो का वर्णन किया जाता है तो प्रायः इस प्रकार की निर्वाचित व्यवस्था को भी इंगित किया जाता है। उदाहरण के लिये यदि एक सगठन में तीन सूत्र (Tier) हैं तो यह हो सकता है कि निम्न सूत्र के निकाय का चुनाव उसी क्षेत्र द्वारा किया जाय और मध्यम निकाय के चुनाव निम्नतम निकाय के निर्वाचित सदस्य करें तथा सर्वोच्च निकाय के सदस्यो का निर्वाचन मध्यम सूत्र के निर्वाचको द्वारा किया जाय। ऐसी स्थिति में यद्यपि किसी भी स्तर का निकाय अपने उच्चतम के नियन्त्रण या निर्देशन मे कार्य नही करता किन्तु फिर भी उनके बीच स्तर का विभाजन रहता है। ब्रिटिश स्थानीय सरकार में जब हम स्तरों की बात करते हैं तो वहां इसका अर्थ न तो निर्वाचन सम्बन्धी सगठन से होता है और न ही नियन्त्रण एवं पर्यवेक्षण वाली पूर्व वर्णित व्यवस्था से वरन् यहा जैसा कि मि०आर०एम० जैक्सन (R. M. Jackson) लिखते हैं, प्रत्येक स्तर उन शक्तियों का प्रयोग करता है जो कि उसे कानून द्वारा सौंपी गई हैं और इन शक्तियो का प्रयोग वह अन्य किसी परिषद के पर्यवेक्षण के बिना स्वय के अधिकार के रूप में करता है।†

---

†"In the English pattern each level exercises assigned to it by the Law, and exercises these powers in its

ग्रेट ब्रिटेन मे यह व्यवस्था है कि स्थानीय निकायो को जो कार्य सौंपे गये हैं उनके सम्बन्ध मे वे मत्रालय से सीधी वार्ता कर सकते हैं। उन्हे मत्रालय से सम्पर्क स्थापित करने के लिए मध्यस्थ इकाईयो की सहायता लेने की जरूरत नही होती। इन स्तरो को यहा चुनाव के लिए भी काम मे नही लिया जाता। प्रत्येक स्तर पर जो परिषद चुनी जाती है उसके लिए पृथक निर्वाचन होता है। सुविधा एव बचत की दृष्टि से पैरिस पद परिषद तथा देहाती जिला परिषद के निर्वाचन एक ही साथ कर दिये जाते है किन्तु उनके लिए अलग मत पत्र का प्रयोग किया जाता है। यहा एक बात ध्यान मे रखने योग्य यह है कि कोई व्यक्ति एक समय में पेरिस परिषद, देहाती जिला परिषद एव काउन्टी परिषद का सदस्य हो सकता है। इसे सौभाग्य का विषय समझा जाता है कि विभिन्न परिषदो के सदस्यो के बीच परस्पर सम्बन्ध रहे। परिषदो के कर्मचारी वर्ग भी पृथक होते हैं।

प्रशासन की दृष्टि से ग्रेट ब्रिटेन मे स्थानीय सरकार की सत्ताओ को कई भागो मे विभाजित किया गया है जो कि विभिन्न क्षेत्रो की सेवा करते है। एक स्थानीय निकाय का क्षेत्र कितना होना चाहिये, यह प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है और स्थानीय सरकार का सगठन करते समय इस प्रश्न की अवहेलना नही की जा सकती। वैसे इसका सतोषजनक उत्तर प्रत्येक देश की भौगोलिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक परिस्थितियो के आधार पर प्राप्त किया जाता है। फिर भी इस सम्बन्ध मे कुछ सामान्य सिद्धान्त है जो कि प्रायः प्रत्येक देश पर लागू होते हैं चाहे वहा की परिस्थितिया किसी प्रकार की ही क्यो न हो। इस सम्बन्ध मे एक सिद्धान्त यह है कि व्यावहारिक दृष्टि से एक छोटे स्थान द्वारा वे सेवाए प्रदान नही की जा सकती जो कि एक बडे स्थान द्वारा प्रदान की जा सकती हैं। इसका एक स्पष्ट कारण यह है कि छोटे स्थानो के पास उनके अपने स्रोत नही होते और इन स्रोतो के बिना उनकी योजनाएं तथा लोगो की आकांक्षाए अधूरी रह जाती हैं। इसलिए यह जरूरी माना जाता है कि स्थानीय सस्था का आधार कम से कम इतना हो कि वह अपने कार्यो एव उत्तरदायित्वो को सम्पन्न करने योग्य साधन स्रोतो को उपलब्ध कर सके। स्थानीय निकायो के क्षेत्र एवं रूप के बारे मे समानता के सिद्धान्त को नही अपनाया जाना चाहिए क्योकि ऐसा करने पर प्रदान की जाने वाली सेवाओ के बीच पर्याप्त स्थानीय अन्तर आ जायेंगे और इस प्रकार छोटे स्थानो के जीवनस्तर मे भारी अन्तर आ जायेगा। दूसरे, राज्य को ऐसे स्थानो के लिए सेवाए प्रदान करनी पड़ेंगी जो कि घनिष्ट रूप से बसे हुए हैं, जबकि कस्बो द्वारा ये सेवाए इसलिए प्रदान की जायेगी क्योकि वे स्थानीय सरकार का अंग है। तीसरे, आसपास के समाज आपस मे मिल कर सयुक्त रूप से एक ऐसी सेवा को प्रदान करने का प्रयास करेंगे जो कि उन

---

own right and without supervision by any other Council."

—*R. M. Jackson*, The Machinery of Local Government, Macmillan & Co., 1958. P. 15.

मे से कोई भी अकेले रह कर नही कर सकता। इस प्रकार विशेष उद्देश्य के लिए सत्ता की रचना करनी होगी।

वर्तमान काल मे विश्व के प्रायः सभी देशो मे यह मान्यता है कि एक ही देश के विभिन्न स्थानो पर नागरिको को प्रदान की जाने वाली सुख सुविधाओ के बीच अधिक अन्तर नही रहना चाहिए। उदाहरण के लिए एक बालक को शिक्षा से सम्बन्धित सभी सुविधाये प्राप्त होनी चाहिये चाहे उसके माता पिता को आमदनी कुछ भी हो और वह किसी देहाती इलाके मे रह रहा हो अथवा बड़े शहर मे। इसका अर्थ यह हुआ कि जिन सेवाओ मे अधिक खर्चे की आवश्यकता होती है वे या तो राज्य द्वारा सचालित की जानी चाहिए या उन्हें पर्याप्त आकार वाली स्थानीय सत्ताओ को सौंप देना चाहिये कि आवश्यक संस्थाओ को चलाने के लिये आवश्यक धन का प्रबन्ध कर सके।

ग्रेट ब्रिटेन मे स्थानीय सरकार की परम्परागत इकाईया मुख्य रूप से काउन्टिया, चार्टर द्वारा निर्धारित कस्बे और पेरिस है। यदि हम कुछ समय के लिये चार्टर द्वारा घोषित कस्बो एव बिना चार्टर के कस्बो तथा बड़े कस्बो की विशेष स्थिति को अलग रखदें तो हमे ब्रिटिश स्थानीय सरकार की व्यवस्था मे तीन स्तर प्राप्त होते हैं। इसका निम्न स्तर गाव है, मध्य स्तर देहाती जिले है जिनमे अनेक गाव और साधारण कस्बे भी आ जाते हैं और सर्वोच्च स्तर काउन्टी होता है। सैद्धान्तिक दृष्टिसे काउन्टी परिषद को उन सभी विषयो पर विचार करना चाहिये जो कि सम्पूर्ण काउन्टी को प्रभावित करते है और प्रशासन एव वित्तीय की दृष्टि से उसे बड़े से बड़े क्षेत्र पर अधिकार रखना चाहिए। मध्य स्तर वाले देहाती जिलों और छोटे कस्बे को ऐसे विषयो पर विचार करना चाहिये जो कि इन क्षेत्रो के लिए उपयोगी हैं तथा गाव को शुद्ध रूप से उन विषयो से सम्बन्ध रखना चाहिये जो कि गाव के क्षेत्र से सम्बन्धित हैं। इस प्रकार इस व्यवस्था के अन्तर्गत गावो मे रहने वाले लोग यह पायेगे कि उनके ऊपर तीन सत्तायें कार्य कर रही है, ये है पेरिस परिषद, जिला परिषद, और काउन्टी परिषद। जो लोग छोटे या बीच के स्तर के कस्बो मे रहते हैं उनके ऊपर दो सत्ताए कार्य करती हैं कस्बे की परिषद और काउन्टी की परिषद।

ग्रेट ब्रिटेन मे सूत्रो की योजना को दो तथ्यो द्वारा अत्यन्त जटिल बना दिया जाता है, इनमे से प्रथम है बारो (Borough)। बॉरो उस कस्बे को कहा जाता है जिसे कि शाही चार्टर दिया जा चुका है। चार्टर देने की प्रक्रिया सदियो तक चली। इसके परिणामस्वरूप स्थिति ऐसी उत्पन्न हो गई कि आज बॉरो नाम सुन कर न तो किसी विस्तृत आकार का ही पता लगता है और न उनके महत्व के बारे मे ही, केवल यही ज्ञात होता है कि इतिहास के किसी चरण मे इनको शाही चार्टर दिया गया होगा। सदियो पहले जो स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण था अब हो सकता है कि उसका महत्व घट गया हो किन्तु यह एक तथ्य है कि उसको अभी भी बारो का स्तर दिया हुआ है। कई एक ऐसे बारोज हैं जिनकी जनसख्या पाच हजार से भी कम है। दूसरी ओर अनेक स्थानो की जनसख्या काफी बढ

चुकी है किन्तु अभी तक उनको बारो का स्तर प्राप्त नही हो सका है। स्थानीय सरकार की दृष्टि से साधारण बारो एवं शहरी जिलो के बीच बहुत थोडा ही अन्तर है। दोनो के बीच केवल नागरिक सम्मान का अन्तर है बारो मे मेयर, एल्डरमेन, पार्षद तथा नागरिक जीवन का एक परम्परागत रूप होता है जबकि शहरी जिले मे एक सभापति और पार्षद ही होते है।

स्थानीय सरकार की दृष्टि से बड़े आकार वाले कस्बो द्वारा अनेक प्रकार की समस्यायें उठाई जाती हैं। कई दृष्टियो से विचार करने के बाद यह निर्णय लिया गया कि बडे कस्बे काउन्टी परिषदो के शासन क्षेत्र मे नही आने चाहिये। बडे कस्बे जिनको कि काउन्टी बारोज कहा जाता है, अपने आप में स्वतन्त्र इकाई होते हैं। स्थानीय सरकार की दृष्टि से इन शहरो के चारो ओर दीवाल रहती है। ये भौगोलिक दृष्टि से तो काउन्टी मे ही रहते हैं किन्तु वैसे काउन्टी परिषद के अधिकार क्षेत्र से पूरी तरह बाहर रहते है। कई बार काउन्टी बारोज को एकसूत्रीय संस्था कह दिया जाता है किन्तु यह शब्दो का गलत प्रयोग है क्योकि सूत्र (Tier) जहा भी होता है वहा कम से कम दो निकायो का होना जरूरी है। इन निकायो की स्थिति ब्रिटिश स्थानीय सरकार के अन्य स्तरो जैसे गैर काउन्टी बारो, शहरी जिले एवं गाव आदि से भिन्न होती है। कई सूत्रीय व्यवस्था मे अनेक प्रकार की परिषदें होती हैं। उनके बीच कार्य का स्पष्ट रूप से विभाजन किया जाता है। अतः निकाय सामान्य उद्देश्य वाली सत्तायें (General Purpose Authority) कही जा सकती हैं किन्तु काउन्टी बारोज सर्वोद्देश्यी सत्ता (All Purpose Authority) होते हैं।

उद्देश्य के आधार पर क्षेत्र का निर्धारण
(Determination of Area on the Basis of Purposes)

क्षेत्र के आधार पर स्थानीय सत्ताओ के लक्ष्य की प्रवृति एवं प्रसार मे भारी अन्तर आ जाता है। उद्देश्य की दृष्टि से स्थानीय निकायो को प्रायः तीन प्रकार का माना जाता है। इन उद्देश्यो को हम स्थानीय सरकार के क्षेत्र निर्धारण का आधार भी कह सकते हैं। हम इसका प्रथम आधार इस मान्यता को कह सकते है कि स्थानीय निकायो द्वारा इतनी सेवायें संचालित की जानी चाहिए जितनी कि की जा सकें। एक सेवा के लिए क्षेत्र को संतोषजनक होना चाहिए। इस प्रकार हम स्थानीय सरकार से सम्बन्धित एक-एक सेवा को लें और यह विचार करें कि इसके लिए उपयुक्त क्षेत्र क्या रहेगा। दूसरे शब्दो में हमे इस पर विचार करना होगा कि केचमेन्ट क्षेत्र (Catchment Area) क्या है। यह एक सामान्य पद है जिसका अर्थ होता है एक ऐसा क्षेत्र जो कि किसी संस्था का पोषण करे (An area which seeds some institution).

इस प्रकार एक स्कूल या अस्पताल का केचमेन्ट क्षेत्र वह कहलायगा जहा से कि विद्यार्थी या मरीज प्राप्त किये जा सकें। अलग अलग प्रकार के स्कूलो के केचमेन्ट क्षेत्र भी अलग-अलग होंगे। सोचने का एक अन्य तरीका यह हो सकता है कि इन संस्थाओ के आकार के बारे मे विचार करें कि क्या यह संतोषजनक रूप मे पर्याप्त सेवा प्रदान कर सकेगा। एक स्कूल मे इतना

योग्य एवं पर्याप्त स्टाफ होना चाहिए कि वह अध्यापक के दायित्व को सम्भाल सके। यत्रों एव अन्य साधनो के अपनाने से भी क्षेत्र के आकार मे पर्याप्त अन्तर आ जाता है। बहुत वर्ष हुए तब यह माना जाता था कि अग्नि-रक्षको का सेवित क्षेत्र छोटा होना चाहिए ताकि अग्नि के इंजन को अग्नि तक शीघ्र ही ले जाया जा सके, किन्तु अब स्थिति बदल चुकी है। आज अग्नि बुझाने वाला यन्त्र एक जगह से दूसरी जगह बिना अधिक समय लगाए जा सकते हैं। इसलिए यदि हम उसके कार्यकर्ताओ को कार्य मे सलग्न रखना चाहते हैं तो इस सेवा के क्षेत्र को बडा बनाना होगा। प्रायः ऐसा कम हो पाता है कि किसी भी सेवा के क्षेत्र मे हम यह कह दें कि इसका सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र यही है और इसमे कोई परिवर्तन करने की जरूरत नही पडेगी। जल वितरण जैसी सेवा के कुछ स्वाभाविक क्षेत्र होते है। हम यह कह सकते हैं कि पानी एक विशेष स्थान से आएगा और उसे इस क्षेत्र मे वितरित किया जा सकेगा किन्तु अधिकतर सेवाओ के सम्बन्ध मे स्वाभाविक क्षेत्र (Natural Area) नही होता। उनके सही क्षेत्र का निर्धारण दो बातो के आधार पर किया जा सकता है। प्रथम है सम्बन्धित जनता की सुविधा और दूसरी है बचत एवं कार्यकुशलता के लिए क्रियान्विति का उपयुक्त स्तर। इस प्रकार के विषयो में प्रत्येक सेवा के लिए अलग सत्ता की रचना करनी होती है। इस दृष्टि से हमें स्कूलो के लिए उपयुक्त प्रत्येक क्षेत्र के लिए एक स्कूल बोर्ड बनाना होगा, जल वितरण उद्यम के लिए उपयुक्त क्षेत्र के लिए जल मण्डल बनाना होगा और इसी प्रकार यातायात मण्डल, अस्पताल मण्डल, आदि बनाने होगे। ये निकाय विशेष उद्देश्य के लिए बनाई गई या सामयिक (Ad-hoc) सत्ता कही जा सकती हैं। जब अलग-अलग क्षेत्रो मे प्रदान की जा रही स्कूल, जल-वितरण, यातायात एव स्वास्थ्य से सम्बन्धित सेवाएं कुछ समझौता करके एक ही सत्ता के आधीन आ जाती हैं तब वह सत्ता सामान्य उद्देश्य वाली सत्ता कहलाती है। इसे बहुउद्देश्यीय सत्ता भी कहा जा सकता है। इस प्रकार स्थानीय सत्ताओ के बीच बहुउद्देश्यीय एव विशेष उद्देश्यीय के रूप मे अन्तर किया जा सकता है।

विशेष उद्देश्य के लिए बनाए गए सगठनो का अपना उद्देश्य है। यद्यपि आजकल इस प्रकार की सत्ताओ का पक्ष नही लिया जा सकता फिर भी इनमे से अनेक आज भी कार्य कर रही हैं और निकट भविष्य मे भी करती रहेगी। विशेष उद्देश्य के लिए बनाए गए निकायो की उपयोगिता एवं महत्व का वर्णन निम्न प्रकार किया जा सकता है—

प्रथम, स्थानीय सरकार का जो ऐतिहासिक विकास हुआ वह विशेष उद्देश्यों को पूरा करने के लिए हुआ था। पहले जब इंगलैंड की सडक खराब होती थी तो लोग यह नही कहते थे कि हमे स्थानीय सरकार चाहिए बल्कि वे केवल यह कहते थे कि यहा से लेकर वहा तक की सडक खराब है और इसलिए उसे ठीक करने के लिए एक निकाय की रचना की जानी चाहिए। इसके परिणामस्वरूप उस सड़क के सम्बन्ध मे विशेष निकाय की रचना कर दी जाती थी।

दूसरे, किसी विशेष सत्ता की रचना के प्रस्ताव पर प्रायः शीघ्र ही सामान्य स्वीकृति प्राप्त हो जाती है। उदाहरण के लिए यदि कोई गाव कुछ सुधार करना चाहता है और इस दृष्टि से वह जल वितरण की व्यवस्था करना चाहता है तो उसके कुछ निवासी विशेष जल-वितरण सत्ता के सगठन की माग कर सकते हैं और वे कह सकते हैं कि इस सत्ता के क्षेत्र में किसी के द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए तथा इसको पानी काम में लाने वालों के भुगतान द्वारा समर्थित किया जाना चाहिए; ऐसे प्रस्ताव का सम्भवतः कोई भी विरोध नहीं करेगा।

तीसरे, जब विशेष उद्देश्य के लिए एक सत्ता की रचना की जाती है तो यह सम्भव बन जाता है कि उसका प्रशासकीय मण्डल कुछ हितों का प्रतिनिधित्व करेगा। नालियों से सम्बन्धित मण्डल में उस भूमि के स्वामी एवं उपभोक्ताओं को प्रतिनिधि बनाया जा सकता है जिनकी भूमि की नालियों को साफ किया जाता है। दूसरी ओर सामान्य उद्देश्य वाली परिषद प्रायः निर्वाचित होती है और यह निश्चित नहीं होता कि विशेष हितों का प्रतिनिधित्व किया जाएगा।

चौथे, विशेष उद्देश्य वाली सत्ता को वहा भी अपनाया जा सकता है जहा के क्षेत्र सामान्य उद्देश्य वाली सत्ता के लिए अनुपयुक्त हों। कुछ परिस्थितियों में विशेष उद्देश्य वाली सत्ता अपरिहार्य बन जाती है।

पाचवें, विशेष उद्देश्य वाली सत्ताओं को कभी-कभी यह सोच कर बना दिया जाता है कि उनका प्रशासन बिना दलीय राजनीति के सम्पन्न किया जा सकेगा। इगलैण्ड में प्रसारण के लिए राष्ट्रीय-मण्डल और राष्ट्रीय-उद्योग इसके उदाहरण हैं।

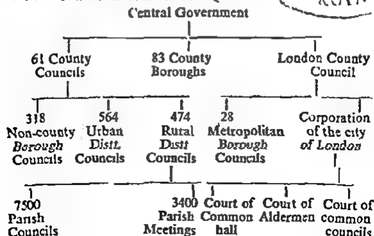
विशेष उद्देश्य के लिए बनाई गई सस्थाओं के कुछ नुकसान भी होते हैं जो कि सामान्य उद्देश्य के लिए बनाई जाने वाली सत्ता के लाभ बन जाते हैं। इनमें प्रथम है कि यदि विशेष उद्देश्य वाली सत्ताओं को जनता द्वारा निर्वाचित किया जाए तो इनके लिए अनेक निर्वाचन करने पड़ेंगे और यदि इनको अलग-अलग समय कराया गया तो उनसे लगातार परेशानी बनी रहेगी और यदि उनको एक ही साथ कराया गया तो उनसे भ्रम पैदा हो जाएगा। दूसरे, विशेष उद्देश्यों वाली सत्ताओं के सगठन से जनता की असुविधा बढ जाती है। उनको यह पता नहीं रहता कि किस काम के लिए किस सत्ता के पास जाना चाहिए। उदाहरण के लिए एक बच्चे के मा-बाप स्पष्टतः यह नहीं जान पाते कि कुछ मामले शिक्षा विभाग के अन्तर्गत आते हैं अथवा स्वास्थ्य सेवाओं के युद्ध-कालीन अनुभवों से यह स्पष्ट हो गया था कि सारी सेवाए एक ही स्थान एव अभिकरण द्वारा प्राप्त करना सुविधाजनक रहता है। तीसरे, सामान्य उद्देश्य वाली सत्ता में विभिन्न सेवाएं परस्पर सम्बन्धित रहती हैं और ऐसा रहने पर ही वे प्रभावित जनता की अच्छी प्रकार सेवा कर पाती हैं। यह सम्भव है कि यातायात, गृह-निर्माण, जल-वितरण एवं विद्युत आदि सेवाओं को अलग से रखा जाए और उनका प्रशासन किया जाए। विकास की दृष्टि से उनको समन्वित किया जाना जरूरी होजाता है। गृह-निर्माण में विकास का अर्थ होता है कि इसके लिए

अधिक स्कूल तथा अन्य सुविधाओं की आवश्यकता होगी। केवल सामान्य उद्देश्य वाली सत्ता रखने पर ही यह निश्चित रूप से माना जा सकता है कि उनके बीच समन्वय रहेगा। चौथे, समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए यह जरूरी होजाता है कि लोग जिन कार्यों को करना चाहते हैं उन्हें करने के लिए उनके पास पर्याप्त धन हो। रहन-सहन का स्तर, घर की बनावट, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं अस्पताल आदि के क्षेत्र मे सुधार केवल तभी किए जा सकते हैं जब कि धन पर्याप्त मात्रा मे हो; किन्तु ऐसा प्रायः नहीं होता और यही कारण है कि अपने प्रतिदिन के कार्यों में स्थानीय सरकार को कुछ महत्वपूर्ण कार्यों को प्राथमिकता देनी ही पड़ती है। प्राथमिकता की इस प्रक्रिया के मार्ग में विशेष उद्देश्य वाली सत्ता व्यवस्था में अत्यन्त कठिनाई रहेगी और यह तय करना मुश्किल रहेगा कि प्रसार कहां किया जाना चाहिए। यद्यपि सामान्य उद्देश्य वाली सत्ता में कठिनाई तो होती ही है किन्तु यह कठिनाई अपेक्षाकृत कम रहती है। उन्नीसवीं शताब्दी में ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार में अनेक विशेष उद्देश्य वाली सत्ताएं थीं किन्तु धीरे-धीरे ये मिटती चली गईं।

स्थानीय सरकार के विभिन्न क्षेत्र

[Different Areas of Local Government]

ग्रेट ब्रिटेन मे स्थानीय प्रशासन के मुख्य रूप से तीन क्षेत्र पाए जाते हैं– इनमें प्रथम है काउन्टी, दूसरा है नगरपालिका बारो और तीसरा है पेरिश। काउन्टी स्थानीय सरकार का सबसे व्यापक क्षेत्र है। यह स्थानीय व्यवस्था का सर्वोच्च स्तर माना जाता है। ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन में क्षेत्र के सम्बन्ध मे विभिन्न प्रश्न उठते हैं, जैसे इन क्षेत्रों की मूल विशेषताएं क्या हैं, इनका आपसी सम्बन्ध क्या है, क्या कार्य की दृष्टि से ये क्षेत्र उपयुक्त हैं, इनमें विकास की दृष्टि से क्या किया जाना चाहिए। इन क्षेत्रों के बारे में व्यापक रूप से अध्ययन करने से पूर्व यह उपयुक्त रहेगा कि इनकी विभिन्न सत्ताओं की एक सामान्य जानकारी प्राप्त करली जाए। इन संस्थाओं को निम्न चित्र द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है—



प्रत्येक काउन्टी मे कई इकाइयां होती हैं किन्तु सन् १८८८ के अधिनियम के बाद से ही काउन्टी बारोज पर इसका कोई नियन्त्रण नही रहता। काउन्टी बारोज स्तर की दृष्टि से काउन्टियो के समान होते हैं तथा इनके अधिकार क्षेत्र से स्वतन्त्र रहते हैं। काउन्टी की परिषद पूरे काउन्टी के क्षेत्र पर अधिकार रखती है। किन्तु यह काउन्टी बारो की सीमा आते ही रुक जाता है नगरपालिका बारो एवं शहरी तथा देहाती जिलो तथा पेरिशो पर काउन्टी परिषद का पूरा नियन्त्रण रहता है। इसके कुछ अपवाद भी हैं। सन् १९४६ तक काउन्टी परिषद नगरपालिका बारो की पुलिस के सम्बन्ध में कोई अधिकार नही रखती थी। सन् १९४४ तक प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध मे उसे कोई अधिकार नही था। काउन्टी बारोज पूर्णतः स्वतन्त्र शक्तियो वाला निकाय है। उनके क्षेत्र मे कुछ शक्तियो का प्रयोग काउन्टी परिषद द्वारा किया जाता है। इसके अतिरिक्त वे स्वतन्त्र रूप से अपनी शक्तियो का प्रयोग करते है। नगरपालिका बारो के क्षेत्र मे जिन सेवाओ का सम्बन्ध प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, पुलिस, व्यक्तिगत स्वास्थ्य सेवाएं आदि से होता है वे काउन्टी परिषद द्वारा सम्पन्न किए जाते हैं। शहरी जिलो मे भी इन सेवाओ को काउन्टी परिषद ही सम्पन्न करती है। देहाती जिले छोटे निकाय होते हैं, इनको शक्तियां भी कम होती हैं। इनको शिक्षा पुलिस या महत्वपूर्ण सड़को के बारे मे कोई शक्ति प्राप्त नही है।

नगरपालिका बारो, शहरी जिलो एवं देहाती जिलो को मिला कर पहले काउन्टी जिले का नाम दे दिया जाता था। इस प्रकार कुल मिला कर स्थानीय सरकार के निकायों की सख्या छ हो जाती है। ये हैं—काउन्टी बारो, प्रशासकीय काउन्टी, नगरपालिका या गैर काउन्टी बारो, देहाती जिला, शहरी जिला और पेरिश। लन्दन की काउन्टी परिषद मे अनेक बारोज है जिनको राजधानी बारोज की सज्ञा दी जाती है। लन्दन शहर मे लगभग अट्ठाईस राजधानी बारो परिषदें हैं। इसके अतिरिक्त लन्दन नगर के लिए एक निगम है। ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन मे कार्य कर रहे विभिन्न निकायो के क्षेत्र सदियो के विकास का परिणाम हैं। सन् १८३५ के नगर निगम अधिनियम ने बारोज को निर्वाचन के आधार पर पुनर्गठित किया। सन् १८८८ के अधिनियम ने एक नए प्रकार के बारो की स्थापना की, यह था काउन्टी बारो। इस अधिनियम मे काउन्टी परिषदें भी स्थापित थी। सन् १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने शहरी, देहाती और पेरिश परिषदें स्थापित की और उनको नगरपालिका बारोज के साथ प्रशासकीय काउन्टी के स्वरूप मे निश्चित कर दिया। जब सन् १८८८ मे अन्य काउन्टी परिषदो की स्थापना की गई तभी लन्दन काउन्टी परिषद को भी बनाया गया किन्तु राजधानी बारोज की स्थापना सन् १९०० मे हुई। वर्तमान स्थानीय सरकार की मूल विशेषता यही मानी जाती है कि वहा काउन्टी बारो की इकाई एव क्षेत्र अन्य इकाइयो से भिन्न हैं।

सन् १९२६ तक काउन्टी बारो की स्थापना के लिए कम से कम पचास हजार जनसख्या का होना जरूरी था; किन्तु बाद मे नए काउन्टी बारो की स्थापना के लिए कम से कम जनसख्या पचहत्तर हजार कर दी गई।

सन् १९४३ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने यह मात्रा एक लाख तक कर दी। आज भी यदि कोई गैर काउन्टी बारो काउन्टी बारो का स्तर प्राप्त करना चाहता है तो उसमें कम से कम एक लाख जनसंख्या का होना जरूरी है। प्राय. प्रत्येक गैर काउन्टी बारो यह प्रयास करता है कि वह काउन्टी बारो बन जाए ताकि वह जिस काउन्टी मे स्थित है उसके अधिकार क्षेत्र से बच सके। विभिन्न काउन्टी बारोज की जनसंख्या एवं आकार में भारी अन्तर वर्तमान है। उदाहरण के लिए बिरमिंघम मे ग्यारह लाख छ: हजार जनसंख्या और ८० वर्ग मील क्षेत्र है जबकि केन्टरबरी मे तीस हजार जनसंख्या है और सात वर्ग मील का क्षेत्र है। काउन्टी बारोज में से हो कर एक प्रशासकीय काउन्टी के क्षेत्र में आने वाले प्रत्येक नगरपालिका बारो, शहरी जिले एवं देहाती जिले तथा देहाती पेरिशें काउन्टी परिषद के अधिकार क्षेत्र में रहती हैं। इन काउन्टी क्षेत्रों में सेवाओं को काउन्टी परिषद, नगरपालिका बारो परिषद शहरी जिला परिषद, देहाती जिला परिषद और पेरिशों में बाट दिया जाता है। नगरपालिका बारोज एवं जिलों द्वारा इतना राजस्व इकट्ठा किया जाता है जा कि काउन्टी एवं उनके स्वयं के लिए काम में आ सके।

इ * काउन्टी बारो का एक नागरिक जो सेवाएं प्राप्त करता है वे केवल काउन्टी बारो परिषद द्वारा दी जाती हैं। किन्तु नगरपालिका बारो या शहरी जिलो का व्यक्ति यह पाता है कि उसे कुछ सेवाए नगर-पालिका बारो या शहरी जिला परिषद द्वारा दी जा रही है और अन्य सेवाए काउन्टी परिषद द्वारा। यदि वह जनता जो कि देहाती जिलो मे रह रही हो तो उसे कुछ सेवाए काउन्टी परिषद द्वारा दी जाएगी। कुछ देहाती जिला परिषद द्वारा और अन्य सेवाए पेरिश परिषदो द्वारा या मिटिंगो द्वारा दी जाएगी। नगरपालिका बारो शहरी जिले, देहाती जिले और पेरिश परिषदे, यद्यपि ये सभी काउन्टी परिषद के क्षेत्र में कार्य करते हैं किन्तु ये उसके मातहत नही होते। काउन्टी क्षेत्र के अन्तर्गत प्रत्येक प्रकार की परिषद उसे सौंपे गए कार्य को सम्पन्न करने के लिए स्वतन्त्र रूप से उत्तरदायी है।

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के निकाय बनावट एवं कार्यों की दृष्टि से इतने जटिल होते हैं कि उन्हे समझना कई बार बडा कठिन बन जाता है। यदि कोई व्यक्ति यह प्रश्न करना चाहे कि ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन में शहर (City) का क्या स्थान है तो इसका उत्तर यही दिया जायगा कि स्थान वास्तविकता की दृष्टि से कुछ भी नही है। ग्रेट ब्रिटेन के बड़े से बड़े शहर जैसे लिवरपूल, मेनचेस्टर आदि मे काउन्टी बारोज के अतिरिक्त और कुछ भी नही हैं। इस प्रकार नगर (City) शब्द केवल एक सम्मान-सूचक पद है जो कि स्थानीय प्रशासन की दृष्टि से कोई महत्व नहीं रखता।

१९६० की वस्तुस्थिति के अनुसार देश में ६२ प्रशासकीय काउन्टीज थी। प्रशासकीय काउन्टी वह होती है जिसमे से काउन्टी बारोज को अलग निकाल लिया जाता है। यदि ऐसा न्हीं किया जाए तो ऐसी स्थिति मे भौगोलिक

काउन्टी की सीमाओं से मिलती हैं। लन्दन एक भौगोलिक काउन्टी नहीं है। बल्कि प्रशासकीय काउन्टी है। राजधानी लन्दन सरकार, लन्दन काउन्टी परिषद के क्षेत्र की जनसंख्या ३२ लाख है। प्रान्तीय प्रशासकीय काउन्टियों में आकार की दृष्टि से पर्याप्त विभिन्नताएं वर्तमान हैं। लंकाशायर और मिडिलसेक्स (Middlesex) की जनसंख्या दो मिलियन से अधिक है जब कि रूटलैण्ड (Rutland) की जनसंख्या केवल २३ हजार है। तेरह काउन्टियां ऐसी हैं जिनकी जनसंख्या एक लाख से कम है। काउन्टी बारोज की संख्या ८३ है। भविष्य में केवल उन्हीं प्रदेशों को काउन्टी बारो बनाया जा सकता है जिनकी जनसंख्या कम से कम एक लाख हो। इस श्रेणी के लगभग ३४ कस्बों की जनसंख्या इस मात्रा से कम है। केन्टरबरी की जनसंख्या केवल तीस हजार है। इनमें से लगभग बीस कस्बों की जनसंख्या करीब दो लाख है। ये सभी मिले-जुले शहरी समाज हैं।

नगरपालिका बारोज की संख्या ३१८ है और मैट्रोपोलिटन बारोज की संख्या २८ है। इनमें से लगभग ३६ नगरपालिका बारोज की जनसंख्या ५००० और १०००० के बीच में है और करीब पचास की जनसंख्या ५००० से नीची है तथा करीब पचास की जनसंख्या २५०० से भी कम है। मोन्टगोमरी में केवल ८८० निवासी रहते है। ये छोटे-छोटे कस्बे अधिकतर प्राचीन केन्द्र रहे हैं। इनको औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व पर्याप्त स्तर एवं सम्मान मिला हुआ था किन्तु बाद में नए कस्बों के बनने से ये क्षीण हो गए। दूसरी ओर लगभग १५ नगरपालिका बारोज की जनसंख्या एक लाख से भी ज्यादा है। यह सब बीसवीं शताब्दी के दौरान विशाल लन्दन शहर में अर्द्ध शहरी विकास के कारण हुआ।

शहरी जिलों की संख्या ५६४ है। इनमें से दो की जनसंख्या एक लाख से भी ज्यादा है किन्तु करीब २५४ जिले दस हजार से भी कम जनसंख्या वाले हैं। इस वर्ग के निकायों में कई एक का आकार अत्यन्त छोटा है। १२२ शहरी जिले तो ५००० से भी कम जनसंख्या वाले हैं। देहाती जिलों की संख्या ४७४ है। इनमें से पांच का क्षेत्रफल दो लाख एकड़ से भी ज्यादा है जो कि छः काउन्टी परिषदों के व्यक्तिगत क्षेत्रफल से भी ज्यादा है। इनमें से किसी की भी जनसंख्या एक लाख से भी अधिक नहीं है और इस समूह में आने वाली लगभग ½ इकाइयों की जनसंख्या ५००० से लेकर तीस हजार तक है किन्तु ३६ इकाइयां ५००० से भी कम जनसंख्या वाली हैं। कुछ ऐसे पेरिशों की संख्या ७५०० है जहां पर कि प्रशासन व्यवस्था परिषद द्वारा सचालित की जाती है। दूसरी ओर करीब ३४०० पेरिशें बैठकों (Meetings) द्वारा प्रशासित होती हैं।

स्थानीय सरकार सीमा आयोग के कार्य
[The Functions of Local Government Boundry Commission]

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार का जो क्षेत्र निर्धारित कर दिया गया है वह अत्यन्त जटिल, भ्रमपूर्ण एवं उलझा हुआ है। सन् १८८८ में जबकि वर्तमान स्थानीय सरकार के रूप का निश्चय किया गया था उस समय यह अनुभव किया गया कि समय-समय पर यह जरूरी होगा कि

सामान्य एवं आर्थिक विकासों के सन्दर्भ में इस बनावट में परिवर्तन किए जाए। सन् १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने, स्थानीय सरकार मण्डल को स्थानीय सरकार के क्षेत्र में परिवर्तन करने का कार्य सौंपा गया तथा यह भी शक्ति दी गई कि नई सत्ताएं बना सके और वर्तमान सत्ताओं को मिला सके। सन् १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने यह प्रावधान रखा कि हर बीस साल के बाद इन सत्ताओं की पुनरीक्षा कर ली जाए। इन दोनों अधिनियमों द्वारा जो परिवर्तन लाए गए व तीव्र गति से परिवर्तित होती हुई सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के अनुकूल नहीं थे। सन् १८८८ के बाद स्थानीय सरकार निकायों को कई नए उत्तरदायित्व सौंप दिए गए है। शिक्षा, स्वास्थ्य एवं गृह निर्माण के क्षेत्र में इनकी शक्तियां बढ़ गई हैं। दूसरी ओर उनके अनेक उत्तरदायित्व छीन भी लिए गए है और इन्हें केन्द्रीय सरकार या राष्ट्रीय निगमों को दे दिया गया है।

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार की यह विशेषता मानी जाती है कि वहां काउन्टी तथा काउन्टी बारोज के बीच सदैव ही संघर्ष छिड़ा रहता है। सन् १८८८ के अधिनियम ने ६१ कस्बों को काउन्टी बारो बना दिया। इनमें से प्रत्येक की जनसंख्या ५०००० से ज्यादा थी। अधिनियम में यह भी कहा गया कि कम से कम इतनी जनसंख्या प्राप्त कर लेने के बाद अन्य काउन्टी बारोज बनाए जा सकेंगे। काउन्टी बारोज की सीमा के प्रसार की भी व्यवस्था की गई। सन् १८८८ से लेकर सन १९२६ तक अनेक बारोज को प्रावधित आदेश द्वारा काउन्टी बारोज के रूप में पदोन्नत कर दिया गया, और इससे भी अधिक काउन्टी बारो की सीमा का प्रसार किया गया। जब किसी गैर काउन्टी बारो को काउन्टी बारो का स्तर दे दिया जाता तो इससे काउन्टी परिषदों को बहुत बुरा मालूम होता था क्योंकि अब वे उन पर किसी शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकती थी। उनके राजस्व के स्रोत भी कम हो गये थे अतः काउन्टी परिषद द्वारा किसी गैर काउन्टी बारो को काउन्टी बारो का स्तर दिया जाना एक ऐसा बड़ा आपरेशन समझा जाता था जिसकी मरीज द्वारा कभी भी क्षति-पूर्ति न की जा सके। सन् १९२६ के अधिनियम द्वारा यह व्यवस्था की गई कि भविष्य में कोई भी नया काउन्टी बारो केवल संसद के अधिनियम द्वारा ही बनाया जा सकता था। स्थानीय सरकार की सत्ताओं के बीच का मत-मुटाव और विरोध केवल काउन्टी एवं काउन्टी बारो तक ही सीमित नहीं था वरन् शहरी और देहाती जिला परिषदें भी लगातार काउन्टी बारो सत्ताओं के हस्तक्षेप का विरोध करती रहती थी जो कि उनके अधिकार क्षेत्र में हाथ डाल कर अपनी सीमाओं का प्रसार करना चाहते थे। देहाती एवं शहरी जिला परिषदों ने यह मांग की कि काउन्टी परिषदें काउन्टी जिलों को यथासम्भव कार्य हस्तान्तरित कर दें किन्तु काउन्टी परिषदों ने अपने कार्य दूसरे सूत्र की सत्ताओं को सौंपने में अरुचि दिखाई।

इन विभिन्न मत विरोधों को दूर करने के लिए तथा स्थानीय सरकार की बनावट को हमेशा देखते रहने के लिये १९४५ के स्थानीय सरकार सेवा आयोग अधिनियम ने एक स्थानीय सरकार सीमा आयोग की स्थापना की।

यह आयोग एक स्थाई आयोग था, इसे विस्तृत शक्तिया प्रदान की गई। यह स्थानीय निकायो के क्षेत्र मे परिवर्तन कर सकता था, नई स्थानीय सत्ताओ को बना सकता था, नगरपालिका बारोज को काउन्टी बारोज के रूप मे पदोन्नत कर सकता था तथा काउन्टी बारोज के पद को कम कर सकता था। अधिनियम के अनुसार केवल एक लाख से अधिक जनसख्या वाले प्रदेश ही काउन्टी बारो बनने के लिए प्रार्थना पत्र दे सकते थे तथा साठ हजार से अधिक जनसख्या वाले काउन्टी बारोज के पद को नीचा नही किया जा सकता था। लन्दन को इस आयोग के अधिकार क्षेत्र से अलग रखा गया तथा यह आयोग मिडिल सैक्स की किसी भी काउन्टी के भाग को काउन्टी बारो नही बना सकता था। सन् १६४७ मे इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसके अनुसार इसके अधिकारी एव सदस्यो को स्थिति का अध्ययन करने का अवसर मिला। वे इस निर्णय पर पहुचे कि स्थानीय निकायो की सीमाए आवश्यक रूप से उनके कार्यों से सम्बन्ध रखती हैं और उनके कार्य सीमा आयोग के अधिकार क्षेत्र से बाहर के विषय है अतः केवल सीमाओ के बारे मे प्रस्ताव करना बेकार था। इस प्रकार १६४७ मे आयोग द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली रिपोर्ट के अन्दर न केवल स्थानीय सरकार की बनावट से सम्बन्धित सुधारो का ही वर्णन था वरन् स्थानीय सरकार के कार्यो के पुनर्वितरण पर भी विचार किया गया था। इनमे से कुछ प्रस्तावो को क्रियान्वित करने के लिए व्यवस्थापन की आवश्यकता थी।

किसी सेवा का आकार निश्चित करते समय आयोग का यह उद्देश्य रहता था कि प्रशासन के क्षेत्र को इतना छोटा बना दिया जाय ताकि एक कार्यकुशल सेवा प्राप्त की जा सके। इस सिद्धान्त को स्वीकार करते समय आयोग ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि स्थानीय हितो की साधना करना सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है। प्रतिवेदन मे कहा गया कि प्रशासन को प्रभावशाली इकाई बनाने के लिए छोटी काउन्टियो को मिला देना चाहिये और बडी काउन्टियो को दो या अधिक काउन्टियो मे विभाजित कर देना चाहिये ताकि प्रत्येक काउन्टी मे दो लाख से लेकर दस लाख तक की जनसख्या रह सके। जो वर्तमान काउन्टी बारो दो लाख से अधिक जनसख्या वाले हैं उनको काउन्टी का नाम दिया जाना चाहिए और इस प्रकार एक नये प्रकार की स्थानीय सत्ता स्थापित की जानी चाहिये। काउन्टी बारो को उनके क्षेत्र की अधिकाश सेवाओ के लिये उत्तरदायी बनाना चाहिए। इस प्रकार के नये काउन्टी बारो साठ हजार से दो लाख तक की जनसख्या वाले होने चाहिये। शहरी एव देहाती जिलो मे जो अन्तर रखा गया है उसे मिटा दिया जाना चाहिये।

आयोग द्वारा जो सिफारिशें प्रस्तुत की गई वे वर्गीय अन्तर को दूर करने के सशक्त प्रयास थे तथा काउन्टी एव बारो के सघर्षपूर्ण हितो के बीच मेल स्थापित करने वाले प्रयत्न थे। इसकी सिफारिशो के प्रति स्थानीय सत्ताओं ने उचित प्रतिक्रिया नहीं दिखाई और सरकार ने भी आवश्यक व्यवस्थापन नहीं किया। सरकार ने इस आयोग के प्रस्तावो को मानने के स्थान पर स्थानीय सरकार सीमा आयोग को समाप्त करने को ही

निर्णय ले लिया और १६४५ के अधिनियम को बदलने की सोची जो कि इस आयोग का आधार था। १६४६ के अधिनियम द्वारा ये दोनो बातें क्रियान्वित करदी गई। इसके परिणामस्वरूप उन समस्याओं को बिना सुलझी हुई छोड़ दिया गया जिन्हें सुलझाने के लिए इस आयोग की स्थापना की गई था, और इस प्रकार स्थानीय सरकार के सुधार को अनिश्चय के हाथो मे छोड़ दिया गया।

स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र का भविष्य
[Future of areas of Local Autnorities]

स्थानीय सरकार की सत्ताओ का भविष्य क्या हो सकता है इस सम्बन्ध में किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए दो बातो पर ध्यान देना आवश्यक है। प्रथम तो हमे अब तक हुए विकास के परिणामो को देखना होगा और दूसरे, यह देखना होगा कि वर्तमान सत्ताओ में संयुक्त कार्यक्रमो के लिए कौन कौन से प्रबन्ध किये गये और इस सम्बन्ध मे क्या सिफारिशें की गई। यदि हम ब्रिटिश स्थानीय सरकार का अध्ययन करे तो पायेंगे कि वहा स्थानीय सत्ताओ ने छोटे क्षेत्रो से बड़े क्षेत्रो की ओर प्रगति की है। इसके अतिरिक्त स्थानीय सत्ताओ के बीच किये गये कार्यों के वितरण मे स्पष्टता नही थी। संयुक्त कार्यक्रमो के लिए जो प्रबन्ध किये गये अथवा बडी सत्ताओ ने छोटी सत्ताओं को जो शक्तियां हस्तान्तरित की उससे पर्याप्त उलझनें एवं अस्पष्टताएं सामने आई। पुलिस सेवाएं पेरिश से लेकर काउन्टी तक सचालित होती थी। कुछ नगरपालिका बारोज को भी थोडी सी शक्तियां सौपी गई। शिक्षा स्कूल बोर्ड जिलो से प्रारम्भ हुई थी और तीस साल के अन्दर अन्दर यह काउन्टी तथा काउन्टी बारो के हाथ मे चली गई। निर्धनो की राहत का कार्य पेरिशो से प्रारम्भ हुआ था। किन्तु बाद मे पेरिसो के सघ मे चला गया। उसके बाद उसे काउन्टियो एवं काउन्टी बारो के हाथ मे दिया और अन्त मे यह सरकारी विभाग के हाथ मे चला गया। विद्युत वितरण का कार्य पहिले छोटी शहरी सत्ता के हाथ में था, बाद मे इसे काउन्टी द्वारा प्रशासित किया जाने लगा और अन्त मे विशेष विद्युत क्षेत्र स्थापित कर दिये गये। ऐसी भी कुछ सेवाएं थी जो कि प्रारम्भ से ही काउन्टी या काउन्टी बारोज के हाथो मे रही।

यह विकास आसानी से या बिना किसी मनमुटाव के नही हुआ वरन् इस विकास के दौरान छोटी सत्ताओ ने विरोध एवं असन्तोष के भाव पूरी तरह से प्रदर्शित किये। एक लम्बे विकास के परिणामस्वरूप जिन कार्यों के लिए बड़े आकार के सगठन की आवश्यकता थी उन्हें काउन्टी या काउन्टी बारोज को सौंप दिया गया, सरक्षको जैसे विशेष निकायो को समाप्त किया गया। छोटी सत्ताओ द्वारा जिन कार्यों को कुशलतापूर्वक किया जा सकता था उन्हें बारो एवं जिलो के हाथो में सौंपा गया। विकास के परिणामस्वरूप पेरिसो को इतना शक्तिहीन एवं कार्यहीन बना दिया कि स्थानीय प्रशासन मे उनका कोई महत्व ही न रहा।

स्थानीय सरकार के क्षेत्र मे सम्भवतः परिवर्तन की या बड़े स्तर के परिवर्तन की कोई आवश्यकता ही नही होती यदि स्थानीय सत्ताओ ने स्वेच्छा-

पूर्वक उन्हे सौंपी गई शक्तियो का प्रयोग किया होता। यदि ये स्थानीय सत्तायें सद्भावना एव सहयोग के साथ कार्य करती तो बिना ससदीय हस्तक्षेप के या क्षेत्रों के पुनर्गठन के ही वे उन सेवाओ के सचालन के लिये आवश्यक सयुक्त प्रबन्ध कर लेती जिनमे कि बचत एवं तकनीकी की दृष्टि से एक बड़े क्षेत्र की आवश्यकता होती है। सहयोग की यह समस्या अंग्रेजी स्थानीय सरकार के विकास की एक मुख्य समस्या रही है।

केन्द्रीय सरकार द्वारा सयुक्त कार्यक्रमो (Joint Schemes) की व्यवस्था की गई ताकि स्थित सत्ताए इसे अपना कर उन कार्यों को सम्पन्न करने के लिए पूर्ण एव आत्मनिर्भर क्षेत्र बन सकें जिन्हे सम्पन्न करने के लिए बड़े क्षेत्र की जरूरत होती है। इस व्यवस्था के कारण स्थित अपर्याप्त क्षेत्रो को भी बनाये रखा जा सकता है क्योंकि उनके सम्बन्ध मे भावनात्मक प्रेरणाए उदित हो जाती है। इन कार्यक्रमो के द्वारा सत्ताओ को स्वय का व्यक्तित्व बनाये रखने की सुविधा दी जाती थी, साथ ही कम दामो मे अच्छी सेवाए भी प्रदान की जाती थी। इस प्रकार के सयुक्त कार्यक्रमो की सम्भावनाए तो अनेक थी। इन्हें मुख्यतः चार वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है। इनके द्वारा सत्ताओ के उन विभिन्न वर्गों मे भी सयुक्त कार्यक्रमो का प्रबन्ध कर दिया जाता था जो एक दूसरे से भिन्न रहते थे और एक ही वर्ग के विभिन्न सदस्यों के बीच भी, चाहे वे पर्याप्त शक्तिया रखते हो अथवा नही ये सभी कुछ अपवादो को छोड करके स्वेच्छापूर्ण थी। इन योजनाओ के इतिहास को आशावादी नही कहा जा सकता। इनमे से कई एक तो अनेक समझौतो के बाद जन्म ले पाते थे और वह भी ऐसी स्थिति मे जबकि इन्हे न अपनाया जाता तो भारी हानि होने की सम्भावना थी। कई बार इन्हे न अपनाने का प्रभाव अप्रत्यक्ष होता था अर्थात् प्रशासकीय अकार्यकुशलता, परेशानी एव करो मे वृद्धि आदि बातें पैदा हो जाती थी। इस प्रकार की सयुक्त योजनाओ के प्रति प्रायः स्थानीय जनता का विरोध ही रहता है। इसका कारण एक न होकर अनेक हैं। इसका एक कारण यह है कि सयुक्त योजना मे सम्मिलित होने पर उन्हे यह डर रहता है कि एक बड़े क्षेत्र की आवश्यकता के पीछे उनको अपनी कुछ आवश्यकताओ एवं कार्यों का बलिदान करना पडेगा तथा एक या दो कार्य किसी अन्य सत्ता को सौंपने को बाध्य होना पडेगा। दूसरे, उन्हें यह डर भी रहता है कि यदि वे संयुक्त प्रबन्ध म सम्मिलित हो गये तो इसका अर्थ यह हुआ कि उन्होंने उस सेवा की आवश्यकता स्वीकार करली और सयुक्त बोर्ड के बहुमत के आधार पर उन्हें नये खर्च करने के लिए बाध्य किया जा सकता है जिसका अर्थ होगा, अधिक कर लगाना। तीसरे, वे अपनी स्वतत्रता के प्रति सजग रहते हैं। साथ ही उनमे पडौसियों के प्रति ईर्ष्या की भावना भी रहती है। इसके परिणामस्वरूप वे किसी सयुक्त प्रबन्ध मे सम्मिलित होने से पीछे हटते हैं। इस प्रकार के कार्यक्रमो में उचित नेतृत्व का अभाव रहता है और इसलिए इनमें अधिक परेशानिया उत्पन्न हो जाती हैं।

स्थानीय सरकार के क्षेत्र के सम्बन्ध मे एक सबसे बडी कठिनाई यह होती है कि इसके क्षेत्र को सही रूप में तय नही किया जा सकता। यह

देखना बड़ा कठिन है कि कौनसा क्षेत्र सबसे अधिक तकनीकी लाभ दे सकेगा। केवल कुछ सेवाओं में ही इसे निश्चित किया जा सकता है किन्तु यदि हम शिक्षा के सम्बन्ध में विचार करें तो स्पष्ट रूप में मालूम हो जायेगा कि हम यह नहीं कह सकते कि शिक्षा से सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र में रहने वाली जनसंख्या एक मिलियन हो, डेढ़ मिलियन हो या आधी मिलियन हो या केवल एक लाख लोग ही हों। कितनी जनसंख्या रहने पर कैसा परिणाम प्राप्त होगा हम यह निश्चित रूप से नहीं जान पाते। ऐसे उदाहरणों में विभिन्न लोगों द्वारा सार्वजनिक कार्यों में ली जाने वाली रुचि से एवं प्रशासकीय योग्यता की मात्रा से बहुत प्रभाव पड़ता है। प्रो० फाइनर के मतानुसार स्थानीय सरकार का अनुभव यह प्रदर्शित करता है कि आप अपने क्षेत्र को चाहे कितना भी बड़ा कर लीजिये उसमें सीमा सम्बन्धी समस्याएं सदैव ही रहेंगी जब तक कि सभी अपना सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र केन्द्रीय सत्ता द्वारा प्रशासित इंगलैण्ड को न बना ले। वे लिखते हैं कि इस प्रकार से कोई क्षेत्र कभी पूर्ण नहीं हो सकता और संयुक्त प्रबन्ध की आवश्यकताओं को कभी दूर नहीं किया जा सकता।*

स्थानीय क्षेत्र से सम्बन्धित समस्याओं को सुलझाने के लिए क्षेत्रीय या प्रान्तीय प्रबन्धों का सुझाव दिया जाता है। किन्तु यह सुझाव भी अनेक दोषों से पूर्ण है और इसलिए उसे भी मान्यता प्रदान नहीं की गई। कोई भी यह विश्वास नहीं करता कि काउन्टी बारो के लिए दो सूत्रीय कार्यक्रम अच्छा रहेगा या काउन्टियों के लिए तीन सूत्रीय कार्यक्रम श्रेष्ठ रहेगा। अतः फाइनर के मतानुसार स्थानीय सरकार के क्षेत्र का भविष्य यह प्रदर्शित करता है कि भविष्य में कुछ सेवाओं के केन्द्रीयकरण पर जोर दिया जायेगा, जिलों, काउन्टियों एवं बारोज की पुनः रचना की जायेगी, मुख्य इकाइयों का आकार बढ़ा दिया जायेगा और उनके बीच अच्छा सहयोग उत्पन्न किया जायेगा। कुल मिला कर ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सरकार के क्षेत्र की समस्याएं इसी प्रकार बनी रहेंगी जिस प्रकार कि अन्य देशों की स्थानीय सरकारों में बनी रहती हैं किन्तु इन समस्याओं के प्रसार एवं प्रभाव को यहां वहां कुछ परिवर्तन करने के बाद कुछ कम किया जा सकता है और ऐसा बनाया जा सकता है कि वे अपने लक्ष्यों को अधिक से अधिक संतोषप्रद रूप में प्राप्त कर सकें।

स्थानीय सत्ताओं की बनावट
(The Structure of Local Authorities)

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार की विभिन्न इकाइयों का अध्ययन करने के बाद यह उपयोगी एवं अनिवार्य हो जाता है कि इन विभिन्न इकाइयों का संगठन, अधिकार क्षेत्र आदि के विषय में थोड़ा अध्ययन किया जाय। यहाँ स्थानीय निकायों की रचना इसी सिद्धान्त के आधार पर की गई

*"Short of that, the area can never be perfect; nor can one ever avoid the necessity of joint arrangements."
—*Herman Finer*, Op. Cit P. 180

है। इस तथ्य को यदि दूसरे रूप मे कहा जाय तो अच्छा रहेगा क्योकि असल में इन निकायो की एक समय मे किसी एक व्यक्ति के प्रयास से नही की गई है बल्कि य धीरे-धीरे परिस्थितियो एव आवश्यकताओ के परिवेश मे विकसित हुई हैं। ऐसी स्थिति मे यह कथन भी एक विरोधाभास प्रतीत होता है कि स्थानीय सत्ता की रचना या गठन करते समय पूर्वनिर्धारित एवं तर्कपूर्ण मान्यताओं को आधार बनाया गया है। समय की परिस्थितियाँ अनिश्चित रहने के कारण उनसे प्रभावित कोई भी कार्य निश्चित सिद्धान्तों पर आधारित हो भी कैसे सकता है किन्तु फिर भी इतना अवश्य है कि पिछली शताब्दी मे एक ऐसा रास्ता बन चुका था जिस पर चल करके स्थानीय सरकार की संस्थाए अपना विकास कर सकें।

स्थानीय निकायों के विकास मे प्रथम मान्यता यह बन गई कि स्थानीय सत्ताओं को सयुक्तरूपी होना चाहिए अर्थात उन्हें कई एक प्रकार के कार्य करने चाहिए। केवल एक कार्य के लिए पृथक से किसी सत्ता की रचना करना गलत माना गया क्योकि इस व्यवस्था के कुछ अपने दोष थे। दूसरे, स्थानीय सत्ताओ के क्षेत्र के रूप मे कस्बो तथा काउन्टियो को मुख्य बनाया गया। दोनों ही क्षेत्रो के लिए अलग से सत्ताए स्थापित की गई। औद्योगिक क्रान्ति के द्वारा जिन सेवाओं एव अभिकरणो के विकास को आवश्यक बनाया गया उन्हें जब कस्बा और काउन्टी के आधार पर विकसित किया गया तो इस व्यवहार का अधिक विरोध नही किया गया। तीसरे, जब स्थानीय आधार पर विभिन्न सत्ताओ की रचना की गई तो यह आवश्यक बना दिया गया कि इन सत्ताओं के द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओ मे होने वाले खर्चे का भार स्थानीय समाज पर ही डाला जाय। यह व्यवस्था इसलिए की गई क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र की अपनी कुछ विशेष आवश्यकताएं होती है और उन क्षेत्र के लोगों को ऐसी विशेष सुविधाओं की जरूरत होती है जो कि अन्य क्षेत्र के लोगो के लिए कोई महत्व नही रखती। ऐसी स्थिति मे उन लोगो पर अतिरिक्त सेवाओ का भार डालना उचित प्रतीत नही होता। इसी आधार पर देहाती एव शहरी क्षेत्रो के बीच अन्तर किया गया। चौथे बाद मे इस मान्यता का विकास हुआ कि बड़े कस्बों के बाहर संयुक्त यन्त्र ऐसा होना चाहिए जो कि बड़े क्षेत्र के लिए आवश्यक सेवाए प्रदान कर सके, साथ ही वह अन्य छोटे क्षेत्रो के लिए आवश्यक नियन्त्रण एवं प्रशासन की व्यवस्था कर सके।

इन विभिन्न सिद्धान्तो या मान्यताओ को अपनाकर स्थानीय सरकार ने कई एक महत्वपूर्ण लक्ष्यो की प्राप्ति की। संयुक्त संगठनो के सिद्धान्तों को लेकर प्रशासन में बचत लाने का प्रयास किया गया क्योकि इसमें विभिन्न सेवाओं को परस्पर समन्वित किया जा सकता था और साधनों की सम्पन्नता एवं नये कार्यों के सम्बन्ध मे लोचशीलता के कारण इस प्रकार की सत्ताओं में अधिक उपयोगिता की सम्भावना थी। काउन्टी बारोज में इस सिद्धान्त को पूरी तरह काम मे लाया गया क्योंकि ये बारोज सर्वोद्देश्यीय सत्ता होते थे। शहरी एवं देहाती क्षेत्रों को भिन्न कर रखने की प्रक्रिया से प्रशासन एवं सुविधा की दृष्टि से उपयोगी प्रबन्ध की व्यवस्था की गई। उदाहरण के

लिए उन्हें क्षेत्र म जो शहरी एव उन्नत क्षेत्र थे उनको अलग से काउन्टी बारोज का स्तर दे कर उनके व्यक्तित्व को अलग रखा गया। ये शहरी क्षेत्र यद्यपि छोटे थे किन्तु फिर भी यहा के निवासियो के हित को ध्यान मे रख कर इनके लिए पृथक ही प्रबन्ध किया गया। शहरी एवं देहाती इलाकों मे कुछ अन्तर इसलिए रख गए ताकि ऐसी व्यवस्था की जा सके जिसमे शहरी क्षेत्र अपने खर्च के लिए स्वय ही योगदान द और जहा इन सुविधाओ की आवश्यकता नही है वहा की जनता पर अतिरिक्त भार न डाला जाए।

प्रशासकीय काउन्टी
[The Administrative County]

प्रशासकीय काउन्टी ब्रिटिश स्थानीय सरकार का प्रादेशिक दृष्टि से सबसे बडा क्षेत्र है। इसका जन्म सन् १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा हुआ था। इससे पूर्व काउन्टी सरकार, काउन्टी या शायर के पुराने रूप से मिलती-जुलती थी। सन् १८८८ के अधिनियम ने मुख्य रूप से दो उद्देश्यो की पूर्ति की। इसने काउन्टियो मे निर्वाचित परिषद को प्रशासकीय सत्ता के रूप मे रखा। इसके अतिरिक्त इसने ५०००० और इससे अधिक जनसख्या वाले क्षेत्रों को नगरपालिका बारो के रूप मे एक अलग ही स्वतन्त्र स्थानीय सत्ता बना दिया। साथ ही कुछ प्राचीन काउन्टियो को इसने अधिक प्रबन्ध योग्य प्रशासकीय काउन्टियो म विभाजित कर दिया। इस प्रकार कुल मिला कर अग्रेजी स्थानीय सरकार मे लन्दन सहित ६२ प्रशासकीय क्षेत्र बन गए। प्रशासकीय काउन्टी मे जो क्षेत्र आता है वह सयुक्त प्रकृति का होता है अर्थात् उसमे शहरी एव देहाती दोनो ही प्रकार के क्षेत्र रहते हैं। विभिन्न काउन्टियो की परिषद की सत्ता, अधिकार एव सगठन परस्पर पर्याप्त भिन्नता रखते हैं। उनकी विभिन्नता का आधार उनके स्थानीय प्रशासनीय निकाय का स्तर होता है। दूसरे, काउन्टी एव छोटे क्षेत्रों के बीच प्रदान की जाने वाली सेवाओ के सम्बन्ध मे जो प्रबन्ध रहता है वह भी दोनो के बीच अन्तर का आधार है। काउन्टी बारो की जनसख्या के अनुसार उनकी पुलिस, शिक्षा, आदि सेवाओ के क्षेत्र मे काउन्टी की शक्तिया निर्धारित होती हैं।

जन्मकाल से ही काउन्टी द्वारा विभिन्न प्रकार के कार्य सम्पन्न किए जाते हैं। इन कार्यों की सख्या इतनी अधिक होती है कि इनका वर्णन करना सम्भव नही है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक काउन्टी की प्रगति के स्तर मे अन्तर होता है इसलिए उन सभी की शक्तिया एव अधिकार क्षेत्र भी एक जैसे नही होते हैं। एक काउन्टी को जो विभिन्न कार्य करने होते हैं उनमें प्रथम उल्लेखनीय कार्य शिक्षा है। काउन्टी बारोज को छोड कर प्रशासकीय काउन्टी को प्राथमिक एव माध्यमिक शिक्षा मे पूरा-पूरा अधिकार रहता है। कुछ काउन्टियो मे जनसहयोग को अधिक महत्व दिया जाता है और उनके द्वारा इन कार्यों पर अधिक खर्च किया जाता है। तीसरे, सडको एवं स्थापना से सम्बन्धित कार्य मुख्य रूप से काउन्टी द्वारा किए जाते है। चौथे, पुलिस का नाम लिया जा सकता है जिसके सम्बन्ध मे काउन्टी को महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त हैं। इन विषयो मे आने वाली सेवाए काउन्टी की सेवाओ का ६० प्रतिशत भाग होती हैं। इनके अतिरिक्त जनस्वास्थ्य के क्षेत्र

मे प्रत्यक्ष नियन्त्रण बहुत कुछ कम रहता है। इसलिए काउन्टी को इन सेवाओ से सम्बन्धित महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त रहते हैं। कुछ विषय जैसे मेडिकल अधिकारियो का वेतन, उनका निरीक्षण, उनके कार्यों का मूल्यांकन आदि कुछ सीमाओ तक काउन्टियो द्वारा ही किए जाते हैं। काउन्टी द्वारा बडे देहाती क्षेत्रो का प्रबन्ध भी किया जाता है जैसे जानवरो की बीमारी आदि कार्यों पर भी इनके द्वारा खर्च किया जाता है। इन सभी कार्यों को काउन्टी परिषद द्वारा किया जाता है। इनके लिए वह उत्तरदायी होती है और इनमे वह खर्च करती है। इन सेवाओ मे से कई एक सेवाए प्रशासकीय तथा वित्तीय दृष्टि से काउन्टी परिषद एव उसके क्षेत्र मे आने वाले स्थानीय निकायो के बीच बटी रहती हैं। काउन्टी द्वारा व्यापारिक सेवाए सम्पन्न नही की जाती।

प्रत्येक काउन्टी को जिन विभिन्न समस्याओ का सामना करना पडता है उनमे से कुछ तो उसके आन्तरिक समायोजनो से सम्बन्धित रहती हैं और कुछ का सम्बन्ध बाह्य समायोजनो से रहता है। काउन्टी की इन विभिन्न समस्याओ को तथा उसके वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए काउन्टी के इतिहास का अवलोकन करना उपयोगी रहेगा। काउन्टी का जन्म नार्मन काल के शायरो से ही हुआ है। आज भी कई एक काउन्टियो का आकार एवं प्रकार प्राय: वही है जो कि उनका जन्म के समय था। वे देश की आवश्यकताओ की प्रतिक्रिया के रूप मे सैकडो वर्ष पूर्व उदित हुई। जो क्षेत्र उस समय निर्धारित किए गए वे सैनिक उद्देश्य के लिए अधिक थे, प्रशासकीय उद्देश्य के लिए कम। क्षेत्रो को निर्धारित करते समय आवागमन के साधनो का भी पूरा ध्यान रखा गया। चौदहवी शताब्दी मे स्थानीय क्षेत्र के सैनिक, न्यायिक, कर सम्बन्धी सडक सम्बन्धी आदि अधिकार नगराधिपो मे निहित थे जो कि बाद मे शान्ति के न्यायाधीशो को सौंप दिए गए। नगराधिप लोग केन्द्रीय महत्व के अधिकारी थे। उनका मुख्य उद्देश्य क्राउन और काउन्टी के बीच सम्बन्ध स्थापित करना था। ये लोग काउन्टी के निवासी होते थे और इनको वहा की जनता द्वारा मान लिया जाता था। काउन्टी के न्यायालय द्वारा जो दीवानी, फौजदारी एवं प्रशासकीय कार्य सम्पन्न किया जाता था उसमे नगराधिप उसका पूरा-पूरा सहयोग करते थे।

केन्द्रीय नियन्त्रण स्थापित करने के लिए राजा की परिषद एवं खजान्ची होते थे। नियन्त्रण की यह व्यवस्था राजा और काउन्टियो के बीच सन्तोषजनक सम्बन्ध स्थापित नही कर पाती थी। इसी कारण रिचार्ड प्रथम द्वारा सन् ११९५ मे शान्ति के न्यायाधीशो की स्थापना की गई। समस्त प्राचीन शक्तिया उनके हाथो मे सौंप दी गई। स्थानीय न्याय एव पुलिस का कार्य पूरी तरह से उनके हाथो मे सौंप दिया गया। चौदहवी शताब्दी के मध्यकाल से लेकर सन् १८८८ तक ब्रिटिश स्थानीय प्रशासन मे जो व्यवस्था चल रही थी वह यह थी कि कस्बो एवं पेरिशो के प्रशासन के लिए केन्द्र द्वारा नियुक्त अधिकारी होते थे। ये मनोनीत सदस्य अर्थात् न्यायाधीश प्रशासकीय परिषदो के नियन्त्रण मे रह कर कार्य नही कर सकते थे। उनकी सहायता के लिए एक बडा नियमित वैतनिक स्टाफ होता था तथा कार्यालय का भी

एक उचित संगठन रहता था। गरीबों से सम्बन्धित कानून के न्यायाधीशों की शक्ति और भी अधिक बढ़ा दी थी। स्थानीय जनता की दिन प्रतिदिन की आवश्यकताएं यद्यपि पेरिश और पेरिश-अधिकारियों द्वारा पूरी की जाती थीं किन्तु इन पर न्यायाधीशों का निकट का नियन्त्रण रखा जाता था। जब उनके कार्य बढ़ गए तो नियमित अधिकारियों की नियुक्ति की जाने लगी। इन अधिकारियों को प्रारम्भ में फीस देने की व्यवस्था की गई और बाद में इन्हें वेतन दिया गया। प्रशासकीय कार्यों को यहां-वहां न्यायाधीशों की समितियों द्वारा सम्पन्न किया जाता था। न्यायाधीश उच्चवर्ग के लोग होते थे जो कि कामन्स सभा में संसद पर नियन्त्रण रखते थे और लार्डस सभा में न्यायाधीशों का कार्य करते थे। अपने संसद मित्रों के माध्यम से वे ऐसी व्यवस्था कर देते थे कि उन्हें काउन्टी के प्रशासन के सम्बन्ध में अकेला ही छोड़ दिया जाए।

औद्योगीकरण युग प्रारम्भ होते ही सरकार के ऊपर अनेक नए उत्तरदायित्व बढ़ गए। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में इन बढ़ते हुए उत्तरदायित्वों को काउन्टी के अतिरिक्त सत्ता द्वारा सम्पन्न किया जाना अधिक उपयुक्त समझा जाने लगा। जब काउन्टी को अधिक शक्तियां सौंपी गई तो इसका एक मौलिक प्रभाव यह हुआ कि कार्यकुशलता प्राप्त करने के लिए इन सेवाओं के सम्बन्ध में नीति एवं व्यवहार सम्बन्धी एकरूपता तथा एक बड़े क्षेत्र को आवश्यक समझा गया।

ब्रिटिश स्थानीय सरकार के क्षेत्र में काउन्टीज के कार्यों का जो विस्तार किया गया है उनकी कोई निश्चित प्रक्रिया अथवा रूप नहीं था। इनमें सुधार करने वालों की मुख्य समस्या यह थी कि काउन्टी को केन्द्र द्वारा नियुक्त शान्ति के न्यायाधीशों द्वारा प्रशासित करने के तरीके को किस प्रकार समाप्त किया जाए और इनके स्थान पर स्थानीय जनता द्वारा निर्वाचित परिषद को शक्तियां सौंपी जाएं। काउन्टी के विकास मार्ग की सबसे बड़ी बाधा को सन् १८८८ के अधिनियम द्वारा दूर किया गया। इसके द्वारा काउन्टी को न केवल कुछ कार्यों में स्वतन्त्र अधिकार क्षेत्र प्राप्त हो गया वरन् कुछ कार्यों को मध्यस्थ के रूप में केन्द्रीय सरकार तथा छोटी सत्ताओं के बीच प्रबन्धित करने के लिए इन्हें सौंप दिया गया ताकि स्थानीय निकायों पर नियन्त्रण रखा जा सके। काउन्टी को केन्द्रीय शक्तियां सौंपने के बाद केन्द्रीय संसद को कार्य भार से मुक्त कर दिया गया। सन् १८८८ के बाद अनेक ऐसे अधिनियम पारित किए गए जिनके द्वारा काउन्टियों को सड़क, शिक्षा, जनस्वास्थ्य, जन-सहायता, जिलों का पुनर्गठन, करों का मूल्यांकन आदि के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण अधिकार सौंपे गए। काउन्टियों की प्रगति एवं विकास की कुछ विशेषताएं हैं। प्रथम यह है कि इसकी शक्तियों का न केवल क्षेत्र ही बढ़ाया गया वरन् अन्य सत्ताओं की तुलना में इसकी सत्ता की कुल मात्रा भी बढ़ गई। दूसरे, इसकी शक्तियां इसलिए बढ़ाई गईं क्योंकि बड़े क्षेत्र में बचतपूर्ण एवं कुशल सेवाएं प्राप्त की जा सकती हैं। तीसरे, इन्हें प्रशासनिक निर्देशन की शक्तियां सौंपी गईं तथा छोटी सत्ताओं को नियन्त्रित एवं पर्यवेक्षित करने का अधिकार भी सौंपा गया। यदि छोटी

सत्ताए अपने उत्तरदायित्वो को पूरा नही कर सकें तो इन्हे काउन्टी के लिए सौंपा जाता था ।

वर्तमान काल मे काउन्टीज का विकास इस प्रकार हुआ कि इन निकायो की परिषदो को अनेक विषयो पर प्रत्यक्ष नियन्त्रण की शक्ति प्राप्त हो गई । बडी सडको, पुलो, पृथक अस्पतालो पागलखानों नदी व्यवस्था, भोजन एव दवाग्रो की बिक्री, माप और तौल, विज्ञापन का विनियमन प्रावधान, हवाई अड्डो की व्यवस्था, अन्धो का कल्याण, जानवरो की बिमारिया, प्राथमिक एव माध्यमिक शिक्षा, विद्युत उत्पादन एवं वितरण, नालियो की व्यवस्था, गर्भवती एव बाल - कल्याण, सार्वजनिक पुस्तकालय, नगर नियोजन, हैजा की व्यवस्था, आदि से सम्बन्धित विभिन्न उत्तरदायित्व एव शक्तिया इन निकायो को प्राप्त हो गई । बाद मे विभिन्न अधिनियमो द्वारा इन शक्तियो के क्षेत्र मे छोटे-मोटे विभिन्न परिवर्तन किये गये ।

काउन्टी परिषद को पहले जो पर्यवेक्षण सम्बन्धी शक्तिया प्राप्त थी उनके क्षेत्र मे उल्लेखनीय वृद्धि हो गई । यह कई विषयो के सम्बन्ध मे देहाती एवं शहरी जिलो के क्षेत्रो पर नियन्त्रण रखने लगी । ये विषय थे — इन क्षेत्रो की रचना एव रूप परिवर्तन, इनकी सड़के, देहाती गृह-निर्माण तथा अन्य दूसरे विषय । प्रारम्भ मे छोटी सत्ताओ द्वारा काउन्टीज को उनके एव केन्द्रीय सरकार के बीच मध्यस्थ नही माना गया । उनको मध्यवर्ती के रूप मे कार्य करना चाहिये - यह बात सर्वप्रथम ससद सदस्य लार्ड राबर्ट मोनटेग्यू द्वारा रखी गई । सन् १८८८ के अधिनियम के दसवें भाग द्वारा स्थानीय सरकार मण्डल को यह शक्ति दी गई कि वह समय-समय पर काउन्टी परिषदो के स्थानान्तरण के लिये प्रावधिक आदेश जारी कर सके । काउन्टी बारोज ने काउन्टी परिषद की इस शक्ति का विरोध किया और उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि उनकी शक्तियो पर काउन्टी परिषद को नियन्त्रण का अधिकार न हो तथा वे केन्द्रीय सत्ता से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रख सके । दूसरी ओर काउन्टी परिषदें छोटी सत्ताओ के ऊपर स्वीकृति एवं नियन्त्रण की शक्ति रखने के पक्ष मे थी और इसके लिए पूरी तरह से सहमत थी । इस विषय पर काउन्टी परिषद एव अन्य छोटी सत्ताओ के बीच जो सघर्षपूर्ण स्थिति पैदा हो गई वह कई कारणों से महत्वपूर्ण थी ।

प्रथम, इससे यह जाहिर हो गया कि शहरी सत्ताए स्वतन्त्रता की सशक्त भावना रखती है तथा उनकी पारस्परिक ईर्ष्या हमेशा धधकती रहती है किन्तु यह सम्भावना है कि वह किसी भी समय लपट ग्रहण कर ले । दूसरे, इससे यह भी जाहिर हो गया कि छोटी स्थानीय सत्ताए बडी स्थानीय सत्ताओं के नियन्त्रण की अपेक्षा केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण अधिक पसन्द करती हैं । तीसरे, काउन्टीज अधिक शक्ति लेने के लिए इच्छुक थी चाहे इसके परिणामस्वरूप छोटी सत्ताओ की [illegible] स्तर [illegible] न हो जायें । सन् १६०० के बाद से अब तक सामान्य स्थिति मे अधिक परिवर्तन नही आया । सन् १६२५ के करारोपण एव मूल्यांकन अधिनियम के द्वारा करारोपण व्यवस्था मे परिवर्तन किए गये । सन् १६२६ की स्थानीय सरकार पर शाही आयोग के द्वितीय प्रतिवेदन न [illegible]-स्वास्थ्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण

परिवर्तन किये तथा जिलो के पुनर्गठन को भी प्रभावित किया। जन-स्वास्थ्य प्रशासन मे काउन्टी के अन्तर्गत मुख्य कार्यपालिका सत्ताएं गैर काउन्टी बारोज और शहरी तथा देहाती जिले थे। अनेक कारणो से क्षेत्र, ज्ञान, सार्वजनिक भावना एव वित्त आदि के क्षेत्र मे अभाव की स्थिति वर्तमान थी और इस सब का जन-स्वास्थ्य पर बुरा असर पडा। ऐसी स्थिति में केवल तीन ही उपाय किये जा सकते थे। स्वय स्थानीय सत्ताओ द्वारा एक एकीकृत व्यवस्था स्थापित की जा सकती थी किन्तु ऐसा नही किया गया। दूसरे केन्द्रीय सरकार एक नियन्त्रणकर्त्ता सत्ता को नियुक्त कर सकती थी किन्तु इसका विश्वास नही किया गया। तीसरे, स्वय केन्द्रीय सरकार नियन्त्रण की शक्तियो का प्रयोग कर सकती थी। इस तीसरे विकल्प को अपनाया गया, इसके परिणामस्वरूप काउन्टी परिषद की शक्ति कुछ कम हो गई क्योकि अब वह जिला सत्ताओ द्वारा किसी कार्य की अवहेलना का प्रतिवेदन मिलने पर प्रतिनिधित्व नही कर सकती थी। स्वेच्छापूर्वक तरीके से कोई भी स्थानीय सत्ता यह लिख कर नही दे सकती थी, और न ही प्रार्थना कर सकती थी कि उसकी नालियां और नाले गन्दे पडे हुए है।

अनेक जिला सत्ताओ के पास केवल आंशिक समय के मेडीकल अधिकारी थे जो कि प्राय: अपने व्यक्तिगत व्यवसाय मे व्यस्त रहते थे। जन-स्वास्थ्य से उनका सम्बन्ध इतना निरन्तर एव विस्तृत नही था कि वे बीमारियो को रोकने मे सफल हो पाते। इसके अतिरिक्त अवहेलना से सम्बन्धित शक्तियां भी बहुत कम प्रयुक्त की जाती थी क्योकि यदि किसी सार्वजनिक निकाय के प्रति अवहेलना करने का दोषारोपण किया जाता था तो बडा भद्दा लगता था और किए जाने पर उसकी सफलता की सम्भावनाएं भी कम होती थी। काउन्टी के पास पर्यवेक्षण की सामान्य शक्तियां हैं इस विचार का नगर निगमो द्वारा विरोध किया गया और काउन्टी परिषदो ने कुशलता के साथ इसे पास नही किया। इसके अतिरिक्त अवहेलना होने पर किया जाने वाला कार्य इतना उलझा हुआ था कि इससे स्थानीय सत्ता को बडी जल्दी ठेस पहुंच सकती थी तथा केन्द्रीय एव स्थानीय सत्ताओ ने यह अधिक पसन्द किया कि कानूनी झगडो के लिए स्थानीय स्वायत्त सरकार के आधार पर परस्पर सहयोग रखा जाये क्योकि यह हथियार अत्यन्त भारी था इसलिए इसका प्रयोग नही किया गया। इस शक्ति के प्रयोग के सम्बन्ध मे शाही आयोग के द्वितीय प्रतिवेदन मे पर्याप्त विचार किया गया और अनेक महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किये गये।

स्वास्थ्य मन्त्रालय के एक प्रतिनिधि डब्ल्यू० ए० राबिन्सन ने सुझाया-(१) काउन्टी परिषद को मन्त्रालय के लिए प्रतिनिधित्व करने की शक्ति का आधार अब की तरह मे स्वास्थ्य के जिला मेडिकल अधिकारी का प्रतिवेदन नही होना चाहिए बल्कि इसे सामान्य रूप से स्पष्ट किया जाना चाहिए। (२) भविष्य में कानून द्वारा यह व्यवस्था की जानी चाहिये कि मन्त्री प्रतिनिधित्व पर विचार करे और वह स्थानीय जाच कराये। (३) यदि पर्याप्त जाच के बाद यह ज्ञात हो कि किसी काउन्टी जिले की परिषद स्वास्थ्य सेवा का प्रशासन एक स्तर के

अनुसार नहीं कर रही है और यदि मन्त्री की राय में परिषद द्वारा उचित समय में कोई सन्तोषजनक कदम नहीं उठाया गया है तो कानूनन उसे कुछ शक्तियां दी जानी चाहिये जैसे काउन्टी जिला की परिषद काउन्टी परिषद की सहमति से और मंत्री की स्वीकृति से उस सेवा से सम्बन्धित अपने उत्तरदायित्वों को काउन्टी परिषद को सौंप दे या काउन्टी परिषद को यह शक्ति दी जाये कि वह आवश्यक कार्य सम्पन्न करे और ऐसा करने के लिए काउन्टी जिला परिषद द्वारा काउन्टी परिषद को कर्ज के रूप में रकम चुकाई जाये या उस सेवा से सम्बन्धित प्रशासन का उत्तरदायित्व मन्त्री की आज्ञा से काउन्टी परिषद को सौंप दिया जाये। (४) यह प्रक्रिया केवल उन कर्तव्यों पर ही लागू होनी चाहिये जो कि काउन्टी जिलों की परिषदों पर डाले गए हैं न कि उन सेवाओं पर जो कि उनको सौंपी गई हैं।

इसके अतिरिक्त यह प्रावधान रखा गया था कि काउन्टी परिषदों को काउन्टी जिलों के जल वितरण एवं नाली योजनाओं के बारे में योगदान करना चाहिये। इस कार्यक्रम के अनुसार इस क्षेत्र की योजनाएं स्वास्थ्य मन्त्रालय, काउन्टी परिषद एवं काउन्टी जिलों द्वारा संयुक्त रूप से प्रबन्धित की जाती थी। इस प्रकार एक पर्यवेक्षणकर्त्ता सत्ता के रूप में काउन्टी का स्तर बढ़ गया, उसे छोटी स्वास्थ्य सत्ताओं को वित्तीय सहायता देने की शक्ति प्राप्त हो गई। काउन्टी जिलों में केवल दो ही महत्वपूर्ण शक्तियां रह गईं स्वास्थ्य एवं गृह निर्माण; किन्तु इनके क्षेत्र में भी काउन्टी परिषदों को पर्यवेक्षणकर्ता एवं शिकायतकर्ता के अधिकार प्राप्त थे।

सन् १९४५ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा काउन्टी के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों का पुनर्गठन कर दिया गया। इस अधिनियम ने सन् १९२९ एवं सन् १९३२ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा स्थापित प्रतिक्रियाओं को प्रभावहीन बना दिया। काउन्टी परिषद जिले के प्रतिनिधियों का सम्मेलन करने के बाद एक कार्यक्रम बनाती थी जिसके अनुसार वह पेरिशों की सीमाओं को पारिभाषित कर सके, जिलों और पेरिशों को एकीकृत कर सके, जिलों या पेरिशों के भागों को दूसरों के लिए स्थानान्तरित कर सके, देहाती जिलों या उनके भागों को शहरी जिलों में परिवर्तित कर सके अथवा इसका उलटा कर सके एवं नये जिले या पेरिश बना सके। ये सभी काउन्टी एवं गैर काउन्टी बारोज के साथ समायोजन के प्रबन्ध थे। मन्त्री को प्रत्येक विषय में अन्तिम शब्द कहने का अधिकार था।

काउन्टीज का मार्ग प्रगतिशील है। उसकी शक्तियों में निरन्तर विकास होता रहता है। यह विकास काउन्टी की शक्तियों को आगे बढ़ाने की ओर होता है। यदि काउन्टीज को खुला छोड़ दिया जाये तो निश्चय ही वे अपनी शक्तियों को और भी अधिक बढ़ा लेंगी। शाही आयोग के लिये उन्होंने यह प्रस्तावित किया था कि उनकी शक्तियों को उन सेवाओं के क्षेत्र में बढ़ा दिया जाये जो सेवाएं काउन्टी परिषदों के अनुसार एक विस्तृत प्रशासनिक क्षेत्र की मांग करती हैं और जो कि सस्थाओं की रचना के प्रावधानों को आवश्यक बनाते हैं। इसके बाद परिषदें अपनी शक्तियों को छोटी स्थानीय सत्ताओं के लिये हस्तान्तरित कर दें। इसके परिणामस्वरूप

भी काउन्टी परिषदो को अनेक पर्यवेक्षण की शक्तियां प्राप्त होने को थी। इन प्रस्तावो का छोटी सत्ताओ ने विरोध किया और कहा कि काउन्टी परिषदो के पहले ही इतने कार्य हैं जिनको कि वे सन्तोषजनक रूप से सम्पन्न नही कर पाती अतः अधिक शक्तियां देना उचित नही रहेगा। स्वास्थ्य मन्त्रालय ने भी काउन्टी परिषदों की शक्तियो को बढ़ाने का विरोध किया और कहा कि कार्यों का विभाजन कर देने पर उनका सचालन सन्तोषजनक रूप से नही कर पायेगा। असल मे यह स्पष्ट था कि काउन्टी परिषद द्वारा जो सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये उन्हें केवल तभी अपनाया जा सकता था जबकि सभी काउन्टी परिषदे कम से कम स्तर से ऊपर उठ जाये और वे सभी वित्तीय दृष्टि से, प्रादेशिक रूप से तथा जनसख्या की दृष्टि से पर्याप्त हो। हम यदि सन् १८८८ से लेकर आज तक के काउन्टी प्रशासन के इतिहास को देखें तो पाएंगे कि ये शर्तें कभी पूरी नही की जा सकी और न की जा रही हैं।

काउन्टी बारोज

(County Boroughs)

काउन्टी बारोज को भी सन् १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम के द्वारा बनाया गया। जिस नगरपालिका बारो की जनसख्या पचास हजार से अधिक थी उसको काउन्टी बारो का स्तर दे दिया गया अर्थात् उनको काउन्टी परिषद के अधिकार क्षेत्र से पूर्णरूपेण अलग कर दिया गया। अब वे केवल केन्द्रीय सरकार की सत्ता के आधीन थे। यह केन्द्रीय सत्ता संसदीय, प्रशासकीय, न्यायिक अथवा स्वायत्तशासी सत्ताए हो सकती थी। सन् १९२१ मे इनकी सख्या ८२ थी बाद मे यह बढकर ८३ हो गई। बडे आकार के सगठन के लाभो को प्राप्त करने के लिये इन बारोज ने अपने क्षेत्र को पर्याप्त विस्तृत कर लिया और अपने क्षेत्र मे अर्ध-शहरी तथा विभिन्न प्रकार की स्वतन्त्र सत्ताओ को भी मिला लिया किन्तु ये मिलाए गए प्रदेश अलग अलग सस्कृति, अर्थव्यवस्था एवं भूगोल विज्ञान वाले नही थे। काउन्टी बारोज का अब तक का इतिहास पर्याप्त प्रशसनीय रहा है। उनका प्रशासन कुशल एव बहुत कुछ सन्तोषजनक रहा है। अधिकाश बारोज को देखने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि इनका क्षेत्र अपेक्षाकृत बड़ा होता है और जनसख्या उसकी तुलना में कम होती है।

सरकार के कार्य एवं सामाजिक जीवन के विभिन्न उत्तरदायित्व जनसंख्या के एक विशेष वर्ग द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं ऐसी स्थिति मे नागरिक जीवन की व्यापकता के लिये अनेक अवसर प्राप्त होते हैं और निवासियो की रुचि सार्वजनिक कार्यों मे जागृत होती है। वे स्थाई रूप से सार्वजनिक महत्व के कार्यो मे रुचि लेने लगते है। छोटी जनसख्या होने के कारण प्रत्येक नागरिक के लिये सरल हो जाता है कि वह दूसरो को जान सके और दूसरो को यह सरल हो जाता है कि वे उसे जान सकें। काउन्टी बारोज मे एक अन्य सुविधा और होती है वह यह कि वहा कई एक ऐसे समाचारपत्र होते हैं जिनको कि राष्ट्रीय स्तर एव सम्मान प्राप्त होता है और वे स्थानीय समस्याओ तथा उपलब्धियो के समाचार प्रकाशित करते रहते हैं। प्रोफेसर फाईनर लिखते हैं कि कुछ अपवादो को छोड़ कर काउन्टी बारोज अंग्रेजी

स्थानीय सरकार में सर्वाधिक प्रगतिशील तत्व हैं और वे सम्भवतः सभी की अपेक्षा अधिक गर्व किए जाने योग्य हैं।* काउन्टी बारोज कभी कभी परेशानी का कारण भी बन जाती हैं। पी० स्टोन्स लिखते हैं कि यदि भौगोलिक काउन्टी में अनेक काउन्टी बारो हो और प्रशासकीय काउन्टी का क्षेत्र प्रबन्ध करने योग्य न हो तो स्थानीय सरकार की सेवाएं कठिन एवं खर्चीली बन जाती हैं।†

काउन्टी बारोज को प्रायः वे सभी अनिवार्य स्वीकृति प्रदान करने की शक्तियां प्राप्त रहती हैं जो कि काउन्टी परिषदों एवं अन्य स्थानीय निकायों को प्राप्त रहती हैं। इस प्रकार इनकी शक्तियां बहुत व्यापक होती हैं। यह सत्ता काउन्टी के साथ मिलकर अनेक सेवाओं को सम्पन्न करती है और इसके अतिरिक्त घने रूप में बसे हुए शहरी क्षेत्र के लिए प्रत्यक्ष एवं विस्तृत रूप में आवश्यक सेवाएं प्रदान करती है। इनके साथ ही वह छोटे क्षेत्र में बहुत सारे लोगों के लिए जिन सुविधाओं एवं व्यापारिक सेवाओं की जरूरत होती है तथा जिन्हें वक्त के साथ प्रशासित किया जा सकता है उनको सम्पन्न करती है। काउन्टी बारोज की जनसंख्या एवं क्षेत्र के आकड़ों को देखने के बाद यह कहा जाता है कि इसमें जनसंख्या औसतन एक एकड़ पर सोलह व्यक्तियों के हिसाब से रहती है।

काउन्टी बारोज द्वारा जो खर्चा किया जाता है वह पर्याप्त होता है। सभी स्थानीय सत्ताओं द्वारा जो भी खर्चे किए जाते हैं उनका एक तिहाई खर्चा इन्हीं के माध्यम से होता है। इनके पास कर्ज लेने की शक्ति होती है। इसके अतिरिक्त इनमें रहने वाली जनसंख्या की आर्थिक स्थिति काफी अच्छी होती है। इनके निवासियों की सम्पत्ति को यदि कूता जाए तो इसका मुकाबला स्थानीय सत्ता के किसी भी क्षेत्र में प्राप्त नहीं होता। इसीलिए यह सुझाव दिया जाता है कि इस तरह के प्रावधान बनाना उचित रहेगा कि देहाती जिलों को शहरी जिलों में, फिर उन्हें नगरपालिका बारोज में बाद में, उनको काउन्टी बारोज में आसानी से परिवर्तित किया जा सके। ऐसा करने में कोई मनोवैज्ञानिक अध्ययन या आर्थिक या वित्तीय खर्च का विचार उत्पन्न नहीं होना चाहिए। इस प्रकार के परिवर्तन से स्थानीय सरकार की सभी सत्ताओं का और कुल मिलाकर पूरी स्थानीय सरकार का पर्याप्त लाभ होगा।

*"With few exceptions, the County Boroughs are the most progressive elements in English Local Govt. and justify a real pride-all comparatively, of course."
—*Herman Finer* : Op. Cit. P. 67.

†"Where a geographical County has a large number of County Boroughs in its area the administrative County may have an unwildy shape, in which Local Govt. services may be difficult to operate & costly to administer."
—*P. Stones*, Local Govt. for students, II Edition 1964, P. 32.

काउन्टी बारोज का इतिहास एवं विकास
[The History and Development of County Boroughs]

काउन्टी बारोज का इतिहास, सघर्ष एवं विरोध का इतिहास रहा है क्योंकि इनका अस्तित्व अन्य सत्ताओं के हितों के विरुद्ध था। जब भी किसी नए काउन्टी बारो की स्थापना की जाती या उसके क्षेत्र में प्रसार किया जाता तो काउन्टी द्वारा उसका विरोध किया जाता था क्योंकि इन दोनों ही परिस्थितियों में उनकी शक्तियां कम हो जाती थी। काउन्टी की ओर से मौलिक विरोध किया गया, उसके जो सिद्धान्त एवं तरीके सामने आए वे अत्यन्त महत्वपूर्ण थे। पूरे समाज के लिए उनका महत्व था। एक ओर ये नागरिक विकास को रोक देते हैं और दूसरी ओर उनसे कुछ प्रशासकीय शक्तियों का ज्ञान होता है जिन्हें कि बारोज के समर्थक भी नहीं भुला सकते। बारोज का प्रसार एवं नए बारोज की रचना का कार्य स्थानीय सरकार अधिनियम सन् १९२६ द्वारा प्रशासित किया जाता था, बाद में इसके लिए सन् १९४५ में एक अधिनियम बनाया गया। इस अधिनियम ने स्थिति को पूरी तरह से परिवर्तित कर दिया और इसने पहले से चले आ रहे नियमों का उपयोग करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया। काउन्टी बारोज को सामान्य रूप से नगरपालिका निगमों की श्रेणी में विभाजित किया जाता है। प्रारम्भ में इनको नगरपालिका बारोज के अतिरिक्त कुछ काउन्टी की शक्तियां भी प्राप्त थी और इसलिए उन्हें नगर निगम माना जा सकता था। दूसरे, ये उस काउन्टी से स्वतन्त्र रहती हैं जिसमें कि ये भौगोलिक रूप से स्थित हैं। सन् १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम तक इन बारोज का इतिहास नगर निगम का इतिहास है।

सन् १८८८ के बाद इनकी स्थिति भिन्न हो गई और नगर निगमों या गैर काउन्टी बारोज से इनका रूप एवं सगठन बहुत कुछ भिन्न हो गया। काउन्टी बारोज के पास काउन्टी तथा बारो दोनों की संयुक्त शक्तियां रहती हैं और इसीलिए उनको यह नाम दिया जाता है। ये स्तर एवं स्थिति की दृष्टि से काउन्टियों से स्वतन्त्र रहते हैं। एक बारो की वर्तमान स्थिति एवं सविधान चाहे कुछ भी हो किन्तु उनकी जड़ें ब्रिटिश इतिहास में इतनी गहरी जमी हुई है कि उनको स्पष्ट रूप से नहीं जाना जा सकता। काउन्टी बारो के बारे में एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इसका जन्म, विकास, सविधान, क्षेत्र जनसंख्या एवं धन एक रूप में नहीं है। मेटलैण्ड (Maitland) ने सही लिखा है कि अंग्रेजी बारो का एक इतिहास मुश्किल ही हो सकता है।* प्रत्येक बारो का अपना खुद का एक इतिहास है। प्रोफेसर हरमन फाईनर लिखते हैं कि बारोज केवल यही एकरूपता रखते हैं कि उनका प्राचीन एवं अतीत एकरूप था।†

---

*Maitland, Constitutional History, 1926, P. 52.

†"The Boroughs are uniform only in having an ancident and continuous past."

—*Herman Finer*, Op. Cit., PP. 60-61.

सरकार की इकाई के रूप मे ये स्थानीय लोगो की स्थानीय आवश्यकताओ के परिणामस्वरूप उदित हुए और सगठित होकर उन आवश्यकताओ को पूरा करने का प्रयास करने लगे। ये केन्द्रीय सत्ता की रचना नही थे यद्यपि इनको इसी के द्वारा नियमित किया गया एव कानूनी रूप दिया गया स्थानीय लोगो के इस समूह मे स्थानीय गर्व, समुदाय के भाव, प्रतिबन्धित एव स्वतन्त्र महत्वाकाक्षाए विकसित हुई। मि० स्टब्स (Stubbs) ने बारो एव टाऊन शब्दो की व्युत्पत्ति का उल्लेख किया है। उनके मतानुसार 'बारो' शब्द को सेक्सन युग के 'बर्ग' (Burgh) से लिया गया है। यह एक ऐसा प्रदेश होता था जिसकी पहाडो एव खाईयो से किलेबन्दी की जाती थी। टाउन शब्द को टन' (Tun) से लिया गया है जो कि एक कृषक की चारदीवारी युक्त भूमि होती थी।* बारो प्रदेश से अर्थ एक ऐसे प्रदेश से था जिसके लोग परस्पर घनिष्ट रूप से सम्बन्धित हो। ऐसी स्थिति मे यह स्वाभाविक था कि युद्ध की दृष्टि से महत्वपूर्ण केन्द्र, समुद्री बन्दरगाह, मण्डियाँ गाव, बाजार, औद्योगिक समूह, आदि क्षेत्रो मे बारोज की स्थापना की गई। वेब्स (Webbs) के मतानुसार बारोज उत्पादको की सस्थाए थी जो कि आर्थिक उद्देश्यो के लिए सामान्य रूप से नियमित होते थे, उनकी सामान्य सम्पत्ति होती थी। इनके धन्धे, व्यवसाय एव स्थिति भी पृथक पृथक होती थी। इसी कारण प्रत्येक बारो का सविधान एव बनावट अलग-अलग होती थी।

एग्लो-सेक्सन समय से ही बारो के विकास की प्रक्रिया दोहरी रही है। बाह्य रूप से इसे अन्य स्थानीय सत्ताओ के अधिकार क्षेत्र से अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त हुई और आन्तरिक रूप से ये अधिक पूर्ण एव जटिल बनते चले गए। प्रोफेसर फाईनर के कथनानुसार इसका प्रशासकीय निकाय मेयर, एल्डरमैन और बर्गीज के रूप मे संगठित हुये। एल्डरमैन वे लोग थे जो कि गिल्डो के वरिष्ठ सदस्य थे और बर्गीज वे थे जो कि विशेष अधिकार प्राप्त नागरिक थे।† बारोज के विकास मे एक नया कदम बारोज के व्यक्तित्व को कानूनी मान्यता देना था। जब शाही चार्टर द्वारा उनको कानूनी मान्यता दे दी गई तो ये निगम के रूप मे सगठित हो गये तथा सम्पत्ति के स्वामी एव प्रशासन के सचालक बन गये। अब यह मुकदमे चला सकती थी तथा इस पर मुकदमे चलाये जा सकते थे। इस काल मे काउन्टी बारोज नगरपालिका बारोज की तुलना मे परिपक्व थे और इनकी कई एक विशेषताए थी, जैसे यह चार्टर द्वारा प्राप्त एवं आंशिक रूप से रीति रिवाज द्वारा प्राप्त प्रशासकीय शक्तियो का एक निकाय रखती थी। दूसरे, यह एक घरेलू सरकार का रूप थी जिसे विस्तृत रूप से

**Stubbs*, Constitutional History, Vol. I, P, 105.

†The governing became organized as Mayor, Alderman and Burgesses : The Alderman, the senior members of the Guilds, and the Burgesses, the preveleged persons." —*Herman Finer*, Op Cit., P.62

चार्टर द्वारा परिभाषित किया गया और व्यवहार द्वारा परिवर्तित किया गया। तीसरे, इसे संसदीय प्रतिनिधित्व का अधिकार दिया गया। चौथे, इनके शक्ति के पृथक अधिकारी होते थे जिनको कि क्राउन द्वारा नियुक्त नहीं किया जाता था किन्तु वे स्वयं के प्रशासकीय संगठन द्वारा नियुक्त होते थे। कुछ बारोज आंशिक रूप से और कुछ पूर्ण रूप से काउन्टी न्यायाधीशों के अधिकार क्षेत्र से बाहर थे उनका स्वयं का संविधान और स्तर था और शांति बनाने के लिए वे स्वतन्त्र शक्ति एवं उत्तरदायित्व रखते थे।

नगरपालिका निगमों की अपनी कुछ कमजोरियां तथा कुछ स्वाभाविक समस्याएं थीं जिनके परिणामस्वरूप उनमे सुधार करना जरूरी हो गया सन् १८३५ में नगरपालिका अधिनियम बनाया गया जिसके द्वारा इन दोषों को दूर किया जा सके। इस अधिनियम का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रभाव हुआ। विभिन्न शहरी निकाय जो कि अनेक विभिन्नताएं रखते थे उनको एक नाम दिया गया, कानूनी स्तर प्रदान किया गया और एक प्रशासकीय ढांचा बनाया गया। दूसरे, इस प्रकार से जो स्थानीय इकाईयां बनाई गई वे क्षेत्र एवं जनसंख्या की दृष्टि से अनेकरूपी थी। इनमे सबसे बड़ा क्षेत्र लिवरपूल को दिया गया जिसमे एक लाख पच्चासी हजार लोग रहते थे और सब से छोटा क्षेत्र ब्रैडफोर्ड को दिया गया जिसमें एक हजार पांच सौ लोग रहते थे। तीसरे, बारो परम्पराओं, कर के मूल्यों तथा अपने अधिकारियों की कुशलता की दृष्टि से पर्याप्त भिन्नताएं रखते थे ये विभिन्नताएं पूरी उन्नीसवीं शताब्दी मे व्याप्त रही। यही कारण है कि बारो शब्द कहते ही हमारे मस्तिष्क में कोई एक चित्र नहीं उभरता। चौथे, बारोज के निवासियों द्वारा बराबर यह मांग की जाती रही कि उनको काउन्टी एवं केन्द्रीय सत्ता से स्वतन्त्रता प्रदान की जाये। यह भी मांग की गई कि अर्धशहरी क्षेत्रों को बारो के इकहरे अधिकार क्षेत्र में ला दिया जाए। पावर्वं, प्रकाश, निरीक्षण, सुधार आयुक्त, आदि विशेष सहायें यद्यपि उपयोगी थी किन्तु फिर भी उन्होंने कस्बे की नागरिक एकता को तोड दिया और वे बहुत वर्षों तक ऐसा ही करती रही। बाद में बारो परिषद द्वारा उन्हें अपने मे मिला दिया गया।

सन् १८३५ के अधिनियम ने १७८ बारोज को नियमित किया और अनेक को बिना नियमित किये छोड दिया। सन् १८३५ से लेकर सन् १८८२ तक बारोज का विकास चार रूपों मे हुआ। प्रथम विशेष आयुक्तों को धीरे धीरे मिटाया गया। दूसरे, कुछ बारोज के आसपास के जिलो को उनमे मिला कर उनका आकार बढा दिया गया। तीसरे, नये बारोज बनाये गये। चौथे, एक के बाद एक अधिनियम पारित करके बारोज से सम्बन्धित अधिनियम मे संशोधन किये गए। सन् १८७५ तक अविनियमित बारोज को भुला दिया गया। एक जांच आयोग बैठाया गया और इसके परिणामस्वरूप सन् १८८२ का अधिनियम पारित हुआ। अब तक बारोज को काउन्टी की सरकार से सम्बन्धित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया, काउन्टी की भी पुनर्रचना नहीं की गई। तथा पुलिस, शिक्षा, सड़क, आदि विषयो में अधिक बडे क्षेत्र की मांग नही की गई।

सन् १८८८ में काउन्टी का पुनर्गठन किया गया और उसमें लोकप्रिय निकाय का गठन किया गया। यह मान्यता जोर पकड़ने लगी कि काउन्टी को केन्द्रीय सत्ता और स्थानीय निकायों के बीच का अंग बनाया जाए। कई लोग इस बात का समर्थन कर रहे थे कि केन्द्रीय सरकार की सत्ता का काउन्टियों में विकेन्द्रीयकरण कर दिया जाए। इसके परिणामस्वरूप कस्बे जागरूक हो गए। उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता को बनाए रखने के लिए प्रत्येक सम्भव प्रयास किया। सन् १८८८ के अधिनियम रचयिता काउन्टी को एक एकीकृत क्षेत्र बनाना चाहते थे जो कि स्थानीय जनता को आवश्यक सेवाएं प्रदान कर सके और इसीलिए देहाती एवं शहरी क्षेत्रों की संयुक्त व्यवस्था को अपनाया गया।

बारोज के सम्बन्ध में एक मुख्य समस्या उसके उचित एवं सन्तोष-जनक आकार की है। कितनी जनसंख्या एवं क्षेत्र वाले प्रदेश को काउन्टी बारो का पद दिया जाए, यह एक पर्याप्त गम्भीर समस्या थी जिसका समाधान भी उतना ही गम्भीर एवं महत्वपूर्ण था। बारोज अपनी स्वायत्तता पर इतना अधिक जोर दे रहे थे कि काउन्टी परिषदें उनका पूरी तरह से विरोध करने के लिए कटिबद्ध हो गईं। कस्बों को यह डर होने लगा कि वित्तीय भार उन्हीं के ऊपर पड़ेगा क्योंकि काउन्टियों में जो सुधार किए गए हैं वे देहाती क्षेत्रों की प्रगति के लिए किये गए हैं इसलिए उनके हित खतरे में हैं।

जब सन् १८८८ का अधिनियम प्रभाव में आया तो दो प्रकार के बारोज गठित किए गए—एक तो काउन्टी बारोज थे और दूसरे गैर काउन्टी बारो। काउन्टी बारोज तथा नगरपालिका बारोज के बीच मुख्य अन्तर यह है कि काउन्टी बारोज के पास काउन्टी तथा कस्बे की संयुक्त शक्ति रहती है और वे काउन्टी परिषद की प्रशासकीय क्रियाओं से पूर्णरूपेण स्वतन्त्र रहते हैं। दूसरी ओर नगरपालिका बारोज काउन्टी के भाग होते हैं और उन्हें पुलिस, प्राथमिक शिक्षा, मुख्य सड़क आदि के लिए काउन्टी की ओर निहारना पड़ता है। कुछ अन्य विषयों में भी उन्हें काउन्टी की सत्ता का मातहत होना पड़ता है। यहां इस बात का उल्लेख करना भी उपयोगी रहेगा कि गैर काउन्टी बारोज एवं शहरी जिलों के बीच पर्याप्त अन्तर रहता है। दोनों यद्यपि शहरी क्षेत्र होते हैं तथा शहरी जिलों के ही भाग हैं किन्तु फिर भी दोनों के बीच अन्तर है।

प्रथम बारोज का प्रशासन मेयर, एल्डरमैन तथा नागरिकों के एक निगम द्वारा किया जाता है और जिले की परिषद का प्रशासन केवल सभापति और पार्षदों द्वारा किया जाता है। दूसरे, बारोज को यह शक्ति होती है कि वे उपनियम बना सकते हैं ताकि कस्बे का अच्छा शासन कर सकें; किन्तु शहरी जिलों को केवल कुछ ही क्षेत्रों में उपनियम बनाने की शक्ति है। तीसरे, नगरपालिका बारो के संविधान के लिए एक नियमों का निकाय स्थापित कर दिया गया है और इन नियमों के अनुसार शहरी जिलों को नगर-पालिका बारोज के रूप में विकसित किया जा सकता है। ये नियम मुख्य रूप से ये हैं कि उस क्षेत्र में कम से कम उनमें एक लाख की जनसंख्या होनी

चाहिए, उनमे ऐतिहासिक तारतम्य व नागरिक दृष्टि से एकरूपता होनी चाहिए तथा जनस्वास्थ्य के विषयो मे प्रशासनिक अभिलेख अच्छा रहना चाहिए। चौथे, नगरपालिका बारोज को सन् १८८८ के अधिनियम के अनुसार यह अधिकार दिया गया है कि वे काउन्टी बारो के रूप मे विकसित हो सकते हैं किन्तु शहरी जिले अपना विकास इस प्रकार नही कर सकते। रचना की दृष्टि से पर्याप्त अन्तर एवं असमानताए होते हुए भी शहरी जिले अनेक ऐसी शक्तियो का प्रयोग करते हैं जिनको नगरपालिका बारोज द्वारा प्रयुक्त नही किया जाता। कुछ उदाहरणो मे उनका खर्च भी नगरपालिका बारोज की अपेक्षा अधिक होता है। दोनो सत्ताओ के बीच जनसख्या एवं करो की दृष्टि से भी पर्याप्त अन्तर रहता है। यद्यपि दोनो ही वर्ग शहरी समाज होते है और दोनो मे समान सेवाओ की आवश्यकता होती है किन्तु भिन्नता भी स्वाभाविक है। दोनो के बीच मुख्य अन्तर स्तर का है।

सन् १८८८ के अधिनियम बनाने के बाद से लेकर सन १९२६ का अधिनियम बनने तक नगरपालिका बारोज यह प्रयास करते रहे कि उनको काउन्टी बारो बना दिया जाए ताकि वे काउन्टी परिषद की भांति स्वायत्त शक्तियो का उपयोग कर सकें। काउन्टी बारो बनने के लिए नगरपालिका बारो मन्त्री को यह प्रदर्शित करता था कि उसकी जनसख्या ५०००० या उससे अधिक हो गई है तथा यदि उसे काउन्टी बारो बना दिया जाए तो यह जनहित मे रहेगा। मन्त्री पहले यह देख लेता था कि प्रदेश कही ऐसा तो नही है जो कि समुद्री किनारे पर हो, जहाँ की जनसख्या स्थायी नही होती और बहुत कम समय मे ही बदलती रहती है। इसके अतिरिक्त वह यह भी देखता था कि क्या परिस्थितिया इस प्रकार की हैं कि उसे काउन्टी बारो बना दिया जाए। इसके लिए वह पूरी जाच करता था। जब कोई काउन्टी बारो अपने प्रदेश को बडा करना चाहता तो इसी प्रकार की प्रक्रिया अपनाई जाती थी। दोनो स्थितियो मे निर्णय लेते समय मन्त्री जिस बात का ध्यान रखता था वे प्राय: एक जैसी थी। आजकल की प्रवृति के अनुसार यदि कोई नगरपालिका बारो उच्च स्तर प्राप्त करना चाहता है तो मन्त्री द्वारा इसके मार्ग मे अनेक बाधाए उत्पन्न की जाती हैं। वह इस बात पर पर्याप्त सोच विचार करता है कि यदि नगरपालिका बारो को काउन्टी से पूर्णरूपेण स्वतन्त्र कर दिया गया तो काउन्टी की सरकार को इससे हानि तो नही होगी।

अनेक काउन्टी बारोज को जब एक बार बना दिया जाता है तो वे समय के साथ साथ अपना क्षेत्र बढा लेते है तथा उनकी जनसख्या भी बढ जाती है। अपनी बढती हुई जनसख्या को समायोजित करने के लिए ही वे अपने आसपास के अर्ध-शहरी क्षेत्रो को अपनी ओर ले लेते हैं। अपना क्षेत्र बढाने का इच्छुक काउन्टी बारो पूरे विस्तार के साथ स्वास्थ्य मन्त्री के लिए स्मृति-पत्र भेजता है जिसमे वह यह स्पष्ट करता है कि उसे अतिरिक्त क्षेत्र क्यो चाहिए। साथ ही जिस क्षेत्र को वह मिलाना चाहता है उसके साथ उसके आर्थिक एवं अन्य सम्बन्ध क्या हैं, इसका भी वह पूरा-पूरा उल्लेख करता है। इस प्रार्थना पत्र की प्रतिया प्रभावित क्षेत्र की सत्ताओ को भेज दी

जाती हैं ताकि वे यदि चाहें तो अपने विरोध प्रस्तुत कर सकें। ऐसी स्थितियों में मन्त्री तीन प्रकार के वैकल्पिक निर्णय ले सकता है। प्रथम, वह बिना आगे किसी प्रकार की जाच किए ही प्रावधिक आदेश जारी कर सकता है। ऐसा बहुत कम किया गया और प्रायः उन्हीं अवसरों पर किया गया जहा कि योजना के विरुद्ध किसी ने कोई आपत्ति ही नही उठाई। दूसरा विकल्प यह हो सकता है कि वह सम्बन्धित स्थानीय क्षेत्र मे जाच के लिए एक निरीक्षक को भेज दे और उसका प्रतिवेदन आने पर यह निर्णय करे कि प्रावधिक आज्ञा प्रसारित की जाए अथवा नही। प्रायः इस प्रकार की जाच स्थानीय कानूनी जाच की प्रारम्भिक अवस्था होती है। यह जाच उसी समय की जाती है जब कि मन्त्री को यह विश्वास हो जाय कि जाच के सम्बन्ध मे खर्च किया गया धन उपयोगी रहेगा। इस प्रकार की जाच के लिए एक अभियन्ता निरीक्षक को भेजा जाता था जो कि जनता मे इस प्रकार की जाच करता था। इस अधिकारी ने क्षेत्र मे जाच करने से पूर्व प्रायः विस्तृत निरीक्षण का तरीका अपनाया। पर्याप्त पूछ-ताछ करने के बाद निरीक्षक द्वारा मन्त्री को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाता था। उसमे गवाहों के निर्णय एवं विश्लेषण होते थे तथा स्वयं निरीक्षक का व्यक्तिगत मत भी रहता था कि प्रावधिक आदेश दिया जाए अथवा नही। निरीक्षक द्वारा की गई सिफारिश को मानने के लिए मन्त्री बाध्य नही था। वह उसे ठुकरा भी सकता था। इस प्रकार का निर्णय पूरी तरह से मन्त्री की स्वेच्छा पर ही निर्भर रहते थे।

जब कोई नगरपालिका बारो, काउन्टी बारो बनने की प्रार्थना करता था तो इसी सामान्य प्रक्रिया को अपनाया जाता था। जब मन्त्री किसी काउन्टी बारो का क्षेत्र बढ़ाता था तो वह मुख्य रूप से इन बातो पर विचार करता था कि क्या बढ़ा हुआ क्षेत्र आर्थिक रूप से प्रशासित होने की सामर्थ्य रखता है ? दूसरे, क्षेत्र का प्रसार हो जाने के बाद क्या सम्बन्धित क्षेत्रों में अच्छी एवं बचतपूर्ण सरकार कार्य कर सकती है ? तीसरे, काउन्टी बारो के क्षेत्र में सम्मिलित प्रदेशों के निवासी क्या इस परिवर्तन से सहमत हैं ? चौथे, क्या वह क्षेत्र काउन्टी बारो का ही आगे का विकास है ? पाचवें, यदि प्रसार नही किया गया तो क्या काउन्टी बारो उन करो से वंचित रह जाएगा जो कि न्यायिक दृष्टि से उसी को मिलने चाहिए ? छठे, सम्मिलित किए गए क्षेत्र के साथ करो का जो समायोजन किया जाएगा क्या वह उचित है ? सातवें, क्या कस्बे को अच्छी प्रकार से प्रशासित किया गया है ? आठवें, जिस क्षेत्र को मिलाया जाना है क्या उसके सामाजिक हित एक जैसे हैं ? नवें, क्या कस्बा इतना अधिक विकसित हो गया है कि उसके क्षेत्र को प्रसारित करने की आज्ञा दे दी जाए ?

नए काउन्टी बारो बनाने एवं काउन्टी बारोज के क्षेत्र का प्रसार करने के प्रश्न ऐसे थे जो कि अत्यन्त गम्भीर परिणाम वाले थे। इनके सम्बन्ध मे कोई भी निर्णय लेने से पूर्व पर्याप्त सोच-विचार करना जरूरी था। जब कभी ऐसा किया जाता था तो यह स्वाभाविक था कि जनसख्या एवं करो की शक्ति उच्च सत्ताओं के प्रशासन से निकल कर काउन्टी बारोज के हाथ मे आ जाती थी। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप सबसे अधिक हानि काउन्टी

परिषदो को होती थी और इसलिए वे इसका सबसे अधिक विरोध करती थी और करती है। हितो का विरोध होने के कारण काउन्टी तथा अधिक विकसित शहरी क्षेत्रो के दृष्टिकोण मे जमीन आसमान का फर्क होता है। उनके दृष्टिकोण मे विरोध की भावना स्वाभाविक थी। यदि विभिन्न जाचो की गवाहियो का निरीक्षण किया जाए तो हम पाएगे कि वे इनसे असन्तुष्ट थी, उनसे ईर्ष्या करती थी और उनके विरुद्ध अयोग्यता का दोषारोपण करती थीं। काउन्टी यह चाहती थी कि उनको शहरी विकास के पृथक्करण वाले परिणामो के विरुद्ध गारन्टी दी जाए; यहा तक कि उन क्षेत्रो की शक्तियो को भी न बढने दिया जाए। दूसरी ओर कस्बे यह चाहते थे कि उन्हे स्वायत्तता के लिए कम खर्चीला मार्ग बताया जाए। दोनो ही अपने पक्ष के समर्थन मे तर्क प्रस्तुत करते थे।

काउन्टीज के तर्क—काउन्टीज ने यह बताया कि तत्कालीन प्रक्रिया बहुत कुछ कस्बो के पक्ष मे है अतः इस प्रक्रिया की कोई आवश्यकता नही है; क्योकि काउन्टी स्वय अपने समस्त क्षेत्र को सहयोग एव विकेन्द्रीयकरण के तरीको से बडी अच्छी तरह प्रशासित कर सकती है। काउन्टीज का यह भी कहना था कि सन् १८८८ का अधिनियम कभी भी यह नही कहता था जो कि किया गया है।

काउन्टीज ने बताया कि शहरी स्वायत्तता का विकास एक गलत विकास था और इसके परिणामस्वरूप अनेक बुरे परिणाम सामने आए। सर्वप्रथम इसका एक परिणाम यह हुआ कि उन सम्पन्न क्षेत्रो को बाहर ले लिया गया जो कि काउन्टी के वित्तीय आधार थे। नियमानुसार शहरी क्षेत्र प्रायः सम्पन्न क्षेत्र होते हैं। यदि उनको स्वायत्त बना दिया जाए तो काउन्टी परिषद के पास प्रशासन के लिए केवल ऐसे क्षेत्र रह जाएगे जो कि तुलनात्मक रूप से गरीब हैं। इस व्यवस्था के कुछ आवश्यक परिणाम निकलेंगे। आय के साधन कम होने के कारण या तो काउन्टी को अपनी सेवाए कम करनी होगी अथवा उसके अनुदान के लिए केन्द्रीय सत्ता की ओर निहारना पडेगा। ये दोनो ही विकल्प उचित नही हैं। अनुदान के कारण स्थानीय सरकार का मूल उद्देश्य भी समाप्त हो जाता है। ब्रिटिश स्थानीय सरकार के इतिहास को देखने के बाद यह कहा जा सकता है कि जब केन्द्रीय सरकार अनुदान देती है तो वह पर्याप्त नियन्त्रण भी रखती है और इस प्रकार स्थानीय जनता को कई प्रकार की परेशानिया उत्पन्न हो जाती हैं।

दूसरे, इसका एक परिणाम यह होगा कि शहरी एव देहाती जिलो के बीच सन्तुलन प्राप्त करने के लिए उचित क्षेत्र मिल जायगा। काउन्टी के विचार मे तथा उसके क्षेत्र मे जो कि पर्याप्त बड़ा होता है, कई प्रकार की जनसंख्या रहती है। गरीब जिलो मे जनसख्या अपेक्षाकृत अधिक घने रूप से बसी हुई होगी और अन्य जिलो मे जनसख्या यहा तहा बसी होगी। ऐसी स्थिति मे पूरी काउन्टी की सेवाओ का खर्चा सभी लोगों पर बराबर पडेगा और कुल मिला कर इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप काउन्टी के अधिक धनवान लोग गरीबो की सहायता करेंगे। दूसरे शब्दो मे यह कहा जा सकता है कि काउन्टी में एक ही सत्ता के आधीन शहर एव कस्बे दोनो

रहेगे और जो सेवाएं पूरे क्षेत्र मे प्रदान की जाएंगी उनके लिए पूरे क्षेत्र के लोगों द्वारा खर्चा प्रदान किया जायगा। इससे सेवाओं का सुसमतापूर्वक सचालन सम्भव हो सकेगा। काउन्टी परिषद बड़े एवं मिले-जुले क्षेत्रों के प्रशासन के रूप मे सर्वोच्च होती है तथा इसमें गरीब देहाती क्षेत्रों को धनवान शहरी क्षेत्रों के दम पर सहयोग दिया जाता है।

तीसरे, एक तर्क यह दिया जाता है कि प्रशासन मे बचत एवं कुशलता लाने के लिए यह जरूरी है कि सरकार का बड़ा क्षेत्र होना चाहिए। जब तक एक उपयुक्त आकार नहीं होता उस समय तक संस्थाओं को बनाया नहीं जा सकता, उनको क्रियान्वित नहीं किया जा सकता। काउन्टी द्वारा बचत की दृष्टि से यह तर्क दिया जाता है कि संयुक्त व्यवस्था मे शहरी कस्बों द्वारा जो योगदान दिया जाता था उसमे उनके अतिरिक्त देहाती क्षेत्रों का भी प्रशासन चलता था किन्तु अब जब कि वे अपना प्रबन्ध स्वयं करते हैं तो उन्हे उतना ही खर्चा करना होता है। काउन्टी तथा कस्बे दोनों के हित के लिए यह जरूरी है कि संयुक्त व्यवस्था अपनाई जाए। इस तर्क के विरुद्ध काउन्टी की तीन आधारों पर आलोचना की जा सकती है। प्रथम यह है कि यदि काउन्टियां बाहर किये गये कस्बों से गरीब थी तो उनको चाहिए था कि वे अन्य कस्बों के साथ मिल जाती। दूसरे, यद्यपि केन्द्रीय प्रशासन के पक्ष मे बहुत कुछ कहा जा सकता है किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि काउन्टी प्रशासन का सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र है। तीसरे, एक कुशल सरकार का मापदण्ड केवल यह नहीं है कि वह कम पैसों मे सेवाएं प्रदान करे। इसके लिए उन्हे यह भी देखना होता है कि विशेष क्षेत्र एवं विशेष जनता के लिए उचित एवं आवश्यक सेवाएं प्रदान की गई हैं या नहीं।

चौथे, काउन्टीज के द्वारा यह तर्क दिया गया कि काउन्टी बारो व्यवस्था की अपेक्षा काउन्टी व्यवस्था अधिक स्थानीय स्वायत्त सरकार है, अधिक प्रजातन्त्र है क्योंकि काउन्टी मे सभी सेवाएं काउन्टी परिषद और प्रत्येक गैर काउन्टी बारोज तथा शहरी एवं देहाती जिलों मे बटी रहती हैं। यद्यपि यह कहना सही है कि काउन्टी व्यवस्था मे लोगों को प्रशासनिक कार्यों मे भाग लेने का अधिक अवसर प्राप्त होता है किन्तु जब हम वास्तव मे मतदान करने वाले लोगों की संख्या का पता लगाते हैं तो घोर निराशा होती है।

पांचवें, काउन्टीज द्वारा यह तर्क दिया गया कि स्वायत्त शहरी क्षेत्रों के प्रसार से न केवल उनकी वित्तीय स्थिति चिन्ताजनक हो गई वरन् प्रशासनिक दृष्टि से भी उनकी हालत नाजुक बन गई क्योंकि उन्हें एक ऐसे क्षेत्र का प्रशासन करना होता था जो कि यहां से वहां फैला रहता था और जिनके बीच परस्पर अनेक विभिन्नताएं पाई जाती हैं। क्षेत्र के कुछ निवासी यहां रहते हैं कुछ वहां रहते हैं, कुछ बस्तियां घनी हैं कुछ अत्यन्त कम आबादी वाली हैं। ऐसी स्थिति मे उनको स्कूल, प्राथमिक शिक्षा, पुस्तकालय एवं पुलिस आदि सेवाएं किस प्रकार प्रदान की जा सकती हैं।

छटे, कुछ अन्य विचार भी इस सम्बन्ध में दिये गये जैसे कि परिवर्तन के परिणामस्वरूप काउन्टीज की विकास योजनाएं रुक जाएंगी,

उनके अधिकारीगण कार्य से विमुख हो जायेंगे। इसलिए काउन्टी सेवाएं स्थापित ही क्यो की जाए जब कि कुछ दिनो बाद इन विषयो मे बारोज अपने स्वामी स्वय बन जायेंगे। इसके अतिरिक्त ससदीय कार्यभार को केवल तभी कम किया जा सकता है जब कि काउन्टी को एक बडा क्षेत्र दिया जाय तथा उसे अधिक प्रशासकीय एव पर्यवेक्षण सम्बन्धी सत्ताए सौपी जाए ।

बारोज के तर्क—बारोज ने काउन्टी से स्वतन्त्र रह कर अपने प्रशासन को सगठित करने के क्षेत्र मे कई तर्क दिये। सर्वप्रथम उन्होने काउन्टी प्रशासन के लिए किए जाने वाले अपने वित्तीय योगदान का उल्लेख किया। उन्होने यह तर्क दिया कि कई एक सेवाओ मे उनके द्वारा प्राप्त सेवाओ की अपेक्षा अधिक धन प्रदान किया जा रहा है। इन सेवाओ को वे अपने प्रयास से भी प्राप्त कर सकते हैं तथा अपेक्षाकृत अधिक सस्ती प्राप्त कर सकते है और यदि सस्ते नही तो कम से कम वे उस ढग से प्राप्त कर सकते है जिससे कि वे चाहे। उनका यह तर्क था कि जो सेवाए उनके क्षेत्र के लिए उपयुक्त नही हैं उनका भार उन पर क्यो डाला जाए अथवा वे दूसरे क्षेत्रो के लिए योगदान क्यो दें। उन्होने यह इच्छा प्रकट की कि वे अपने भाग्य के विधाता स्वय बनें तथा उन क्षेत्रो का वित्तीय भार अपने ऊपर न लें जिनके साथ उनकी सामान्यताए बहुत कम हैं और जिनमे कि वे बहुत कम रुचि रखते है।

दूसरे, अपने क्षेत्रो के प्रसार के पक्ष मे तर्क देते हुए बारोज ने यह बताया कि इन अर्ध-शहरी क्षेत्रो ने औद्योगिक एव व्यापारिक विकासो के कारण तथा यातायात के समुचित प्रबन्ध के कारण अपनी सीमाओ का विकास कर लिया है तथा यहा के लोग काम के लिए केन्द्र की ओर दौडते है और बाद मे आराम के लिए इन क्षेत्रो मे आजाते है। इस प्रकार जीविका के साधन सास्कृतिक रुचिया, नागरिक सुविधाए, शहर का नियोजन, फैक्ट्री निवास स्थान, स्कूल, जल वितरण आदि सभी दृष्टियो से यह क्षेत्र एक इकाई है। जब गलिया और सडकें एक बस्ती से दूसरी बस्ती तक मुड़ कर जाती हैं तो दोनो की एकता के बारे मे प्रश्न ही नही उठता। इसे राष्ट्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण माना गया कि शहरी एकीकरण के आर्थिक महत्व को समझा जाए और बारो के लिए प्रसार की सुविधाए दे कर एव उन्हें काउन्टी से स्वतन्त्रता प्रदान करके इस प्रवृति को बढावा दिया जाए।

तीसरे, जब यह प्रश्न किया गया कि क्या काउन्टी परिषदें इन सम्बन्धित क्षेत्रो के बीच पर्याप्त सहयोग स्थापित करके बारोज की सेवाओ को प्रदान नही कर सकती तो बारोज ने तर्क दिया कि वे ऐसा करने मे असमर्थ हैं क्योकि अर्ध-स्वायत्त सत्ताओ के बीच सहयोग स्थापित करना अत्यन्त कठिन है क्योंकि वे अपनी सीमित स्वतन्त्रता के प्रति ईर्ष्यालु होते हैं। इसके अतिरिक्त यदि सहयोग प्राप्त भी कर लिया जाय तो एक सयुक्त कार्यक्रम का प्रबन्धित करना इतना सरल नही है जितना कि नियोजन धन एव क्रियान्वयन के लिए उत्तरदायी इकहरो सत्ता होती है। काउन्टी द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओ के बारे मे यह कहा गया है कि काउन्टी परिषद मे बडे बारोज को चाहे कितना ही उदार प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाए किन्तु उसमे देहाती एवं छोटे शहरी जिलो के प्रतिनिधियो की सख्या हमेशा ज्यादा

होगी क्योंकि इस प्रकार के जिलो को वास्तविक सख्या अधिक है। इसके परिणामस्वरूप काउन्टी परिषद शहरी विकास के प्रति असहानुभूति पूर्ण बन जाती है। करो की दृष्टि से भी वे अपनी रुचियो मे पक्षपातपूर्ण हो जाती है।

चौथे, शहरी क्षेत्रो को यह स्पष्ट था कि स्थानीय सरकार वही पर श्रेष्ठ कार्य कर सकती है जहा कि एक क्षेत्र हो, उसका एक परिषद द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाए, सभी सेवाओ के वित्त को एवं सेवाओं को समन्वित किया जाए। यह बहुत कुछ सही सिद्धान्त था। इसके विरुद्ध काउन्टी परिषदो का यह कहना था कि वे यह समझने मे असमर्थ है कि एक निश्चित जनसख्या वाला विशेष क्षेत्र सभी सेवाओ के लिए उचित क्षेत्र बन जाएगा और न ही यह तर्क किया जा सकता है कि काउन्टी का क्षेत्र और जनसख्या अधिक उचित थे। असल मे इन दोनो को ही एक सगठन सत्ता के आधीन प्रबन्धित किया जाना चाहिए था। काउन्टी बारोज के पक्ष मे एक अन्य महत्वपूर्ण बात उनका व्यक्तिगत सम्मान का भाव था। उनमे हमारा कस्बा, हमारी परिषद एव अहम की भावनाए पनपने के कारण पृथक्करण की नीतियो का प्रभाव बढा।

इस प्रकार काउन्टी की ओर से अनेक तर्क दिए गए और दूसरी ओर काउन्टी बारोज ने तर्क प्रस्तुत किए। दोनो ओर से जो वाद-विवाद उत्पन्न हुए उनके परिणामस्वरूप सन् १९४५ मे एक सीमा आयोग स्थापित करना जरूरी हो गया।

शहरी जिले
[Urban Districts]

एक प्रशासकीय काउन्टी मे स्थानीय सरकार की जो विभिन्न सत्ताएं रहती हैं शहरी जिले उनमे से ही एक है। सन् १९४८ मे शहरी जिलो की संख्या ५७२ थी। प्रत्येक काउन्टी मे शहरी जिलो की संख्या बराबर नही थी किन्तु ये जिले मुख्य रूप मे स्वास्थ्य, सडकें एव गृह-निर्माण से सम्बन्धित सत्ताए होती है। सन् १९०१ म जिन शहरी जिलों की जनसख्या २०००० थी उनको प्राथमिक शिक्षा का भी कार्य सौंपा गया। वे यह कार्य सन् १९४४ तक करती रही बाद मे ये शक्तिया काउन्टीज को दे दी गई। शहरी जिले कुछ ऐसे थे जो कि उच्च रूप से केन्द्रित शहरी क्षेत्र थे तथा उनमे कोई भी देहाती विशेषता नही थी। कुछ ऐसे क्षेत्र थे जो कि शहरी बनाम देहाती थे। उनमे एक या दो छोटी शहरी नाभिया थी और उनको चारो ओर से देहाती इलाको ने घेरा हुआ था। आकार एवं व्यय के आधार पर भी शहरी जिलो के बीच बडे, मध्य के तथा छोटे क्षेत्रो के बीच अन्तर था। इनमे से कुछ कस्बे तो पर्याप्त संगठित थे तथा दूसरी ओर कुछ क्षेत्र कम जनसंख्या वाले थे। इनके निवासियों का नागरिक जीवन परस्पर भिन्न था, शहरी जिलो के निवासियो का प्रशासन दो सत्ताओं द्वारा किया जाता था। ये थी—काउन्टी परिषद और शहरी जिला परिषद। काउन्टी परिषद के लिए क्षेत्र के कुछ प्रतिनिधि चुने जाते थे जिनको जिले के प्रतिनिधि कहा जाता था यद्यपि कानून की दृष्टि से वे पारषद थे।

शहरी जिलो को विभिन्न कार्य सौंपे गए थे। किस शहरी जिले के द्वारा क्या कार्य किया जाता था यह एक विस्तृत अध्ययन का विषय है। यहाँ केवल उन्ही कार्यों का उल्लेख किया जा सकता है जो कि कानूनी रूप से इन निकायो को सौंपे गए। सामाजिक एवं धन सम्बन्धी महत्व के कारण इन निकायो को जो शक्तिया सौंपी गई वे मुख्य रूप से चार विभागो मे विभाजित की जा सकती हैं। प्रथम भाग मे वे शक्तिया आती हैं जो कि उनके स्तर के कारण उन्हें सौंपी गई हैं, चाहे उनकी जनसख्या कुछ भी हो। इनमे से कुछ शक्तिया स्वेच्छापूर्ण होती हैं तथा बहयकारी होती है। जबकि अन्य सहमतिपूर्ण होती हैं मजदूरो के लिए घर बनाने की शक्ति एक उत्तरदायित्वपूर्ण शक्ति है जब कि स्नानागार आदि का प्रावधान सहमतिपूर्ण शक्तियो का उदाहरण है। दूसरी श्रेणी मे वे शक्तिया आती हैं जिनका प्रयोग केवल एक ही निश्चित आकार वाले जिले ही कर सकते हैं। उदाहरण के लिए दस हजार से अधिक जनसख्या वाले शहरी जिले एक अंश विभाग समिति (Allotment Committee) नियुक्त करेंगे जब कि बीस हजार से अधिक की जनसख्या वालो को एक कस्बा नियोजन कार्य-क्रम बनाने चाहिए और प्राथमिक शिक्षा के लिए प्रावधान बनाने चाहिए। तीसरे वर्ग मे वे शक्तिया आती हैं जिनको कि वैकल्पिक रूप से या तो शहरी जिले काम मे ले सकते हैं या काउन्टी परिषद ऐसी शक्तियो का सम्बन्ध सार्वजनिक पुस्तकालयो, खुले मैदानो की रचना, एक सम्यापन, एक गैस-परीक्षक की नियुक्ति आदि से रहता है। चौथे, कुछ शक्तियां ऐसी होती हैं जिनको कि मिलेजुले रूप से शहरी जिला परिषद अपने जिले के लिए तथा काउन्टी परिषद प्रशासनीय काउन्टी के लिए सम्पन्न करती है। उदाहरण के लिए वे ससद मे व्यक्तिगत विधेयक को प्रोत्साहित कर सकती है या उसका विरोध कर सकती हैं और यदि आवश्यक हो तो नदियो को गन्दा किए जाने से रोक सकती हैं। शहरी जिलों की शक्तियो के बीच एक ही काउन्टी मे आकार के आधार पर विभिन्नताए होती हैं और एक ही आकार के विभिन्न शहरी जिलो के बीच विभिन्न काउन्टियो मे अन्तर होता है।

शहरी जिलो की स्थापना सन् १८६४ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा की गई थी। ये पूर्ववर्ती शहरी जिलो पर आधारित थे जिनको कि जन-स्वास्थ्य अधिनियम के आधीन निर्मित किया गया था। शहरी जिले जैसा कि इनके नाम से प्रतीत होता है, आकार की दृष्टि से अत्यन्त छोटे होते हैं। इनमे दो या दो से अधिक छोटे कस्बे मिले रहते हैं अथवा ऐसे छोटे कस्बे होते हैं जो कि चारो ओर से गावो द्वारा घिरे हुए हो। विभिन्न शहरी जिलों का क्षेत्रफल दो से ले कर चालीस वर्ग मील तक है और उनकी जनसख्या एक लाख से लेकर लगभग सात सौ पचास तक है

देहाती जिले
[Rural Districts]

देहाती जिलो की स्थापना सन् १८६४ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा की गई। ये पूर्ववर्ती स्थानीय सफाई जिलों पर आधारित थे। ऐसे जिलों की संख्या ४७५ के लगभग थी। ये काउन्टी के विस्तृत क्षेत्र एवं

दूर बसी हुई जनता पर प्रशासन करते थे। देहाती जिलो के क्षेत्र तीन से लेकर साढे चार सौ वर्ग मील तक के थे और जनसंख्या की दृष्टि से इनमे १५०० से लेकर १०२००० तक लोग रहते थे।

पेरिश
[The Parish]

पेरिश स्थानीय सरकार की सबसे छोटी इकाई है। इसका एक लम्बा और एकीकृत इतिहास है। लगभग पाच सौ वर्ष तक विशेषकर ट्यूडर काल से उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भ तक ये पेरिशें स्थानीय-सरकार के सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र थे। उसके बाद मे व्यवस्थापन द्वारा इनकी शक्ति एवं महत्व को कम कर दिया गया। निर्धन कानून का सुधार एवं सन्-१८३४-३५ मे नगर निगमो की स्थापना के कारण पेरिशो की शक्तिया घटती चली गई और बाद मे होने वाले भौतिक एव आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप इनकी शक्तिया और भी कम हो गई। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप यह आशका होने लगी कि कही पेरिशें पूरी तरह से समाप्त न हो जाए और इसी आशका के परिणामस्वरूप सन् १८९४ मे एक अधिनियम पास करके पेरिशो को छोटी-मोटी शक्तिया सौंपी गई। पेरिशो को पूर्ण विनाश से बचाने मे तथा उनके अस्तित्व को बनाए रखने मे ग्राम्य प्रजातन्त्र एव कृषि-श्रम ने महत्वपूर्ण रूप से भाग लिया। सन् १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने देहाती पेरिशो के प्रशासकीय रूप को पूरी तरह से बदल दिया। उसके बाद भी शहरी पेरिशें कुछ धार्मिक कार्य करती हैं और कुछ पंजीकरण से सम्बन्धित कार्य करती हैं। इनके अतिरिक्त उनका कोई भी कार्य नही है।

सन् १८९४ के अधिनियम ने पेरिश मीटिंग तथा पेरिश परिषद की स्थापना की। देहाती जिलो के साथ सम्मिलित प्रत्येक देहाती पेरिश मे पेरिश परिषद उस समय रहती थी जब कि उसकी जनसख्या ३०० से अधिक हो अथवा यदि उसकी जनसख्या १०० से ३०० लोगो के बीच मे हो तो यह पेरिश परिषद की स्थापना की इच्छा प्रकट कर सकती थी। यदि इसकी जनसख्या १०० से भी कम हो तो भी यह पेरिश परिषद का सगठन कर सकती थी यदि ऐसा करने के लिए उसे काउन्टी परिषद द्वारा अनुमति प्रदान कर दी जाए। जहा कही देहाती पेरिश के पास पेरिश परिषद नही होती थी वह पेरिश मीटिंग की स्थापना करती थी। इंगलैण्ड तथा वेल्स मे देहाती पेरिशो की सख्या कुल मिला कर लगभग १२८५० है जबकि शहरी पेरिशें १५२० हैं। पेरिश परिषदो की सख्या ६२२० है। ये परिषदें ७२०० पेरिशो से सम्बन्ध रखती है। पेरिश मीटिंगों की संख्या लगभग ५६५० है। इनमे से केवल ३५० ही प्रत्यक्ष रूप से वित्तीय कार्यों को सम्पन्न करती हैं। काउन्टी परिषद की स्वीकृति से कुछ पेरिशें मिल कर अपनी एक ही पेरिश परिषद बना सकती थी। ऐसा वे तभी करती थी जबकि उनकी पेरिश मीटिंगों मे ऐसा करने के लिये निर्णय ले लिया जाय।

पेरिश मीटिंग मे पेरिश के स्थानीय सरकार के निर्वाचक रहते हैं जो कि वर्ष में एक या दो बार निर्णय लेने के लिए मिलते हैं वे अपना एक सभापति चुनते हैं। वह सभापति एव स्थानीय देहाती जिला परिषद मे उनका

प्रतिनिधि पेरिश के मान्य अधिकारी बन जाते हैं। सन् १८६४ के अधिनियम तथा उसके बाद बनने वाले दूसरे अधिनियमो ने पेरिश परिषदो एवं पेरिश मीटिंगो को कुछ शक्तियो एवं कार्यों के उत्तरदायित्व प्रदान किए। इनमें से कुछ बाध्यकारी थे और दूसरे स्वीकृति योग्य। पेरिश मीटिंग द्वारा दो कर सम्बन्धी सत्ताएं नियुक्त कर दी जाती थी। यह पेरिश परिषद के चुनाव के लिए प्रावधान बनाती थी। यह चुनाव हर तीसरे साल किए जाते थे। इन अनिवार्य कर्त्तव्यो के अतिरिक्त पेरिश मीटिंगो के पास करने के लिए कोई महत्वपूर्ण कार्य नही था। एक महत्वपूर्ण शक्ति पेरिश मीटिंगो के पास यह होती थी कि वे काउन्टी परिषद मे देहाती जिला परिषद के विरुद्ध शिकायत कर सकती थी कि परिषद के द्वारा देहाती गृह-निर्माण के कार्य-क्रमो के क्षेत्र में अवहेलना बरती जा रही है अथवा जल वितरण प्रावधानो या जन स्वास्थ्य अधिनियमो के बारे मे बेपरवाही की जा रही है।

पेरिश परिषद हर तीसरे वर्ष वार्षिक पेरिश मीटिंग मे निर्वाचित की जाती थी। यह पेरिश मीटिंग से स्थानीय सरकार की सत्ताओ मे स्तर की दृष्टि से कुछ उच्च होती है और इसलिए उसके पास अधिक शक्तिया होती हैं। सन् १८६४ के अधिनियम ने पेरिश परिषदो को यह शक्ति दी कि वह अपने न्यायोचित एवं वैधानिक खर्चों के लिए पेरिश मीटिंग का स्वीकृति से कर लगा सके। वास्तविक व्यवहार मे पेरिश परिषद या पेरिश मीटिंग मे एक पेरिशनर ऐसा होता था जो कि देहाती जिला परिषद का भी सदस्य होता था और इस प्रकार उच्चतर निकायो को निम्नतर निकायो के साथ मिलाया गया। किन्तु यह केवल घटनावश ही हुआ क्योकि देहाती जिला परिषद मे जो पेरिश के प्रतिनिधि होते है उनको पेरिश परिषद का सदस्य होना जरूरी नही होता। दोनो ही निकायो के बीच यदि पारस्परिक सम्बन्ध की व्यवस्था कर दी जाए तो निश्चय ही अत्यन्त उपयोगी कार्य समझा जायगा क्योकि उनके द्वारा किए जाने वाले प्रशासकीय कार्य प्राय परस्पर प्रतिराव की स्थिति में होते है और उनमे अनावश्यक व्यय की सम्भावना अधिक होती है। देश के विभिन्न भागो मे देहाती जिला परिषदो ने विभिन्न समितिया गठित की है ताकि इस प्रकार का एकीकरण स्थापित किया जा सके।

देहाती पेरिशें स्थानीय सरकार मे आज भी अपना योगदान करती हैं यद्यपि उनका योगदान अधिक महत्वपूर्ण नही होता। जब स्थानीय सरकार पर शाही आयोग ने पेरिश परिषद एवं पेरिश मीटिंगो की कार्यवाही के सम्बन्ध मे विशेष जाच की तो कई एक महत्वपूर्ण गवाहियो ने यह बताया कि एक पेरिश मे जहा पर कि पेरिश परिषद नही होती, पेरिश मीटिंग द्वारा गावो के हितो की रक्षा के साधन के रूप मे अत्यन्त मूल्यवान कार्य किया जाता हैं। किन्तु इन हितो की रक्षा वे तभी करती है जब कि किसी के द्वारा उनको चुनौती दी जाए, नही तो एक प्रशासकीय सगठन के रूप मे या गाव को सुधारने के कार्यक्रमो की पहल करने वाले के रूप में इनका महत्व बहुत कम होता है। जहाँ तक पेरिश परिषदो का सम्बन्ध है वे अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं और इनको अधिक उपयोगी बनाने के लिए प्रयास किया जाना चाहिए।

3

स्थानीय सत्ताओं के कार्य

[THE FUNCTIONS OF LOCAL BODIES]

ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार मे जो विभिन्न सत्ताए है तथा जिनको मिला कर स्थानीय जनता की सेवा करने का प्रयास किया गया है उनके द्वारा अनेक प्रकार की सेवाए सम्पन्न की जाती हैं। स्थानीय सत्ताओ द्वारा की गई सेवाओ की प्रकृति अनेक प्रकार की है और ये जीवन के प्राय प्रत्येक पहलू मे सम्बन्ध रखती है। केन्द्रीय सरकार एव राष्ट्रीय निगमो द्वारा जो सेवाए प्रदान की जाती है उनकी तुलना मे स्थानीय सेवाए अधिक विस्तृत क्षेत्र को अपने आप मे समाहित करती है। काउन्टी बारो परिषदे अपने क्षेत्र मे स्थानीय सरकार की सभी सेवाओ के लिए उत्तरदायी होती हैं। दूसरी ओर काउन्टी परिषदें स्वास्थ्य, सडक, शिक्षा, अग्नि सुरक्षा, नियोजन, बालको की रक्षा आदि कार्यों के लिए स्थानीय सत्ता के रूप में उत्तरदायी होती है और साथ ही काउन्टी के न्यायाधीशो से मिल कर पुलिस के ऊपर संयुक्त नियन्त्रण लागू रखने का कार्य करती हैं। काउन्टी जिला परिषदो द्वारा अर्थात् नॉन काउन्टी बारोज की परिषदो एव शहरी तथा देहाती जिलो की परिषदो द्वारा जो कार्य किए जाते हैं उनमे सफाई गृह निर्माण, पार्कों की रचना, खुले मैदान बनाना आदि मुख्य हैं। पेरिश का सम्बन्ध मुख्य रूप से कम महत्व की सेवाओ के साथ रहता है। कुछ पेरिशे स्नानागार, धोबीघाट एव पुस्तकालय आदि का कार्य भी करती हैं। एक ही स्तर वाली स्थानीय सत्ताओ द्वारा जो सेवाए प्रदान की जाती है वे एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र मे कई आधारो पर भिन्न होती हैं। इनकी भिन्नता के कारणो मे प्रथम यह है कि स्थानीय सत्ताओ द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओ मे कुछ तो बाध्यकारी होती हैं जब कि अन्य ऐच्छिक।

बाध्यकारी कार्य (Obligatory functions) :-वे होते हैं जिनके सम्बन्ध मे व्यवस्थापन करते समय यह कहा जाता है कि इनको स्थानीय सत्ता सम्पन्न करेगी ही (Shall do)। दूसरी ओर स्वेच्छाचारी शक्तियाँ होती हैं जिनके बारे मे व्यवस्थापन द्वारा यह कहा जाता है कि स्थानीय सत्ता इन कार्यों को कर सकती है (May do)। जब 'करेगी' शब्द का प्रयोग

किया जाता है तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उन कार्यों को सम्पन्न करना सत्ता का एक वैधानिक कर्त्तव्य है किन्तु जब 'सकती हैं' शब्दों का प्रयोग किया जाता है तो स्थानीय सत्ताएं उनको सम्पन्न करने या न करने के लिए स्वतन्त्र होती हैं। वैधानिक कर्त्तव्यों को लागू कराने के तरीके कई होते हैं और जैसा कि मि० आर० एम० जेक्सन लिखते हैं यदि आप कहीं भी व्यवस्थापन का 'करेगी' पाएं तो यह मान कर चलिए कि यदि वे कार्य नहीं किए गए तो कोई न कोई ऐसी सत्ता जरूर होगी जो कि उस कार्य को न करने की स्थिति में कानूनी कार्यवाही कर सकेगी।* जहां तक ऐच्छिक कार्यों का सम्बन्ध है उनको सम्पन्न करने के लिए स्थानीय सत्ता द्वारा कोई समिति नियुक्त की जा सकती है। जिन कार्यों को स्थानीय सत्ता की राय में समिति के द्वारा अच्छी प्रकार सम्पन्न किया जा सकता है, वे कार्य इन समितियों द्वारा प्रबन्धित एवं नियमित होने के लिए छोड़ दिए जाते हैं। अधिनियम द्वारा कुछ स्वेच्छापूर्ण शक्तियां इस प्रकार की भी सौंपी जाती हैं जिन पर कुछ शर्तें लगा दी जाती हैं तथा कुछ सीमाएं निश्चित कर दी जाती हैं। इन शक्तियों को वह इस प्रकार नियुक्त समितियों को हस्तान्तरित कर सकती है। ऐसा करने में इसके ऊपर कोई प्रतिबन्ध या सीमा नहीं रहती किन्तु वह कर लगाने या धन इकट्ठा करने की शक्ति किसी समिति को नहीं सौंप सकती।

स्थानीय सत्ताओं द्वारा सम्पन्न की जाने वाली सेवाओं में अन्तर का एक दूसरा कारण यह है कि कुछ स्थानीय सत्ताओं को स्थानीय अधिनियम द्वारा सेवाओं का प्रशासन करने के लिए अतिरिक्त शक्तियां प्रदान कर दी जाती हैं। इन सेवाओं को वे सामान्य कानून के आधीन प्रदान नहीं कर सकते। इस प्रकार बर्मिघम नगर को सन् १९१९ के अधिनियम द्वारा एक नगरपालिका बैंक स्थापित करने की अतिरिक्त शक्ति प्राप्त हो गई है। तीसरे, केन्द्रीय सरकार द्वारा किसी व्यक्तिगत स्थानीय सत्ता को वह शक्ति सौंपी जा सकती है जो कि सामान्य रूप से किसी अन्य वर्ग की स्थानीय सत्ता को प्राप्त होती। गृह निर्माण एवं स्थानीय सरकार मन्त्री द्वारा देहाती जिला परिषद को वे शक्तियां सौंपी जाती हैं जो कि वैसे शहरी जिला परिषद को सौंपी जानी चाहिए थीं। चौथे, हस्तान्तरित करने की शक्तियों का प्रयोग कुछ सत्ताओं द्वारा अन्यों की अपेक्षा अधिक काम में लाया जाता है। उदाहरण के लिए काउन्टी परिषद् सड़क निर्माण में सम्बन्धित अपनी किसी भी शक्ति को गैर काउन्टी बारो, शहरी जिलों या देहाती जिलों की परिषदों को सौंप सकती है। जब इन शक्तियों को सीमित रूप में प्रयुक्त किया जाता है तो काउन्टी परिषद द्वारा अधिक सेवाओं का प्रशासन किया जाता है जबकि

*"The methods of enforcing legal duties are various, but it is safe to assume that whenever you find a legislative 'shall', then somehow and somewhere there is someone. He can take legal steps if an authority fails in his duties."

—*R. M. Jackson*, Op. Cit., P. 43.

दूसरी ओर जो काउन्टी परिषदें अपनी अधिकांश शक्तियों को हस्तान्तरित कर देती हैं तो उनके स्वयं के पास प्रशासित करने के लिए अपेक्षाकृत कम सेवाएं रह जाती हैं। पाँचवें, कुछ स्थानीय सत्ताओं को उसी श्रेणी की किन्तु कम जनसंख्या वाली स्थानीय सत्ताओं की अपेक्षा अधिक शक्तियां होती हैं। इस प्रकार कम से कम ४०००० जनसंख्या वाले नगरपालिका बारो और शहरी जिला परिषदों को भोजन एवं औषधि से सम्बन्धित सत्ताएं भी बना दिया जाता है। छठे, कई बार कुछ स्थानीय सत्ताएं विशेष कार्यों को सम्पन्न करने के लिए संयुक्त मण्डल बनाने को परस्पर मिल जाती हैं। उदाहरण के लिए इस प्रकार के अनेक मण्डल मिल सकते हैं। इन सब कारणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि एक ही श्रेणी की स्थानीय सत्ताओं द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाएं भी विभिन्न स्थानीय सत्ताओं के सन्दर्भ में भिन्न हो सकती हैं।

स्थानीय सत्ताओं को जो शक्तियां सौंपी जाती हैं उन शक्तियों को उसी अधिनियम के द्वारा नियन्त्रित भी किया जा सकता है तथा उनको सम्पन्न करने का तरीका भी बताया जा सकता है। स्थानीय सरकार अधिनियम सन् १९४८ के अनुसार स्थानीय सत्ताओं को यह शक्ति सौंपी गई है कि वे नाट्यघर, सम्मेलन-घर एवं नृत्य घर की व्यवस्था कर सकते हैं। वे साज और संगीत का भी प्रबन्ध कर सकते हैं। वे ऐसे किसी व्यक्ति या संस्था की भी सहायता दे सकते हैं जो कि इन सेवाओं को सम्पन्न कर रहा है। कोई भी स्थानीय सत्ता इन कार्यों पर कितना खर्च कर सकती है इसकी सीमाओं को निर्धारण कर दिया जाता है। यह निर्धारण इन स्थानों से होने वाली आमदनी को देख कर किया जाता है। व्यय को सीमित करने वाला एक अन्य प्रावधान नागरिक रेस्तरां अधिनियम, १९४७ में पाया जाता है। इसके अनुसार स्थानीय सत्ताओं को रेस्तरां चलाने की शक्ति दी गई है किन्तु उस सत्ता से यह शक्ति छीन ली जाएगी जो कि लगातार तीन वर्ष तक हानि उठाती रहे। एक मन्त्री को यह अधिकार दिया गया है कि यदि वह सोचे कि कुछ समय बाद रेस्तरां अपना खर्चा अपनी आय में से निकाल लेगा तो वह रेस्तरां को जारी रखने की आज्ञा दे सकता है। सन् १९५४ में मन्त्री ने लन्दन काउन्टी परिषद को रेस्तरां चलाने से मना कर दिया क्योंकि उसमें नुकसान हुआ था और मन्त्री को यह भरोसा नहीं था कि यदि इसे जारी रखा गया तो यह अपना खर्चा स्वयं निकाल लेगा। अधिनियम में यह भी कहा गया था कि यदि किसी रेस्तरां की शक्ति छीन ली जाए और बाद में यदि परिस्थितियां बदल जाएं तो मन्त्री उन शक्तियों को पुनः वापस कर सकता है।

एक सामान्य प्रावधान के अनुसार कोई भी स्थानीय सत्ता कार्य केवल तभी कर सकती है जब कि वह मन्त्री से स्वीकृति प्राप्त कर ले। उदाहरण के लिए जब व्यय के हेतु धन उधार लिया जाए तो उस पर मन्त्री की स्वीकृति ली जाती है। यहां यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि मन्त्री के पास में कोई रक्षित अधिकार नहीं होते जिनको कि वह स्थानीय सत्ताओं को सौंप सके। इस सम्बन्ध में उसकी शक्तियां केवल उन्हीं शक्तियों तक सीमित हैं

जो कि अधिनियम द्वारा स्थानीय सत्ताओ को सौंपी गई । उदाहरण के लिए स्थानीय सत्ता कोई भी भूमि रखने का अधिकार नही रखती जब तक कि उसे अपने किसी कार्य को सम्पन्न करने के लिए ऐसी भूमि की आवश्यकता न पडे । यदि कोई स्थानीय सत्ता यह सोचे कि एक विशेष विभाग को लेने से उसे भविष्य मे लाभ हो सकता है या भविष्य मे वह उसके किसी काम मे आ सकती है तो वह उसे खरीद ले और ऐसा करने के लिए वह मन्त्री की स्वीकृति मागे तो मन्त्री द्वारा या तो स्वीकृति दी नही जाएगी और यदि दी भी गई तो वह प्रभावहीन होगी क्योकि मन्त्री की स्वीकृति के बाद भी उस भू भाग को खरीदने का कार्य गैर कानूनी माना जाएगा । मन्त्री को यह अधिकार होता है कि वह स्वेच्छापूर्ण किसी भी शक्ति को बाध्यकारी शक्ति के रूप मे परिवर्तित कर सके । कई बार अधिनियम मे भी यह उल्लेख कर दिया जाता है कि मन्त्री स्वेच्छापूर्ण शक्तियो को बाध्यकारी बना सके ।

स्थानीय सत्ताओ को जो शक्तिया सौंपी जाती हैं उनमे बहुत कुछ एकरूपता पाई जाती है । इसका कारण यह है कि कई एक विषय जो स्थानीय सरकार को प्रभावित करते हैं, ऐसे होते हैं जो कि सभी प्रकार की स्थानीय सत्ताओ के लिए सामान्य होते हैं । उदाहरण के लिए इन सभी सत्ताओ को इस शक्ति की आवश्यकता होती है कि कार्यालय बना सकें, स्टाफ नियुक्त कर सकें, समितिया नियुक्त कर सकें, आदि–आदि । इन सभी सत्ताओ के सदस्यो की योग्यता, अयोग्यता एव वेतन, भत्ता आदि के बारे मे भी सामान्य प्रावधान हो सकते हैं । यदि इन विषयो के सम्बन्ध मे व्यवस्थापन किया गया तो विभिन्न श्रेणियों की स्थानीय सत्ताओ के बीच भेदभाव करने का कोई कारण नही रहेगा क्योकि उनकी आवश्यकताए समान हैं । किन्तु कई बार ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है जब कि हमे स्थानीय जनता को प्रदान की जाने वाली सेवाओ के सम्बन्ध मे विचार करना होता है । ये सेवाए सभी स्थानीय निकायों को समान रूप से प्रदान नही की जा सकती क्योकि ऐसा करने से पूर्व सम्बन्धित सत्ता की सामर्थ्य देखना भी जरूरी होता है । सेवाओ की शक्ति को सौंपते समय यह देखना जरूरी होता है कि जिस निकाय को शक्तिया सौंपी जा रही हैं क्या वह उनको सम्पन्न कर पाएगा । यह समस्या प्राय. उस समय उत्पन्न होती है जब कि स्थानीय सत्ताओ के दो या दो से अधिक सूत्र होते हैं । क्योंकि जहा कही केवल एक ही सर्वोद्देशीय सत्ता होती है तो उस क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाली सारी सेवाए उसी सत्ता को सौंप दी जाती हैं । उदाहरण के लिए काउन्टी बारो का नाम लिया जा सकता हैं; किन्तु जब एक स्थानीय सत्ता की बनावट मे विभिन्न सूत्र आ जाते हैं जैसे कि काउन्टी जिला और गाव आदि होते हैं तो शक्तियो को उनके बीच विभाजित करना जरूरी हो जाता है ।

मुख्य सिद्धान्त यह है कि प्रमुख सत्ता को प्रमुख सेवाओं के संचालन का अधिकार सौंप दिया जाय क्योकि उसके पास उन्हे सम्पन्न करने की सामर्थ्य एव स्रोत होते हैं । दूसरी ओर छोटी एवं कम महत्वपूर्ण सत्ताओं को ऐसे विषयो के संचालन की शक्ति सौंपनी चाहिए जो कि उनके आकार

ग्रौर स्रोतो के मनुकूल हो। यह सिद्धान्त तो उपयुक्त है किन्तु जब व्यावहारिक रूप मे इसे प्रयुक्त किया जाता है तो कठिनाई उत्पन्न होती है। विभिन्न स्थानीय सत्ताग्रो के बीच कार्यों के वितरण की समस्या उस समय ग्रत्यन्त सरल हो जाती जब कि कानूनी दृष्टि से एक ही श्रेणी मे ग्राने वाली सत्ताग्रो की जनसख्या एव क्षेत्रफल एक जैसा होता किन्तु स्थानीय सत्ताग्रो के बीच प्रदेश एव जनसख्या का विभाजन इस प्रकार नही किया गया है। ग्राकार की दृष्टि से काउन्टीज ग्रनेक प्रकार की होती हैं, इसी प्रकार जिले ग्रौर गाव भी विभिन्नताए रखते हैं। एक काउन्टी का एक जिला इतना बडा एव महत्वपूर्ण हो सकता है जितनी कि दूसरी जगह एक काउन्टी होती है। इन विभिन्नताग्रो को समय-समय पर स्थानीय सरकार की बनावट मे परिवर्तन करके ग्रर्थात कुछ क्षेत्रो को मिला करके ग्रौर कुछ को ग्रलग करके कम किया जा सकता है किन्तु इन्हे पूरी तरह से समाप्त नही किया जा सकता।

स्थानीय सत्ताग्रो की बनावट मे एकरूपता लाना ग्रसम्भव है। विभिन्न समाजो को कभी-कभी प्राकृतिक ग्रवरोधो जैसे नदी, पहाड, जल या जगल ग्रादि द्वारा ग्रथवा सामाजिक या सास्कृतिक विभिन्नताग्रो द्वारा ग्रलग-ग्रलग किया जा सकता है। इन ग्रवरोधो के प्रभाव को कम किया जा सकता है किन्तु पूरी तरह से नही मिटाया जा सकता। हो सकता है कि दो स्थानो की सस्कृति मे किसी प्रकार का ग्रन्तर न हो किन्तु फिर भी उन स्थानो के निवासियो मे स्थानीयता की भावना ग्रधिक हो तो वे अपने ग्रापको ग्रलग इकाई रखने मे रुचि लेगे ग्रौर वे न तो विभाजित होना चाहेगे ग्रौर न किसी मे मिलना चाहेंगे। आकार भी किसी स्थानीय सत्ता की सामर्थ्य का स्पष्ट प्रतीक नही कहा जा सकता। हो सकता है कि एक बडा कस्बा एक विशेष सेवा को सम्पन्न करने मे समर्थ हो किन्तु एक छोटा कस्बा ग्रपने इतिहास, स्थानीय भावना, एव परिस्थितियो के कारण उन्ही सेवाग्रो को सम्पन्न न कर पाये किन्तु फिर भी उन विभिन्न स्थितियो से दोनो को समान स्तर मिला हुग्रा है। यदि कानून द्वारा काउन्टी को कुछ शक्तिया सौंपी जा रही है तो वे शक्तिया छोटी काउन्टी को भी उसी प्रकार प्राप्त होगी जिस प्रकार कि एक बडी काउन्टी को। यह बहुत सम्भावित है कि बडी काउन्टी उन्हे आसानी से सम्पन्न कर सकेगी जब कि छोटी काउन्टी को ऐसा करने मे कठिनाई आएगी और हो सकता है कि वह ग्रसफल रहे। फिर भी व्यवस्थापन द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि छोटे एव कमजोर वर्गों को यह शक्ति न सौंपी जाए।

स्थानीय सत्ताग्रो द्वारा विभिन्न प्रकार की सेवाए प्रदान की जाती है। जीवन के विभिन्न पहलुग्रो से सम्बन्धित होने के कारण ये सेवाए ही स्थानीय जनता को ग्रपने कर्त्ता के ग्रस्तित्व का ज्ञान कराती है। स्थानीय सत्ताग्रो की क्या शक्तियाँ हैं, उनके द्वारा कौन-कौन से कार्य सम्पन्न किये जाते हैं, ग्रादि बातो की जानकारी प्रत्येक व्यक्ति को नही होती। केवल वे ही लोग इनके बारे मे जान पाते हैं जो कि स्थानीय सरकार की व्यवस्था मे सक्रिय रूप से जुटे रहते हैं। सामान्य व्यक्ति को तो उनका भान तभी

होता है जब कि उसे कोई सेवा प्रदान की जाती है। उदाहरण के लिए गलियो मे चलने वाला व्यक्ति तो केवल यह जानता है कि नगरपालिका द्वारा उसके मार्ग मे पड़ने वाली गलियो के कूड़ा-भण्डारो को साफ किया जाता है। यदि उस व्यक्ति से स्थानीय सत्ताओ के अन्य कार्यो के बारे मे पूछा जाय तो वह कुछ भी जवाब नही दे सकेगा; जब कि तथ्य यह है कि स्थानीय सरकार निरन्तर जनता की सेवा करती है। उसकी सेवाएं व्यक्ति के जन्म लेने से पूर्व ही प्रारम्भ होती हैं और उसकी मृत्यु के बाद तक भी चलती रहती हैं। इस प्रकार स्थानीय सरकार की सेवाओ का क्षेत्र बड़ा व्यापक है, उनकी कोई सूची नही बनाई जा सकती।

स्थानीय सत्ता के कुछ सामान्य कर्त्तव्य होते हैं। इनका प्रथम मुख्य कार्य यह है कि जनता को ये उन सेवाओ को प्रदान करे जिनके लिए कि इनको कर या रेट के रूप मे धन दिया जाता है। स्थानीय सत्ता को यह शक्ति प्राप्त होती है कि वह रेट लागू कर सके और सार्वजनिक धन का व्यय कर सके। संसद द्वारा उसे ऐसा करने की शक्ति दी जाती है। इस शक्ति के बिना कोई भी स्थानीय सत्ता कार्य नही कर सकती। स्थानीय सत्ता का एक दूसरा मुख्य कार्य यह है कि क्षेत्र मे रहने वाली जनता की क्रियाओ पर आवश्यकता के अनुसार नियन्त्रण रखे। इस कर्तव्य का निर्वाह करने के लिए स्थानीय सत्ता उप कानून बनाती है और जो लोग इन कानूनो का पालन करने मे असफल रहते हैं उन पर दण्ड लगा सकती है।

स्थानीय सत्ताओ की शक्तियो के बीच विभिन्न अन्तर पाये जाते हैं। ये अन्तर केवल श्रेणी के आधार पर ही नही होते वरन् एक ही श्रेणी की स्थानीय सत्ताओ के बीच भी अन्तर रह सकते हैं। इन अन्तरो के कारणो का उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। इस प्रकार एक स्थानीय सत्ता का स्तर आवश्यक रूप से इस बात का एक पूर्ण निर्देशक नही बन सकता कि वह सत्ता क्या कर रही है। ऐसी स्थिति मे जब हम स्थानीय सत्ताओ के द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले कार्यों का अध्ययन करें तो श्रेणीबद्ध रूप मे हम ऐसा नहीं कर सकते अर्थात् अलग-अलग विभाजन करके यह नही कहा जा सकता कि काउन्टी परिषद ये कार्य करती है, नगरपालिका बारो परिषद ये कार्य करती है और शहरी या देहाती जिला परिषद ये कार्य करती हैं। एक ही प्रकार की स्थानीय सत्ताओ के बीच शक्तियो की विभिन्नता के अति-रिक्त स्थानीय सरकार की कुछ सामान्य शक्तियां भी होती हैं। स्थानीय सत्ताओ को नई शक्तियां सौंपी जाती हैं और पहले जिन शक्तियो का ये सत्ताएं प्रयोग करती थी यदि वे आवश्यक बन जाय तो उनको समाप्त किया जा सकता है या उन्हे दूसरे प्रकार की स्थानीय सत्ता को सौंपा जा सकता है अथवा स्थानीय सरकार के बाहर के निकायो को वे दी जा सकती हैं। वर्तमान प्रवृति के अनुसार काउन्टी जिला परिषदें मुख्य-मुख्य सेवाओ को काउन्टी परिषद के लिए सौंप देती हैं। उदाहरण के लिए प्राथमिक शिक्षा का नाम लिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त काउन्टी परिषदें एवं काउन्टी बारो परिषदें अपनी सत्ता अन्य निकायो को सौंप देती है। उदाहरण के

लिए गैस के प्रसारण का कार्य आज कल गैस परिषद द्वारा ले लिया गया है।

सेवाओं के प्रकार
[The Types of Services]

ससद के कानून द्वारा स्थानीय सत्ताओं को समय-समय पर विभिन्न शक्तियां सौंपी गई हैं। ये शक्तियां जिस रूप मे विकसित हुई उसे क्रमिक एव वैज्ञानिक नही कहा जा सकता। किन्तु फिर भी समय समय पर जिन सेवाओ का विकास हुआ उन्हे सामान्य विशेषताओ के आधार पर कुछ समूहो मे वर्गीकृत किया जा सकता है। मि० पी० स्टोन्स ने इन सेवाओ को चार समूहो मे विभाजित किया है। उनके कथनानुसार प्रथम समूह वातावरण सम्बन्धी सेवाओ (Environmental Services) का है। वे सेवाए है जो कि पूरे समाज की भलाई के लिए सचालित की जाती हैं और इनका उद्देश्य रहने की दशाओं को स्वस्थ एव आनन्ददायक बनाना है। ये लोगो को सामूहिक रूप मे प्रदान की जाती हैं, ये सेवाये बहुत अनिवार्य होती हैं। पहले इनको स्वेच्छापूर्ण निकायो द्वारा सम्पन्न किया जाता था। इन सगठनो मे अठारहवी शताब्दी के नवोदित कस्बों के गणमान्य व्यक्ति होते थे। यही कारण है कि इन सेवाओ का खर्चा मुख्य रूप से रेट द्वारा दिया जाता है। सेवाओ के समूह मे नालो की रचना, नालियो की सफाई, गलियो की सफाई, सार्वजनिक प्रकाश, बेकार की चीजो को ठिकाने लगाना आदि बातें आती है।

सेवाओ का दूसरा समूह व्यक्तिगत सेवाओ (Personal Services) का होता है। इस समूह मे वे सेवाए आती हैं जो कि मनुष्य के व्यक्तिगत लाभ के लिये प्रदान की जाती हैं। इस समूह में जिन सेवाओ को समाहित किया जाता है वे हैं शिक्षा, गृह निर्माण, स्कूलो का भोजन, गूगे, बहरे, अन्धे, अनाथ एव बहिष्कृत बच्चो की देखभाल आदि। तीसरे प्रकार की सेवाए व्यापारिक सेवाये (Trading Services) होती है। इनकी प्रकृति वाणिज्यिक होती है क्योकि इन सेवाओ के सम्बन्ध मे स्थानीय सत्ताओ को यह आशा रहती है कि वह उन्हें लाभ के साथ सचालित कर सकती हैं और नागरिको से उसे रेट लेने की जरूरत नही रहेगी। इन सेवाओ की सामान्य विशेषता यह है कि जो लोग इन सेवाओ से फायदा उठाते हैं वे इनके लिये भुगतान करते हैं मानो वे इन सेवाओ को किसी व्यक्तिगत सस्था मे खरीद रहे हो। इस प्रकार की सेवाओ मे हम नागरिक रेस्तरा, होटल, तरण ताल, नागरिक रगमच एव नगरपालिका यातायात, उद्यानो आदि को ले सकते हैं। चौथे प्रकार की सेवाए गैर व्यापारिक सेवाए (Non Trading Services) होती हैं। इस प्रकार की सेवाओ पर खर्च होने वाला धन सार्वजनिक कोष से दिया जाता है तथा इन सेवाओ पर अनेक प्रकार का नियन्त्रण एव नियमन रखा जाता है। इस श्रेणी मे आने वाली सेवाओ के उदाहरण के रूप मे माप-तोल, भवन विनियमन एव सफाई आदि को ले सकते हैं।

सेवाओं का स्थानान्तरण
[Transfer of Services]

स्थानीय सत्ता के विभिन्न रूपों मे सत्ता का स्थानान्तरण किया जाता है। यह स्थानान्तरण छोटी सत्ता से बडी सत्ताओ को किया जाता है तथा

स्थानीय सत्ताओं से केन्द्रीय सत्ताओं को, छोटी सत्ताएं बड़ी सत्ताओं को अपने कार्य इसलिये हस्तान्तरित कर देती हैं क्योंकि समय की बदलती हुई परिस्थितियों में उन सेवाओं का उनके लिए कोई महत्व नहीं रह जाता। ज्यों-ज्यों देश की जनसंख्या बढ़ती जाती है और सामान्य संगठन जटिल बनता जाता है त्यों-त्यों छोटी सत्ताएं उनके लिए सौंपे गये कार्यों को सम्पन्न करने में अधिक से अधिक अकार्यकुशल होती चली जाती हैं।

जो सेवाएं पहले पैरिश द्वारा सम्पन्न की जाती थी वे समय गुजरने के बाद काउन्टी जिला परिषदों द्वारा ले ली गई और पहले जिन सेवाओं को काउन्टी जिला परिषद सम्पन्न करती थी उन्हें अब काउन्टी परिषद का उत्तरदायित्व बना दिया गया है। इस प्रकार की सेवाओं के उदाहरण के रूप में शिक्षा एवं निर्धन-अधिनियम को लिया जा सकता है। शिक्षा सेवाओं के सम्बन्ध में सन् १८७० के अधिनियम ने उन पैरिशों एवं बारोज में स्कूल बोर्ड स्थापित किये जहां कि स्कूलों के लिए स्वेच्छ पूर्ण प्रावधान अपर्याप्त थे। सन् १९०२ के शिक्षा अधिनियम के अनुसार छोटे स्कूल बोर्ड क्षेत्रों को समाप्त कर दिया गया। इस अधिनियम के आधीन काउन्टी परिषद और काउन्टी बारो परिषदों को स्थानीय शिक्षा सत्ताएं बना दिया गया। अधिनियम के भाग तीन के अनुसार बड़े बारोज एवं शहरी जिला परिषदों को केवल प्राथमिक शिक्षा के लिए स्थानीय शिक्षा सत्ताएं बना दिया गया। सन् १९४४ के शिक्षा अधिनियम के भाग तीन द्वारा स्थापित शिक्षा सत्ताओं को समाप्त कर दिया। वर्तमान समय में स्थानीय शिक्षा सत्ताएं काउन्टी परिषदें एवं काउन्टी बारो परिषदें हैं। सन् १६०१ के निर्धन कानून अधिनियम ने पैरिशों को गरीबों की राहत के प्रशासन की इकाई बनाया किन्तु जब सन् १८३४ में इस अधिनियम में संशोधन किया गया तो इकाईयों का रूप बड़ा कर दिया गया अर्थात् पैरिशों के संघ को इकाई बनाया गया। सन् १८२६ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने पैरिशों के संघ को समाप्त कर दिया और निर्धन कानून के कार्यों को काउन्टीज तथा काउन्टी बारोज की परिषदों को सौंप दिया।

सेवाओं का स्थानान्तरण स्थानीय सरकार से केन्द्रीय सरकार के लिए भी किया गया। जब छोटी सत्ताएं कमजोर हुई तो उनके बड़े भाईयों ने अपनी शक्ति बढ़ाली। इसी प्रकार से बड़ी स्थानीय सत्ताओं ने भी अपने अनेक कार्य केन्द्रीय सरकार और सरकारी निगमों या राष्ट्रीयकृत उद्योगों को सौंप दिए। ऐसा मुख्य रूप से सन् १९४५ के दौरान किया गया। इस प्रकार के स्थानान्तरण के कई एक उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं। इसका सर्वप्रथम उदाहरण सड़कों से सम्बन्ध रखता है। सन् १९३६ के ट्रंक रोड अधिनियम ने ३६ मुख्य सड़कों को ट्रंक रोड का नाम दे दिया और उनके उत्तरदायित्वों को काउन्टी परिषदों एवं काउन्टी बारो से लेकर यातायात मन्त्रालय को सौंप दिया। इन सड़कों की सरचना के सम्बन्ध में काउन्टी परिषदें तथा काउन्टी बारो परिषदें मन्त्रालय के अभिकरण के रूप में कार्य करेंगी। सन् १९४६ के ट्रंक रोड अधिनियम ने और भी कई सड़कों को ट्रंक रोड घोषित कर दिया और यातायात मन्त्री को यह

अधिकार दिया कि वह किसी भी सडक को ट्रंक रोड घोषित कर सके। दूसरे, सन् १६२६ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने गरीबों की राहत से सम्बन्धित कार्य काउन्टी परिषद तथा काउन्टी बारो परिषद को सौंपे। वे इस शक्ति का प्रयोग सन् १६४८ तक करती रही जब कि राष्ट्रीय सहयोग अधिनियम ने निर्धन कानून को ही समाप्त कर दिया। तीसरे, सन् १६४६ के स्वास्थ्य सेवा अधिनियम ने स्थानीय सत्ता के अस्पतालो को स्वास्थ्य मन्त्रालय के लिए सौंप दिया। चौथे, सन् १६४७ के विद्युत अधिनियम ने विद्युत वितरण के उत्तरदायित्व को स्थानीय परिषदो से लेकर केन्द्रीय विद्युत सत्ता को सौंप दिया।

स्थानीय शक्तियो के इस केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति का प्राय: विरोध किया जाता है किन्तु कई बार यह अपरिहार्य बन जाता है। स्थानीय सेवाओ के लिए बड़े क्षेत्र की व्यवस्था का प्रबन्ध किया जाता है क्योंकि ऐसा करने पर ही वे सेवाओ के वित्तीय भार को ग्रहण कर पाती हैं। बड़े क्षेत्र को यह सुविधा रहती है कि वह कार्यों को सम्पन्न करने के लिए अधिक योग्य एवं समर्थ व्यक्तियो को नियुक्त कर सकता है। इसीलिए बड़े क्षेत्र का प्रशासन अधिक कुशलतापूर्वक सचालित होने की आशा रहती है। स्थानान्तरण की इस प्रक्रिया मे यह डर रहता है कि छोटी सत्ताए अपनी बहुत सी सेवाओ से वचित रह जाएगी और कुछ समय बाद स्थानीय सरकार को क्षेत्रीय सरकार का क्षेत्र मिल जाएगा।

जिले की कुछ सेवाएं
[Some District Services]

जैसा कि वस्तु स्थिति से प्रकट है कि विभिन्न सेवाओ को स्थानीय सत्ताओ के आधार पर विभाजित नही किया जा सकता किन्तु फिर भी हम क्षेत्रीय आधार पर कुछ वर्गीकरण कर सकते हैं। इस दृष्टि से हम एक ओर तो उन सेवाओ को रख सकते हैं जो कि जिले की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं तथा जिले की सत्ता द्वारा सम्पन्न की जाती है और दूसरी ओर कुछ ऐसी सेवाए हैं जिन्हे क्षेत्रीय महत्व का समझा जाता है। इन सेवाओ को सम्पन्न करने के लिए पृथक सगठनो की रचना करनी पड़ती है। जहा तक जिले की सेवाओ का सम्बन्ध है उनके द्वारा प्रादेशिक एवं क्षेत्रीय विभिन्न समस्याए उत्पन्न की जाती हैं। किसी विशेष सत्ता के क्षेत्र एवं कार्यों के बीच स्थित सम्बन्धो की जानकारी के लिए इन सेवाओ का अध्ययन किया जाना उपयोगी रहेगा। इनमे सबसे महत्वपूर्ण सेवा जन-स्वास्थ्य से सम्बन्धित है। इस सेवा के लिए स्वास्थ्य के मेडिकल अधिकारी की आवश्यकता होती है। इसके कार्य इतने महत्वपूर्ण होते हैं कि सन् १८७२ से ही केन्द्रीय सत्ता ने स्थानीय स्वास्थ्य सत्ताओ को एक मेडिकल अधिकारी नियुक्त करने को बाध्य किया। इस अधिकारी की आवश्यक योग्यताएं भी निश्चित कर दी गईं। यह व्यवस्था करदी गई है कि मेडिकल अधिकारी अपना सारा समय जन सेवाओ मे लगाएगे और व्यक्तिगत कार्य मे अपना समय नष्ट नही करेंगे।

जब काउन्टी परिषदों को जन-स्वास्थ्य प्रशासन के क्षेत्र में प्रेरक सत्ताएं बना दिया गया तो यह निर्णय ले लिया गया कि काउन्टी परिषद को ही इस बात के लिए उत्तरदायी बनाया जाए कि वह पूरी काउन्टी में पूरे समय कार्य करने वाले मेडीकल अधिकारियों की नियुक्ति का कार्यक्रम बनाए। जब कभी जिले में जगह खाली हो तो जिला परिषद पहले काउन्टी परिषद और किसी अन्य जिले की परिषद से सलाह लेगी और उसके बाद पृथक रूप से अथवा काउन्टी परिषद या अन्य जिला परिषद के साथ संयुक्त रूप से मेडीकल अधिकारी की नियुक्ति करेगी। मन्त्री को यह अधिकार दिया गया है कि वह इस प्रक्रिया का अतिक्रमण कर सके। स्वास्थ्य मन्त्रालय ने काउन्टी को इस सम्बन्ध में कुछ और शक्तियां दीं। यह बिना सामान्य कार्यक्रम बनाए कहीं भी खाली जगह होने पर हस्तक्षेप कर सकती है और वहां नियुक्ति के लिए आवश्यक रूप से प्रबन्ध कर सकती है। इससे दोनों ही उद्देश्य पूरे हो जाते हैं अर्थात् एक नियोजित व्यवस्था प्राप्त हो जाएगी और पूरे समय के लिए सेवाएं प्राप्त हो जाएंगी; किन्तु इस व्यवस्था में जिलों की अपनी स्वतन्त्रता के प्रति खतरा हो जाता है।

काउन्टीज ने स्थानीय सरकार के विकास के दौरान उन सभी सेवाओं के अधिकार को प्राप्त करने का प्रयास किया जो कि जिलों में निहित हैं। काउन्टीज का तर्क था कि उन्हें शक्तियां छोटी सत्ताओं को हस्तान्तरित करने की कानूनी आज्ञा दी गई है। इसके अतिरिक्त शक्तियों का अग्रिम विभाजन उन्हीं के द्वारा किया जाना चाहिए। काउन्टीज के द्वारा जो दावे किए गए और जो सिद्धान्त प्रस्तुत किए गए वे उनके विपरीत थे जिनका जिलों द्वारा प्रतिनिधित्व किया गया। इसके परिणामस्वरूप आवश्यक जांच की गई और संघर्षपूर्ण सिद्धान्तों के बीच समझौते की व्यवस्था का प्रयास किया गया। सेवाओं का निर्धारण करते समय सामान्यतः जिस सिद्धान्त को अपनाया गया उसका वर्णन स्थानीय सरकार पर शाही आयोग के द्वितीय प्रतिवेदन में किया गया है। किसी स्थानीय सत्ता को सेवा का उत्तरदायित्व सौंपते समय पहले उसके विशेष कार्य की प्रकृति को देखा जाता था जिसे कि सौंपा जाना है तथा उसके बाद उस कार्य को प्रशासित करने वाली सत्ताओं की उपयुक्तता को परखा जाता था। इसके अतिरिक्त यह भी महत्वपूर्ण माना गया कि कार्यों का निर्धारण इस प्रकार किया जाए कि प्रशासकीय काउन्टी में विभिन्न सत्ताओं के बीच सहयोग एवं सद्भावना का विकास हो। आयोग का कहना था कि कार्यों के वितरण को पारिभाषित करते समय जनसंख्या, क्षेत्र, वित्तीय स्थिति एवं कार्यकुशलता आदि का ध्यान रखा जाना चाहिए। यहां जिले के महत्व की कुछ सेवाओं का वर्णन किया जा सकता है।

स्कूल से सम्बन्धित मेडीकल सेवा को सन् १९४४ तक प्राथमिक शिक्षा की सभी सत्ताओं द्वारा प्रशासित किया जाता था। काउन्टी परिषद, काउन्टी बारो परिषद, नगरपालिका बारो तथा कुछ शहरी जिलों को इस सेवा की शक्तियां प्राप्त थीं। बाद में केवल काउन्टी परिषद तथा काउन्टी बारो परिषद ही शिक्षा की एकमात्र सत्ताएं बन गईं। फलतः काउन्टी

परिषदो द्वारा स्कूलो का सचालन अपनी विभागीय कार्यपालिका द्वारा किया जाने लगा। यह काउन्टी परिषद की स्वेच्छा पर ही छोड दिया गया कि वह चाहे तो स्वय ही स्कूल मेडीकल सेवाओ का प्रबन्ध करे अथवा उनको पूरी तरह या आशिक रूप से समागीय कार्यपालिकाओ को सौंप दे।

गर्भवती स्त्रियो एव बालको से सम्बन्धित सेवाओ का प्रशासन सन् १९१८ के अधिनियम के अनुसार काउन्टी परिषदो तथा जिला परिषदो द्वारा किया जाता था। व्यवहारिक दृष्टि से जिले की सभी सत्ताओ के पास इससे सम्बन्धित कार्यक्रम होता है। जिला परिषदो मे से लगभग २७६ के पास अपना कार्यक्रम होता है किन्तु इन जिलो के पास स्कूल सेवाए नही रहती। १ अप्रैल १९३९ को ३९५ सत्तायें इस प्रकार की सेवाओ को सचालित कर रही थी। लन्दन का छोड कर सभी काउन्टी परिषदें, सभी काउन्टी बारोज, सभी राजधानी बारोज, १५१ गैर काउन्टी बारोज, ५१ शहरी जिले तथा ३ देहाती जिले इस सत्ता को सचालित कर रहे थे। सन् १९४६ के राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा अधिनियम के आधीन काउन्टी परिषद तथा काउन्टी बारोज इस प्रकार की सेवाओ के लिए एकमात्र सत्ता बन गई। वर्तमान प्रवृति इस ओर है कि स्कूल मेडीकल सेवाओ को बाल कल्याण सेवाओ की ओर आकर्षित किया जाये।

'जन्म' का अभिलेख रखने का कार्य काउन्टी परिषद द्वारा किया जाता था। जिले भी इस कार्य को सम्पन्न कर सकते थे। इस बात का निर्णय केन्द्रीय सत्ता द्वारा किया जाता है। इस सेवा का उद्देश्य सांख्यिकीय अभिलेख रखना है। दूसरे, मातृत्व एव बाल कल्याण सेवाओ मे सम्बन्धित सत्ताओ को जन्मो की सूचना देना है। कुछ क्षेत्रो को इस सेवा का उत्तरदायित्व सौंपा जाता था यद्यपि वे मातृत्व या शिशुकल्याण सेवा से सम्बन्धित कोई भी कार्य नही करते थे। शाही आयोग ने इस सेवा के वितरण के सम्बन्ध मे कोई सुझाव नही दिया किन्तु उसने केवल यह कहा कि प्रत्येक सूचना की एक प्रतिलिपि शीघ्र ही मातृत्व एव बालकल्याण सत्ताओ को भेज दी जानी चाहिए। १९४६ के राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा अधिनियम के द्वारा यह शक्ति काउन्टीज तथा काउन्टी बारोज को स्थानान्तरित कर दी गई है।

दाईयो एव नर्सो के पर्यवेक्षण का कार्य १९०२ के अधिनियम के अनुसार काउन्टी परिषदो द्वारा किया जाता था किन्तु ये अपनी शक्तियो को जिलो को हस्तांतरित कर सकती थी। सन् १९१८ मे हस्तातरण की यह शक्ति छीन ली गई किन्तु इससे पूर्व किये गये हस्तातरणो को प्रभावहीन ही रखा गया। यदि काउन्टी परिषदें केन्द्रीय सत्ता को अपील करें तभी कोई परिवर्तन किया जा सकता था। अधिनियम द्वारा काउन्टीज को यह शक्ति सौंपी गई कि वे दाईयो (Midwives) की प्रशिक्षित करने में सहयोग दें तथा इस कार्य के लिए अनुदान की व्यवस्था करें। १९३६ मे इससे सबन्धित अधिनियम ने दाईयों के पर्यवेक्षण का पूरा उत्तरदायित्व काउन्टीज तथा काउन्टी बारोज को सौंप दिया। सन् १९४६ के अधिनियम ने इस स्थानान्तरण को मान्य बना दिया।

पृथक अस्पतालों की व्यवस्था के प्रावधान के लिये बड़े क्षेत्र को प्राथमिकता दी गई ताकि छूत की बीमारियों के निवारणार्थ इन अस्पतालों की स्थापना के लिए पर्याप्त स्थान एवं साधन प्राप्त हो सके तथा सेवित जनसंख्या भी पर्याप्त हो। यह एक ऐसी सेवा थी जिसे कि बाध्यकारी (Obligatory) होना चाहिये था। १८७५ के जन स्वास्थ्य अधिनियम ने इस सेवा को बाध्यकारी नहीं बनाया तथा शहरी एवं देहाती जिलों को इन सेवाओं के लिए मुख्य क्षेत्र माना गया। यह भी प्रावधान रखा गया कि दो या दो से अधिक जिले संयुक्त प्रबन्ध कर सके। यदि जिला परिषद द्वारा ऐसा नहीं किया जा सके तो काउन्टी परिषद द्वारा ऐसे अस्पताल खोले जा सकते थे अथवा केन्द्रीय सत्ता से यह प्रार्थना की जा सकती थी कि यह पूरी काउन्टी या उसके कुछ भाग के लिए इस प्रकार के अस्पताल का प्रबन्ध करे।

माप और तोल को प्रशासित करने वाले उचित क्षेत्र से सम्बन्धित समस्याओं के द्वारा भी उन विभिन्न तत्वों को प्रकट किया गया जो कि पर्याप्त स्थानीय सरकार के क्षेत्र की समस्याओं में उलझे हुए थे। सन् १९२६ तक इन विभिन्न तत्वों का प्रभाव यह रहा कि दस हजार से अधिक वाली बारो परिषदों को इनका उत्तरदायित्व सौंपा गया। इस सेवा मे तीन बातें मौलिक थी—प्रथम थी यथा सम्भव क्षेत्र पर स्तर की एकरूपता। चीजों के खरीदार बाहर से भी आ सकते थे, इसके अतिरिक्त बेचने वाले भी बाहर जाकर अपना माल बेच सकते थे जहा कि स्थानीय सत्ता का निरीक्षक कार्य नहीं करता। दूसरे, क्षेत्र ऐसा होना चाहिये कि निरीक्षक एवं व्यापारी, जो कि स्थानीय पार्षद हैं के बीच ऐसा स्वामी सेवक जैसा सम्बन्ध स्थापित न हो जाये कि निरीक्षकों की निष्पक्षता ही खतरे में पड़ जाये। तीसरे, क्षेत्र पर्याप्त बड़ा होना चाहिए ताकि सर्वश्रेष्ठ तकनीकी योग्यता वाला स्टाफ रखने का खर्चा सहन कर सके। शाही आयोग ने बताया कि इस सेवा को सम्पन्न करने के लिए काउन्टी बारो तथा काउन्टी बारो परिषद सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र है। ये कार्य पुलिस कार्यों से कुछ सम्बन्ध रखते हैं अतः इनको वितरित करते समय पुलिस कर्मचारियों का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। अतः यह उचित रहेगा कि इस सेवा को काउन्टी परिषद, काउन्टी बारो परिषद तथा गैर काउन्टी बारो परिषद को सौंपा जाये जिसके पास पृथक से पुलिस सेवा होती है तथा जो पहले से ही इन कार्यों को सम्पन्न कर रहे हैं। गैर-काउन्टी बारोज जब कभी यह अनुभव करें कि वे इन कार्यों को सफलता पूर्वक सम्पन्न नहीं कर पायेंगे तो वे इन्हें काउन्टी परिषदों को सौंप सकते हैं। काउन्टी परिषदों को भी अपने ये कार्य स्वेच्छा पूर्वक जिला परिषदों को हस्तांतरित करने की शक्ति होनी चाहिये।

बारोज तथा काउन्टीज के बीच इसी प्रकार का अबुद्धिपूर्ण प्रबन्ध भोजन एवं दवाइयों के प्रशासन के सम्बन्ध मे भी था। इसमें पुनर्व्यवस्था करने के लिए तीन सिद्धान्तों की आवश्यकता थी अर्थात् एकरूपता, योग्यता एवं स्वतन्त्रता। आयोग द्वारा सिफारिश की गई थी कि इन कार्यों की शक्तियां काउन्टी परिषद तथा काउन्टी बारो परिषद को सौंपी जानी चाहिये।

जिला परिषदो को भी यह अधिकार हो कि वे सीमित अर्थ मे इन शक्तियों का प्रयोग करें तथा काउन्टी परिषदो को यह शक्ति हो कि यदि वे उचित समझें तो जिला परिषदो द्वारा जो व्यय किया गया है उसे प्रदान करदें। सन् १९३८ के भोजन एवं औषधियों के कानून द्वारा काउन्टी बारो परिषदो, नगरपालिका बारोज एव ४० हजार से ऊपर की जनसंख्या वाले शहरी जिलो को इन सेवाओं के प्रशासन का अधिकार सौंपा गया। वे इस अधिकार का प्रयोग उस समय तक कर सकते थे जब तक कि मंत्री की स्वीकृति प्राप्त न हो जाये। मंत्री चाहे तो इन क्षेत्रों के प्रशासन के अधिकार को छीन सकता था। साथ ही वह चाहे तो २० हजार की जनसंख्या वाले शहरी जिलो को भी इस अधिकार को सौंप सकता था।

शाही आयोग द्वारा अन्य कार्यों के बारे मे भी जांच की गई तथा स्थानीय सरकार की सेवाओं का वितरण करने के बारे मे अनेक सिफारिशें प्रस्तुत की।

क्षेत्रीय महत्व की सेवायें

[The Services of Regional Importance]

स्थानीय सरकार द्वारा सम्पन्न की जाने वाली कुछ सेवाएं क्षेत्रीय महत्व की होती हैं। इनका प्रशासन भी यदि क्षेत्रीय आधार पर ही किया जाये तो अधिक अच्छा माना जाता है। इनमें जिन सेवाओं को समाहित कर सकते है वे है जल-वितरण नालियां नदियों की सफाई, शहर नियोजन, गृह-निर्माण, पुलिस, सड़क, शिक्षा, विद्युत, निर्धन सहायता आदि-आदि। ये सभी स्थानीय सरकार की सेवाएं हैं। ये राष्ट्रीय दृष्टि से भी उतनी ही महत्वपूर्ण होती है जितनी कि स्थानीय दृष्टि से होती है। इनको तकनीकी प्रकार से गठित किया जाता है। वे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण भाग होती हैं अतः उनका सगठन एवं प्रबन्ध विशेष रूप से करना होता है जैसे कि स्थानीय स्तर पर निकायों का नहीं किया जाता। वर्तमान युग में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए जिनका महत्व अनुलघनीय है। तकनीकी का तेजी के साथ विकास हो रहा है, सचार के साधन अधिक गतिवान होते जा रहे हैं, विज्ञान प्रगति कर रहा है, न्याय, कार्यकुशलता एवं उच्च जीवन स्तर के मूल्यों के प्रति भारी चेतना जागृत हो गई है। यह सब बातें केवल तभी प्राप्त की जा सकती हैं जबकि अधिक जागरूक एवं एकरूप सरकार केन्द्रीय रूप से निर्धारित सिद्धान्तो के आधार पर कार्य करे। इन सिद्धान्तों को सामान्य रूप से नियोजन के रूप मे जाना जाता है। इन सेवाओं को प्रदान करते समय इनके क्षेत्र निर्धारित किये जा सकते हैं। प्रशासन की दृष्टि से महत्वपूर्ण सर्व प्रथम लक्ष्य एवं कार्य को समझा जाता है उसके बाद बनावट का नाम आता है। सगठन की बनावट तो गौण होती है, इसकी उपयोगिता एवं सार्थकता भी इस बात पर निर्भर करती है कि इसने लक्ष्यों की प्राप्ति में कितनी सफलता प्राप्त की; इसलिए यहां कुछ महत्वपूर्ण सेवाओं का अध्ययन किया जाना उपयोगी रहेगा।

जल वितरण [Water Supply]—सन् १९४५ के जल अधिनियम से पूर्व इस सेवा को सम्पन्न करने के लिए किसी प्रकार का नियोजन नहीं किया

गया था। १८७५ के अधिनियम ने शहरी एवं देहाती जिलों को यह अधिकार सौंपा कि वे अपने जिलों में पानी की व्यवस्था कर सकें। सन् १८७८ के अधिनियम में यह कहा गया कि देहाती जिला परिषदें इस बात की निगरानी रखें कि उनके क्षेत्र में आने वाले प्रत्येक घर पर पानी की व्यवस्था की जा सके। ये क्षेत्र केचमेन्ट क्षेत्रों (Catchment areas) की तुलना में अत्यन्त छोटे थे। प्रशासकीय भेद-भाव एवं गड़बड़ी पूर्ण अर्थ-व्यवस्था को मिटाने की गरज से संयुक्त जल-मण्डलों की स्थापना की गई किन्तु इनकी भी संख्या कम थी और आवश्यकता को देखते हुए ये बहुत थोड़ी थी।

जल वितरण का कार्य या तो व्यक्तिगत जल कम्पनियों द्वारा किया जाता था अथवा स्थानीय सत्ताओं द्वारा किया जाता था जो कि स्वयं के वित्त के आधार पर स्वयं की योजनाएं बनाती थी। यह व्यवस्था भी अपर्याप्त पाई गई तथा १९२६ के अधिनियम द्वारा काउन्टी को इन्हें सहयोग प्रदान करने की बात कही गई। प्रत्येक सत्ता प्रायः अपनी ही आवश्यकता में उलझी रहती थी उसे अन्य सत्ता के लिए प्रावधान करने का समय ही प्राप्त नहीं हो पाता था। विभिन्न सत्ताओं के बीच पर्याप्त समन्वय का अभाव होने के कारण इन सत्ताओं में कई बार सहयोग की भावना का अभाव देखने को मिलता था। सन् १९२६ के अधिनियम ने जन स्वास्थ्य के क्षेत्रों को विकसित कर दिया और इस प्रकार से कुछ क्षेत्रों में जल-व्यय को काउन्टी तक बढ़ा दिया। स्वास्थ्य मन्त्रालय ने बड़े क्षेत्रों के समन्वय का कार्य सम्भाल लिया। सन् १९२३ में विभाग के अन्तर्गत एक जल पर परामर्शदाता समिति नियुक्त की गई। प्रति वर्ष मन्त्रालय के प्रतिवेदन द्वारा परिवर्तन का आभास प्राप्त होने लगा, इसके बाद भी बुद्धिपूर्ण स्तर को प्राप्त नहीं किया जा सका। इसके लिये एक क्षेत्रीय प्रतिनिधि समिति को आवश्यक समझा गया जो कि विभाग एवं जल पर परामर्शदाता समिति के साथ मिल कर कार्य कर सके। सन् १९३६ में नौ परामर्शदाता समितियां बनायी गई। इनके अन्तर्गत लगभग आधे नगरपालिका क्षेत्र आगये। केन्द्रीय परामर्शदाता जल समिति को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता था कि ये क्षेत्रीय समितियां विभागीय सम्पर्क रहने पर भी कमजोर थी। इनके कार्यों में देरी लगती थी तथा ये अपने से बड़ी सत्ताओं की शुभकामना पर बहुत कुछ निर्भर रहती थी। सर्वसम्मत समझौते के अभाव में उनका कार्य असफल हो गया।

केन्द्रीय परामर्शदाता समिति ने यह सिफारिश की कि क्षेत्रीय समिति को कानूनी रूप से लागू किये जा सकने वाले कोटा (Quota) द्वारा समर्थित किया जाये तथा उनके सभापति को मन्त्री द्वारा नियुक्त किया जाये। इन समितियों को अपनी कोई भी योजना बनाने से पूर्व अपने उपयोक्ताओं से परामर्श प्राप्त कर लेना चाहिए। इनको अपना वार्षिक प्रतिवेदन परामर्शदाता समिति को देना चाहिए। इसके अतिरिक्त समिति ने एक महत्वपूर्ण सिफारिस यह की कि क्षेत्र की सीमाएं पानी गिरने की सीमाओं के एकरूप होनी चाहिए जिसमें कि सम्बन्धित जनसंख्या रहती है। मन्त्री को यह अधिकार दिया जाये कि वह नियोजन के लिए अथवा क्षेत्रों में परिवर्तन करने के लिए क्षेत्रीय समितियां नियुक्त करे।

सन् १९४५ का जल अधिनियम एक मौलिक प्रकृति का महत्वपूर्ण अभिलेख है। इस अधिनियम के आधार पर स्वास्थ्य मन्त्री को इंगलैण्ड तथा वेल्स में जलवितरण की रक्षा, उचित प्रयोग एवं प्रावधान के लिए उत्तरदायी बनाया गया। केन्द्रीय परामर्शदाता समिति एक कानूनी निकाय बन गई तथा जब भी कभी ये बुलायी जाती तो मन्त्री तक अपना प्रतिनिधित्व ले जाती थी। इन समितियों में स्थानीय सत्ताओं एवं जल उद्यमों के स्वामियों के प्रतिनिधि होते थे। मन्त्री को अधिकार था कि क्षेत्रीय समिति को वह स्वेच्छा से गठित करे क्योंकि वही इसके सभापति की नियुक्ति करता था।

कस्बा नियोजन [Town Planning]—जब कभी हमको किसी कस्बे में पहली बार ही मकानात बनाने पड़े तो अनेक बातों का ध्यान रखा जाता है। उस क्षेत्र के हजारों निवासियों के हितों के बीच पारस्परिक सहयोग रखा जाता है साथ ही शहर की जनता के स्वास्थ्य, उद्योग, सवारसाधन आदि की उचित व्यवस्था की जाती है। इसके लिए गलियां चौड़ी रखी जायेंगी, भवन अधिक ऊंचे नहीं होंगे, शहर के बाहर और भीतर पार्क होंगे, फैक्ट्री क्षेत्र को बस्ती से अलग रखा जायेगा ताकि उनका शोर-गुल एवं धुआं खराब असर न डाल सके। ये सारी बातें ब्रटिश राजनीतिज्ञों के ध्यान में सन् १९०६ तक नहीं आई। फाइनर के कथनानुसार उन्नीसवीं शताब्दी में उनके द्वारा जिन कानूनों को पास किया गया वे ऐसे थे जैसे कि मानो केवल वे अपनी निद्रा में ही बातें कर रहे हों।* उस काल में जो विभिन्न कानून पास किये गये उनको १९२५ के नगर नियोजन कानून (Town Planning Act of 1925) में एकीकृत कर लिया गया। बारो, शहरी जिले एवं देहाती जिलों को कार्य-क्रम बनाने तथा उसे क्रियान्वित करने की शक्ति प्रदान की गई। १९२९ में बारोज तथा बीस हजार की जनसंख्या वाले शहरी जिलों के लिये यह जरूरी बना दिया गया कि वे कार्य-क्रम बनाये तथा उसे बनाने के बाद सन् १९३४ तक स्वास्थ्य मन्त्रालय को प्रस्तुत कर दे।†

विकास कार्य के लिए जो ये पृथक इकाइयां बनायी गई उनको प्रशासन की दृष्टि से अत्यन्त छोटा माना गया। वे कई बार तो एक कस्बे से काफी दूर होती थी। इन स्वतन्त्र नामियों द्वारा समस्त क्षेत्र पर उत्तरदायित्वपूर्ण नियन्त्रण नहीं रखा जा सका। ऐसी स्थिति में किसी क्षेत्रीय सत्ता की आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा। कानून के अनुसार संयुक्त समितियों का प्रावधान रखा गया। ये समितियां केवल परामर्शदाता थी न कि कानूनी शक्तिसम्पन्न संयुक्त निकाय। इन समितियों के कार्य में एक कठिनाई यह थी कि वाछित सड़क जो कि क्षेत्र में एक विशेष जिले की ही सेवा नहीं करती, का खर्च किस प्रकार निर्धारित किया जायेगा। शाही आयोग के सम्मुख मि० पिन्डर (Mr Pindar) ने कहा था कि क्षेत्रीय सत्ता क्षेत्र 'क' में एक सड़क के लिए योजना बना सकती है किन्तु क्षेत्र 'ख' की जिला परिषद यह कह सकती है कि 'हम सड़क नहीं चाहते, हम इसे अपनी योजना में रखेंगे।' तब क्षेत्र सत्ता क्या करेगी? वे तुरन्त ही

*Finer, Herman, Op. Cit., P. 133.

कठिनाई मे पड जायेंगी; उनको कोई शक्ति नही रहेगी और परिणामस्वरूप समग्र क्षेत्र को इससे हानि होगी। †

शहर नियोजन सत्तायें जब कुछ समय तक अकेले रूप मे कार्य करेंगी तो वे निराश हो जायेगी। वे एक निश्चित चौडाई वाली सडको की योजना बनायेगी और उनके सीमावर्ती इलाको मे सकडी सडके है, वे अपने घरो के लिए नालो का प्रबन्ध करेगी तो पडोसियो से झगडे उत्पन्न हो जायेगे, जब कभी वे अपनी घनी आबादी के विस्थापितो के लिए जगह चाहेंगे तो पडौसियो के साथ उनका मतभेद बढेगा। इस प्रकार इन सयुक्त प्रबन्धो के मार्ग मे अनेक प्रकार की कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती है अतः यह उपयोगी रहेगा कि एक क्षेत्र के लिए स्वय की कार्यपालिका सत्ता बनायी जाये। सम्भावित कठिनाई की स्वाभाविकता का वर्णन करते हुए स्वास्थ्य मत्रालय ने यह बताया कि योजना की क्रियान्विति सामान्य सड़ कानूनों तथा सफाई प्रशासन से इस प्रकार सम्बन्धित है कि इन कार्यो के किसी भी गम्भीर क्रियान्वयन से अतिराव एव भ्रम पैदा होने का भय रहता है। दूसरे, यदि इस नियम का सशर्त पालन किया जाये तो यह अन्यायपूर्ण भी बन सकता है क्योंकि ऐसा भी हो सकता है कि योजना मे पर्याप्त महत्व के कार्यों को किसी एक जिले के लिए रखा जाये जब कि यदि उसे अन्य जिले के लिए रखा गया होता तो अधिक लाभदायक होता। इस प्रकार की कठिनाइयों से बचने के लिए समिति ने एक जटिल सघीय व्यवस्था का सुझाव दिया। उसने बताया कि गृहनिर्माण एव शहर नियोजन के कार्य के बीच पर्याप्त सम्बन्ध रखा जाये।

सन १९३२ के शहर एव देश नियोजन अधिनियम ने क्षेत्रीय नियोजन को कई प्रयासो से सरल बना दिया। अब जिला परिषदें नियोजन के अपने कार्यों को काउण्टी परिषदो को सौंप सकती थी। दूसरे, सयुक्त समिति की निर्णायक सत्ताओ के बीच खर्च का वितरण अब लोचशील बना दिया गया। तीसरे, मत्री को यह शक्ति दी गई कि वह अपनी ओर से पहल करके सयुक्त समितियो की रचना के लिए आज्ञायें जारी कर सके। अब भी नियोजन का मुख्य दायित्व छोटी स्थानीय सत्ताओ पर ही छोड दिया गया क्योंकि मन्त्री को हस्तक्षेप करने योग्य समय ही नही मिलता था। इस दिशा मे की गई प्रगति की गति धीमी थी। स्थानीय सत्तायें योजना तो बनाती थी किन्तु उनका राष्ट्रीय आवश्यकताओ एव पडौसियो के नियोजन से कोई सम्बन्ध नही रहता था।

यह स्पष्ट था कि नियोजन के क्षेत्र इस नजर की दृष्टि से वित्तीय व्यय की दृष्टि से, पूरे राष्ट्र की आवश्यकताओ की दृष्टि से तथा उनके किसी भी क्षेत्र की दृष्टि से अत्यन्त छोटे थे। यदि नियोजन के द्वारा समग्र राष्ट्र के हित की साधना करनी है तो यह जरूरी हो जाता है कि प्रत्येक स्थानीय सत्ता

†Royal Commission on Local Government, Part X, Q 30, 500.

को एक राष्ट्रव्यापी साँचे में ढाला जाये। इसके लिए कुछ मौलिक सिद्धान्त बनाये ही जा चुके हैं जैसे—भूमि का कृषि के लिए तथा उद्योगों के लिए प्रयोग, औद्योगिक तकनीक पर आधारित शहर का आकार एवं स्थान, औद्योगिक विकेन्द्रीकरण की सम्भावनायें, स्वास्थ्य, सुविधायें, गृहनिर्माण एवं जनता के यातायात की सुविधायें आदि। प्रत्येक सत्ता जिसका सम्बध नियोजन से था वह यह जानती थी कि उसके द्वारा जो भी निर्णय लिया जायेगा उसका प्रभाव पड़ोसियों पर अवश्य पड़ेगा।

असल में नियोजन की समस्या को अत्यन्त सरल करके देखा गया तो क्षेत्रीय परिषद मुख्य नियोजन सत्ता बन गई। क्षेत्र की मुख्य आवश्यकताओं को पूरा करने का कार्य इसी के द्वारा किया जाने लगा। कस्बा एवं देश के नियोजन पर जो अधिनियम सन् १९४७ में बनाया गया उसकी मुख्य विशेषतायें तीन थीं। प्रथम यह कि सभी स्थानीय नियोजनों को राष्ट्रीय हित की दृष्टि से किया जाना चाहिए किन्तु उसे स्थानीय जनता के ज्ञान एवं पहल पर आधारित रहना चाहिए। दूसरे नियोजन अब एक विधायी कार्य बन चुका है यह अवाञ्छनीय विकास के लिए एक अवरोधक मात्र नहीं है। तीसरे, अब मुआवजे की कठिनाई को प्रायः समाप्त ही कर दिया गया है।

आजकल नियोजन का पूर्ण उत्तरदायित्व केवल एक ही मन्त्रालय अर्थात् शहर एवं देश नियोजन मन्त्रालय पर ही आ पड़ा है। स्थानीय स्तर पर नियोजन की शक्तियां जिले में काउन्टीज को और काउन्टी बारोज को सौंप दी जाती हैं। इससे नियोजन के लिए बड़े क्षेत्र प्राप्त हो जाते हैं किन्तु मन्त्री को यह भी शक्ति प्रदान की गई है कि वह यदि उचित समझे तो इन क्षेत्रों को भी परस्पर मिला दे। नियोजन के सम्बध में पहल उन स्थानीय सत्ताओं द्वारा की जानी चाहिए जिनको कि अधिनियम के पास होने के तीन साल में अन्तर्गत योजना बनाकर मन्त्रालय को प्रस्तुत करनी है। इन योजनाओं के आधार पर कोई कार्य किया जाये इससे पहले इन्हें मन्त्रालय द्वारा स्वीकार किया जाना चाहिए। उसके बाद ही स्थानीय सत्तायें इनके अनुसार व्यवहार कर सकती हैं।

मन्त्रालय को यह शक्ति प्राप्त है कि वह किसी भी क्षेत्र को एक नये कस्बे के लिए स्थान घोषित कर सकता है। इसको बनाने एवं नियोजित करने के लिए यह एक अस्थायी विकास निगम की नियुक्ति कर सकता है। यह निगम अपने किसी काम के लिए भूमि को आवश्यक रूप से ले सकती है।

पुलिस सेवायें [Police Services]—सन् १९१९ में इङ्गलैण्ड तथा वेल्स में लन्दन के बाहर १८६ अलग-अलग पुलिस सत्तायें थीं। काउन्टीज में ५८ थीं तथा १२८ काउन्टी बारोज में थीं। प्रथम को बाध्यकारी रूप से सन् १८५६ के अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया था और काउन्टी बारोज में इसे १८३५ के नगर निगम अधिनियम तथा १८८२ के अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया।

पुलिस सेवा में बरती गई स्वतन्त्रता, मितव्ययता एवं कार्यकुशलता के कारण एक हानिकारक तथ्य थी। अलग-अलग सगठित की गई पुलिस सत्ता वैसे कम होती थी किन्तु उसके भवन एवं प्रशासन पर जो भी खर्च होता था वह

अनुपात में बहुत अधिक था। छोटी सत्ताओं की व्यवस्था के कारण अनेक सेवी वर्ग सम्बंधी समस्यायें उत्पन्न हो जाती थी अर्थात् उनको भर्ती, प्रशिक्षण, व्यापक अनुभव आदि की पर्याप्त सुविधायें नही दी जा सकती थी न हीं पदोन्नति एवं स्थानान्तरण की सुविधायें प्राप्त हो पाती थी। इसके अतिरिक्त यदि कभी पुलिस शक्ति को एक स्थान पर केन्द्रित करने की आवश्यकता पड़ जाती तो वह भी सम्भव नही था। एक छोटे क्षेत्र का यह लाभ अवश्य था कि अधिकारी एवं जनता दोनों ही अच्छे प्रशासन की दिशा में एक होकर कार्य करते थे। किन्तु कठिनाई तो उन संगठित अपराधियों के सम्बंध में उत्पन्न होती थी जो कि स्थानीय सरकार के अधिकारों के प्रति कोई सहानुभूति नहीं रखते थे तथा स्थानीय सत्ता की छोटी, स्वतंत्र एवं पृथक पुलिस शक्ति जब तक कुछ करने का प्रयास करती तब तक वे लोग क्षेत्र को लूटकर जा भी चुके होते थे।

संगठित अव्यवस्था को मिटाने के लिए १८६० में पुलिस अधिनियम पारित किया गया जिसके अनुसार स्थानीय सत्ताओं को आवश्यकता के समय परस्पर व्यक्तिगत उधार देने व लेने की शक्ति प्रदान की गई। यह व्यवस्था कई कारणों से सफल न हो सकी। प्रथम करण यह था कि एक पुलिस सत्ता को कई एक स्थायी समझौते करने होते थे। ऐसा न करने पर यह सम्भव था कि जिन सत्ताओं के साथ समझौता किया गया है उनको स्वयं ही अतिरिक्त व्यक्तियों की आवश्यकता है अथवा समय पड़ने पर वे प्रदान नहीं कर सकें। दूसरे, आवश्यकता पड़ने पर व्यक्तियों को भेजने के प्रश्न पर पुलिस सत्ता की स्वीकृति लेना जरूरी था और इस कार्य में पर्याप्त समय लगता था। तीसरे, अनेक पुलिस सत्तायें इस प्रकार का समझौता करने में कतराती थी। ऐसे बहुत कम अवसर आते थे जबकि वे इस प्रकार के समझौते करती हों। इसका मूल करण यह था कि इन सत्ताओं को सदैव ही यह भय रहता था कि उनसे किसी भी ऐसे समय सहायता मांगी जा सकती है जबकि वे ऐसा कर सकने में असमर्थ हों। चौथे, पुलिस सत्तायें इस प्रकार की पारस्परिक सहायता के मूल्य पर एकमत नहीं हो सकीं। डेसबॉरो (Desborough) प्रतिवेदन में यह सुझाया गया था कि स्वयं गृहविभाग इस सम्बंध में मानक शर्तें एवं दशायें तय करे। यह सब १९१९ के अधिनियम एवं १९२० के नियम तथा आदेशों के द्वारा किया गया। जब छोटे बारोज की पुलिस सत्ताओं को मिलाया गया तो छोटी सत्ताओं द्वारा इस बात का विरोध किया गया। यह कहा गया कि एक सशक्त प्रशासन के लिए स्थानीय ज्ञान का होना जरूरी है। स्थानीय नियंत्रण से यह सम्भव बनता है कि क्षेत्र की विशेष समस्याओं की ओर अधिक ध्यान दिया जा सके। दूरस्थ सत्ता के द्वारा प्रबन्ध किया जाना उचित नही है।

समिति द्वारा यह सिफारिश की गई कि छोटी बॉरो शक्तियों को काउन्टी का सत्ताओं में मिला दिया जाये। वैसे समिति यह चाहती थी कि बारो की पुलिस के लिए एक लाख से अधिक पुलिस सत्ता की सीमा रखदे किन्तु फिर भी प्रशासनीय सुविधा की दृष्टि से उसने केवल गैर काउन्टी बारोज की पृथक पुलिस सत्ता को समाप्त करने की बात कही। किसी काउन्टी बॉरो में उस समय तक कोई नई सत्ता स्थापित नही होनी चाहिए जब तक कि गृह विभाग

के कार्यालय को यह सन्तोष न हो जाये कि पृथक सत्ता की स्थापना के फलस्वरूप निश्चित प्रशासकीय लाभ प्राप्त हो सकेगा। उसने यह सिफारिश की कि प्रबन्ध का प्रसार करने से व्यवस्था मे कुछ लाभ हो सकता है, इसके लिए काउन्टी की कुछ छोटी सत्ताओ को समूहीकृत कर दिया जाये। इन सिफारिशो के परिणामस्वरूप भी परिस्थिति का सामना नही किया जा सका अतः समिति ने भर्ती, अनुशासन, प्रशिक्षण एव वेतन आदि के बारे मे नियमो को प्रभावीकृत करने के लिए भी सिफारिश की। पुलिस व्यवस्था की पुनर्स्थापना के बाद छोटी सत्ताओ को मिलाने की नीति का पालन किया गया। सन् १८८२ मे छोटे बारोज मे पृथक सत्ताओ की संख्या को कम करने के लिए यह व्यवस्था की गई कि किसी भी नये बारो को पृथक पुलिस सत्ता रखने की इजाजत न दी जाये जब तक कि उसकी आबादी बीस हजार से अधिक न हो। गृह-मन्त्रालय द्वारा भी यह शर्त रखी गई कि बॉरो को अपनी शक्ति काउन्टी के साथ एकीकृत कर लेनी चाहिए। १८८८ तक जो ५७ बारोज बनाये गये उनमे से केवल सात को ही नयी पुलिस सत्ता की अनुमति दी गई। १८८८ के अधिनियम मे यह व्यवस्था की गई कि उन सभी बॉरोज की पुलिस शक्ति १८८९ मे काउन्टी की शक्ति के साथ मिला दी जायेगी जो कि दस हजार से कम जनसंख्या रखते हैं।

मितव्ययता एव पुलिस कार्यकुशलता के विचार से प्रभावित होकर सन् १९३२ मे पुलिस सत्ता के संयुक्तीकरण पर एक प्रवर समिति की स्थापना की गई। इस समिति के प्रतिवेदन को पुलिस क्षेत्रों की समस्या पर सर्वाधिक प्रशासनीय विश्लेषण समझा जाता है। इसमे बताया गया कि क्षेत्र अनेक होने के कारण अनेक प्रकार की जटिलताये पैदा हो जाती है। उनके बीच सीमा बन्धन लगाने पर स्थिति और भी अधिक खराब हो जाती है। इनके बीच परस्पर सहयोग स्थापित करने के बाद भी इनकी कमजोरियो को दूर नही किया जा सकता।

पुलिस सेवा मे प्रशिक्षण केवल तभी ठीक प्रकार से प्रदान किया जा सकता है जबकि क्षेत्र का आकार पर्याप्त हो। छोटे क्षेत्र मे यह बडा कठिन होता है कि व्यक्तिगत पक्षपातपूर्ण भावनाओ को रोका जा सके। इसके अतिरिक्त जब अनुशासनात्मक कार्यवाही करते हैं उस समय भी यही दृष्टिकोण रहता है। अतीत की तुलना मे टेलीफोनो के कारण अधिक पक्षपात एव प्रभाव के लिए अवसर हो गये हैं। बारोज के प्रतिनिधियो ने उन तर्कों का विरोध किया जो कि विलीनीकरण का पक्ष ले रहे थे। उनका कहना था कि गृह मन्त्रालय द्वारा जो समन्वय स्थापित किया जा रहा है वही पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त काउन्टी की पुलिस शक्ति का प्रशासन भी कुछ अधिक उच्च नही कहा जा सकता, वह बारोज के प्रशासन से श्रेष्ठ नही था। गैरकाउन्टी बारोज ने यह शिकायत की कि उनका काउन्टी परिषदो मे बहुत थोडा सा प्रतिनिधित्व है। वे काउन्टी परिषदो को रेटों के रूप मे जो धन देते हैं उसकी मात्रा उनके द्वारा प्राप्त सेवाओ से पर्याप्त अधिक है। उनका तर्क था कि उस निकाय का नियन्त्रण अधिक प्रभावशील रहता है जो कि शिकायत करने की दृष्टि से नजदीक है तथा जनता मे अधिक विश्वास प्रेरित

कर सकता है । एक दूरस्थ एव अज्ञात परिषद द्वारा यह सब नही किया जा सकता ।

गृह मत्रालय ने उन सभी बारोज की पुलिस शक्ति के विलीनीकरण का सुझाव दिया जिनकी जनसख्या ७५००० से नीची थी । कान्सटेबुलो के निरीक्षक इस मत से सहमत थे । १९४६ के पुलिस अधिनियम द्वारा सयुक्तिकरण के सिद्धान्त को और भी आगे ले जाया गया । एक अपवाद को छोडकर ४६ गैर काउन्टी बारो पुलिस शक्तियो को समाप्त कर दिया गया । अधिनियम ने गृहसचिव को यह अधिकार दिया कि वह कितनी ही सत्ताओ के पुलिस निकायो को मिला सके । इस प्रकार के विलीनीकरण में कुछ शर्तें रखी गई । प्रथम तो स्वेच्छापूर्ण विलीनीकरण का प्रयास किया गया किन्तु यह सफल न हो सका । दूसरे, जहां कही कोई स्थानीय सत्ता यदि विलीनीकरण का विरोध करे तो गृह सचिव इस सम्बन्ध में जाच कर सकता था । इस तथ्य का कामन्स सभा मे विरोध किया गया और अन्त में इसे सशोधनकरके स्वीकार कर दिया । इस सशोधन के अनुसार कोई भी काउन्टी परिषद या काउन्टी बारो परिषद जिसकी सख्या एक लाख या इससे अधिक है उसे उससे (उच्च सत्ता) साथ मिलने के लिए बाध्य नही किया जा सकता था ।

शिक्षा [Education]—सन् १८७० में प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध मे अधिनियम पास किया गया । इससे पहले शिक्षा का कोई स्थानीय प्रशासन नही था । शिक्षा व्यक्तिगत उद्यमो एव धार्मिक समाजो के हाथ में थी, किन्तु फिर भी राज्य द्वारा अनुदान देकर शिक्षा सस्थाओं की सहायता की जाती थी । इसके साथ ही सन् १८३३ तक राज्य सरकार उसके नियमन एव नियत्रण का कार्य करती रही । इसके बाद शिक्षा के सबध मे एक के बाद एक सार्वजनिक प्रावधान रखा गया । १८७० मे शिक्षा सबन्धी कार्य स्कूल बोर्ड को सौंप दिए गए । १६०२ मे जब कि प्रशासन का क्षेत्र बदल गया तो इगलैंड और वेल्स को २५६०स्कूल बोर्डों द्वारा प्रशासित किया गया । उस समय तक शहरी जिले सार्वजनिक रूप से स्थापित नही हो सकते थे। इस प्रकार कुछ अपवादो को छोड़ कर अन्य क्षेत्र बहुत छोटे थे । १८८९ और १८९१ के तकनीकी निर्देश अधिनियमो ने काउन्टी परिषदो और काउन्टी बारो परिषदो तथा शहरी जिलो को कुछ सीमित शक्तियां दी । १६०२ मे जो शिक्षा सम्बन्धी विकास किया गया उसमे वैज्ञानिक रूप से विचार करके काउन्टीज तथा काउन्टीज बारोज को सभी प्रकार की शिक्षा के लिए उत्तरदायी बनाया । किन्तु छोटे बारोज तथा शहरी जिलो मे जो सत्ता पहले से ही कार्य कर रही थी वह अपनी शक्ति को छोडने के लिए तैयार नही थी । उनका तर्क था कि स्थानीय रुचि, ज्ञान एव व्यक्तिगत सम्पर्क बनाए रखने के लिए यह जरूरी है कि क्षेत्र छोटा होना चाहिए । परिणाम-स्वरूप समझौतेपूर्ण दृष्टिकोण अपनाये गये । प्राथमिक शिक्षा के लिए काउन्टी परिषदो को सत्ता बनाया गया, साथ ही काउन्टी बारोज और दस हजार से अधिक की जनसख्या वाले गैर काउन्टीज को भी यह शक्ति दी गई । अधिनियम के अनुसार बारोज तथा शहरी जिले अपनी सत्ता छोड़ सकते थे ।

उच्च शिक्षा काउन्टी तथा काउन्टी बारोज के हाथो मे सौंप दी गई। इनमे ५८ शहरी जिला परिषदें भी थी। १९०२ के अधिनियम के अनुसार बारोज तथा जिले अपनी शक्तिया काउन्टी के लिये दे सकते थे किन्तु व्यवहार मे इस प्रावधान का प्रयोग बहुत कम हुआ। जिन सत्ताओ ने अपनी शक्ति त्याग दी वे स्वय् तथा काउन्टीज दोनो ही इससे लाभान्वित हुए क्योकि बड़े क्षेत्र मे अध्यापक योग्य मिल सकते थे और उसमे प्रति व्यक्ति खर्चा भी कम आता था। कुछ काउन्टीज अपनी शक्ति को उच्च शिक्षा एव प्राथमिक शिक्षा के बारे मे शहरी परिषदो को सौंप सकती थी। काउन्टी बारो के माध्यमिक स्कूल जब अपना प्रबध करते थे तो वे काउन्टीज का उपयोग करते थे। इससे काउन्टीज को यह भय हुआ कि कही उन पर काउन्टी बारोज का अधिकार न हो जाए। विभिन्न अधिनियमो मे अनेक स्थानीय सत्ताओ को मिलाने की व्यवस्था की गई थी। १९१८ के अधिनियम ने परिषदो को इस योग्य बनाया कि वे किसी भी कर्तव्य एव शक्ति के लिये आपस मे मिल सकें। इन प्रावधानों का भी अधिक प्रयोग नही किया गया। कुछ काउन्टीज मे सगठा का दोहरापन पूर्ण रूप से किया गया। ज्यो-ज्यो दोहराव हुआ त्यो-त्यो अनेक गम्भीर समस्याए उठती गई।

१९४४ के शिक्षा अधिनियम के द्वारा काउन्टी और काउन्टी बारो परिषदे एकमात्र शिक्षा सत्ताए बन गई। इस प्रकार १६९ सत्ताओ का अस्तित्व समाप्त हो गया। इन सत्ताओ के बीच समझौता करने के लिए तथा इनके द्वारा किए गए कार्यों की उपयोगिता की हानि को पूरा करने के लिये अधिनियम मे कुछ प्रावधान रखे गए। इनमे प्रथम यह था कि जहा कहीं काउन्टी बारोज या काउन्टी परिषदें बहुत गरीब हों और अकेली रहकर कार्य न कर सकें तो वे एक ही सयुक्त शिक्षा मंडल मे मिल सकती थी। दूसरे, काउन्टीज के क्षेत्रो को सम्भागीय कार्यपालिका क्षेत्रो में विभाजित करना था जहा कि सम्भागीय कार्यपालिका को शिक्षा सम्बन्धी सभी शक्तिया प्रत्यायोजित की जा सकती थी। केवल कर लगाने या उसे इकट्ठा करने की शक्ति नही सौंपी जा सकती थी। तीसरे, साठ हजार से अधिक जनसख्या वाले बारोज या जिला परिषदें यदि अपील करें तो उनको उक्त विभाजन से मुक्त किया जा सकता था और वे छोटे हुए जिले बन सकते थे।

सड़कें (Highways):—१८६२ तक सड़को का प्रशासन दो सत्ताओ द्वारा किया जाता था। ये थी टर्नपाइक न्यास (Turnp ke Trust) और व्यक्तिगत पैरिसें। सन् १८६२ के अधिनियम ने, पैरिसो को, सड़क जिलों (Highways District) मे समूहीकृत होने के लिए शक्ति प्रदान की। कुछ समय बाद रेलों के साथ प्रतियोगिता होने के कारण और कानून द्वारा व्यवस्था करने के कारण टर्नपाइकन्यास को समाप्त कर दिया गया। १८७८ मे सड़को को जिलो का उत्तरदायित्व दिया गया। तभी यह भी निश्चित कर दिया गया कि मुख्य सड़क क्या है और उसी के आधार पर उसे अनुदान प्रदान किया जा सके। १८८२ के बाद केन्द्रीय सरकार सड़क सत्ताओ को अनुदान देने लगी। १८८८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने काउन्टी परिषद को यह उत्तरदायित्व सौंपा कि वह काउन्टी की सभी मुख्य सड़को की रचना

कराये। किन्तु यदि शहरी सत्ता यह चाहे कि अपने क्षेत्र की सडक की रचना वह स्वय ही करे तो उसे ऐसा करने का अधिकार था और उसका खर्चा काउन्टी परिषद द्वारा ही दिया जाना था। दूसरे, काउन्टी परिषद मुख्य सडक की सरचना के लिए किसी भी देहाती या शहरी सत्ता से ठेका कर सकती थी। उसका व्यय-भार काउन्टी परिषद को उठाना पडता था। शेष सडके बारोज एव जिलो के अधिकार क्षेत्र मे आई। उस व्यवस्था के मुख्यत: दो दोष थे। प्रथम यह कि काउन्टी बिना किसी बाहरी प्रतिबन्ध के ही इस बात का निर्णय करती थी कि कौनसी सडक मुख्य सडक है। इसके परिणामस्वरूप प्रत्येक काउन्टी मे सडक के प्रशासन के सम्बन्ध मे पर्याप्त भिन्नता रही। दूसरे, ऐसी कोई सत्ता नही थी जो कि जिलो की नीति के बीच समन्वय स्थापित कर सके। यही कारण है कि राष्ट्रीय आधार पर सडको के सम्बन्ध मे कोई एक जैसी नीति न अपनायी जा सकी।

काउन्टीज, बारोज तथा जिलो के बीच लगातार इस आधार पर सघर्ष बना रहा कि सडको पर वे स्वय ही नियन्त्रण रखे ताकि उनके स्वय के स्थानीय लक्ष्य आसानी से पूरे किये जा सकें। जब कभी सडकें जिले से काउन्टी को दी जायें अथवा वे बारो प्रसार योजना मे आ जायें तो जिलो को उनके व्यय से मुक्त किया जाये तथा उनके लिए मुआवजा भी सौंपा जाये। काउन्टी परिषद को सडको से सम्बन्धित दायित्व सौंपने का सभी छोटी सत्ताओ द्वारा प्राय: विरोध किया गया। यद्यपि अनुभव द्वारा यह स्पष्ट था कि जहा कही भी इस प्रकार का स्थानान्तरण किया गया वहा विभिन्न सत्ताओ के बीच मनमुटाव पैदा नही हुआ था। दूरवर्ती आवागमन के लिए सन् १९०९ मे एक सडक मडल की स्थापना की गई। इसका मुख्य लक्ष्य सडक-सत्ताओ का विकास करना था ताकि सडको का सामान्य रूप से सुधार किया जा सके। १९१४ की करारोपण पर विभागीय समिति द्वारा यह सिफारिश की गई कि मुख्य सडको को परिभाषित करने की शक्ति सडक मण्डल को सौंप दी जानी चाहिए जो कि इस शक्ति का प्रयोग करते हुए सडको का समय-समय पर वर्गीकरण करती रहे तथा उनके महत्व के आधार पर ही अनुदान की व्यवस्था करे। सन् १९२० मे सडक प्रशासन को सडक-मण्डल से यातायात मन्त्रालय को स्थानान्तरित कर दिया गया। मन्त्रालय द्वारा सडको का वर्गीकरण किया गया। मुख्य सडक एव अन्य सडक के रूप मे जो पुराना वर्गीकरण था उसके स्थान पर एक वैज्ञानिक पद्धति को अपनाया गया कि सडकें प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी एव अन्य प्रकार की होंगी।

यातायात मत्रालय के कार्य के बावजूद भी मौलिक कठिनाई यह बनी रही कि जो काउन्टी सड़कें एव राष्ट्रीय सडकें थी उनका प्रशासन एव नियत्रण छोटे क्षेत्रो द्वारा किस प्रकार किया जाये। जब तक यह समस्या न सुलझादी जाती उस समय तक कोई मौलिक परिवर्तन नही आ सकता था सड़कों के सम्बध मे जो सयुक्त कार्यक्रम अपनाया गया वह स्थानीय सरकार पर शाही आयोग की आलोचना का पात्र बना। सन् १९२९ के अधिनियम ने समस्या को एक नये तरीके से ही सुलझाने का प्रयास किया। इसने प्रशासन के क्षेत्र को बढ़ा कर तथा स्थानीय सत्ताओं एवं यातायात मंत्रालय

के बीच सम्बध को अधिक बढा कर सुधार लाने का प्रयास किया। अब तक सडक प्रशासन के बारे में जो शक्तियां देहाती जिला परिषदो द्वारा प्रयुक्त की जाती थी अब उनको काउन्टी परिषदो को सौंप दिया गया। नगरपालिका बारोज की तत्सम्बधी शक्तियो को भी काउन्टी परिषद के हाथ मे दिया गया। इन सभी सडको को 'काउन्टी सडक' कहा जाने लगा।

यात्री यातायात सेवायें (Passenger Transport Services)—कई एक स्थानीय सत्तायें ट्राम्वे ट्राली तथा पैट्रोल बस यातायात के उद्यमो का सचालन कर रही थी। कुछ के द्वारा केवल ट्राम्वेज ही चलाई जा रही थी। इनको धीरे-धीरे बसो द्वारा बदल लिया गया। कुछ स्थानीय सत्तायें यातायात के उन सभी साधनो का सचालन कर रही थी जो कि गलियो मे चलाये जा सकते थे। यातायात के साधनो की दृष्टि से स्थानीय सत्ताओ के बीच पर्याप्त सहयोग की भावना वर्तमान थी। एक सत्ता के ट्रको या बसो की आवश्यकता के समय दूसरी के द्वारा प्रयुक्त किया जाता था, सयुक्त प्रबंध किया जाता था किन्तु यह कार्य इतना सरल नही था। कई बार वर्षों तक प्रयास करने के बाद भी इस कार्य मे सफलता प्राप्त नही हो पाती थी, यद्यपि इस प्रकार के प्रबन्धो द्वारा मितव्ययता एव सुविधा होती थी। एक क्षेत्र मे यातायात की सुविधायें तथा उनका प्रशासन क्षेत्र की आवश्यकताओ एव परिस्थितियो पर बहुत कुछ निर्भर करता है। क्षेत्र मे औद्योगिक स्थिति क्या है, विद्युत की सुविधायें कितनी प्राप्त हो सकती हैं, तथा उस क्षेत्र मे कितने घर है आदि बातो का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पडता है। लगभग नौ सयुक्त यातायात मण्डल बनाये गये जिनके कार्यों को देखने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि इनकी उपयोगिता कितनी अधिक है।

निर्धन राहत एवं सरक्षको का मण्डल (Poor Relief and the Board of Guardians)—सन् १६२६ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने निर्धन कानून प्रशासन का एक मौलिक पुनर्गठन तैयार किया। इस अधिनियम ने पहले की सामाजिक सत्ताओ को समाप्त कर दिया तथा १६वी शताब्दी के सिद्धान्तो तथा सस्थाओ का निराकरण कर दिया। ये सभी परिणाम उस समय तक स्पष्ट नही हो सके जब तक कि १६०५ में शाही आयोग द्वारा समस्या की पूरी तरह जाँच नही कर ली गई। इस आयोग ने जाच मे प्राप्त दोषो को सुधारने के लिए उपाय सुझाये। सुझाये गये सुधारो के आधार पर १६२६ में सुधार किये गये। इस क्षेत्र मे सन् १६०५ से जो कुछ किया गया था उसको कई एक सोपानो द्वारा सम्पन्न किया गया था जैसे १८३४ के सिद्धान्त, उन पर बहुमत एव अल्पमत के आयुक्तो का दृष्टिकोण एव वर्तमान अधिनियम की विषयवस्तु १६३४ के सुधार ,१८३४ की रिपोर्ट पर आधारित थे। इनको दो भागो में विभाजित करके देखा जा सकता है—प्रथम, प्रशासन का यन्त्र एवं राहत के सिद्धान्त। गरीब राहत को १५००० पृथक पेरिशो मे प्रशासित किया जाता था। अधिनियम ने गरीब कानून सघो को समाप्त कर दिया और इसके परिणामस्वरूप लगभग ६४० सघो की सत्ता कम हो गई। यह सुधार इस तथ्य से प्रभावित होकर किया गया था कि पेरिश एक अत्यन्त ही छोटा क्षेत्र होता है और इसके द्वारा

पर्याप्त धन, कौशल, कार्यक्रम एवं राहत के लिए अन्य आवश्यक चीज उपलब्ध नहीं कराई जा सकती। दूसरे, एक निर्धन कानून आयोग का संगठन किया गया जो कि एक केन्द्रीय सत्ता थी तथा जिसका कार्य था सरक्षकों के मण्डल पर नियंत्रण रखना तथा निरीक्षकों की सहायता से यह देखते रहना कि सरक्षकों द्वारा ठीक प्रकार से कार्य किया जा रहा है अथवा नहीं। तीसरे, बोर्ड को चुनाव के आधार पर संगठित किया गया था यद्यपि यह चुनाव 'एक व्यक्ति एक मत' के सिद्धान्त पर आधारित नहीं था फिर भी इसे प्रजातंत्रीय व्यवहार का प्रारम्भ तो मानना ही होगा। अपाहिजों की व्यवस्था का दायित्व परिवार पर ही डाला गया, यदि परिवार ऐसा करने से मना कर दे तो राज्यकोष से उसकी व्यवस्था की जाती थी।

राहत के सिद्धान्त एडम स्मिथ तथा माल्थस की विचारधारा एवं बैन्थम के राजनैतिक मनोविज्ञान पर आधारित थे। व्यक्तियों को यदि सुगम समय दिया जाये तो वे शीघ्र ही स्वीकार कर लेंगे और यदि उनको कोई कष्ट दिया जाये तो वे कम बुराई को छाटेंगे। गरीबों की संख्या कम करने के लिए यह उचित रहेगा कि निर्धन राहत द्वारा दिये जाने वाले लाभों को कम कर दिया जाये। राहत को प्राप्त करना मजदूरी प्राप्त करने से भी अधिक कठिन बना दिया जाये तो उसे केवल जरूरतमन्द ही लेना चाहेंगे। इस सिद्धान्त की क्रियान्विति को इतना त्रुटिरहित एवं स्वचालित बना दिया जाये कि कोई भी बोर्ड, चाहे वह कितना ही मूर्ख क्यों न हो इसे क्रियान्वित करने में गलती न करे। इसके लिए यह व्यवस्था की जाय कि जो लोग आश्रम में रहें केवल उनको ही राहत प्रदान की जाये तथा आश्रम में प्रवेश पाने पर भी कठोर प्रतिबन्ध लगा दिया जाये। आश्रम के सम्बन्ध में प्रतिरोध की नीति अपनाने पर स्वतः ही अनुपयुक्त अभागों की संख्या कम हो जायेगी।

एक शताब्दी के अन्दर-अन्दर निर्धन कानून सत्ताएं १८३४ के सिद्धान्तों से पृथक हो गई तथा अभागों से सम्बन्ध रखने के नये तरीके अपनाने लगी। साथ ही नवीन स्थानीय सत्ताओं का भी गठन किया गया जिनका सामान्य लक्ष्य उचित परिस्थितियों में अभागों की समस्या पर ही विचार करना था। १८३४ के आयुक्तों ने जाँच करने के बाद उन सही सलामतों को अलग कर लिया जो कि अभागों के साथ गलत रूप से मिल कर राहत के लाभों का उपयोग कर रहे थे। निर्धन कानून मण्डल (Poor Law Board) ने धीरे-धीरे अभागों के विभिन्न वर्गों के लिए पृथक-पृथक प्रबन्ध करने की व्यवस्था की। यह व्यवस्था करते समय जिन सिद्धान्तों को अपनाया गया वे न तो अधिक प्रतिरोधात्मक कहे जा सकते थे और न ही कम पहुंच योग्य। आश्रमों में बालकों की शिक्षा, सामान्य मेडिकल सुविधा, आत्म सम्मान की भावना का विकास, गरीबी से उत्पन्न हीनता का विनाश आदि के लिए भी व्यवस्थायें की गई।

१६वीं शताब्दी का प्रारम्भ होते ही व्यक्तिवादी विचारधारा पर आक्रमण होना प्रारम्भ हो गया तथा मजदूरों को मुआवजा देने, शिक्षा जन-

स्वास्थ्य एवं अन्य अनेक साधनों का प्रबन्ध करने के बारे में राज्य का नियमन प्रारम्भ हो गया, समाज अपनी मूल भूल एकता के प्रति जागरूक हो गया और प्रत्येक वर्ग के उत्थान एवं विकास के लिए समान रूप से प्रयास किया जाना प्रारम्भ हो गया। निर्धनों एवं अभागों के कल्याण के लिए भी कई एक संस्थायें गठित की गई। बाद में संसद द्वारा वृद्धों की पेन्शन पर विचार किया गया ताकि उनको आश्रमों से अलग रखा जा सके। धीरे-धीरे बेरोजगारों, स्कूल के बालकों, आदि की रक्षा के लिए उचित व्यवस्थायें की गई। इस दिशा में केन्द्रीय एवं स्थानीय सरकारों द्वारा जो प्रयास किये गये उनके परिणामस्वरूप अभागों एवं अपाहिजों की संख्या को कम करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया गया क्योंकि अपाहिजपन की सम्भावना के समय ही रोकने का प्रयास किया जा सकता था। इस प्रकार शारीरिक अपाहिजपन को तो रोका ही जा सकता था। इन सरकारी संस्थाओं द्वारा उनका उपचार किया गया जो कि बीमारी की सामाजिक दुर्घटना, छूत की बीमारी, दुर्घटना, वृद्धावस्था या बेरोजगारी के कारण अभागे बन सकते थे। प्रयास यह किया गया कि समस्त प्रक्रिया प्रतिरोधात्मक बन सके और बजाय इसके कि अभागों का पालन पोषण किया जाये, उचित यह समझा गया कि उनको प्राथमिक अवस्था में ही अभागे बनने से रोक दिया जाये। एक ही साथ दो प्रकार की प्रशासनिक व्यवस्थायें की गई। एक ओर तो यह व्यवस्था की जो कि उन सभी नागरिकों के बारे में विचार करती थी जो कि अभागे नहीं थे। अन्य एक विशेष सामयिक अपाहिज सत्ता थी। इन दोनों के बीच कोई आवश्यक सम्बन्ध नहीं था। दोनों के बीच कई जगह प्रतिरोध उत्पन्न हो जाता था। संरक्षक मण्डल द्वारा अनेक संस्थाओं एवं अधिकारियों का संगठन व नियुक्ति की जाती थी। ये गृह, अस्पताल, स्कूल, डाक्टर, अध्यापक आदि की नियुक्ति एवं संगठन करते थे। इनका प्रसार नगरपालिका के समान ही था तो भी यह उससे स्वतन्त्र रह कर कार्य करती थी।

१९०५ में निर्धन कानून के सम्बन्ध में भी शाही आयोग नियुक्त किया गया उसके कारण अभागों की संख्या में कोई बड़ा या स्थायी घटाव नहीं हुआ। संरक्षकों द्वारा इस जटिल सेवा का प्रबन्ध नहीं हो सका और न ही वे अपने क्षेत्रों में अधिक कार्यकुशलता लाने के लिए वित्तीय सहायता प्राप्त कर पाते थे। आयोग के बहुमत एवं अल्पमत दोनों ही इस बात पर एकमत थे कि वे सभी सेवाएं जो कि आश्रम के बाहर सहायता की समस्या पर विचार करती हैं उनको उचित रूप से व्यवस्थित किया जाना चाहिये। उदाहरण के लिए एक वृद्धावस्था पेन्शन कार्यक्रम हो, स्कूलों में चिकित्सालय हो, एक राज्य मेडीकल सेवा हो, तथा श्रम विनिमय कार्यक्रम हो। १९१४ तक ये सभी अच्छी प्रकार कार्य करने लगीं, यद्यपि इस समय ये पूर्ण नहीं थीं। दूसरे, यह माना गया कि प्रशासन का क्षेत्र काउन्टी तथा काउन्टी बारो ही रहे, उनको विकेन्द्रीकरण की कुछ शक्तियां सौंप दी जायें। इस प्रकार से सेवा का क्षेत्र बढ़ जायेगा और वह निर्धनों को आवश्यक राहत आसानी से प्रदान कर पायेगा।

आयोग कुछ बातो के सम्बन्ध मे पर्याप्त मत भिन्नता भी रखता था। अल्पमत का यह कहना था कि उनका अध्ययन तथा सामाजिक इतिहास इस बात को प्रमाणित करते है कि निर्धन कानून सत्ता नाम की किसी चीज का अस्तित्व ही नही रहना चाहिये। इस सत्ता द्वारा जिस-जिस वर्ग को सेवा की जाती थी उसे अब अलग अलग समितियों को सौप दिया जाये। काउन्टी तथा काउन्टी बारोज की ये समितियां होगी—पीडा समिति, शिक्षा समिति, जन-स्वास्थ्य समिति, पेन्शन समिति आदि आदि। इस प्रकार जन्म के बाद से लेकर जीवन भर तक पर्यवेक्षण बना रहे चाहे वह स्कूल हो या फैक्ट्री अथवा कोई कार्यालय। स्थानीय सत्ता के कार्यों की दृष्टि से गरीब एव सामान्य नागरिक के बीच किसी प्रकार का अन्तर न रखा जाये। आयोग का बहुमत इस बात से सहमत नहीं था कि नागरिक की नैतिकता की जाच की जाये। यह प्रश्न तो पहले ही आना चाहिए अर्थात् सहायता देने स पूर्व ही यह भली प्रकार से जाच कर ली जाये कि क्या सम्बन्धित व्यक्ति इस सहायता को प्राप्त करने के उपयुक्त है। सन् १९०६ से लेकर १९१४ तक अनेक स वैधानिक सुधार किये गये किन्तु अभावों से सम्बन्धित मूल समस्या को अछूता ही छोड दिया गया।

१ अप्रेल, १९३० को सरक्षकों के मण्डल का अन्त कर दिया गया तथा निर्धनों की राहत का कार्य पूरी तरह से काउन्टी बारो तथा काउन्टी परिषदो को सौप दिया गया। इसके अतिरिक्त परिषदो को अपने कार्य सम्पन्न करने [redacted] लिए परस्पर सयुक्त होने की सुविधा दी गई। मत्री को यह अधिकार था कि यदि वह यह सोचे कि इन परिषदो को सयुक्त कर देने से खर्च कम हो जायेगा अथवा जनता को इससे लाभ होगा तो वह अनिवार्य रूप से उन्हे परस्पर सयुक्त कर सकता था। इस प्रकार केन्द्रीय विभाग को हस्तक्षेप की शक्ति सौंप दी गई। परिषदो का स्थानान्तरित कार्यों को सम्पन्न करने के लिए प्रशासकीय योजना बनानी पडती थी। इस योजना को स्वीकृति के लिए स्वास्थ्य मत्रालय को भेजा जाता था। स्वास्थ्य मत्रालय का यह अधिकार था कि वह परिवर्तन के साथ अथवा परिवर्तन के बिना ही इस योजना को स्वीकार करे। सन् १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने कुछ बडे क्षेत्र को प्रशासन का आधार बनाया। इसके परिणामस्वरूप कर-दाताओं (Tax payers) की सख्या बढ गई।

विद्युत के क्षेत्र [Areas of Electricity] उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भ तक बारोज तथा जिलो को ही विद्युत प्रसारण की शक्ति दी गई। विद्युत प्रसारण का बडा क्षेत्र उस समय तक सम्भव नही था जब तक कि सम्बन्धित क्षेत्रों को शक्ति अधिक न हो। इस सम्बन्ध मे १९१९, १९२०, १९२२, और १९२६ मे अधिनियम पारित किये गये। जब शक्ति की तकनीकों मे क्रान्तिकारी विकास हुए तो अधिक बडा एव उचित क्षेत्र प्राप्त करने की समस्या जटिल बन गई। यह समस्या १९१९ के विद्युत प्रसारण अधिनियम से सुलझाई गई। इस अधिनियम के द्वारा विद्युत आयुक्त के रूप मे एक निकाय की स्थापना की गई। यह निकाय यातायात मत्रालय के तत्वावधान मे सयुक्त विद्युत व्यवस्था की-स्थापना का प्रयास

करता था। इस प्रयास का विभिन्न उद्योगो ने विरोध किया तथा केवल कुछ ही सत्ताएं आपस मे मिल सकी। इसके लिए एक नया दृष्टिकोण अपनाया गया। विद्युत से सम्बन्धित समस्या को दो भागो मे बांटा गया अर्थात् विद्युत का उत्पादन और उसका वितरण अथवा विक्रय। इन दो कार्यो को पृथक पृथक रख कर देखा जा सकता था।

विद्युत के उत्पादन के लिए बड़े क्षेत्र का रखा जाना सरल था किन्तु वितरण के लिए बड़े क्षेत्र की आवश्यकता को उपयुक्त बताना कठिन था। १९२६ मे एक विद्युत-वितरण-अधिनियम पास किया गया जिसके अनुसार एक सरकारी निगम की स्थापना की गई। राष्ट्रव्यापी विद्युत प्रसारण मे सम्बन्धित यह केन्द्रीय विद्युत मंडल अत्यन्त महत्वपूर्ण था। केन्द्रीय विद्युत मंडल के कार्यो की आधारभूमि बनाने के लिए विद्युत आयुक्तो ने दस क्षेत्रों का नियोजन किया जिसमे कि विभिन्नताओ का पर्याप्त ध्यान रखा गया। विद्युत के क्षेत्रो के लिए ऐसा आधार अत्यन्त आवश्यक था। विद्युत को बचा कर नहीं रखा जा सकता क्योंकि यह उपभोक्ता की आवश्यकतानुसार बनती रहती है। अतः यह आवश्यक है कि विद्युत के निर्माण की ऐसी विधि हो जो कि सभी आवश्यकताओ को पूरी कर सके यदि विद्युत उत्पादन के लिए बहुत बड़ा यंत्र लगा दिया जाये जो कि अधिक से अधिक माग को पूरी कर पाये तो ऐसे यत्र को उपयोगी बनाने के लिए यह भी जरूरी है कि क्षेत्र इतना बड़ा हो जो कि उस यंत्र को सदैव ही कार्यरत रख सके। क्षेत्रों का निर्धारण करते समय इस विचार को ध्यान मे रखा जाये और सभी उद्योगो, सभी व्यापारिक संस्थानो तथा घरों का प्रकाश, ताप एवं अन्य आवश्यकताओ को भी ध्यान मे रखा जाये। शक्ति उत्पन्न करने वाले क्षेत्रो मे जो सुधार सफलतापूर्वक कार्य कर सकते हैं, यह जरूरी नही है कि वे सुधार शक्ति का वितरण करने के कार्य मे भी सफलतापूर्वक कार्य कर सकेंगे।

१९३८ मे ३६४ स्थानीय सत्ताएं एवं २३४ कम्पनियाँ (Companies) विद्युत वितरण का कार्य कर रही थी। वे आकार, क्षेत्र, जनसंख्या एवं उपयोग की दृष्टि से पर्याप्त विभिन्नताएं रखती थी। इनमें से कुछ के वित्तीय स्रोत इतने कम थे कि प्रशासन के नये तरीको एवं योग्य अधिकारियो को नियुक्त नही कर सकते थे। प्रति यूनिट वितरण का मूल्य उद्यम के आकार पर निर्भर करता था किन्तु फिर भी समर्थ प्रशासन एवं बिक्री की नीतियां, कुछ ऐसे तत्व थे जो कि छोटे उद्यम को वितरण का अधिक मूल्य दे सकते थे कार्यकुशलता भी छोटे क्षेत्र मे अधिक रहती थी क्योंकि वह बिक्री से सम्बन्धित समस्याओं पर भली प्रकार विचार कर सकता था और स्थानीय अधिकारियों पर उपभोक्ताओं का प्रभाव भी रहता था। अगस्त, १९३७ मे विद्युत आयोग ने अपने प्रस्तावो की रूपरेखा रखी। पच्चीस विद्युत जिलों को जिनमे कि अड़सठ समूह थे यह सुझाया गया कि उनकी स्थानीय सत्ताएं या कम्पनियां अथवा दोनों को ही नये वितरण क्षेत्र बनाने के लिए परस्पर मिला दिया जाय। प्रारम्भ में इसकी प्रतिक्रिया संतोष जनक नहीं रही। नगरपालिकाएं कम्पनियो के साथ कोई समझौता

करने की इच्छुक नही थी। छोटे उद्यम भी अपनी कार्यकुशलता के कारण ऐसे ही बने रहना चाहते थे। सन् १९४७ मे विद्युत अधिनियम द्वारा विद्युत के वितरण को राष्ट्रीयकृत कर दिया गया। अब एक केन्द्रीय निकाय अर्थात ब्रिटिश विद्युत सत्ता, विद्युत के उत्पादन एवं बिक्री के लिए उत्तरदायी है। स्थानीय वितरण को चौदह क्षेत्रीय मंडलों के हाथ मे सौंपा गया है। क्षेत्रीय मडल द्वारा विद्युत का वितरण, बिक्री आदि की जाती हैं। अपने कार्यों मे इनकी सहायता परामर्शदाता परिषदो द्वारा की जाती है जिनको कि स्थानीय सत्ताओं द्वारा नियुक्त किया जाता है।

४

स्थानीय सत्ताओं का रूप एवं रचना

[THE NATURE AND CONSTITUTION OF LOCAL AUTHORITIES]

किसी भी देश की स्थानीय सरकार का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता। वह उस देश की केन्द्रीय सरकार के सगठन का एक अभिन्न भाग होती है और उसी के द्वारा सौंपी गई सत्ता का प्रयोग करती है और दिये गये कार्यों को सम्पन्न करती है। ऐसी स्थिति मे स्थानीय सत्ताओ को अपना सविधान स्वय बनाने का प्रश्न ही नही उठता। वे अपना कार्यक्षेत्र एव अपने कार्यों की प्रकृति भी स्वय निर्धारित नही कर सकते। यह व्यवस्था सही है या गलत है, लाभदायक है या नुकसानदायक है आदि बातें कम महत्व रखती हैं। यदि रखती भी है तो कितना, यह एक विवाद का विषय है किन्तु कानून इस सम्बन्ध मे स्पष्ट है कि स्थानीय सत्ताओ को कोई ऐसा अधिकार नही दिया जायेगा कि वे अपने आपको पृथक एवं स्वतन्त्र निकाय समझने लगें। स्थानीय प्रशासकीय निकायो को जो भी सत्ता सौंपी जाती है वह उनकी इच्छा से अथवा स्वतन्त्रतापूर्वक नही सौंपी जाती बल्कि इसे वे केन्द्रीय ससद से प्राप्त करती हैं। फाइनर का यह कहना सही है कि स्थानीय सत्ताओ की बनावट और मतदाता, परिषद का आकार और कार्यकाल, क्षेत्र, समितियो का सगठन आदि से सम्बन्धित मौलिक सिद्धात स्थानीय सत्ताओ पर थोपे जाते हैं—कभी-कभी आज्ञा के रूप मे और कभी कानून द्वारा निर्धारित सीमाओ के अन्तर्गत अनुमति के रूप मे।*

---

*The structure of Local authorities, the electorate, the size in term of the council areas, committee organisation. The fundamental principles of these are imposed upon them, sometimes as a command and sometimes as permission within limits established by statute."

—*Herman Finer*, Op. Cit. P. 189.

स्थानीय सत्ताओं पर संसद का व्यापक नियन्त्रण रहता है। वे क्या खर्च कर सकती हैं; क्या खर्च करना चाहिए तथा वे क्या कार्य कर सकती है और क्या उन्हे करना चाहिए आदि बातें संसद द्वारा तय की जाती हैं। संसद द्वारा निर्धारित सिद्धांतो को क्रियान्वित कराने की शक्ति कार्यपालिका को हस्तांतरित कर दी जाती है। स्थानीय निकायो का क्षेत्र चाहे कितना ही बडा हो, उनकी आर्थिक स्थिति चाहे कितनी ही अच्छी हो एवं उनकी जनसख्या चाहे कितनी ही अधिक क्यो न हो किन्तु उनका स्वयं का कोई पृथक व्यक्तित्व नही होता। स्थानीय सत्ताओं को उनका अस्तित्व एवं कार्य करने की सामर्थ्य बाहर से प्राप्त होती है।

स्थानीय निकायो के इस पराययी व्यक्तित्व का आधार संसद की सम्प्रभुता है। स्थानीय सत्ताएं प्रायः कृत्रिम व्यक्तित्व होती हैं जिन्हे अधिनियम द्वारा कुछ विशेष पारिभाषित कर्तव्यो एवं शक्तियों को सम्पन्न करने के लिए बनाया जाता है।

स्थानीय सत्ताओं की रचना
(The Constitution of Local Authorities)

ग्रेट ब्रिटेन मे जो भी स्थानीय सत्ताएं कार्य कर रही हैं उनका सविधान या रचना सम्बन्धी अभिलेख एक स्थान पर प्राप्त नही हो सकते। इसका कारण यह है कि कोई भी स्थानीय सत्ता एक समय मे एक अधिनियम द्वारा नही बनायी गयी। इसके विपरीत प्रत्येक स्थानीय निकाय का विकास हुआ है। यदि हम स्थानीय निकाय की रचना के बारे मे जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं तो हमे पहले उन सामान्य कानूनों का अध्ययन करना होगा जो कि सभी स्थानीय सत्ताओ से सम्बन्ध रखते हैं और उसके बाद उस विशेष अधिनियम को देखना होगा जिसका सम्बन्ध किसी व्यक्तिगत सत्ता से है। सामान्य कानून मे यह बताया जाता है कि स्थानीय स्तर पर कितनी प्रकार की सत्ताएं कार्य करेगी अर्थात् काउन्टीज, कस्बे, जिले, गाँव या जो भी विभाजन हो वे सभी स्पष्ट कर दिये जाते हैं, किन्तु यह सामान्य व्यवस्थापन प्रत्येक व्यक्तिगत सत्ता के सीमा सम्बन्धी एवं अन्य विशेष मामलो पर विचार नहीं करता। यह विचार उन अन्य परिपत्रों द्वारा किया जाता है जो कि व्यवस्थापन की प्रकृति के होते हैं तथा जिनको सामान्य कानून के द्वारा दी गई शक्तियो के आधीन प्रसारित किया जाता है। स्थानीय सत्ता एक प्रादेशिक इकाई होती है और इसलिए इसकी रचना की प्रक्रिया एक निगम (Corporation) जैसी होती है। एक निगम की मुख्य रूप से दो विशेषताएं होती हैं—प्रथम यह कि इसकी रचना किसी एक उच्च सत्ता द्वारा की जाती है और किसी बनाने वाले निकाय द्वारा इसे कभी भी नष्ट किया जा सकता है अथवा विकसित किया जा सकता है. दूसरे, इसके विशेष अधिकारो को अधिनियम द्वारा पारिभाषित कर दिया जाता है। यह परिभाषा प्रतिबंधित रूप मे होती है। हरमन फाइनर के कथनानुसार ब्रिटिश स्थानीय सरकार की समस्त सत्ताओं की यही प्रकृति है चाहे उनका जन्म चार्टर द्वारा हुआ हो अथवा

कानून द्वारा।*

ये सभी स्थानीय सत्ताएं अधीनस्थ व्यवस्थापिका एवं कार्यपालि निकाय हैं। वे अपने आपको गठित करने एवं सक्रिय बनाने का निहित अधिकार नहीं रखती। स्थानीय सत्ताओं की भौगोलिक सीमाएं होनी चाहिए। एक नयी स्थानीय सत्ता को बनाने के लिए पृथक भू-भाग को आवश्यकता होती है। यदि कोई ऐसा क्षेत्र है जहां पर कि बहुत सारी भूमि खाली पड़ी हुई है और कोई नहीं रहता तथा लोग यहां वहां कहीं-कहीं रहते है, ऐसी स्थिति में यह सम्भव है कि स्थानीय सरकार को ऐसी व्यवस्था को अपनाना पड़े जो कि पूरे देश को समाहित नहीं करती। इसके लिए यह व्यवस्था अपनानी होगी कि जहां जनसंख्या है वहां स्थानीय सत्ता का संगठन कर दिया जाये और उन इकाईयों के बाहर की भूमि को खुला छोड़ दिया जाये जो कि किसी भी स्थानीय सरकार के अधिकार क्षेत्र में न आये। राज्य इन क्षेत्रों का प्रशासन स्वयं करेगा, उस क्षेत्र में हो कर जो सड़क निकलेंगी और जिन अन्य सेवाओं की आवश्यकता होगी वे सभी राज्य के द्वारा प्राप्त होंगी। ऐसी स्थिति में एक नई स्थानीय सत्ता की रचना कोई कठिनाई उत्पन्न नहीं करती। ज्योंही एक स्थान पर पर्याप्त जनसंख्या एकत्रित हो जाये त्योंही वहां स्थानीय निकाय की स्थापना की जा सकती है।

नयी सत्ता के द्वारा जिस क्षेत्र को आसानी के साथ प्रशासित किया जा सके उसके आधार पर उसकी सीमाएं निश्चित करदी जाती है, क्योंकि भौगोलिक रूप में इस नयी इकाई को एक ऐसे क्षेत्र से लिया जाता है जो कि स्थानीय सरकार की दृष्टि से किसी को भी भूमि नहीं है। यह स्थिति जितनी सरल है उतनी ही अप्राप्य भी है; क्योंकि प्रायः स्थानीय सरकार के उद्देश्य से कोई ऐसी भूमि नहीं मिलती जो कि किसी के अधिकार में न हो। प्रत्येक स्थानीय सत्ता की सीमाएं अपनी पास वाली सत्ता से मिली रहती हैं और इस प्रकार पूरा देश मुख्य सत्ताओं के जाल से ढका रहता है। स्थानीय सरकार के संगठन में यदि सूत्र व्यवस्था को अपनाया गया हो तो एक बड़ी सत्ता के क्षेत्र को छोटी सत्ताओं के क्षेत्रों में विभाजित कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति में हम कोई परिवर्तन करना चाहें तो इसके लिए दो-तीन तरीके अपनाने होंगे—प्रथम तरीका यह है कि उनकी सीमा में परिवर्तन कर दिया जाय। इसका अर्थ यह है कि स्थानीय सरकार की इकाईयों को तो ज्यों का त्यों रहने दिया जाय और एक सत्ता को भूमि का कुछ भाग दे दिया जाय तथा दूसरी में कुछ भाग ले लिया जाय। काउन्टी बारोज का प्रसार इसी प्रकार किया जाता है। दूसरा तरीका यह है कि, स्थित सत्ताओं को समाप्त करके या उनको आपस में मिला करके नयी स्थानीय सत्ता बना दी जाय।

---

*' This the character of all English Local Government authorities, whether originating in a character, or at a time of which' the memory of man runneth not to the contrary,' or by statute."

—*Herman Finer*, Op. Cit., P. 191.

यह कहा जाता है कि जब दो नजदीक की जिला परिषदों के क्षेत्र का प्रशासन एक ही परिषद द्वारा बहुत अच्छी तरह से किया जा सकता हो तो दो परिषदों को अनावश्यक रूप से क्यों रखा जाय और इसलिए उन दोनों निकायों को मिला कर एक बना दिया जाय। किसी क्षेत्र के गठन की प्रक्रिया प्रायः जनसंख्या के परिवर्तन के बाद सम्भव होती है। जब वर्तमान क्षेत्र जनसंख्या की दृष्टि से अत्यधिक हो जाता है तो यह उचित समझा जाता है कि उसके एक भाग को अलग करके पृथक से ही एक इकाई बनादी जाय। एक तीसरा तरीका स्तर में परिवर्तन करने का है। एक गांव अपने आकार एवं महत्व को इतना बढ़ा सकता है कि उसे कस्बा मानना पड़े और ऐसी स्थिति में वह काउन्टी के अन्तर्गत जिला स्तर पर आ जाता है। उसमें यदि अधिक वृद्धि होती है तो उसे और भी उच्च सत्ता बनाया जा सकता है। ये तीनों ही प्रक्रियाएं व्यवहार में भिन्न-भिन्न नहीं हैं। यह हो सकता है कि किसी सीमा के परिवर्तन का कारण स्तर का परिवर्तन हो और तीनों ही प्रकार के परिवर्तन एक साथ मिल जाय। ये परिवर्तन जहां भी कहीं और जब भी कभी होते हैं इनके आधार पर नयी इकाईयां बन जाती हैं। जब कभी सीमाओं में परिवर्तन किया जायेगा और यदि एक स्तर की सीमा को बढ़ाया जायेगा तो यह स्वाभाविक है कि दूसरी सत्ता की सीमा घट जायेगी। इसी प्रकार से स्तर का परिवर्तन भी सूत्रों की बनावट में सतुलन को बदल देगा। जब एक इकाई को विभाजित किया जायेगा तो उसकी सम्पत्ति के स्रोत भी विभाजित हो जायेंगे। इन सभी बातों को मैत्री एवं सहयोग पूर्ण समझौतों के द्वारा तय किया जा सकता है किन्तु वाद-विवाद के लिए एवं विरोध के लिए इनमें पर्याप्त गुन्जाइश रहती है। ऐसी स्थिति में यह जरूरी हो जाता है कि झगड़ों के बारे में जाच करने और उनको तय करने के लिए किसी यन्त्र की स्थापना की जाय। इङ्गलैण्ड की व्यवस्था में देहाती एवं शहरी तथा जिला बारो एवं मुख्य सत्ताओं के बीच स्पष्ट विभाजन किया गया है।

काउन्टी परिषदों को यह कर्त्तव्य सौंपा गया है कि वे पेरिस की सीमाओं तथा देहाती एवं शहरी जिलों का पर्यवेक्षण करें। उनके द्वारा यह कार्य दस साल बाद अथवा आवश्यकता पड़ने पर कभी भी किया जाता है। जब कभी क्षेत्रीय परिवर्तन का कार्य करना होता है तो काउन्टी परिषद स्थानीय जाच कराती है और यह देखती है कि अधिकांश लोगों की क्या राय है। यदि वह यह देखती है कि परिवर्तन किया जाना चाहिये तो वह इससे सम्बन्धित आगे कार्य करके उसे स्वीकृति के लिए स्थानीय सरकार के पास भेजती है। यदि मंत्रालय को यह ज्ञात हो कि प्रभावित परिषद द्वारा इस परिवर्तन का विरोध किया जा रहा है तो वह इसके सम्बन्ध में स्थानीय जाच का प्रबन्ध करता है। इस प्रकार परिवर्तन के बारे में अन्तिम निर्णय मंत्री द्वारा ही लिया जाता है।

बारोज वे कस्बे होते हैं जिनको शाही चार्टर प्राप्त हो चुका होता है। ये चार्टर सदियों पूर्व दिये गये थे। कई एक को तो राजा से सौदे-बाजी के रूप में प्राप्त किया गया। बारोज के निवासियों को सदैव ही कुछ

विशेष अधिकार प्राप्त होते हैं जो कि अन्य सत्ताओं की जनता को नहीं होते। इनका एक महत्वपूर्ण विशेष अधिकार यह माना जाता है कि ये काउन्टी के सामान्य नियन्त्रण से बचे रहते हैं तथा इनको अपने प्रशासन का अधिकार स्वयं को ही होता है। पहले यह व्यवस्था थी कि किसी भी कस्बे के लोग राजा को आर्थिक सहायता प्रदान करके चार्टर प्राप्त कर सकते थे। अब कोई भी कस्बा उस समय तक बारो बनने का स्वप्न नहीं देख सकता जब तक कि उसकी एक निश्चित जनसंख्या न हो तथा उसमे वह सामाजिक एकरूपता तथा सहयोग न हो जो कि उसे सुस्थापित कस्बा बना सके। अब भी शाही चार्टर ही प्राप्त करना होता है किन्तु इसे व्यवस्थापन द्वारा विनियमित कर दिया गया है। इस प्रक्रिया में आज अनेक प्रकार की औपचारिकताओं का निर्वाह किया जाता है। शाही चार्टर मे सीमाये, परिषद का आकार एवं स्थानीय सरकार के संगठन के अन्य कई विषयो का वर्णन होता है।

काउन्टी एवं काउन्टी बारोज को मुख्य सत्तायें कहा जा सकता है। ये दोनों परस्पर पर्याप्त भिन्नतायें रखते है। काउन्टी बारो एक खूब बाली सत्ता है तथा जहाँ तक काउन्टी से इसका सम्बन्ध है यह एक चाहरदीवारी से युक्त नगर होता है। इसका अर्थ यह है कि जब भी कभी एक नया काउन्टी बारो बनाया जाता है अथवा स्थित बारो का प्रसार किया जाता है तो काउन्टी से ही प्रदेश लिया जाता है। ब्रिटिश स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार वहां धन प्राय: शहरो मे ही प्राप्त होता है, वह भी बड़े शहरो मे। दूसरी ओर जो धन व्यय करना होता है वह प्राय: देहाती इलाको पर अधिक किया जाता है क्योंकि किसी भी सेवा को उस स्थान के लिए आसानी से प्रदान किया जा सकता है जहा पर लोग परस्पर निकटता के साथ बसे हुए हैं। किन्तु जहा के निवासी दूर-दूर रह रहे हैं उन देहाती क्षेत्रो मे सेवा की व्यवस्था करने में धन एवं श्रम अधिक व्यय करना होता है। ऐसी स्थिति मे यदि शहरी जनसंख्या को काउन्टी से बाहर कर दिया जाये तो वह साधनो की दृष्टि से कमजोर हो जायेगी किन्तु उत्तरदायित्व उस पर अधिक हो जाये गे। इसी कारण नये बारोज की स्थापना या स्थिति बारोज के प्रसार का प्रश्न इतना अधिक महत्वपूर्ण समझा जाता है और उसे निर्णय के लिए संसद के सम्मुख रखा जाता है।

स्थानीय सत्ता की रचना या उसके संविधान से हमारा अर्थ उस तरीके से है जिसके द्वारा इसके प्रशासकीय निकाय का गठन किया जाता है तथा जिस ढंग से इसकी सदस्यता को संगठित किया जाता है। स्थानीय सत्ताओं की रचना परस्पर पर्याप्त भिन्नतायें रखती हैं जिसका उल्लेख किया जाना अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रतीत होता है।

काउन्टी परिषद की रचना—काउन्टी परिषद मे एक सभापति एक उपसभापति, एल्डर मेन तथा पार्षद होते हैं। काउन्टी पार्षदो को स्थानीय सरकार के निर्वाचको द्वारा चुना जाता है तथा वे तीन वर्ष तक अपने पद पर कार्य करते हैं। तीन साल समाप्त होने पर वे सभी सेवा निवृत्त हो जाते हैं। काउन्टी के एल्डरमेनों को काउन्टी के स्थानीय मतदाताओं द्वारा नहीं चुना जाता वरन् इनका चुनाव काउन्टी के पार्षदो द्वारा किया जाता

है। ये छः वर्ष तक अपने पद पर कार्य करते हैं तथा इनमें से आधे हर तीसरे वर्ष अपने पद से हट जाते हैं। एल्डरमेनों का पार्षद होना जरूरी नहीं है किन्तु उसमें ऐसा बनने की योग्यतायें होनी चाहिए। एक परिषद में एल्डरमेनो की संख्या परिषद के कुल पार्षदों की संख्या का एक तिहाई होती है। इस प्रकार ये एक चौथायी भाग होते हैं।

सभापति (Chairman) का चुनाव पार्षदों एवं एल्डरमेनों द्वारा स्थित सदस्यों में से तथा ऐसी योग्यता रखने वाले सदस्यों में से किया जाता है। सभापति एक वर्ष तक अपने पद पर कार्य करता है तथा अपने कार्यकाल में वह शान्ति का न्यायाधीश होता है। सन् १९४९ के पूर्व वह अपना कार्यकाल समाप्त होने के बाद भी एक वर्ष तक शान्ति का न्यायाधीश (Justice of Peace) रहता था किन्तु १९४९ के शान्ति के न्यायाधीश सम्बन्धी कानून ने उसका यह अधिकार समाप्त कर दिया। उपसभापति का चुनाव परिषद द्वारा अपने सदस्यों में से ही किया जाता है। वह एक वर्ष तक अपने पद पर रहता है।

काउन्टीज बारो परिषद की रचना—काउन्टी बारो परिषद में एक मेयर, एक उपमेयर (Deputy Mayor), एल्डरमेन तथा पार्षद होते हैं। काउन्टी बारो के पार्षदों का चुनाव इस क्षेत्र के मतदाताओं द्वारा किया जाता है। ये अपने पद पर तीन वर्ष तक कार्य करते रहते हैं। इनमें से एक तिहाई प्रति वर्ष सेवा निवृत हो जाते हैं। ऐल्डरमेनों का चुनाव पार्षदों द्वारा उसी प्रकार किया जाता है जिस प्रकार काउंटी परिषद में किया जाता है; अर्थात् उनको ऐसे व्यक्तियों में से चुना जाता है जो कि या तो पार्षद हैं अथवा पार्षद बनने की योग्यता रखते हैं। परिषद में मेयर (Mayor) का वही स्थान होता है जो कि काउन्टी परिषद में सभापति का। उसका चुनाव पार्षदों एवं एल्डरमेनों द्वारा वार्षिक सामान्य सभा में किया जाता है। उसका पार्षद होना आवश्यक तो नहीं है किन्तु उसमें पार्षद बनने की योग्यतायें अवश्य होनी चाहिए। मेयर परिषद की बैठकों की अध्यक्षता करता है किन्तु उसका मुख्य कार्य यह है कि वह अपने समाज का 'प्रथम नागरिक' होता है। इस दृष्टि से वह नागरिक गर्व की भावना रखता है। इसका महत्व उससे कहीं अधिक है जितना कि यह समझा जाता है। मेयर भी अपने कार्यकाल में शान्ति का न्यायाधीश होता है।

गैर काउन्टी बारो परिषद की रचना—गैर-काउन्टी बारोज अथवा नगरपालिका बारोज का विकास मध्य युग की देन है जब कि ये काउन्टी व्यवस्था से पृथक एवं उस सरकार की व्यवस्था के नियन्त्रण से स्वतन्त्र शहरी केन्द्र बन गये। उनकी शक्तियां उनके संगठन के चार्टर में अंकित रहती हैं। गैर-काउन्टी बारो की परिषद में एक मेयर, उपमेयर, एल्डरमेन तथा पार्षद होते हैं जिनका निर्वाचन काउन्टी-बारो में इन पदाधिकारियों के निर्वाचन से साम्य रखता है।

शहरी एवं देहाती जिला परिषदों की रचना—शहरी एवं देहाती जिला परिषदों की रचना १८९४ के स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा की गई। इन दोनों के बीच मुख्य अन्तर यह है कि शहरी जिले में शहरी क्षेत्र आता

है जब कि देहाती जिला एक काउन्टी जिला, होता है। उन दोनों की रचना पूर्णत: एक जैसी ही है तथा उनकी शक्तियां अपने-अपने क्षेत्र की समस्याओं के आधार पर भिन्नता रखती है। शहरी एवं देहाती जिला परिषदो मे एक समापति, एक उप-समापति तथा पार्षद होते हैं। इसमें एल्डरमेन अथवा मेयर नहीं होते। परिषद के पार्षदों का चुनाव, क्षेत्र के मतदाताओं द्वारा किया जाता है। वे अपने पद पर तीन वर्ष तक कार्य करते रहते हैं। प्राय: एक तिहाई सदस्य प्रतिवर्ष सेवा निवृत हो जाते हैं। रिक्त पदों को प्रतिवर्ष मतदान द्वारा भरा जाता है। शहरी या देहाती जिला परिषदों में से कोई भी परिषद एक प्रस्ताव पास करके काउन्टी परिषद से ऐसा आदेश प्रसारित करने को कह सकती है कि उसके सभी पार्षद तीन वर्ष के बाद एक साथ ही सेवानिवृत्त हो जायें और प्रतिवर्ष चुनाव न करना पड़े। समापति का चुनाव पार्षदों द्वारा किया जाता है। उसका कार्यकाल एक वर्ष है। यह जरूरी नहीं है कि समापति के रूप में चुने जाने से पूर्व वह परिषद का सदस्य हो किन्तु उसमें पार्षद बनने की योग्यतायें अवश्य होनी चाहिए। वह अपने कार्यकाल में शान्ति का न्यायाधीश होता है। उपसमापति का चुनाव भी पार्षदों द्वारा अपने में से ही किया जा सकता है।

पेरिस मीटिंग की रचना—पेरिस मीटिंग एक ऐसी मीटिंग होती है जिसमे कि पेरिस के सभी स्थानीय सरकार के मतदाता होते हैं। इसकी एक वार्षिक बैठक होती है जिसमे कि समापति का चुनाव किया जाता है।

पेरिस परिषद की रचना—पेरिस परिषद में कुछ पार्षदें तथा एक समापति होता है। परिषद के सदस्यों का चुनाव स्थानीय सरकार के पेरिस के मतदाताओं द्वारा किया जाता है। वे तीन वर्ष तक अपने पद पर रहते हैं तथा एक साथ ही सेवा निवृत होते हैं। समापति का चुनाव परिषद के सदस्यों द्वारा अपने में से किया जाता है अथवा ऐसे व्यक्ति को भी समापति बनाया जा सकता है जो कि परिषद का सदस्य तो नहीं है किन्तु बनने की योग्यता रखता है।

लदन के निकायों का संगठन—लदन में स्थानीय प्रशासन का सचालन करने वाले तीन निकाय हैं—लदन काउन्टी परिषद, राजधानी बारो परिषद और नगर परिषद। काउन्टी परिषद में भी एक समापति होता है, एक उप-समापति (Vice-Chairman) एल्डरमेन तथा पार्षद होते हैं। इनके अतिरिक्त इसमें एक प्रवर समापति (Deputy Chairman) भी होता है। परिषद की रचना बहुत कुछ ऐसी ही है जैसी कि अन्य निकायों की वर्णन की गई है। परिषद के सदस्य उसी प्रकार एल्डरमेनों का चुनाव करते हैं जिस प्रकार कि अन्य परिषदें करती हैं। एल्डरमेनों की संख्या इस परिषद में एक तिहाई नहीं होती वरन् छठा भाग होती है। समापति का चुनाव प्रतिवर्ष वार्षिक रूप से किया जाता है। उसके कार्यकाल में वह जो भी खर्च करता है उसका परिषद द्वारा वहन किया जाता है। समापति की सहायता वायस-चेयरमेन तथा डिप्टी-चेयरमेन द्वारा की जाती है। इनमें से प्रथम का चुनाव परिषद द्वारा अपने में से ही किया जाता है। यह उस राजनैतिक दल का होता है जिसका कि परिषद में बहुमत हो। डिप्टी चेयरमेन परिषद के

विरोधी दल के सदस्यों में से लिया जाता है। इनको भी अपने स्वीकृत व्यय के लिए भत्ते दिये जाते हैं।

राजधानी बारो परिषदें पूरे लंदन क्षेत्र में २८ हैं। इनमें से प्रत्येक में एक मेयर होता है, साथ ही एल्डरमेन तथा पार्षद होते हैं। मेयर का चुनाव पार्षदों में से, एल्डरमेनों में से या परिषद के बाहर से किया जाता है किन्तु उसमें परिषद की सेवा की आवश्यक योग्यतायें होनी चाहिए। पार्षदों का चुनाव तीन वर्ष के लिए किया जाता है और उनमें से एक तिहाई हर वर्ष सेवा निवृत हो जाते हैं। परिषद को यह अधिकार है कि वह एक प्रस्ताव पास करके मन्त्रालय से यह कहे कि उसके सदस्यों को हर तीसरे साल ही एक साथ सेवा निवृत किया जाये न कि प्रतिवर्ष एक-तिहाई को। प्रायः सभी राजधानी परिषदों ने इस प्रकार की आज्ञा प्राप्त करली है और अब उनके सदस्यों का निर्वाचन हर तीसरे वर्ष ही किया जाता है। परिषद में एल्डरमेनों की सख्या पार्षदों की सख्या का छठा भाग है। इनका चुनाव पार्षदों द्वारा छः वर्ष के लिए किया जाता है। इनमें से आधे हर तीसरे वर्ष सेवा निवृत्त हो जाते हैं।

वर्तमान समय में लंदन में ३२ बारोज हैं–इनका सगठन स्थित राजधानी बारोज, काउन्टी बारोज, बारोज तथा काउन्टी जिलों को मिला कर किया गया।* यद्यपि पूर्ववर्ती बारोज या जिलों को विभाजित कर दिया गया। कुछ अपवादों को छोड़ कर नये बारोज की सीमायें पुरानी काउन्टी की सीमाओं के बाहर नहीं जाती। लन्दन में बारोज को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित कर दिया है। लन्दन सहित वे बारह बारोज जो कि पहले लन्दन की प्रशासकीय काउन्टी थे, आन्तरिक लन्दन बारोज (Inner London Borough) के नाम से जाने जाते हैं तथा शेष को बाहरी लन्दन बारोज (Outer London Borough) कहा जाता है।

प्रत्येक बारो में पार्षदों की सही सख्या क्या रहेगी यह उनके निर्मायक चार्टर में दे दिया जाता है।† उनका नाम भी चार्टर में ही दिया हुआ होता है। लन्दन सरकार अधिनियम, १९६३ के अनुसार किसी भी बारो में साठ से अधिक निर्वाचित पार्षद नहीं हो सकते। इनके साथ ही कुल सख्या के $\frac{1}{6}$ एल्डरमेन भी रखे जा सकते हैं। अन्य बारोज की भांति इन परिषदों का सभापति भी मेयर कहलाता है। परिषद की बैठकें प्रायः प्रत्येक छः सप्ताह बाद होती रहती हैं।

लन्दन शहर का नगर निगम यदि कानूनी रूप से पारिभाषित किया जाये तो यह कहना होगा कि लन्दन शहर के मेयर और पार्षद तथा नागरिक (Mayor and Commonalty and Citizens of the City of

---

*Local Government in Britain, Prepared for British Information Services, India, RF. P. 5505/65, P. 9.

†कानून द्वारा निर्मित होने पर भी सभी लन्दन बारोज को चार्टर प्राप्त है।

I bid, P. 10.

London)। लन्दन शहर के नगर निगम का इतिहास, सविधान एव शक्तिया इंगलैण्ड एव वेलस मे अन्य किसी स्थानीय निकाय से पूर्णतः भिन्न है। यह शताब्दियो से लेकर आज तक तीन प्रकार के न्यायालयो के माध्यम से कार्य करता आरहा है। * ये हैं—

सामान्य परिषद का न्यायालय [The Court of Common Council]—इस न्यायालय का सभापति मेयर होता है। उसके अतिरिक्त इसमे २५ अन्य एल्डरमेन तथा १५६ सामान्य परिषद सदस्य होते है जो कि वार्षिक रूप से चुने जाते हैं। इनका चुनाव २५ वार्डों द्वारा भिन्न-भिन्न अनुपात मे किया जाता है। लगभग १३००० मतदाता इसमे भाग लेते हैं। निर्वाचक का मत देने का अधिकार या तो उसके निवास-स्थान द्वारा तय किया जाता है अथवा उस क्षेत्र मे व्यवसाय करने के आधार पर दिया जाता है। यह निगम का मुख्य कार्यपालिका एव प्रशासकीय निकाय है। इसके कार्यों मे लन्दन बारोज द्वारा किये जाने वाले सभी सामान्य कार्य आ जाते हैं। इसकी वित्तीय व्यवस्था का आधार रेट (Rates) होते है। ज्यो-ज्यो राजधानी शहर का विकास हुआ है त्यो-त्यो इसके कार्यों मे विशेष वृद्धि होती चली गई है। यह एक व्यवस्थापिका सभा भी है तथा यह अपना संविधान स्वय सशोधित करने का अधिकार रखती है। अपनी सस्थाओ एव रीति-रिवाजो मे भी इसके द्वारा परिवर्तन किया जा सकता है। इसके लिए एक विधेयक सामान्य परिषद मे पढा जायेगा तथा ससद की ही तरह से उसके प्रथम, द्वितीय एव तृतीय वाचन होंगे।

एल्डरमेन का न्यायालय [The Court of Aldermen]—एल्डरमेन के न्यायालय को इगलैण्ड मे नगरपालिका के द्वितीय सदन (Second Chamber) का एक मात्र जीता-जागता उदाहरण माना जाता है। इसमे २६ एल्डरमेन होते है जो कि प्रत्येक वार्ड द्वारा ससदीय रजिस्टर के आधार पर चुने जाते हैं। ये अपने पद पर जीवन भर तक कार्य करते रहते हैं। लार्ड मेयर भी इनके साथ मिल कर कार्य करता है। उसका मुख्य कर्तव्य यह है कि वह न्यायालय को आहूत करे और उसकी बैठको की अध्यक्षता करे। उसकी उपस्थिति को अत्यन्त अनिवार्य माना जाता है। सामान्य परिषद के कार्य बढ जाने के कारण इस न्यायालय के कार्य अब कुछ कम हो गये हैं किन्तु अब भी यह स्वतन्त्रताओ, चुनावो, कुछ कम्पनियो एव न्याय के प्रशासन के सम्बन्ध मे कुछ अधिकार रखता है। इसके अतिरिक्त यह अपने पुराने अधिकार क्षेत्र की स्मृति के अवशेष के रूप मे भी महत्व-पूर्ण है। *

कामन हाल का न्यायालय [The Court of Common Hall]—इस न्यायालय मे लार्ड मेयर, शैरिफ, एल्डरमेन तथा ८४ पुरानी कम्पनियो के फ्रीमेन तथा लिवरीमेन होते है जो कि मध्यकालीन व्यापारी सघो एव

*The corporation of the city of London,
B I.S., R. 4864/65, P 3.

†R. to the corporation of London, Oxford University Press, 1950.

कलाकारो की सस्थाओ के अवशेष है। एक नगर कम्पनी को लिवरी कम्पनी [Livery Company] कहा जाता है। ये मौलिक रूप मे तो किसी विशेष व्यापार के सदस्यो के निगम थे किन्तु आज जिस व्यापार का उनके साथ नाम जुडा हुआ है उससे वे बहुत कम या बिल्कुल ही सम्बन्ध नही रखते। लिवरीमेन वह होता है जो कि एक विशेष प्रकार की पोशाक या कम्पनी की वर्दी पहनता हो। कामन हाल का मुख्य कार्य यह है कि लार्ड मेयर के कार्यालय के लिए दो सदस्यो को नामजद करे। अन्तिम चयन तो एल्डरमेन के न्यायलय द्वारा ही किया जाता है। कामन हॉल द्वारा अन्य कुछ चयन भी किये जाते हैं ; उदाहरण के लिए नगराधिपो, नगर चेम्बरलेन, ब्रिजमास्टरो [टावर पुल (Tower Bridge), ब्लेक फायर पुल, लन्दन पुल, साउथ वार्क पुल], नगर आडीटर तथा नियम के अन्य अधिकारी गण।

स्थानीय सत्ताओं की निर्वाचन व्यवस्था
[The Electoral System of Local Authorities]

स्थानीय सत्ताओ का स्वरूप प्राय: निर्वाचित ही है। जे० एच० वारेन के कथनानुसार ब्रिटिश स्थानीय सरकार की इकाइया एक अपवाद को छोड़कर निर्वाचित ही है। देहाती पेरिस मे कुछ शक्तिया पेरिस मीटिंग के लिए सरक्षित रूप मे रख ली गई हैं। यदि पेरिस परिषद भी स्थापित कर दी जाये तो इसके पास मे शक्तिया रहती है। जहाँ कही पेरिस परिषद नही होती वहा स्थानीय सरकार की शक्तियो का प्रयोग पूर्णत: पेरिस मीटिंग द्वारा ही किया जाता है। जहां पेरिस परिषद होती है वहाँ पर कुछ शक्तियो का प्रयोग पेरिस मीटिंग करती है तथा अन्य का प्रशासन पेरिस परिषद को सौप दिया जाता है। इसको छोड कर अन्य जितनी भी स्थानीय सत्तायें है, अर्थात् काउन्टी परिषदें, काउन्टी बारो परिषदें, बारो परिषदें, शहरी जिला परिषदें एव देहाती जिला परिषदें आदि-आदि, ये सभी निर्वाचित निकाय हैं।

पार्षदो के चुनाव के सम्बध मे स्थानीय सत्ताओ के बीच बहुत कम अन्तर पाया जाता है। सत्ता का रूप चाहे कुछ भी हो और क्षेत्र का आकार चाहे कुछ भी हो किन्तु उस पर प्राय: चुनाव से सम्बन्धित एक जैसे ही सिद्धान्त लागू किये जाते हैं। ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सत्ताओ के चुनाव से सम्बधित पूर्ण व्यवस्था प्राय: आधुनिक ही है। केवल लदन नगर इसका अपवाद है जहाँ पर कि परम्परागत नियमों को अपनाया जाता है। अगस्त १९६५ तक स्थानीय सत्ता के निर्वाचन का कार्य १९४९ के जनता के प्रतिनिधित्व से सम्बधित कानून के प्रावधानो के अनुसार ही किया जाता था। इसके अनुसार प्रत्येक उस व्यक्ति को स्थानीय सरकार के चुनाव मे मत देने का अधिकार है जो कि २१ वर्ष या इससे अधिक की आयु वाला है, ब्रिटेन की प्रजा है अथवा आयरिश नागरिक है तथा जिस क्षेत्र का चुनाव हो रहा है उसके लिए वह एक मतदाता के रूप में पंजीकृत हो चुका है।

---

*"The organs of English Local Government are, with one exception, elected councils."

—*J. H. Warren*, The English Local Government System, George Allen and Unwin Ltd. London, P. 85

स्थानीय सरकार के चुनाव में प्रत्येक उस व्यक्ति को मतदाता बना लिया जाता है जो कि एक निश्चित समय तक उस क्षेत्र में रहा हो अथवा क्षेत्र में वह जमीन का स्वामी हो अथवा उसने उसे किराये पर ही ले रखा हो तथा उसका वार्षिक मूल्य १० पौण्ड प्रति वर्ष से कम न हो। एक क्षेत्र में किसी भी व्यक्ति को एक से अधिक बार पंजीकृत नहीं किया जा सकता। किन्तु यदि एक व्यक्ति एक स्थान पर निवास स्थान सम्बंधी योग्यतायें रखता है और दूसरे स्थान पर इसके अतिरिक्त योग्यतायें रखता है तो उसको दोनों ही स्थानों पर पंजीकृत किया जा सकता है। सभी मतदाताओं के नाम उस रजिस्टर पर लाने होते हैं जो कि पंजीकरण अधिकारी द्वारा साल में एक बार तैयार किये जाते हैं। इनकी नियुक्ति अधिनियम के आधीन ही होती है। यह कार्य प्राय: सत्ता के लिपिक ही करते है।

स्थानीय सरकार की परिषदों में पार्षद के उम्मीदवार के रूप में वह व्यक्ति खड़ा हो सकता है जो कि ब्रिटिश राष्ट्रीयता प्राप्त हो एवं २१ वर्ष या इससे ऊपर की उम्र का हो तथा या तो वह उस क्षेत्र के मतदाता रजिस्टर में पंजीकृत हो जहाँ कि वह उम्मीदवार होना चाहता है अथवा चुनाव से १२ माह पूर्व से ही वह लगातार उस क्षेत्र में रह रहा हो, पेरिस परिषदों से सम्बद्ध तीन मील की सीमा में रह रहा हो अथवा स्वयं की या किराये की जमीन रखता हो। किसी भी व्यक्ति को उस स्थानीय सत्ता के लिए नहीं चुना जा सकता जिसका कि वह कर्मचारी है। इसके अतिरिक्त अनेक कानूनी प्रतिबंध भी हैं जो कि यह व्यवस्था करते हैं कि अयोग्य व्यक्ति चुनाव के लिए प्रत्याशी ही न बन सकें। उदाहरण के लिए दिवालिया, अवैधानिक या भ्रष्ट चुनाव प्रक्रिया अपनाने का दोषी पांच वर्ष पूर्व तक तीन माह की सजा पाया हुआ आदि व्यक्ति चुनाव लड़ने का अधिकार नहीं रखते।

शहरी क्षेत्रों में अधिकांश उम्मीदवार किसी भी राष्ट्रीय राजनैतिक दल के प्रतिनिधि के रूप में खड़े होते है, कुछ लोग उन संस्थाओं के सदस्यों के रूप में खड़े होते हैं जो कि किसी स्थानीय हित का प्रतिनिधित्व करते हैं। कुछ सदस्य स्वतन्त्र रूप से भी खड़े होते हैं। प्रत्येक उम्मीदवार को दो मत-दाताओं द्वारा नामजद किया जाता है, एक उसका प्रस्ताव करता है और दूसरा उसका समर्थन करता है। देहाती जिला परिषदों एवं पेरिस परिषदों के चुनाव को छोड़ कर अन्य परिषदों के चुनाव में क्षेत्र के आठ अन्य मत-दाताओं को भी स्वीकृति देनी होती है। यदि उम्मीदवारों की संख्या रिक्त स्थानों की संख्या से ज्यादा है तो मतदान द्वारा चयन किया जाता है।

स्थानीय सरकार के चुनावों में उम्मीदवार को कुछ जमा नहीं कराना पड़ता। वह अपने चुनाव प्रचार में २५ पौण्ड से अधिक खर्च नहीं कर सकता। यदि मतदाताओं की संख्या पांच सौ से अधिक है तो उम्मीदवार को २ डालर अधिक व्यय करने का और अधिकार प्राप्त हो जाता है। चुनाव सम्बन्धी व्यय का पूरा हिसाब चुनाव लिपिक के सम्मुख रखना होता है। परिणाम घोषित होने के ३५ दिन के भीतर-भीतर यह करना होता है।

मतदान गुप्त मत-पत्र द्वारा किया जाता है। मतदान सम्बन्धित रिटर्निंग अधिकारी द्वारा मतदान केन्द्रों पर प्रबन्धित किया जाता है। यह

कार्य एक अध्यक्ष की देखरेख में होता है जो कि इसी कार्य के लिए नियुक्त किया जाता है। काउन्टी परिषद के सदस्यों के चुनाव के लिए रिटर्निङ्ग अधिकारी का कार्य इस पद पर काउन्टी परिषद द्वारा नियुक्त अधिकारी द्वारा किया जाता है। मतदाता व्यक्ति स्वयं ही आकर मतदान करते हैं यद्यपि यह व्यवस्था की गई है कि कर्मचारी मतदाता, विशेषकर सशस्त्र सेनाओं के सदस्य, समुद्रपार क्राउन द्वारा नियुक्त सेवक तथा उनकी पत्नियाँ, आदि यदि साथ ही रह रही हों तो प्रोक्सी द्वारा मतदान कर सकते हैं। यदि कोई मतदाता अपनी बीमारी के कारण अथवा अपने कार्य की प्रकृति के कारण स्वयं आ सकने में असमर्थ हो तो वह डाक द्वारा भी मतदान कर सकता है। प्रत्येक मतदाता को अपने क्षेत्र के चुनाव में प्रत्येक सीट के लिए एक मत देने का अधिकार होता है। प्रत्येक उम्मीदवार को वह केवल एक ही मत दे सकता है।

स्थानीय सत्ताओं का चुनाव करते समय पूरे क्षेत्र को कई भागों में बाँट दिया जाता है। स्थानीय सरकार का जब चुनाव किया जाता है तो प्रायः प्रत्येक बारो को वार्डों में विभाजित कर दिया जाता है। लन्दन बारो को छोड़ कर अन्य सभी बारोज के प्रत्येक वार्ड से तीन पार्षद लिए जाते हैं। ये तीन से अधिक भी हो सकते हैं। शहरी जिले को चुनाव के लिए वार्डों में विभाजित किया जाये अथवा उसको एक इकाई के रूप में ही छोड़ दिया जाये इस बात का निर्णय काउन्टी परिषद द्वारा किया जायेगा जो कि इस सम्बन्ध में अन्तिम सत्ता होती है। देहाती जिलों में प्रत्येक पेरिश या पेरिशों के समूहों के लिए अलग से चुनाव किये जाते हैं। प्रत्येक पेरिश के लिए देहाती जिला पार्षदों की संख्या को काउन्टी परिषदें द्वारा निश्चित किया जा सकता है या बदला जा सकता है। वह पेरिशों को एक साथ भी मिला सकती है अथवा उनको वार्डों में भी बाँट सकती है। अधिकांश पेरिश परिषदें पूर्ण रूप में निर्वाचित की जाती हैं किन्तु वार्ड भी बनाये जा सकते हैं और कभी कभी बना भी दिये जाते हैं। काउन्टी परिषद के चुनावों में वार्ड नहीं बनाये जाते। इन चुनावों को एक-सदस्यीय मतदाता सम्भागों के आधार पर किया जाता है तथा ये गृह सचिव द्वारा नियमित किये जाते हैं। विस्तृत लन्दन परिषद (Greater London Council) के चुनाव जब सर्व प्रथम हुए थे तो प्रत्येक लन्दन बारो को चुनाव क्षेत्र बना दिया गया जिससे कि दो, तीन या चार पार्षद चुने जाते थे। जब लन्दन महान् (Greater London) में संसदीय मतदान क्षेत्रों का परिवर्तन किया गया तो ये ही उसके मतदान क्षेत्र बन गये। प्रत्येक क्षेत्र से महान लन्दन परिषद के लिए एक पार्षद लिया जाता था।

मतदान के लिए एक दिन निश्चित कर दिया जाता है। मतदाता, मतदान केन्द्र पर जाकर अपना मत डालते हैं। जब मतदान बन्द हो जाता है तो मत पेटियों को वहाँ ले जाया जाता है जहाँ पर कि इनको गिनना हो। यह स्थान प्राय परिषद कार्यालय ही होता है। ज्यों ही मतदान समाप्त होता है उसके बाद जितना जल्दी से जल्दी सम्भव हो सके मतों को गिना जाता है। रिटर्निंग अधिकारी, उम्मीदवार एवं इनके प्रतिनिधि की उप-

स्थिति में मत पेटियों को खोलता है। ये मतगणना प्रतिनिधि, उम्मीदवारों द्वारा नियुक्त किये जाते है तथा उनका मुख्य कार्य यह देखना होता है कि जो लोग मतगणना कर रहे हैं वे यह कार्य ईमानदारी केसाथ करें। यदि किसी मत पत्र पर मत साफ रूप से तथा बिना गलती किये हुए नहीं डाला गया है तो उसे रिटर्निंग अधिकारी के निर्णय के लिए रख लिया जाता है। वही इस बात को तय करता है कि मतदाता किस को मत देना चाहता होगा। जब पूरी मतगणना करली जाती है तो रिटर्निंग अधिकारी द्वारा मतदान का परिणाम घोषित कर दिया जाता है।

आम चुनावों एवं स्थानीय चुनावों का यदि तुलनात्मक अध्ययन किया जाये तो ज्ञात होता है कि आम चुनावों में मतदान प्रायः ८०% रहता है जब कि स्थानीय चुनावों में यह मात्रा बहुत थोड़ी ही रहती है। उत्तरी क्षेत्रों में भी जो कि अधिक मतदान वाले क्षेत्र माने जाते हैं, मतदान की मात्रा कठिनाई से ही ५०% तक पहुँच पाती है। काउन्टी में मतदान का औसत ३०% रहता है। सामान्य रूप में ग्रामीण तथा शहरी जिलों की जनता मतदान में अधिक रुचि लेती है। यह उदासीनता केवल मतदाताओं तक ही सीमित नहीं रहती वरन् यह निर्वाचन के उम्मीदवारों पर भी प्रभाव डालती है। अनेक सीटें ऐसी बन जाती हैं जिनके लिए चुनाव ही नहीं लड़ा जाता। स्थानीय राजनैतिक दलों की एक मुख्य समस्या यह होती है कि वे लोगों को चुनाव लड़ने को किस प्रकार तैयार करें। स्थानीय जनता में मतदान के प्रति रुचि के अभाव का एक कारण तो यह बताया जाता है कि स्थानीय जनता परिषदों द्वारा किये जाने वाले कार्यों एवं सम्पन्न की जाने वाली सेवाओं से पूरी तरह सन्तुष्ट रहती है अतः वह मतदान करने की आवश्यकता ही महसूस नहीं करतीकिन्तु यह तर्क अधिक प्रमाणपूर्ण प्रतीत नहीं होता। यद्यपि इसमें भी सत्यता का कुछ अंश है किन्तु इतना नहीं जितना कि कभी-कभी सोच लिया जाता है। इस उदासीनता का एक कारण यह हो सकता है कि स्थानीय निकायों का कार्य कुछ ऐसी प्रकृति का होता है जिसमें कि स्थानीय अभिरुचि जागृत ही न हो सके। स्थानीय सरकार का कार्य कभी-कभी तो सप्ताह में एक बार कूड़ा-करकट के स्थानों को साफ कर देने मात्र से ही लगाया जाता है। ऐसे अवसर बहुत ही कम आते हैं जब कि स्थानीय सरकार को स्थानीय जनता के लिए जीवन का एक नया तरीका देने वाला माना जाये। इस सम्बन्ध में स्थानीय सत्तायें भी कम दोष की पात्र नहीं हैं। केवल कुछ ही सत्तायें जन-सम्पर्क के कार्य में रुचि लेती हैं। यदि कोई नागरिक गलती से या अवसरवश अपनी स्थानीय परिषद की किसी बैठक में शामिल भी हो जावे तो वह उसमें दुबारा जाने का प्रोत्साहन बहुत कम पा सकेगा।

वर्तमान प्रवृत्ति के अनुसार छोटी स्थानीय सत्ता के कार्य बड़ी स्थानीय सत्ता को और बड़ी स्थानीय सत्ता के कार्य स्थानीय सरकार के बाहर की सत्ताओं को सौंप दिये जाते हैं। इस प्रवृत्ति ने स्थानीय जनता पर कुछ अच्छा प्रभाव नहीं डाला। वह यह समझने लगी है कि स्थानीय सरकार की सत्तायें सम्भवतः महत्व ही नहीं रखती वरन् उनके पतन की प्रक्रिया का और अर्थ

ही क्या होता है। स्थानीय सरकार के कार्यों की ओर प्रेस द्वारा भी पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता। संसद के स्थानीय सदस्य की क्रियायें प्रायः खबरों का विषय होती हैं तथा लोगों को उसकी स्थानीय स्थिति के बारे में गलत बताया जाता है। यही कारण है कि स्थानीय जनता अपनी उन समस्याओं के बारे में भी संसद सदस्य को ही लिखती है जो कि उसके अधिकार क्षेत्र में नहीं आती। संसद सदस्य को अपने निर्वाचन क्षेत्र से कई एक पत्र गृह निर्माण के सम्बन्ध में प्राप्त होते हैं। यह उसका कार्य नहीं है किन्तु यह स्थानीय सत्ता का कार्य है तथा स्थानीय पार्षद द्वारा सम्पन्न किया जा सकता है जिसे कि इस प्रकार अवहेलना का पात्र बनाया जाता है। इस समस्या को सुलझाने के लिए एक सुझाव यह प्रस्तुत किया जाता है कि परिषदें अपने प्रचार एवं प्रकाशन के साधनों का विकास करें तथा जनता को स्थानीय एवं केन्द्रीय सरकार के कार्यों का प्रशिक्षण प्रदान किया जावे।

स्थानीय सत्ताओं के पदाधिकारी व्यक्तित्व
[The Official Personalities of Local Authorities]

स्थानीय सत्ताओं का कार्य जिन पदाधिकारियों के द्वारा सम्पन्न किया जाता है उनका व्यक्तित्व भी अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। उनकी योग्यता एवं कौशल पर ही इन सत्ताओं का सफल संचालन निर्भर करता है। ये अधिकारी निर्वाचित सदस्य भी हो सकते हैं तथा उच्च सत्ताओं अथवा स्वयं स्थानीय सत्ताओं द्वारा नियुक्त उच्च कार्यकर्ता भी हो सकते हैं। विभिन्न स्थानीय सत्ताओं में निर्वाचित एवं अनिर्वाचित अनेक प्रकार के सदस्य होते हैं। इनमें मुख्य रूप से उल्लेखनीय पार्षद, एल्डरमेन, मेयर, सभापति तथा अन्य कानूनी अधिकारी हैं।

स्थानीय सरकार की सत्ताओं में मुख्य 'परिषद' को माना जा सकता है जिसके द्वारा प्रशासनिक, कार्यपालिका सम्बन्धी एवं व्यवस्थापन सम्बन्धी अधिकांश कार्य सम्पन्न किये जाते हैं। स्थानीय स्तर पर अपने क्षेत्र में यही सर्वोच्च सत्ता होती है। परिषदों द्वारा विभिन्न समितियाँ नियुक्त की जाती हैं। ब्रिटिश स्थानीय सरकार में इन स्थानीय परिषदों की समितियों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है तथा इनके द्वारा परिषद के प्रमुख दायित्वों को सम्पन्न किया जाता है। परिषदों को अपने कार्य करने के लिए संगठन बनाने की पूरी-पूरी स्वतन्त्रता रहती है। इसके लिए वे समितियों के अतिरिक्त अन्य अभिकरणों एवं संस्थाओं की नियुक्ति भी करती हैं। यहां एक बात उल्लेखनीय है वह यह कि ब्रिटिश स्थानीय सरकार की व्यवस्था में अलग से कोई कार्यपालिका निकाय नहीं होता जिसकी अपनी पृथक शक्तियां हों तथा जो कि परिषद में से ही या उसके बाहर से नियुक्त होकर उसके साथ-साथ कार्य करे। यहां कार्यपालिका सम्बन्धी दायित्व जिस निकाय द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं उसके लिए अन्तिम रूप से परिषद ही उत्तरदायी होती है।

स्थानीय सत्ता को अपना कार्य सम्पन्न करने के लिए तथा सम्पत्ति का उचित रूप से प्रबन्ध करने के लिए एक निगम (Corporation) का रूप दे दिया जाता है। इस प्रकार यह एक व्यक्ति का व्यक्तित्व धारण कर

लेती है जिसके जीवन में निरन्तरता रहती है एकरूपता रहती है तथा जिसके निर्णायक सेवीवर्ग में परिवर्तन करना जरूरी नहीं होता। यह एक व्यक्ति के रूप में सम्पत्ति का स्वामित्व करती है। यह समझौते या ठेके कर सकती है तथा अन्य ऐसे कार्य कर सकती है जो कि कानून द्वारा आवश्यक समझे जायें। निगम के रूप में इसे एक वैधानिक व्यक्तित्व प्राप्त हो जाता है। बाराज की स्थिति ऐतिहासिक दृष्टि से कुछ भिन्न है। शाही चार्टर द्वारा जब बारो की रचना की जाती है तो मेयर, एल्डरमैन, नागरिको या बर्गसीज (Burgesses) आदि को नामांकित किया जाता है और वे मिल कर निगम की रचना करते हैं। कानून द्वारा यह व्यवस्था की जाती है कि नगर निगमो को जो शक्तियां सौंपी गयी हैं उनका प्रयोग बारो की परिषद द्वारा किया जायेगा, जो कि प्रत्यक्ष रूप में इसे सौंपी गई शक्तियो का भी प्रयोग करेगी। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि स्थानीय सत्ता का रूप चाहे कुछ भी हो इसकी मुख्य शक्तियां परिषद में निहित रहती हैं। यह इन कानूनी अधिकारो, शक्तियो एवं कर्तव्यो का निर्वाह करती है। स्थानीय सत्ताएं निगम होती हैं इसका अर्थ यह है कि निगमो से सम्बन्धित प्रत्येक कानून स्थानीय सत्ताओं पर लागू होगा, जब तक कि इससे भिन्न कोई अन्य व्यवस्था न करदी जाय। इस प्रकार से स्थानीय सत्ताओं पर निगमो की सभी सुपरिचित विशेषताएं लागू होंगी हैं अर्थात् ये स्थायी होती हैं तथा अनिश्चितकाल तक कार्य करती रहती हैं। एक पुरानी कहावत के अनुसार न तो उनके कोई शरीर होता है जिसे नष्ट किया जा सके और न ही आत्मा होती है जिसे बुरा-भला कहा जा सके। वे अपनी प्रकृति के अनुसार वे कार्य नहीं कर सकती जो कि एक भौतिक शरीर के लिए आवश्यक समझे जाते हैं अर्थात् न वे बन्दी बनायी जा सकती हैं, न उन्हें फांसी चढ़ाई जा सकती है और न ही इस प्रकार के अन्य कार्य। इनका प्रतीक एक सामान्य मोहर होती है जो कि निगम के अत्यधिक औपचारिक अधिनियमों को सत्तायुक्त करने के लिए काम में ली जाती है। स्थानीय सत्ताओं के सम्बन्ध में जो कानून है उसका क्षेत्र इतना व्यापक है कि उसके द्वारा अन्य निगमो से सम्बन्धित कानूनों को अपनाने के लिए बहुत कम स्थान छोड़ा जाता है। स्थानीय सत्ताओं से सम्बन्धित व्यवस्थापन इतना अधिक हो सका है कि प्रायः प्रत्येक बात को कानून द्वारा ही स्पष्ट कर दिया गया है और जब कभी हम इनकी शक्तियो, कर्तव्यो एवं अधिकारो के बारे में जानना चाहें तो हमको इन कानूनों का ही अध्ययन करना होगा।

पारषद [Councillors]—परिषदो की बनावट एवं संगठन, स्थानीय सत्ता के प्रकार के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है किन्तु उन सभी में एक सामान्य बात यह होती है कि वे तीन वर्ष के लिए चुने गये पारषदो की निकाय होती हैं। पारषदो की सबसे महत्वपूर्ण योग्यता यह मानी जाती है कि इस पद को प्राप्त करने वाला व्यक्ति क्षेत्र का स्थानीय निवासी हो। एक सामान्य प्रावधान के अनुसार वह पारषद के रूप में उम्मीदवार होने का तभी अधिकारी माना जायेगा जब कि वह उस क्षेत्र का मतदाता हो। एक बारो के किसी भी वार्ड का मतदाता उसी बारो के किसी अन्य वार्ड से

उम्मीदवार बन सकता है। यह भी हो सकता है कि वह एक निर्वाचन सम्भाग में रहता हो और दूसरे निर्वाचन सम्भाग में जाकर चुनाव लड़े किन्तु यह नहीं हो सकता कि वह एक काउन्टी को छोड़ कर दूसरी काउन्टी में चला जाये। इंगलैण्ड के कानून के अनुसार कोई भी व्यक्ति उस स्थानीय सत्ता का सदस्य हो सकता है जिसमें कि वह सम्पत्ति का स्वामित्व करता हो अथवा उस क्षेत्र में वह बारह महीने से रह रहा है। निवास के कारण से अपना नाम स्थानीय मत-दाताओं की सूची में लिखा लेना चाहिये। काउन्टीज, रजधानी वारोज और देहाती पेरिसों में पारषद हर तीसरे वर्ष अपने पद से हट जाते हैं, किन्तु बारोज में ये पारषद हर तीसरे वर्ष एक साथ नहीं हटते वरन् इनमें से एक तिहाई प्रत्येक वर्ष हट जाते हैं और इस प्रकार मतदान तीसरे वर्ष न हो कर प्रतिवर्ष किया जाता है।

शहरी एवं देहाती जिलों में भी व्यवस्था बारोज जैसी ही होती है किन्तु वे इस व्यवस्था को अपने दो तिहाई बहुमत से तथा काउन्टी परिषद की स्वीकृति से बदल सकते हैं। इन दोनों ही व्यवस्थाओं के अपने-अपने लाभ हैं। जब निर्वाचन प्रतिवर्ष किया जाता है तो स्थानीय सत्ता बदलती हुई नयी आवश्यकताओं के अनुरूप अपने आपको ढाल पाती है। इसके अतिरिक्त इसमें प्रतिवर्ष लगातार कुछ अनुभवी पारषदों का एक केन्द्र बन जाता है किन्तु यह व्यवस्था कभी कभी नुकसानदायक भी प्रतीत होती है क्योंकि इसके द्वारा परिषद के कार्यों में देर होने का भय रहता है। काउन्टीज की परिषदों के सम्बन्ध में कानून ने कोई विकल्प नहीं छोड़ा है। वहां यह सम्भव भी नहीं है कि प्रतिवर्ष चुनाव कराये जाएं। बारोज में वार्ड के रूप में चुनाव सम्बन्धी विभाजन किया जाता है। यह व्यवस्था की जाती है कि एक वार्ड में से लिये जाने वाले तीन पारषदों में से प्रतिवर्ष एक को सेवा निवृत्त कर दिया जाय, किन्तु काउन्टी परिषद में ऐसा नहीं किया जा सकता क्योंकि वहां चुनाव क्षेत्र को इतना बड़ा रखा जाता है कि यदि एक क्षेत्र से तीन सदस्य लिये गये तो काउन्टी परिषद की सख्या प्रबन्ध किये जाने योग्य न रहेगी। विभिन्न स्थानीय सत्ताओं के कार्य का वर्ष समाप्त होने की तिथियां भी अलग अलग हैं।

१९४९ से पूर्व एक बारो का संवैधानिक वर्ष १ नवम्बर से प्रारम्भ होता था तथा निर्वाचन १ नवम्बर को किये जाते थे। जिलों का संवैधानिक वर्ष १५ अप्रेल से और काउन्टीज का १६ मार्च से प्रारम्भ होता है किन्तु १९४८ के जन प्रतिनिधित्व अधिनियम ने सभी सत्ताओं के लिए चुनाव तथा वार्षिक बैठकों के हेतु एक ही मौसम निर्धारित कर दिया है। पेरिस परिषद का चुनाव हाथ उठाकर किया जाता था। पेरिस की वार्षिक बैठक में या तो इस तरीके से अथवा मतदान द्वारा निर्वाचन किया जाता था किन्तु १९४८ के जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम ने इस व्यवस्था को समाप्त कर दिया और अब सभी स्थानीय सत्ताओं के निर्वाचन गुप्त मत पत्र द्वारा किये जाते हैं।

यद्यपि पारषदों की योग्यताएं एवं अयोग्यताएं कानून तथा व्यवहार द्वारा निर्धारित करदी गई हैं किन्तु फिर भी ये इतना महत्व नहीं रखतीं। मुख्य तथ्य यह है कि उम्मीदवार का मतदाताओं में कैसा सम्मान है,

वे परिषद और इसकी समितियों में क्या कार्य करेंगे तथा उन्हें उनके श्रम के लिए भुगतान या मुआवजा दिया जाय अथवा नहीं, आदि। पार्षदों के बारे में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे प्रतिनिधि होते हैं, इसका अर्थ यह है कि वे डेलीगेट (Deligate) अथवा एजेन्ट (Agent) नहीं होते। मि० जैकसन (Jackson) के कथनानुसार स्थानीय सरकार के पारषद किसी भी निर्वाचित सदस्यों वाले निकाय की भांति प्रतिनिधि प्रजातंत्र के क्षेत्र में आते है। जब वह एक परिषद की बैठक में जाता है तो वह मतदाताओं को कोई सूचना या निर्देश दे कर नहीं जाता अथवा उस बहुमत से पूछ कर नहीं जाता जिन्होंने कि उसको सफल बनाया है। यह सच है कि चुनाव लड़ते समय व व्यक्तिगत रूप से अथवा अपने राजनैतिक दल की ओर से अनेक वायदे करता है। यदि निर्वाचन से पूर्व किये गये वायदों को एक सदस्य पूरा करता है तो यह उसकी सज्जनता मानी जायेगी किन्तु ऐसा करने के लिए वह बाध्य नहीं है। सिद्धान्त के अनुसार प्रतिनिधियों को उनके स्वयं के निर्णयों का प्रयोग करने के लिए चुना जाता है तथा वे सभी परिस्थितियों में अपना अधिक से अधिक योगदान करते है। यदि परिस्थितियां समान रहें तो प्रतिनिधि को वे ही कार्य करने चाहिए जिनको पूरा करने के लिए उसने चुनाव से पूर्व वायदा किया है। कई बार ऐसा हो जाता है कि युद्ध की परिस्थितियां उत्पन्न हो जाने पर विकास सम्बन्धी सभी योजनाओं को रोकना पड़ता है और सारी शक्तियां, हथियार एवं अन्य युद्ध सामग्रियों के निर्माण में लगानी होती है। किन्तु इस सबका अर्थ यह नहीं है कि प्रतिनिधियों का मतदाताओं के प्रति कोई कर्तव्य ही नहीं होता। वे सैद्धान्तिक रूप से सम्पूर्ण समाज के प्रति उत्तरदायी है तथा उन्हें अपने किये हुए वायदों पर टिकना होता है। यदि मतदाता उस तरीके को पसन्द न करे जिसके द्वारा कि एक उम्मीदवार द्वारा कार्य किया जा रहा है तो वे अगले चुनाव तक प्रतीक्षा कर सकते हैं और चुनाव आने पर उसके स्थान पर वे किसी अन्य को चुन सकते है। मतदाताओं को अपना उम्मीदवार वापस बुलाने का अधिकार नहीं होता।

इस प्रकार प्रत्येक प्रतिनिधि एक निर्वाचित सदस्य होता है और अपने निर्वाचन क्षेत्र के प्रत्येक व्यक्ति का वह प्रतिनिधित्व करता है तथा उनके प्रति उसके कुछ कर्तव्य होते हैं। इसका एक स्वाभाविक परिणाम यह है कि उम्मीदवार को अपने मतदाताओं से समय-समय पर पूछताछ करते रहना चाहिये, उनकी समस्याओं के बारे में जानकारी रखनी चाहिये और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें पूरी सहायता देनी चाहिये। वह प्रतिनिधि अपने पूरे क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है, इसलिए उसे उन लोगों की आवश्यकताओं का भी ध्यान रखना होता है जिन्होंने कि उसे मत नहीं दिया था।

एक पारषद को वेतन दिया जाय अथवा नहीं, इस प्रश्न का निर्णय उसके कार्यों के आधार पर ही किया जा सकता है। वैसे इङ्गलैण्ड की परम्परा के अनुसार पारषद को उसकी सेवाओं के लिए कोई वेतन नहीं दिया जाना चाहिये किन्तु अब इस सम्बन्ध में कुछ परिवर्तन हो गये हैं। ये परि-

वर्तन कैसे आये, इसका एक लम्बा इतिहास है। शताब्दियों पर्व स्थानीय सरकार की महत्वपूर्ण इकाई पेरिस थी। अपने जन्म के समय यह एक धार्मिक इकाई थी किन्तु कालान्तर मे पेरिस नागरिक प्रशासन की एक इकाई बन गई तथा इसने अनेक कानूनी कर्तव्य सम्भाल लिये; उदाहरण के लिए सडकों की रचना एवं गरीबो को राहत देना आदि कार्य। ये कर्तव्य पेरिस के अधिकारियो द्वारा सम्पन्न किये जाते थे। जो व्यक्ति इन पदो पर कार्य करते थे उनको किसी प्रकार का वेतन नही दिया जाता था। इन पदों के लिए जो व्यक्ति निर्वाचित किये जाते थे वे एक वर्ष तक कार्य करते थे। क्रमानुसार इन पदो पर क्षेत्र के सम्पन्न एवं उत्तरदायी निवासियों को रखा जाता था। जहा कही कार्य करने की आवश्यकता होती थी वहा सामूहिक श्रम द्वारा काम चलाया जाता था। पेरिस का प्रत्येक निवासी अपनी सेवाएं प्रदान करने के लिए कानूनी रूप से बाध्य था। पेरिस की इस व्यवस्था के ऊपर शाति के न्यायाधीशो की सस्था होती थी जिसमे क्राउन द्वारा नियुक्त योग्य व्यक्ति होते थे। उनके कार्य प्रशासकीय एवं न्यायिक, सयुक्त प्रकृति के होते थे। उन्हे अपनी मुख्य बैठको मे उपस्थित होने के लिए कुछ धन देने की व्यवस्था थी किन्तु इसे प्रायः कोई लेता नही था और वे स्वेच्छापूर्वक कार्य करते थे। इस व्यवस्था मे यदि किसी सडक को बनवाना है तो इस काम के लिए नियुक्त निरीक्षक समय निश्चित कर देगा और स्थानीय निवासी आकर इस कार्य को सम्पन्न करेंगे। काउन्टी के उस भाग का शाति का न्यायाधीश इस बात की जाच रखेगा कि कार्य भली प्रकार सम्पन्न किया जाय; यदि ऐसा नही किया जा रहा है तो वह अपने साथी न्यायाधीशो से शिकायत कर सकता है। कार्य को सम्पन्न कराने के लिए उन्हे यह शक्ति प्राप्त थी कि कर्तव्यो की अवहेलना करने वाली स्थानीय जनता पर वे जुर्माना करदें।

कार्य कराने की उक्त व्यवस्था देहाती इलाको मे उस समय तक चलती रही जब तक कि वे समय के परिवर्तन के साथ-साथ नवीन विचारो से प्रभावित नही हुए। किन्तु औद्योगीकरण के साथ साथ इङ्गलैण्ड मे लगातार शहरों का विकास होने लगा और इसके साथ ही अवैतनिक बाध्यकारी सेवा तथा सामाजिक श्रम की व्यवस्था अनुपयुक्त बन गई। शहरो मे जहा पर कि फैक्ट्रियो मे काम करने वाले लोग रहते हैं और ऐसी परिस्थितियो वाले अन्य कर्मचारी रहते हैं वहाँ सामाजिक श्रम सम्भव नही होता। इसके अतिरिक्त कार्य का क्षेत्र इतना बढ गया है कि उसे कुशल रूप से संपादित करने के लिए सवैतनिक एवं उचित योग्यता प्राप्त अधिकारियों का होना परमावश्यक है। वर्तमान समाज को अपनी सुविधाओं के लिए एवं बिमारियो से बचने के लिए जिन सेवाओ की आवश्यकता है वे सेवाए तभी प्रदान की जा सकती हैं जब कि नागरिक अभियन्ताओ एवं मजदूरो को लगातार सेवा में व्यस्त रखा जाय। यदि अवैतनिक कार्यकर्ताओं के स्थान पर सवैतनिक कार्यकर्ता रखे जायेंगे तो यह जरूरी है कि उन पर नियन्त्रण रखने के तरीको को सशक्त बनाया जाय।

वर्तमान समय मे यह माग काफी बढती जा रही है कि पार्षदो को वेतन दिया जाना चाहिये। इसके समर्थन मे दो प्रकार के तर्क प्रस्तुत किये जाते है प्रथम यह कि जब तक किसी प्रकार का पेमेन्ट (Payment) नही किया जायेगा तब तक कोई भी व्यक्ति पार्षद नही बनना चाहेगा क्योकि परिषद का सदस्य बनने के बाद व्यक्ति को आने जाने मे काफी खर्चा करना पडेगा और उसे बैठको मे उपस्थित होने के लिए अपना समय भी लगाना होगा। एक दूसरा तर्क यह है कि हमे यह आशा नही करनी चाहिए कि कोई व्यक्ति बिना किसी मतलब के कोई कार्य करेगा। यह तर्क किया जाता है कि सार्वजनिक कार्य भी एक प्रकार से कार्य ही है और यदि इस कार्य को उचित रूप से सम्पन्न कराना है तो इसके लिए उचित दाम दिये जाने चाहिऐ। प्रोफेसर लास्की का मत है कि स्थानीय सरकार की सेवाओ को भी पूरे समय की तथा सवैतनिक (Full Time and Paid) बना दिया जाये। एक सदस्य के सम्मुख जो विषय निर्णय के लिए आते है उन पर विचार करने के लिए पर्याप्त बुद्धि एव समय लगाने की आवश्यकता है। अन्य कार्यो मे उलझा हुआ व्यक्ति यह सब नही कर पायेगा। यदि स्थानीय सरकार के कार्य को अवैतनिक बना दिया गया तो धनवान वर्ग के लोग इन सस्थाओ मे आजायेंगे और उनका कार्य लोगो की आवश्यकताओ से प्रभावित नही होगा वरन् वह स्थानीय सरकार के कार्य को अधिकाधिक सस्ता बनाने के लिए सचालित किया जायेगा। लास्की के शब्दो मे वे लोग योग्यतापूर्ण नाली व्यवस्था प्रदान कर सकते हैं किन्तु अपर्याप्त शिक्षा देगें, अच्छी सड़कें दे सकते है किन्तु पुस्तकालय नही देगें।† वे उन मनोवैज्ञानिक तत्वो को महत्व नही देंगे जिनसे कि गरीबो का मस्तिष्क प्रभावित होता है।

पार्षद को कुछ दिया जाय अथवा नही दिया जाय, इस प्रश्न पर विचार करने से पूर्व उन योग्यताओ को देखना उपयुक्त रहेगा जो कि परिषद के सदस्यों मे होनी चाहिए। एक पार्षद से यह आशा नही की जाती है कि वह उन विषयो मे विशेषज्ञ होगा जिनसे कि परिषद सम्बन्ध रखती है। विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान एव प्रशासन का अनुभव उन सेवाओ द्वारा प्रदान किया जाता है जो कि वैतनिक स्टाफ मे आती हैं। निर्वाचित सदस्य का मुख्य उद्देश्य जनता का प्रतिनिधित्व करना होता है जो जनमत का द्योतक है। उसका दृष्टिकोण एक गैर-विशेषज्ञ का दृष्टिकोण होता है। वह यह देखता है कि किसी कार्य के प्रति साधारण जनता की प्रतिक्रिया क्या है, प्रशासक नहीं बल्कि प्रशासित लोग उन कार्यों के बारे मे क्या सोचते हैं? ये सवैतनिक स्टाफ के साथ मिलकर कार्य करते हैं ताकि कार्यों को भली प्रकार से सम्पन्न कर सकें।

एक बार पार्षद के उत्तरदायित्वो को सही रूप से निभाने के लिए किसी विशेष प्रकार की शिक्षा या प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती, एक अच्छे प्रतिनिधि के गुण जीवन के किसी भी क्षेत्र मे रहकर प्राप्त किए जा सकते

† "They will provide excellent drainage but in adequate education, good roads but poor libraries"

—*Harold J. Laski*, A Grammar of Politics, P. 416

हैं। जब हम परिषद के सदस्यों को उनके द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के लिए भुगतान करना चाहते हैं उस समय यह भी देखना होगा कि यह भुगतान किस आधार पर और कितना किया जाय। यदि प्रत्येक सदस्य को उसकी सेवाओं के लिए उतना धन दिया जाय जितना कि वह अपने व्यक्तिगत जीवन में प्राप्त करता है तो विभिन्न प्रकार के पार्षदों के आधार पर अनेक विभिन्नताएं हो जायेंगी और उस परिषद के पास में स्थानीय कोष पर्याप्त रहेगा जो कि पूरी तरह से रोजनदारी पाने वाले मजदूरों द्वारा गठित है। इस मान्यता को अपनाने पर एक ही कार्य के लिए दिये जाने वाले धन की मात्रा में अत्यंत परिवर्तन होगा। असल में वेतन की एक मापक दर निश्चित करना होगी किन्तु यह किस आधार पर तय की जाय। वेतन निश्चित करने का एक सामान्य तरीका यह होता है कि एक पद के लिए कम से कम वेतन निर्धारित किया जाय जो कि उस पद पर सही योग्यता वाले व्यक्तियों को आकर्षित कर सके। वेतन को निश्चित करने का यह तरीका भी कार्य नहीं करेगा क्योंकि ऐसा कोई निश्चित बाजार नहीं होता जहाँ कि ऐसी विशेष योग्यता प्राप्त व्यक्ति मिल सके।

एक व्यक्ति जो कि वास्तव में प्रथम श्रेणी का पार्षद है वह किसी अन्य परिषद का सदस्य होने के लिए प्रार्थना नहीं करेगा। क्योंकि यह एक ऐसी क्रिया है जो कि किसी व्यापार या व्यवसाय से भिन्न है। यदि परिषद के सदस्य का बैठक के अनुसार या मासिक अथवा वार्षिक रूप से वेतन निश्चित कर दिया जाये तो यह हो सकता है कि कुछ लोग पार्षद बनने के लिए आकर्षित हों, दूसरे लोग इसे साधारण वेतन और अन्य लोग इसे आवश्यकता से भी कम समझें। यदि इस प्रकार वेतन निश्चित कर दिया जाय तो पार्षद के पद पर वे आकर्षित हो पायेंगे जो कि बहुत कम वेतन पाने वाले मजदूर या कर्मचारी लोग होते हैं किन्तु मध्यम वर्ग के अथवा धनवान लोग इनकी तरफ आकर्षित नहीं हो पायेंगे। इस प्रकार पार्षद का पद एक ऐसा पद हो जायेगा जिसे पाने वाले लोग वे होंगे जो कि अपनी जीविका के साधनों की तलाश में है। उनमें विशेष योग्यताएं या प्रशिक्षण होगा अथवा नहीं होगा यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। चुनाव में जीतना उतना ही महत्वपूर्ण बन जायेगा जितना कि व्यवसाय पाना। जब कि चुनाव सिद्धान्तों के आधार पर लड़ा जाना चाहिए, चुनाव उम्मीदवार के व्यक्तिगत व्यवसाय का विषय बन जायेगा। वर्तमान में व्यवहार यह है कि एक पार्षद यात्रा, निवास एवं अन्य खर्च के लिए भत्ते के अलावा आधे दिन के लिए पन्द्रह शिलिंग और पूरे दिन के लिए तीस शिलिंग की माँग कर सकता है। किन्तु इसके लिए उसे यह प्रमाणित करना पड़ेगा कि सचमुच उसे इतने धन की हानि हुई है। यात्रा के सम्बन्ध में नियम है कि जहाँ सरकारी वाहन प्राप्त हो सके वहाँ उसका उपयोग किया जाय और जहाँ यह प्राप्त नहीं हो सके वहाँ स्वयं की कार का प्रयोग करके या भाड़े की गाड़ी का प्रयोग करके यात्रा व्यय लिया जाय।

कस्बे में रहकर की जाने वाली यात्राओं के लिए तथा अपने घर से तीन मील दूर की यात्राओं के लिए वह किसी प्रकार का यात्रा व्यय नहीं ले सकता। यद्यपि पार्षदों के अधिकतर व्यय का निर्वाह करने के लिए ये

विभिन्न प्रावधान बनाये गये हैं किन्तु कभी-कभी यह प्रश्न किया जाता है कि क्या ये योग्य व्यक्तियो को स्वेच्छापूर्ण सेवा प्रदान करने के लिए आकर्षित करते रहेंगे। इस संदेह का आधार यह विश्वास है कि अवैतनिक स्वेच्छापूर्ण सेवा एक विशेष वर्ग द्वारा ही सम्पन्न की जा सकती है। ऐसे लोगो मे उच्च मध्यम वर्ग के या उच्च वर्ग के व्यक्ति ही आ सकते हैं। इगलैण्ड में जो सामाजिक परिवर्तन हुए हैं उनके परिणामस्वरूप यह वर्ग बहुत घट चुका है और स्वेच्छापूर्ण कार्य का भार अपने ऊपर नही लेना चाहता। अवैतनिक शांति के न्यायाधीशो की व्यवस्था भी इसलिए खतरे मे पड गई थी क्योंकि स्वेच्छापूर्ण कार्य का समय समाप्त हो चुका था। उस विशेष वर्ग के समाप्त होने पर चरित्रवान एव ईमानदार व्यक्तियो का मिलना बहुत मुश्किल हो गया जो कि कुछ के लिए कार्य कर सकें।

एक पार्षद, के कार्य, परिषद के कार्यों के सगठन के आधार पर निर्धारित होते है। विशेष रूप से वे समिति व्यवस्था द्वारा सचालित किए जाते हैं। यहा एक बात उल्लेखनीय यह है कि विभिन्न स्थानीय सत्ताओं के पार्षदो को जो कार्य करने होते हैं उनके बीच पर्याप्त विभिन्नताएं रहती हैं। यह विभिन्नताए सम्बन्धित स्थानीय सत्ता के आकार एव प्रकार पर निर्भर करती हैं और आशिक रूप से उन समितियों की सख्या पर भी निर्भर करती हैं जिनमे कि पार्षदो को कार्य करना होता है। यदि वह किसी समिति का सभापति है तो उसके कार्य अन्य परिषदो से भिन्न होंगे।

एल्डरमैन [Aldermen]—कुछ स्थानीय सत्ताओ की सदस्यता का एक भाग एल्डरमैन होते हैं जो कि अप्रत्यक्ष रूप से चुने जाते हैं अर्थात इनको स्थानीय सत्ताओ के मतदाताओ द्वारा नही चुना जाता किन्तु उन लोगो द्वारा चुना जाता है जो कि मतदाताओ द्वारा परिषद मे भेजे जाते हैं अर्थात पार्षद लोग। इस व्यवस्था के समर्थन में अनेक तर्क दिये जाते हैं किन्तु कई प्रकार की आलोचनाएं भी दी जाती हैं।

प्रशासकीय काउन्टीज तथा काउन्टी एवं गैर काउन्टी बारोज की परिषदो का एक भाग अर्थात प्रत्येक तीन पार्षदो के साथ एक एल्डरमैन रहता है। इस प्रकार एक सात वार्ड वाले बारो मे इक्कीस पार्षद होंगे। इनके साथ ही सात एल्डरमैन भी होंगे। इस प्रकार परिषद की कुल संख्या अट्ठाईस हो जायेगी। राजधानी बारोज में एल्डरमैन का अनुपात, से होता है। एल्डरमैन का चुनाव यद्यपि पार्षदो द्वारा किया जाता है किन्तु यह जरूरी नही कि वे पार्षदों मे से ही चुने जायं। दूसरे शब्दो मे यह कहा जा सकता है कि वे सामान्य मतदाताओ के सामने चुनाव मे खडे नही होते बल्कि परिषद की विशेष बैठक मे चुने जाते हैं। वे अपने पद पर छ: वर्ष तक कार्य करते हैं अर्थात् परिषदों के सदस्यो से पूरे दुगने समय तक। यह व्यवस्था की जाती है कि उनमे से आधे प्रति तीसरे वर्ष सेवा निवृत्त हो जाय और इस प्रकार हर तीसरे वर्ष एल्डरमैनो का चुनाव किया जाय। जिस वर्ष एल्डरमैन का चुनाव करना हो उस वर्ष की वार्षिक बैठक मे यह चुनाव किया जाता है। पार्षद लिखित एवं हस्ताक्षरयुक्त मत देते हैं। उसमे उस व्यक्ति का नाम लिखा जाता है जिसे कि वे निर्वाचित देखना चाहते हैं। उनके मत को व्यक्तिगत रूप से बैठक

की कार्यवाहियों में अभिलिखित किया जाता है। परिषद के अधिकांश निर्णय उपस्थित एवं मतदान करने वालों के बहुमत से लिए जाते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि जहाँ कहीं भी नियुक्ति के सम्बन्ध में निर्णय लिया जाता है तथा कुछ नामों पर मत डाले जाते हैं तो केवल यही काफी नहीं है कि एक सदस्य सर्वाधिक मत प्राप्त करले किन्तु यह भी जरूरी है कि वह अन्य सभी को प्राप्त कुल वोटों से अधिक मत प्राप्त करे वरना उपस्थित एवं मतदान करने वालों का बहुमत उसे प्राप्त नहीं हो सकेगा। किन्तु कानून द्वारा यह व्यवस्था की गई है कि एल्डरमैन वह व्यक्ति होगा जो कि सर्वोच्च संख्या में मत प्राप्त कर सके। प्रायः एल्डरमैन पार्षदों में से भी नियुक्त कर लिये जाते हैं और इसके परिणामस्वरूप उपचुनाव कराना होता है। एल्डरमैन का चुनाव सदैव ही उन व्यक्तियों में से किया जाता है जो कि पार्षद बनने की योग्यता रखते हैं किन्तु कई कारणों से परिषदें प्रायः बाहर के व्यक्तियों का चुनाव नहीं करती।

एल्डरमैन को न व्यक्तिगत रूप से, न सामूहिक रूप से, न कानून के अनुसार और न ही व्यवहार में कोई विशेष अधिकार या शक्तियां प्राप्त नहीं होते। एक या दो अपवादों को छोड़ कर उनका कोई विशेष कर्त्तव्य भी नहीं होता। बारोज में वे पार्षदों के निर्वाचन के समय रिटर्निंग अधिकारी का कार्य करते हैं। यह केवल तभी होता है जब कि बारो को वार्डों में विभाजित कर दिया जाये तथा प्रत्येक वार्षिक बैठक में परिषद द्वारा आगामी वर्ष के चुनावों के लिए एक एल्डरमैन को इस अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जायेगा। रिटर्निंग अधिकारी का कार्य मतदान कराने से सम्बंधित नहीं होता वरन् यह मतगणना से सम्बन्धित होता है यह मतगणना के समय एक सभापति के रूप में कार्य करता है तथा संदिग्ध मतों के बारे में अपना मत देता है। यदि किसी को समान मत प्राप्त हुए हों तो भाग्य (lot) द्वारा वह निर्णय लेता है। किन्तु सभी में नहीं तो प्रायः अधिकांश काउन्टीज में ये कर्त्तव्य स्थानीय सत्ता के लिपिक पर छोड़ दिये जाते हैं। बारोज में यह परम्परागत व्यवहार है कि रिटर्निंग अधिकारी अपने अधिकारों का प्रयोग कस्बे के लिपिक की सलाह से करता है। इस प्रकार बारोज में भी इस अधिकारी के कर्त्तव्य अधिक व्यापक नहीं होते।

एल्डरमैन का पद कोई अधिक महत्व नहीं रखता किन्तु उसे सम्मान एवं शक्ति अवश्य प्राप्त रहती है। इस आधार पर कभी-कभी इसकी आलोचना भी की जाती है कि जब इस अधिकारी को कोई कार्य ही नहीं करना तो शक्ति किस लिए सौंपी जायें। इस पद पर जब चुनाव कराये जाते हैं तो स्थानीय सत्ताओं का वातावरण पर्याप्त कलुषित बन जाता है। इसके अप्रत्यक्ष निर्वाचनों को अप्रजातान्त्रिक कह कर भी आलोचना का पात्र बनाया जाता है। इस चुनाव के बाद स्थानीय सरकार में जो फिरके पड़ जाते हैं उनके परिणामस्वरूप आवश्यक कार्यों के बारे में भी बहुत कम एकता रह पाती है। एल्डरमैन के चुनाव में कभी इज्जत एवं सम्मान को निर्णायक तत्व माना जाता है कभी दलीय सम्बन्धों को और कभी वरिष्ठता को। यह एक निश्चित तथ्य है कि चुनाव के समय चाहे कोई भी भावना प्रधान रही हो किन्तु जब

यह हो जाता है तो व्यक्तिगत भावनाओं में जो फिरके पड़ जाते हैं वे नहीं हट पाते। यह व्यवस्था सम्भवत: नगरपालिका अधिनियम १८३५ के द्वारा अतीत के चार्टर युक्त नियमों की थाती के रूप मे प्रारम्भ की गई जिसमे कि एल्डरमेन आवश्यक भाग थे जो कि सेवीवर्ग की दृष्टि से कुछ एकरूपता एव नीति की निरन्तरता रखते थे। जहा पर तीन वर्ष बाद चुनाव कराये जाते है तथा हर तीसरे वर्ष सभी पार्षद अपने पद से हट जाते हैं वहा पर एल्डरमैनो की सख्या निश्चय ही मूल्यवान प्रतीत होती है। किन्तु इस प्रकार का तर्क बारोज पर लागू नही होता जहा कि चुनाव वार्षिक रूप से कराये जाते हैं तथा सभी पार्षद एक साथ नही हटते किन्तु, केवल एक-तिहाई पार्षद ही प्रतिवर्ष सेवा निवृत हो पाते हैं।

इस प्रकार कुल मिलाकर देखा जाये तो एल्डरमैन के कार्यालय को प्रशंसा एव आलोचना दोनो का ही पात्र बनाया जाता है। जो लोग इसकी प्रशसा करते हैं उनका कहना है कि यह पद अत्यन्त प्राचीन पद है तथा इसकी परम्परायें गहरी हैं। इनके रहने से यह लगता है कि परिषद की नीति एवं सेवी वर्ग मे कुछ निरन्तरता रहेगी। यद्यपि यह व्यवहार मे प्राय: कभी नही होना किन्तु सैद्धान्तिक रूप से तो सभव ही है कि सेवा निवृत होने वाला कोई भी पार्षद चुनाव मे पुनर्निर्वाचित ही न हो। इसका अर्थ यह होगा कि नई काउन्टी परिषद मे ऐसा कोई भी नही होगा जिसके अनुभव एव परामर्श के आधार पर परिषद को सचालित किया जा सके। ऐसी स्थिति मे एल्डरमेन पर्याप्त उपयोगी सिद्ध होते हैं क्योकि उनमे से केवल आधे ही प्रति तीसरे वर्ष सेवा निवृत होते हैं। इस पद के पक्ष मे एक तर्क यह भी दिया जाता है कि ऐसे अनेक व्यक्ति होते हैं जिनमे परिषद सदस्य के रूप मे कार्य करने की भारी योग्यतायें होती हैं किन्तु जो कई कारणो से चुनावो की पचड़ेबाजियो मे नही पड़ना चाहते ऐसी स्थिति मे योग्य व्यक्तियो को एल्डरमैन के रूप मे परिषदो मे लिया जा सकता है।

इस पद के विरोध मे भी अनेक तर्क दिये जाते हैं। सर्वप्रथम यह कहा जाता है कि इसका रूप अप्रजातांत्रिक है। यह तर्क दिया जाता है कि निर्वाचित प्रतिनिधियो का परिषद पर पूरा नियत्रण होना चाहिये तथा परिषद के किसी भी सदस्य का चुनाव इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से नही किया जाना चाहिये। यदि ऐसे आलोचको को सैद्धान्तिक तर्कों से संतुष्ट कर दिया जाये तो वे यह कहते हैं कि इस व्यवस्था का प्रयोग गलत किया जाता है। यदि इस व्यवस्था का प्रयोग सही रूप में किया जाये तो स्थानीय परिषदें योग्य एव कुशल व्यक्तियों के ज्ञान तथा कार्यों से लाभान्वित हो सकती है किन्तु इस व्यवस्था को उचित रूप से कभी कार्यान्वित ही नही किया जाता। इसका प्रयोग कभी-कभी उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए भी कर लिया जाता है जिसे कि मतदाताओ द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया था। जो व्यक्ति अपने दल का माना हुआ व्यक्ति अथवा नेता है और चुनावो मे वह हार चुका है तथा यदि उसके दल का परिषद में बहुमत हो जाये तो उसका दल उसे एल्डरमैन के रूप मे निर्वाचित करके परिषद मे प्रवेश दिला सकता है। इस प्रकार मतदाताओ की इच्छा की अवहेलना की जाती है। जहाँ कहीं भी कड़ा दलीय सघर्ष

होता है वहां बहुमत वाला दल सदैव ही यह प्रयास करेगा कि अपनी शक्ति को और बढ़ाने के लिए एल्डरमेन का चुनाव भी अपने ही पक्ष में कराले। तथ्यपूर्ण अध्ययन के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि अनेक परिषदों द्वारा एल्डरमेन की व्यवस्था का दुरुपयोग किया गया है। सरकार द्वारा भी उनकी हालत को सुधारने की दिशा में अधिक कुछ नहीं किया जा सकता है।

मेयर एवं सभापति [The Mayor and Chairman]—नियमानुसार प्रत्येक परिषद को एक ऐसे व्यक्ति का चुनाव करना होता है जो कि उसकी बैठकों की अध्यक्षता कर सके। इस प्रकार से निर्वाचित व्यक्ति को सभापति या मेयर कहा जाता है। अन्य परिषदों में यह सभापति है किन्तु बारोज में यह मेयर बन जाता है। यह परम्परागत रूप से एक अध्यक्ष से अधिक कार्य सम्पन्न करता है। जेक्सन (Jackson) महोदय के कथनानुसार एक मेयर अथवा सभापति द्वारा मुख्य रूप से दो कार्य किये जाते हैं। वह परिषद की बैठकों की अध्यक्षता करता है तथा वह स्थानीय जनता के उत्सवपूर्ण कार्यों एवं सार्वजनिक कार्यों में महत्वपूर्ण रूप से भाग लेता है। एल्डरमैन की भांति यह जरूरी नहीं है कि सभापति को परिषद के सदस्यों में से ही चुना जाये। इसे बाहर से भी चुना जा सकता है किन्तु उसमें एक पार्षद बनने की योग्यतायें होनी चाहिये। सभापति या मेयर का चुनाव परिषद के सभी सदस्य अर्थात् पार्षद एवं एल्डरमेन मिलकर करते हैं। काउन्टीज में तथा बारोज में जब एल्डरमैन सेवा निवृत हो जाते हैं तो वे चुनाव में भाग नहीं ले पाते क्योंकि नये एल्डरमैन का चुनाव सभापति या मेयर के चुनाव के बाद किया जाता है।

इंगलैण्ड में मेयर युक्त बारोज तथा सभापति युक्त अन्य परिषदों के बीच पर्याप्त अन्तर होता है। नोर्मन काल में राजाओं का यह लक्ष्य रहता था कि शाही शक्ति को पूरे देश में व्याप्त रखा जाये। इसके लिए उन्होंने काउन्टीज में एक शाही कार्यालय की आवश्यकता का अनुभव किया जिसकी क्रियाओं को शाही न्यायाधीशों द्वारा समय-समय पर चैक किया जा सके। पहले मुख्य काउन्टी अधिकारी नगराधिप (Sheriff) था। जब काउन्टी परिषद ने वर्तमान रूप ग्रहण किया तो उसका सभापति काउन्टी का एक प्रमुख व्यक्तित्व नहीं बन पाया क्योंकि यह पद तो पहले से ही नगराधिप को प्राप्त था। बारोज के लिए जो चार्टर प्रस्तुत किया जाता था उसमें उसके प्रशासनीय निकाय के रूप का भी वर्णन कर दिया जाता था। कई वर्ष बीते अब मेयर का चुनाव परिषद द्वारा किया जाता है। इसके चुनाव में परिषद के सभी सदस्य जिनमें कि एल्डरमैन एवं पारषद सम्मिलित होते हैं, भाग लेते है। काउन को यह अधिकार है कि वह किसी विशेष बारो को यह निर्देशन दे कि वहां मेयर न हो कर लार्ड मेयर होना चाहिये। इन दोनों के बीच केवल सम्मान का और शब्द का अन्तर है वैसे लार्ड मेयर को मेयर की अपेक्षा कुछ अतिरिक्त शक्तियां प्राप्त नहीं होतीं। केवल एक अन्तर है वह यह कि जब लार्ड मेयर को सम्बोधित किया जाता है तो कहा जाता है 'माई लार्ड मेयर' और मेयर के लिए केवल 'मि०मेयर' कहा जाता है।

मेयर का कार्यालय बारो के आधार पर निश्चित किया जाता है। छोटे बारोज में मेयर अपने खाली समय में परिषद के कार्यों में भी सक्रिय

भाग ले सकता है और अपने सभी सामाजिक कर्त्तव्यों का निर्वाह कर सकता है। दूसरी ओर बड़े बारोज में मेयर का सारा समय व्यतीत हो जाता है। प्रतिदिन इतने अधिक कार्य होते हैं जिनमें उसकी उपस्थिति अनिवार्य है। वह अनेक संस्थाओं को देखता है, बैठकों में बोलता है, विशेष आगन्तुकों का स्वागत करता है और अन्य महत्वपूर्ण कार्य करता है। अपने कार्यकाल में वह स्थानीय राजा से कम नहीं होता। बड़े शहरों में जो उसे अधिकृत निवास स्थान दिया जाता है वह एक शाही महल से सादृश्यता रखता है। वह जब भी कभी सार्वजनिक अवसरों पर उपस्थित होता है तो कार्यालय की अपनी सुनहरी जन्जीर पहनता है और अधिकतर मुख्य अवसरों पर वह गाउन पहन कर निकलता है। उसकी सेवा के लिए शहर का लिपिक होता है तथा उसके साथ एल्डरमैन एवं अन्य नागरिक सम्मान वाले व्यक्ति चलते हैं। जब वह परिषद के कक्ष में प्रवेश करता है तो मेस (Mace) उसके सामने चलती है और उसकी कुर्सी के सामने रखी जाती है। जब मेयर को इतने अधिक महत्वपूर्ण कार्य करने होते हैं तो परिषद के कार्य को विस्तारपूर्वक करने के लिए उसके पास अधिक समय नहीं बच पाता। वह यद्यपि परिषद की सभी बैठकों की अध्यक्षता करता है और परिषद के कार्यों के बारे में उसके अधिकारियों से वार्ता करता रहता है। वह प्रत्येक समिति का एक पदेन सदस्य होता है किन्तु वह इन सभी में उपस्थित नहीं हो पाता और केवल कुछ कार्यों को छांट लेता है जिनमें कि वह अपना अधिक ध्यान दे सके। इस प्रकार बड़े बारों का मेयर अपने कार्यों में बहुत अधिक शक्ति एवं श्रम खर्च करता है। उसका कार्य पूरे समय का कार्य है। एक सामान्य परम्परा के अनुसार उस व्यक्ति को प्रायः पुनः निर्वाचित नहीं किया जाता। इसलिए यह उचित समझा जाता है कि वह अपना सारा कार्य एक ही वर्ष में समाप्त कर दे। कई एक बारोज में ऐसी परम्पराएं बन जाती हैं जो कि मेयर के चुनाव को विनियमित करती हैं। एक सामान्य व्यवहार के अनुसार परिषद के प्रत्येक सदस्य को यह अवसर दिया जाता है कि वह बारी-बारी से मेयर नामजद कर सके चाहे उनका परिषद में मत कितना भी क्यों न हो। राजनैतिक दलों द्वारा नामजदगी करते समय वरिष्टता को पर्याप्त महत्व दिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप जो व्यक्ति परिषद का सदस्य बना रहता है उसके मेयर बनने के अवसर बढ़ जाते हैं।

एक बारो अथवा काउन्टी बारो के मेयर का निश्चित योगदान उन नागरिकों द्वारा सरलता से नहीं समझा जा सकता जिनमें कि वह कार्य करता रहता है। इसका कारण यह है कि कानून के अनुसार इसके कार्यालय का जो रूप है वह एक पृथक चीज है और वास्तविक व्यवहार में परम्पराओं द्वारा इसका जो रूप निर्धारित हो गया है वह एक अलग चीज है। मेयर के बारे में लिखते हुए मि० जे० एच० वारेन (J. H. Warren) ने बताया है कि यह कार्यालय लम्बी परम्पराओं उच्च सम्मान एवं अच्छे प्रभाव के लिए व्यापक क्षेत्र रखता है किन्तु मेयर जो कुछ भी करता है वह अपने कार्यालय के सम्मान के सहारे करता है तथा अपने व्यक्तिगत प्रभाव के सहारे करता है। वह इस सब के लिए कानूनी शक्ति

का सहारा बहुत कम लेता है।* मेयर द्वारा सभापति के रूप में परिषद की अध्यक्षता की जाती है। वह परिषद की स्थाई आज्ञाओं के अनुसार परिषद की प्रक्रिया एवं वाद-विवाद को निर्देशित करता है। अपने शहर के नागरिक नेता एवं मुख्य नागरिक के रूप में मेयर को मुख्य स्थान प्राप्त होता है। उसका मुख्य कार्य शहर में नागरिक भावना का प्रसार करना है। वह शहर में परिषद का प्रतिनिधित्व करता है और आवश्यकता पड़ने पर परिषद में शहर का प्रतिनिधित्व करता है। वह विशेष आगन्तुकों एवं बाहर वालों के लिए शहर का वैयक्तिकरण करता है। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए वह शहर के प्रत्येक वर्ग में अपनी पहुँच रखता है। इस कार्य में उसका बहुत समय व्यतीत हो जाता है। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक है कि अपने कार्यकाल के समय में वह परिषद के कार्यों में सक्रिय भाग न ले सके। यदि वह स्थानीय राजनीति में उलझ जाए अथवा एक पारषद के रूप में वह शहर का एक सक्रिय कार्यकर्ता हो तो अपने कार्यकाल के दौरान उसे ये सब कर्तव्य छोड़ने होते हैं। उसे कुछ काल के लिए स्थानीय संगठनों से अपना सम्बन्ध तोड़ना होता है।

केवल यह सोचना गलत होगा कि मेयर का प्रभाव एवं सम्मान केवल उसके बाहरी कर्त्तव्यों से ही महत्व रखता है। इसका मूल्य उस समय भी पर्याप्त होता है जब कि परिषद नीति एवं प्रशासन सम्बन्धी निर्णय लेती है। मेयर का सम्मान एवं प्रभाव का मूल्य तभी रह पाएगा जब कि इसका प्रयोग उचित अवसर पर किया जाए। सामान्य रूप से मेयर का कार्य यह नहीं है कि वह स्थानीय सत्ता के प्रशासन में अधिक उलझे। वह अपने अधिकारियों को निर्देश नहीं दे सकता क्योंकि वे समितियों के माध्यम से परिषद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। समितियों के सभापति अधिकारियों से निकट सम्पर्क रखते हैं और आवश्यकता के समय उनसे विचार-विमर्श करते हैं। ऐसी स्थिति में जरूरी है कि मेयर सजग रहे और समिति के सभापति के कार्यों को न दोहराए। कई बार ऐसे अवसर आते हैं जब कि घरेलू वाद-विवाद में मेयर का मध्यस्थता करनी होती है। वह इस कार्य को भली प्रकार निभा सकता है। मेयर का प्रभाव सदैव ही उस समय अधिक रहता है जब कि वह उसका प्रयोग कम से कम करे। यदि वह परिषद के वाद-विवाद से परे बना रहे तो उसका प्रभाव अधिक रहेगा। इसी बात को ध्यान में रख कर कई एक परिषदें अपने स्थायी आदेशों द्वारा यह व्यवस्था कर देती हैं कि मेयर अपने कार्यकाल में किसी समिति का सभापति नहीं रहेगा। टाउन क्लर्क मेयर का मुख्य परामर्शदाता होता है और परिषद का मुख्य अधिकारी। ऐसी स्थिति में यह उपयुक्त समझा जाता है कि मध्यस्थता का कार्य उसी के द्वारा सम्पादित किया जाए।

---

* "The office is one of long tradition, high prestige, and wide scope for good influence; but whatever a Mayor does he must do by the personal influence he exercises in it, for he is clothed with little legal authority."
—*J. H. Warren*, Op. Cit., P. 92.

मेयर के द्वारा अधिकारियों के मनोरंजन मे, शहर के अनेक स्वेच्छा-पूर्ण संस्थाओ की सहायता मे तथा अनेक व्यक्तिगत कार्यो मे बहुत अधिक धन खर्च करना होता है। इसीलिए यह प्रावधान किया गया है कि इस धन का भुगतान परिषद द्वारा किया जाएगा। इसके अतिरिक्त उसे कार्यालय की ओर से कार दी जाती है तथा अन्य आवश्यक सुविधाए प्रदान की जाती है। वैसे कानून म यह नही कहा गया है कि मेयर को दिया जाने वाला धन उसके द्वारा किए जाने वाले व्यय का भत्ता है। इससे यह भी कानूनी समझा जाएगा कि मेयर जो प्राप्त करे वह अपनी सेवाओ के बदले में प्राप्त करे किन्तु सामान्य रूप से यह समझा जाता है कि जो भी धन मेयर को प्रदान किया जाता है वह उसके व्यय के अनुपात मे होता है और उसे वेतन नही कहा जा सकता। वेतन न होने के कारण मेयर को कोई भी धन स्वतः ही प्राप्त नही होता। जब वह अपने पद से सम्बन्धित कार्यों पर खर्च करता है तो उसके सम्बन्ध मे वह प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करता है जिसके आधार पर उसे धन दिया जाता है। अनुमान के अनुसार धन की मात्रा अधिक से अधिक रखी जाती है। यह भी हो सकता है कि मेयर अपने सभी मदो को खर्च न करे। कुछ बारोज ने यह भी समस्या रखी है कि वहा मेयर द्वारा अपने परम्परागत कार्य उस समय तक पूरे नही किए जाते जब तक कि मदो की मा त्रा बढ़ा दी जाए। इसका अर्थ यह हुआ कि मेयर पद पर केवल वही व्यक्ति आ सकेगा जो कि अपनी जेब से खर्च कर सके।

कार्यो के अनुसार मेयर को परिषद के सदस्यो में से भी चुना जा सकता है और बाहर से भी। केवल एक ही शर्त है वह यह कि मेयर स्थानीय व्यक्ति होना चाहिए। एक परिषद कभी-कभी बाहर के व्यक्ति को भी मेयर नियुक्त कर लेती है किन्तु यह सामान्य व्यवहार नही है क्योंकि ऐसा करने पर परिषद के वरिष्ठ सदस्यो को बारी-बारी से मेयर बनने का अवसर प्राप्त नही हो सकेगा। एक छोटे बारो मे जहां कि परिषद मे कुछ ही सदस्य होते है, एक व्यक्ति को दो या तीन वर्ष तक मेयर पद पर रखा जा सकता है। इंगलैण्ड मे एक छोटा बारो ऐसा है जिसमे कि एक प्रसिद्ध सदस्य को इसका कई वर्ष तक मेयर बनाए रखा गया, यहा तक कि उस व्यक्ति का नाम ही मेयर पड़ गया।

मेयर द्वारा लिखित रूप मे एक उप-मेयर (Deputy Mayor) की नियुक्ति की जा सकती है। वह अपने पद पर उस समय तक कार्य करता है जब तक कि मेयर कार्य करता रहता है। बारोज के अतिरिक्त अन्य सत्ताओ में मेयर की नियुक्ति परिषद द्वारा की जाती है। मेयर एवं उप-मेयर दोनों का पद कानूनी रूप से एक जैसा नही है। मेयर के अभाव में उप-मेयर स्वतः ही परिषद का अध्यक्ष नही बन जाता ऐसे अवसर पर परिषद अपना अस्थायी सभापति चुनती है जो कि प्रायः एल्डरमैन में से होता है और यह जरूरी नहीं है कि उप-मेयर एल्डरमैन हो। उप-मेयर पद का महत्व यह है कि इसके द्वारा मेयर की सहायता की जाती है और जब मेयर बीमार पड़जाता है तो उप-मेयर परिषद से बाहर के उस दायित्व को सम्भालता है। ऐसी स्थिति में उचित यह रहेगा कि उप-मेयर की नियुक्ति मेयर द्वारा ही की जाए ताकि वह उसमे विश्वास रख सके और वांछित सहायता प्राप्त कर सके। उप-मेयर

का चयन मेयर द्वारा किए जाने के पक्ष में एक अन्य तर्क यह दिया जाता है कि परिषद के चयन में दलीय राजनीति की उलझनें उत्पन्न हो सकती हैं जो कि मेयर एवं उप-मेयर के बीच संघर्ष उत्पन्न करने का कारण बन सकती हैं।

बारोज के अतिरिक्त सभी स्थानीय परिषदें सभापति नियुक्त करती हैं। सभापतियों का चुनाव मेयर की भाँति प्रतिवर्ष परिषद् द्वारा किया जाता है। चुना जाने वाला व्यक्ति या तो परिषद का सदस्य हो अथवा सदस्य बनने की योग्यता रखता हो। परिषद के सभापति के पास मेयर की अपेक्षा औपचारिक चिह्न कम होते हैं। वह कार्यालय का एक बिल्ला लगाता है किन्तु उसके पास गाउन, जन्जीर या मेस आदि चीजें नहीं होती। उनके कार्यों के सम्बन्ध में कोई विशेष उत्सव भी नहीं मनाया जा सकता। एक सभापति को भी अनेक सामाजिक कर्त्तव्य करने होते हैं किन्तु उनकी संख्या और महत्व मेयर के कर्त्तव्यों की तुलना में बहुत कम होता है। अपने पद के नाम के अनुसार वह परिषद का सभापति होता है। सभापति का पद सम्भालने के बाद भी वह परिषद के कार्यों को करता रहता है। जब कभी महारानी शहर को देखने आती है तो उनका स्वागत उन सभी प्रसाधनों द्वारा किया जाता है जिन्हें कि बारो उपस्थित कर सके। काउन्टी परिषद के सभापति को भी उपस्थित होने के लिए बुलाया जाता है किन्तु परिषद के प्रमुख सत्ता होने के बाद भी मेयर का नाम पहले आता है। इस सबके बारे में मेयर और सभापति के बीच कोई ईर्ष्या नहीं रहती, यह पूर्णतः परम्परागत रूप से होता है और काउन्टीज इन पुरानी व्यवस्था को समाप्त करना नहीं चाहती। एक क्षेत्र में जहां कि काउन्टी के समान क्षेत्र का कोई अध्यक्ष नहीं होता वहां इसका कोई कारण नहीं कि परिषद के सभापति को बारो के मेयर से कम महत्व प्राप्त हो। सभापति को भी जो औपचारिक एवं उत्सव सम्बन्धी कार्य करने होते हैं उनके आधार पर उसका सम्मान काफी बढ़ जाता है। एक निर्वाचित लोकप्रिय निकाय का अध्यक्ष होने के कारण सभापति पर्याप्त सम्मान एवं गौरव का प्रतीक बन जाता है।

सभापति का चुनाव प्रति वर्ष किया जाता है किन्तु उसे पुनः निर्वाचित भी किया जा सकता है। एक सामान्य परम्परा के आधार पर उसे एक या दो बार पुनः निर्वाचित किया जाता है ताकि उसे दो-तीन साल का अनुभव प्रदान किया जा सके। इस सम्बन्ध में भी स्पष्ट समझौता नहीं रहता कि राजनैतिक दलों को सभापतित्व का अवसर क्रमानुसार दिया जाएगा। इसका मुख्य कार्य यह है कि उन क्षेत्रों की परिषदों में रूढ़िवादी दृष्टिकोण का बहुमत रहता है। परिषद में दलीय संगठन या तो होता ही नहीं है और होता भी है तो बहुत कमजोर होता है। कई एक सदस्य तो अपने आपको राजनैतिक मानने से भी अस्वीकार करते हैं। ऐसी स्थिति में प्रत्येक नियुक्ति किसी सिद्धान्त से सम्बन्ध रखे बिना की जा सकती है। सभापति का चुनाव प्रायः तब होता है जब कि पहले उप-सभापति का चुनाव कर लिया जाए। सामान्य धारणा यह रहती है कि इसलिए उप-सभापति को ही सभापति बना लिया जाए। यह चुनाव उपयुक्तता एवं वरिष्ठता के

आधार पर किया जाता है। काउन्टी परिषद को यह अधिकार है कि वह अपने सभापतियो को धन दे सके किन्तु जैसा कि मेयरो के बारे मे होता है यह धन किए गए खर्चे के भुगतान के रूप मे होता है। शहरी एव देहाती जिला परिषदो मे कानून के अनुसार सभापति को कोई आय नही दी जाती किन्तु उसके द्वारा किए जाने वाले खर्चो का भत्ता मात्र प्रदान किया जाता है। छोटी सत्ताओ को छोड कर अन्य स्थानो पर परिषद के सभापति को परिषद कार्यालय मे एक कमरा दिया जाता है और वह आफिस की कार का उपयोग कर सकता है।

उच्च अधिकारी [Higher Officers]—ऐतिहासिक विकास के प्रारम्भिक युग के ही कुछ उच्च अधिकारी इगलैण्ड की नागरिक सरकार के सचालन मे सहायता करते हैं। वर्तमान व्यवस्थापन द्वारा स्थानीय सत्ताओ को यह अधिकार दिया गया है कि वे अपनी आवश्यकता के अनुसार ऐसे स्टाफ की नियुक्ति कर सकें। व्यवस्थापन द्वारा इन अधिकारियो की नियुक्ति के सम्बन्ध मे निर्देश दिए जाते है। पैरिश परिषद को छोड कर सभी स्थानीय सत्ताए एक लिपिक की नियुक्ति करती है जिसे कि बारो मे टाउन क्लर्क कहा जाता है। इसके साथ ही वे एक खजान्ची तथा एक स्वास्थ्य मेडीकल अधिकारी की भी नियुक्ति करती हैं। पुलिस सत्ता द्वारा एक मुख्य सपाही और शिक्षा सत्ता द्वारा एक मुख्य शिक्षा अधिकारी नियुक्त किया जाता है। इनके अतिरिक्त कई और भी मुख्य अधिकारी होते हैं जो कि बडी स्थानीय सत्ताओ द्वारा नियुक्त किए जाते हैं। कानूनी रूप से इनमे से किसी भी अधिकारी की शक्तियो को स्पष्टत: पारिभाषित नही किया गया है। बदलती परिस्थितियो के अनुसार समायोजन को सम्भव बनाने के लिए लोचशीलता रखी जाती है।

क्लर्क या टाउन क्लर्क मुख्य अधिकारी समझा जाता है और सन् १९२८ के स्थानीय सरकार के शाही आयोग ने यह बताया कि ऐसा ही समझा जाना चाहिए। वर्तमान समय मे स्थानीय सत्ताओ के सगठनो ने क्लर्क को मुख्य प्रशासकीय एवं कार्यपालिका अधिकारी का पद देना स्वीकार कर लिया। क्लर्क अथवा टाउन क्लर्क आवश्यकता के अनुसार परिषद एव उसकी समितियो के सचिवालय सम्बन्धी कार्य के लिए उत्तरदायी होता है। वह स्थानीय सत्ता का कनूनी अधिकारी भी है। वह प्राय: सभी प्रशासकीय प्रबन्धो पर दृष्टि रखता है और प्रशासकीय मामलो पर परामर्श देता है। किन्तु वह प्रशासकीय व्यवहार मे अन्य विभागीय अध्यक्षो के कार्यपालिका सम्बन्धी दायित्वो मे हस्तक्षेप नही करता। परिषद के मुख्य परामर्शदाता के रूप मे वह उसके नीति सम्बन्धी प्रश्नो पर भी विचार करता है। स्थानीय सत्ता को इस पद पर उपयुक्त व्यक्ति नियुक्त करना चाहिए, उसकी योग्यताए निर्धारित नही की गई हैं। यद्यपि क्लर्क के कर्त्तव्य बहुत व्यापक होते हैं किन्तु उसे एक औद्योगिक या व्यापारिक सगठनों का सामान्य प्रबन्धक नही कहा जा सकता।

खजान्ची परिषद का मुख्य वित्तीय अधिकारी एवं लेखाधिकारी होता है; किन्तु कुछ जिलों में यह प्रबन्ध बड़ा ही अस्पष्ट है जहा पर बैंक मैनेजर

को एक खजान्ची नियुक्त कर दिया जाता था और पृथक से एक लेखाधिकारी की नियुक्ति कर दी जाती थी। बैंक के लिए यह गैर-कानूनी था कि वह एक खजान्ची की नियुक्ति करे। किन्तु अनेक बैंक स्थानीय प्रबन्धक को स्थानीय सत्ता का खजान्ची नियुक्त करने के बारे में सहमत हो गए। छोटे जिलों में पहले एक क्लर्क को ही लेखाधिकारी या मुख्य वित्तीय अधिकारी बना दिया जाता था किन्तु यह प्रबन्ध अब समाप्त होता जा रहा है क्योंकि इसके प्रति गहरा असन्तोष है। खजान्ची और लेखा अधिकारी के बीच अन्तर किया जाना जरूरी है। खजान्ची लेखा अधिकारी के आधीन रह कर बारों के कोष की रक्षा से सम्बन्धित कानूनी उत्तरदायित्वों का निर्वाह करता है जब कि लेखा अधिकारी एक संग्रहकर्त्ता, वित्तीय परामर्शदाता एवं लेखापाल के कर्त्तव्यों का निर्वाह करता है। वित्तीय कर्त्तव्यों का वास्तविक उत्तरदायित्व लेखापाल पर आ कर पड़ता है। एक सुविनियमित स्थानीय सत्ता में यह आशा की जा सकती है कि खजान्ची ही स्थानीय सत्ता का मुख्य लेखा अधिकारी होगा। इसी के द्वारा प्राप्तियां एवं भुगतान किए जाएंगे तथा वही वित्तीय मामलों में परामर्श देगा।

सर्वेक्षक का कार्यालय सवैधानिक दृष्टि से विशेष रूप में उल्लेखनीय नहीं है। सर्वेक्षक ही सत्ता का नागरिक अभियन्ता होता है और कभी-कभी उसका भवन निर्माता भी। कुछ शहरों में वह जल अभियन्ता भी होता है। एक मध्यम आकार की सत्ता में इस अधिकारी के कार्य अत्यन्त संयुक्त एवं विस्तृत प्रकृति के होते हैं। बड़े शहरों या काउन्टीज में कार्य बढ़ जाने के कारण यह जरूरी हो गया है कि इन अधिकारी के कार्यों को कुछ भागों में विभाजित कर दिया जाए।

जन-स्वास्थ्य निरीक्षक का कार्यालय कुछ पृथक उत्तरदायित्व रखता है। व्यवस्थापन द्वारा उसे ये उत्तरदायित्व सौंपे जाते हैं। कानून के अनुसार इस निरीक्षक को सामान्य मेडीकल अधिकारी के आधीन कार्य करना चाहिए। स्वास्थ्य का मेडीकल अधिकारी स्थानीय सत्ता की स्वास्थ्य सेवाओं का अध्यक्ष होता है। यह क्षेत्र की सफाई से सम्बन्धित दशाओं की देख-माल करता है।

सामान्य रूप से स्थानीय सरकार के अधिकारी उस समय तक अपने पद पर कार्य करते हैं जब तक कि उन्हें नियुक्त करने वाली परिषद चाहे। परिषद और इन अधिकारियों के बीच जो स्वामी-सेवक का सम्बन्ध विकसित हुआ उसके परिणामस्वरूप ये अधिकारी दलीय राजनीति में उलझने लगे। इसी कारण संसद द्वारा यह व्यवस्था की गई कि किसी भी अधिकारी को हटाने से पूर्व संसद की स्वीकृति ली जाए। इस प्रकार एक काउन्टी के क्लर्क तथा मेडीकल अधिकारी और बारोज तथा जिलों के मेडीकल अधिकारी तथा जन-स्वास्थ्य निरीक्षक एवं पुलिस सिपाहियों को हटाने से पूर्व संसद की स्वीकृति लेना जरूरी होता है। इस सम्बन्ध में पर्याप्त व्यवस्थापन किया गया और इस समय कोई ऐसा चिह्न दिखाई नहीं देता जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि अधिकारीगण और अधिक केन्द्रीय नियन्त्रण चाहते हैं। केन्द्रीय नियन्त्रण भी अधिकारियों की रक्षा की दृष्टि से कुछ अधिक नहीं

कर पाता क्योंकि यदि किसी अधिकारी को पद से हटाने की धमकी दी जाए तो केन्द्रीय हस्तक्षेप भी उसे उसके पद पर बनाए रखने में सफल नहीं हो सकता। कभी-कभी मन्त्रियों का नियन्त्रण अनुपयुक्त नियुक्तियों का कारण भी बन जाता है। शिक्षा मन्त्री का मुख्य शिक्षा अधिकारी के चयन पर निषेध करने का अधिकार और गृह सचिव को बाल-अधिकारी के सम्बन्ध में ऐसी शक्तियां प्राप्त हैं। इसके अतिरिक्त गृह-सचिव मुख्य कान्स्टेबुलों की नियुक्ति को स्वीकृति प्रदान करता है। जहां-कहीं यह नियुक्ति पदोन्नति के माध्यम से होती है वहां यह स्वीकृति जरूरी नहीं समझी जाती।

बारो के अंकेक्षणकर्त्ता [Borough Auditors]—जिस बारो में परिषद अंकेक्षण के लिए न व्यावसायिक तरीका अपनाती है और न सरकारी ही वहां नगरपालिका के लेखों का अंकेक्षण करने के लिए बारो के अंकेक्षण-कर्त्ता नियुक्त किए जाते हैं। ये अवैतनिक अधिकारी होते हैं। ये न तो परिषद के कर्मचारी होते हैं और न ही निगम के निर्णायक अंग ही। इनमें से दो को निर्वाचित अंकेक्षणकर्त्ता कहा जाता है। इनको प्रतिवर्ष मार्च के महीने में स्थानीय सरकार के मतदाताओं द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुना जाता है। इस पद के उम्मीदवार में परिषद की योग्यताएं होनी चाहिए किन्तु वह न तो परिषद का सदस्य होना चाहिए और न ही उसका अधिकारी। तीसरा अंकेक्षणकर्त्ता मेयर का अंकेक्षणकर्त्ता (Mayors' Auditor) कहलाता है। इसकी नियुक्ति परिषद के सदस्यों में से मेयर के द्वारा की जाती है। यह व्यवस्था नगरपालिका के अतीत की निशानी है और अनेक बारोज में यह समाप्त भी हो चुकी है चाहे लेखों का अंकेक्षण सरकारी हो, व्यावसायिक हो अथवा निर्वाचित इन सभी में कुछ छोटी सत्ताओं को छोड़ कर यह एक मानक अभ्यास है कि खजान्ची या मुख्य वित्तीय अधिकारी द्वारा योग्य स्टाफ की सहायता से आन्तरिक अंकेक्षण भी किया जाए।

अधिकारियों का योगदान [The role of the Officers]—स्थानीय सरकार के कार्यों पर केन्द्रीय नियन्त्रण पर्याप्त मात्रा में रहता है किन्तु जहां तक स्थानीय सरकार के आन्तरिक संगठन का प्रश्न है वहां यह रुक जाता है। स्थानीय सत्ताओं को अपना कार्य सम्पन्न करने के लिए मार्ग चुनने एवं साधन अपनाने की पूरी स्वतन्त्रता होती है। स्थानीय सत्ता का यन्त्र चाहे कितना भी विकसित क्यों न हो वह मुख्य रूप से समितियों की स्थापना एवं अधिकारियों तथा स्टाफ की नियुक्ति पर आधारित रहता है। जब कभी स्थानीय सत्ताओं के संगठन के बारे में कोई व्यवस्थापन किया जाता है तो उसका सम्बन्ध मुख्य रूप से इन दो पहलुओं के साथ रहता है। स्थानीय सत्ता द्वारा किसी विशेष सेवा के लिए या प्रशासन के किसी विशेष पहलू के लिए समितियां नियुक्त की जाती हैं। इन समितियों एवं अधिकारियों के माध्यम से स्थानीय सत्ता अपनी आंतरिक व्यवस्था को स्वयं ही संचालित करती है। स्थानीय सरकार की आंतरिक व्यवस्था अत्यंत लोचशील होती है और उसे बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार बदला जा सकता है। अलग अलग स्थानों पर एवं भिन्न भिन्न परिस्थितियों में भिन्न व्यवस्थाएं करनी होती है। अधिकारियों का स्थानीय सत्ता के जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान होता है। हम यह कल्पना कर सकते हैं कि ये समितियों के बिना कार्य कर

सकते हैं किन्तु यह कल्पना नहीं कर सकते कि अधिकारियों के बिना इनका कार्य चल सकता है। स्थानीय सत्ताओं के कार्य को प्रशासकीय कार्यपालिका एवं प्रबन्धात्मक पहलुओं को ऐसे सवैतनिक अधिकारियों एवं सेवकों द्वारा सम्पन्न किया जाना चाहिये जो कि विशेषज्ञतापूर्ण कार्य के लिए पर्याप्त अनुभव व प्रशिक्षण रखते हैं। ऐसी स्थिति में अधिकारियों एवं उनको नियुक्त करने वाली परिषद् के बीच भी विशेष प्रकार के सम्बन्ध बन जाते हैं जो कि उन सम्बन्धों से भिन्न नहीं होते जो हमें प्रशासकीय, औद्योगिक या व्यापारिक क्षेत्रों में मिलता है।

स्थानीय सत्ता द्वारा नीति सम्बन्धी निर्णय लिये जाते हैं तथा वह उसका नियन्त्रण करती है और वेतन-भोगी सेवक नीति से सम्बन्धित उन निर्णयों को क्रियान्वित करते हैं। यह कथन वस्तुस्थिति का एक प्रकार से सरलीकरण है। आधुनिक समाज में प्रशासन का कार्य इतना जटिल हो गया है कि उच्च प्रशासनिक अधिकारी अपने आपको पूर्णतः नीति सम्बन्धी निर्णयों से ही सम्बद्ध नहीं रखते क्योंकि ये नीतियाँ ऐसे लोगों द्वारा निर्धारित की जाती हैं जो कि गैर-विशेषज्ञ एवं गैर-अनुभवी होते हैं तथा जिनकी योग्यता केवल यह होती है कि जनता द्वारा वे निर्वाचित कर लिये जायं। यह उचित भी नहीं समझा जाता कि अधिकारीगण अपने आपको इन कार्यों तक ही सीमित रखें। सन् १९३० में लोक प्रशासन प्रशिक्षण शाला के उद्घाटन के समय अध्यक्षीय भाषण देते हुए लार्ड स्टाम्प (Lord Stamp) ने कहा था कि अधिकारियों को नये समाज की मुख्य प्रेरणा होना चाहिए जो कि प्रत्येक स्तर पर सुझाव दें, प्रोत्साहन दें एवं परामर्श दें। यह समय आज अतीत की कहानी बन चुका है जब कि वांछित कार्य को देखने एवं कहने के लिए गैर-विशेषज्ञ के नियन्त्रण को पर्याप्त समझा जाता था और अधिकारियों का कार्य केवल वही कार्य करना था जो करने के लिए उससे कहा जाये। आज की परिस्थितियों में निरंतरता, व्यवस्था, निष्पक्ष व्याख्या, परम्परा और निस्वार्थ उत्साह बनाये रखने के लिए यह जरूरी है कि कुशल एवं प्रशिक्षित अधिकारियों पर विश्वास किया जाय। प्रो० लास्की ने भी कुछ ऐसा ही मत प्रगट किया है। उनके कथनानुसार जिस किसी ने भी अंग्रेजी नगर-पालिका निकाय को कार्य करते हुए देखा है वह यह जानता है कि कुशल एवं अकुशल प्रशासन के बीच का मुख्य अंतर निर्वाचित व्यक्तियों द्वारा अधिकारियों के कुशल प्रयोग पर निर्भर करता है।*

आजकल विश्व के प्रायः सभी देशों की स्थानीय सरकारों में यह माना जाता है कि अधिकारियों को नीति सम्बन्धी मामलों पर परामर्श देना चाहिए। प्रगतिशील देशों में स्थानीय सत्ता से यह आशा की जाती है कि वह इस कार्य को गम्भीर करेगी और उसमें अधिकारी वर्ग निर्वाचित सदस्यों को अपना परा-

*"Anyone who has seen English Municipal Body at work will have realised that the whole difference between effecient and the uneffecient administration lies in the creative use of elected persons."

—*Laski*, A Grammar of Politics, P. 425.

मर्श देने का कार्य निभायेंगे। स्थानीय सत्ता के कार्यों में अपना पूरा जीवन व्यतीत करने वाला अधिकारी अपने पद की समस्याओं एवं नीतियों के उचित परिणाम को अच्छी प्रकार से जानता है। इसके अतिरिक्त अधिकारी अपने स्रोतों को भी अच्छी प्रकार से जानता है और वह आसानी से इस बात का का अनुमान लगा लेता है कि नवीन परिस्थितियों का सामना करने के लिए वे पर्याप्त है या नहीं हैं। सेवाओं के सम्बन्ध में उसका ज्ञान इतना निकट होता है तथा उसका अनुभव इतना व्यापक होता है कि वह यथासम्भव भविष्यवाणियां कर सकता है। आवश्यकताओं के प्रति उसकी जागरूकता दीर्घकालीन नीतियों को प्रेरित कर सकती है जिनमें कि एक स्थान की अनेक पक्षीय आवश्यकताओं को सतुलन एवं अनुपात में रखा जा सके

इस सब का अर्थ यह नहीं है कि विशेषज्ञ का दृष्टिकोण सदैव ही सही होता है। स्थानीय सरकार की प्रशासकीय व्यवस्था में यह एक गुण पाया जाता है कि यह विशेषज्ञों के परामर्श को विचारने एवं उसकी जांच करने के लिए अनेक अवसर प्रदान करती है। स्थानीय प्रशासन में विशेषज्ञों की राय के महत्व का यह अर्थ कदापि नहीं होता कि इस प्रकार से निर्वाचित सदस्यों का नियत्रण घट जायेगा। अधिकारियों का नीति के क्षेत्र में पर्याप्त परामर्श सहयोग एवं पहल रहने पर भी अन्तिम नियंत्रण निर्वाचित अधिकारियों द्वारा ही रखा जाता है। यह आशका इसलिए भी नहीं होनी चाहिए क्योंकि स्थानीय सरकार के अधिकारियों को यह पता रहता है कि यदि उनका परामर्श नीति के सम्बन्ध में अधिक महत्वाकाक्ष पूर्ण हुआ तो वह अस्वीकृत कर दिया जायेगा। उनके व्यवसायिक आचरण के नियमों में यह उल्लेख रहता है कि वे प्रत्येक नीति को जिसके साथ कि वे चाहे व्यक्तिगत रूप से सहमत न हों इस प्रकार स्वामीभक्ति के साथ उपयुक्त करें कि मानो वे नीतियां उनकी स्वयं की है। कई एक आलोचक यह कहते पाये जाते हैं कि शक्तिशाली अधिकारी अपनी सेवाओं की कार्यकुशलता के इच्छुक रहते हैं और इन सेवाओं की प्रगति के प्रति महत्वाकाक्षी रहते हैं तथा उनका परामर्श पर्याप्त भारयुक्त होता है। वे प्रजातन्त्रात्मक सरकार के लिए एक बाधा है। ऐसा इसलिए, क्योंकि ये अधिकारी नीतियों पर पूरा प्रभाव रखते हैं। किन्तु आलोचकों का यह मत अतिशयोक्तिपूर्ण प्रतीत होता है क्योंकि तथ्यों के अनुसार अनेक प्रकार के व्यवस्थापन एवं निर्देश परिषद में प्रशासन एवं नीति पर पर्याप्त नियंत्रण रखते हैं। असल में अधिकारियों के योगदान को स्पष्टतः तभी समझा जा सकता है जब कि हम अधिकारियों एवं समिति को परिषदों के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन करलें। ऐसा करने से सब समितियों के सम्बन्ध में कुछ सामान्य जानकारी प्राप्त करना उपयोगी रहेगा।

समितियों का योगदान [The role of the Committees]-ब्रिटिश स्थानीय सरकार के सगठन में समितियों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। आज स्थानीय सत्ताओं में जो समितियां कार्य कर रही हैं वे एक लम्बे और क्रमिक ऐतिहासिक विकास का परिणाम है। उनका जन्म एवं विकास अपने पीछे [illegible] कारण रखता है। यह कहा जाता है कि नीति सम्बन्धी कार्य जिसमें [illegible] परिषद के निर्वाचित सदस्य उत्तरदायी होते हैं, परिषद द्वारा

भली प्रकार सम्पन्न नही किये जा सकते क्योकि परिषद का आकार पर्याप्त बडा होता है। इसके अतिरिक्त पार्षद लोग अपनी जीविका के लिए धनोपार्जन करने मे भी समय व्यतीत करते हैं और इस सबके बाद उनके पास बहुत कम समय बच पाता है जिसे कि वे परिषद के कार्यों मे लगा सकें। परिषद की बैठको को भी समयाभाव से अधिक देर तक नही चलाया जा सकता। ऐसी स्थिति मे यह सुझाव व्यवहारिक प्रतीत होता है कि परिषद अपने आप को नीति से सम्बन्धित केवल मुख्य कार्यों से ही सम्बन्धित रखे और अन्य कार्यों को किसी छोटे निकाय को सौपदे। खुले आम जब पूरी परिषद की बैठकें की जाती है तो केवल उन विषयो पर विचार किया जाना चाहिए जो कि विस्तृत नीति से सम्बन्ध रखते हैं किन्तु विस्तार के विषयो को समितियो में निर्णय लिये जाने के लिए छोड दिया जाना चाहिए। समितियां किसी समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार-विमर्श कर सकती है जो कि जनता के सम्मुख होने वाली परिषद की बैठको मे सम्भव नही होता। इसके अतिरिक्त परिषद के किसी विशेष कार्य को एक समिति के लिए सौप दिया जाता है तो यह आशा बध जाती है कि उस विशेष शाखा के कार्य में निरंतर एवं केन्द्रित रुचि तथा ध्यान रखा जा सकेगा। इसके अतिरिक्त पृ० तीसरा विचार यह भी है कि *निर्वाचित प्रतिनिधियों को अपने अधिकारियो के साथ नीति एवं प्रशासन* के कार्यों मे कधे से कधा मिलाकर चलना चाहिए। यह केवल तभी सम्भव हो सकता है जबकि समितियो के माध्यम से इसे सम्भव बनाने का प्रयास किया ज य।

समितियो एवं विभागीय अध्यक्षो के बीच घनिष्ट सम्बन्ध रहता है जिसके कारण निर्वाचित प्रतिनिधि अधिकारियो पर पर्यवेक्षण एवं नियत्रण रखते हैं। इस घनिष्ट सम्पर्क का यही एक मात्र एवं सर्वोच्च लाभ नही है। इससे यह भी सम्भव बनता है कि अधिकारी द्वारा प्रस्तावित नीति पर उचित वातावरण मे विचार किया जा सके। इस प्रकार प्रशासन का पर्यवेक्षण एक ऐसी प्रक्रिया द्वारा किया जाता है जिसमे कि नीति विशेषज्ञो एवं जनता के प्रतिनिधियो के घनिष्ठ सहयोग से विकसित होती है। प्रत्येक के द्वारा दूसरे को मत एवं सूचना के पूर्ण एवं खुले आदान प्रदान द्वारा प्रशिक्षित किया जाता है। इनमे से एक दूसरे की आलोचनाएं करते हैं और सुझाव देते हैं। मि० जे० एच० वारेन (J. H Watran) ने समितियो के योगदान को तीन प्रकार का बताया है—प्रथम, परिषद की ओर से विभागो पर पर्यवेक्षण रखना, दूसरे, अधिकारियो के सहयोग द्वारा परिषद को नीति के सम्बन्ध में परामर्श देना और परिषद के विचार के लिए नीति के विस्तृत अशो को *प्रकाश* में लाना और तीसरे, *कम महत्व के विषयो मे परिषद की* अपनी शक्तियो को एक सीमा तक काम मे लेना। ये सभी कार्य परस्पर एक दूसरे से घनिष्ठ रूप मे सम्बन्धित हैं। जब एक समिति के कार्य को एक विशेष शाखा के लिए स्थापना करदी जाती है तो परिषद के निर्णय से उस विषय मे उत्पन्न होने वाले सभी मामलो पर पहले समिति द्वारा विचार किया जाता है।

परिषदो की समितियो के सभापति ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार की महत्वपूर्ण सत्ता कहे जा सकते हैं। समिति के इन सभापतियो का कार्य,

समिति के वाद-विवाद को नियन्त्रित करना मात्र ही नही होता बल्कि यह इस से अधिक महत्वपूर्ण कार्य करती हैं। व्यवहार में जब विभिन्न समितियों एवं अधिकारियों के बीच सम्पर्क स्थापित करना महत्वपूर्ण बन जाता है तो यह सम्पर्क समिति के सभापति के माध्यम से ही स्थापित किया जाता है। जब कभी तुरत महत्व के विषय उत्पन्न होते हैं तो उन पर विचार करने के लिए शीघ्र ही कार्यवाही करना जरूरी होता है। ऐसी परिस्थितियों में समिति की विशेष बैठक बुलानी पड़ती है किन्तु यह हमेशा ही सम्भव नही होता और स्वयं अधिकारी को ही निर्णय का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेना होता है और उसके कार्यों से प्रायः परिषद को बन्धना पड़ता है। ऐसी परिस्थितियों में परम्परा यह है कि अधिकारी, समिति के सभापति से विचार विमर्श करे। अधिकारी प्रायः समिति के सभापति की सिफारिश एवं निर्देशन के आधार पर कार्य करता है। सभापति अपनी बुद्धि के आधार पर यह कहने में समर्थ होता है कि *किसी विशेष समस्या पर समिति का क्या दृष्टिकोण रहेगा।*

समिति का सभापति अपनी समिति का आंख और कान होता है। जिस प्रकार परिषद विभाग के कार्य के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए समिति की ओर देखती है, उसी प्रकार समिति भी इस कार्य से पूरी तरह परिचित होने के लिए सामान्य सदस्य की अपेक्षा प्रायः सभापति की ओर देखती है। इसके अतिरिक्त यदि समिति के सभापति को कार्य के बारे में पहले से ही कुछ जानकारी हो तो समिति का कार्य अच्छी प्रकार से सम्पन्न किया जा सकेगा। एक परम्परा के अनुसार प्रत्येक विभागीय अध्यक्ष को उन विषयों से समिति के सभापति को परिचित रखना होता है जिनके बारे में उसे प्रतिवेदन प्रस्तुत करना होता है। सभापति के व्यक्तित्व का एक अन्य पहलू परिषद के साथ उसके सम्बन्ध हैं। यह कहा जाता है कि परिषद से सम्बन्धित सभापति द्वारा जो महत्वपूर्ण कर्त्तव्य सम्पन्न किये जाते हैं वे अन्य सभी कार्यों में सबसे अधिक महत्व रखते हैं। समिति के प्रस्तावों एवं सिफारिशों को परिषद के सामने सभापति द्वारा ही रखा जाता है। सभापति समिति के किसी कार्य अथवा प्रतिवेदन पर होने वाली बहस के समय समिति का मुख्य वक्ता होता है। जब समिति का सभापति परिषद में समिति की सिफारिशों या प्रतिवेदनों को प्रस्तुत करते समय बोलता है तो जनता स्थानीय सत्ता के कार्यों से भली भांति परिचित हो जाती है। प्रशासकीय दृष्टि से समिति का सभापति परिषद के निर्वाचित सदस्यों में एक महत्वपूर्ण व्यक्ति होता है। उसके कार्य मुख्य रूप से प्रतिवेदक के कार्य हैं। इस सबके अतिरिक्त ब्रिटिश स्थानीय सरकार में समितियों के सभापति का विकासशील योगदान बढ़ते हुए कार्य भार की स्थिति में भी कार्यकुशलता लाना है। सामान्य रूप में अधिकारीगण और विशेष रूप से क्लर्क परिषद की ओर से यह देखता है कि सभापति अथवा समिति में से कोई अपनी सत्ता का, अधिकारों का या विश्वास का दुरुपयोग तो नही कर रहा है। यदि वह ऐसा कर रहा हो तो इस बात की सूचना परिषद को दे दी जाती है।

समितियों एवं अधिकारियों के बीच सम्बन्ध
[The relations between Committees and Officers]

ब्रिटिश स्थानीय सत्ताओं के अधिकारी परिषदों की समितियों के साथ

घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं। इस सम्बन्ध के देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्थानीय निकायों के निर्वाचित सदस्यों एवं नियुक्त अधिकारियों के बीच कैसा सम्बन्ध रहता है। अधिकारियों से यह आशा की जाती है कि वे समितियों के कार्यों में सहयोग प्रदान करेंगे। समितियों के साथ उनके सम्बन्ध परिषद की अपेक्षा अधिक घनिष्ठ होते हैं। इस बात पर जोर दिया जाता है कि अधिकारीगण समितियों के साथ अपने सम्बन्धों पर विशेष ध्यान दें। इन अधिकारियों को उन सभी विषयों पर अपना प्रतिवेदन समिति के सामने प्रस्तुत करना होता है जो कि इनके अधिकार क्षेत्र से बाहर होते हैं। परिषद के उत्तरदायित्व के क्षेत्र में अधिकांश विषय उस प्रतिवेदन से प्रकट होते हैं जो कि सम्बन्धित समिति की प्रत्येक बैठक में सम्बन्धित विभागीय अध्यक्ष द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। अपनी समिति को एक विशेष प्रतिवेदन देकर अधिकारी अपने द्वारा किये गये कार्य की सूचना समिति को देता है। उन मामलों को सामने लाता है जिन पर कि ध्यान देने की या निर्णय लेने की जरूरत होती है। कई विषयों पर वह अपनी सिफारिशें और सुझाव प्रस्तुत करता है। नीति सम्बन्धी विषयों एवं अन्य विषयों के बीच एक विभाजक रेखा होती है जो कि इतनी पतली और अस्पष्ट होती है कि स्पष्ट रूप से कभी कभी उसे देखना बड़ा मुश्किल पड़ जाता है। एक विभागीय अध्यक्ष द्वारा अपने सामयिक प्रतिवेदन में प्रायः अनेक विषय ऐसे रखे जाते हैं जिन पर कि वह समिति का निर्देश चाहता है।

छोटी सत्ताओं में अधिकारीगण कभी-कभी मुख-जबानी अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत कर देते हैं अथवा बैठक में अपने प्रतिवेदन को पढ़ कर सुना देते हैं। बड़े आकार वाली सत्ताओं में एक सामान्य व्यवहार के अनुसार प्रतिवेदन को लिखित रूप में पहले ही वितरित कर दिया जाता है। कार्यों की मात्रा अधिक एवं स्वरूप जटिल होने के कारण यह व्यवस्था अत्यन्त आवश्यक हो जाती है। आज की बदली हुई परिस्थितियों में यह जरूरी बन जाता है कि पारषद परिषद की बैठक में आने से पहले ही आवश्यक सामग्री का अध्ययन करलें। लिखित प्रतिवेदन का महत्व कई दृष्टियों से बढ़ जाता है। इसके द्वारा पारषदों को यह अवसर प्राप्त होता है कि वे अपना अधिक ध्यान वाद-विवाद एवं विचार-विमर्श में लगा सकें। लिखित प्रतिवेदन के होने से उन विषयों पर जल्दी एवं बिना विचार किये निर्णय लेने की सम्भावनाएं कम हो जाती हैं जिनको कि आखिरी क्षण में परिषद के सामने रखा गया है। इसके अतिरिक्त एक अच्छे प्रशासन की यह मुख्य विशेषता मानी जाती है कि उसमें उत्तरदायित्व प्रकट होना चाहिये। जिन महत्वपूर्ण विषयों पर अधिकारियों द्वारा सूचना दी जाय अथवा जिनके अनुसार समिति कार्य करे उनका लिखित रूप में अभिलेख होना चाहिए। इसके अतिरिक्त जब एक अधिकारी अपने प्रस्तावों एवं सम्बन्धित सूचना को कागज पर लिखित रूप दे देता है और उसे बैठक से पहले व्यक्तिगत छान-बीन के लिए रख देता है तथा बाद में उस पर सामूहिक रूप में विचार विमर्श किया जाता है तो इस सबमें उनमें ऐसी आदतें पड़ जाती हैं कि वह प्रस्तावों पर स्पष्ट, मूर्त एवं निश्चित रूप से विचार कर सकें। समिति की बैठक में पूर्व लिखित

प्रतिवेदन प्रसारित करने में पर्याप्त शक्ति, श्रम एवं धन का व्यय होता है किन्तु यह व्यय उपयोगी है।

परिषद की प्रक्रिया [Council Procedure]—परिषद का अधिकांश काम समिति द्वारा उसको प्रस्तुत प्रतिवेदनों एवं सिफारिशों पर आधारित रहता है। पहले परिषद की कोई निश्चित कार्य प्रक्रिया नहीं थी किन्तु बाद में जब कार्य भार अधिक बढ़ता चला गया तो यह आवश्यकता महसूस की जाने लगी कि इसकी प्रक्रिया को निर्धारित कर दिया जाय। परिषद की प्रक्रिया के सम्बन्ध में सर्वप्रथम महत्वपूर्ण प्रश्न यह होता है कि उसकी बैठकों के लिए प्रबन्ध किस प्रकार किया जाय। परिषद की बैठक का प्रबन्ध स्वाभाविक रूप से उस कार्य के प्रकार पर निर्भर करता है जो कि सचालित किया जाता है। यहां यह बात उल्लेखनीय है कि स्थानीय परिषद संसद नहीं होती, वह मुख्य रूप से एक कार्यपालिका निकाय होती है। यह अपने कर्त्तव्यों को अपने स्टाफ एवं विभिन्न समितियों के माध्यम से सम्पन्न करती है। इसके कार्यों की व्यवस्था का एक मुख्य सिद्धांत यह है कि प्रत्येक विषय को किसी न किसी समिति के पास भेजा जाय। इस प्रकार समिति के सम्मुख जो कुछ भी आता है वह सब कुछ समिति के प्रतिवेदनों के रूप में आता है। इसके कुछ अपवाद भी हैं अर्थात् आवश्यक महत्व के विषयों को समिति के प्रतिवेदन के बिना भी विचार के लिए लिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त कुछ कानूनी प्रक्रियाएं, उदाहरण के लिए एल्डरमैन का चुनाव आदि समिति के सम्मुख विचार के लिए नहीं भेजे जाते। वैसे अन्य सभी साधारण कार्यों में परिषद अपनी कार्यवाही को समितियों के प्रतिवेदनों पर विचार द्वारा प्रारम्भ करती है।

परिषद के कार्यों का अधिकतम भाग कार्यपालिका की प्रकृति का होता है किन्तु यह कुछ व्यवस्थापन का कार्य भी करती है। परिषद को उप-कानून (Bye Laws) बनाने का भी अधिकार है। ऐसी परिस्थितियों में जब परिषद के कार्य की प्रक्रिया का निर्धारण किया जाये तो इन सब बातों को ध्यान में रखना चाहिए ताकि वह सही रूप में अपने कार्य का सचालन कर सके। इस सम्बन्ध में प्रथम महत्वपूर्ण बात यह है कि सदन में सदस्यों के व्यवहार को नियमित करने के बारे में नियम बनाये जायें। यह माना जाता है कि परिषद के सदस्य जब बोलेंगे तो अपने स्थान पर खड़े हो जायेंगे। अनुभव द्वारा यह बताया जाता है कि जब कोई सदस्य अपने स्थान से हट कर बोलने के लिए खड़ा होता है तो वह कुछ अधिक बोलेगा। किन्तु यदि उसे एक विशेष स्थान से बोलने के लिए कहा जाय तो उसके भाषण का आकार और भी बढ़ जायेगा। ऐसी स्थिति में जब कि परिषद को अनेक कार्य सम्पन्न करने होते हैं तो यह उपयोगी माना जाता है कि प्रत्येक सदस्य कम से कम बोले व उतना ही बोले जितना कि जरूरी है। अतः यह उपयुक्त समझा गया कि व्यक्ति को उसी के स्थान से बोलने दिया जाय। इस व्यवस्था का एक लाभ यह भी है कि व्यक्ति बीच बीच में भी अपना दृष्टिकोण स्पष्ट कर सकता है जो कि पर्याप्त महत्वपूर्ण होता है।

समिति के प्रतिवेदन, समिति के सभापति द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं तथा वही उस प्रतिवेदन के सम्बन्ध में होने वाले प्रश्नों एवं वाद-विवाद का उत्तर देता है। इसलिए यह उपयुक्त समझा जाता है कि समिति का सभापति पूरे निकाय के सामने बैठे। समिति के सभापति को उसके कार्य में सहायता देने के लिए यह उपयोगी समझा जाता है कि विभाग का मुख्य अधिकारी उसके निकट रहे। सर्वश्रेष्ठ प्रबन्ध यह समझा जाता है कि परिषद के क्लर्क को परिषद के सभापति के पास बैठाया जाय और समिति के सभापति को परिषद के सभापति की दूसरी ओर बैठाया जाय ऐसी स्थिति में समिति का सभापति अपने अधिकारियों के सम्मुख बोलने में असाधारण का अनुभव करेगा। पार्षदों के लिए सीटें अर्द्ध-गोलाकार अथवा घोड़े की नाल के रूप में रखी जाती हैं किन्तु विशेष व्यक्तियों की सीटें किस स्थान पर लगाई जायें इस सम्बध में कोई निश्चित व्यवस्था नहीं है। एक मुख्य प्रश्न यह उठता है कि क्या उनको राजनैतिक दल के आधार पर बैठना चाहिए। जर्मनी की परिषदों में यही अभ्यास अपनाया जाता है। यहाँ प्रत्येक दल के समर्थक एक ओर बैठते हैं, वे अपने दल के पास ही बैठते हैं। इस व्यवस्था से जनता को यह शक नहीं रह जाता कि कौन सदस्य किस दल का समर्थक है। ग्रेट ब्रिटेन में दलीय आधार पर की जाने वाली यह व्यवस्था, उपयुक्त नहीं समझी जाती वहाँ यह कहा जाता है कि यदि किसी परिषद में दलीय राजनीति सशक्त है तो भी इतना सब कुछ करने की आवश्यकता नहीं दिखाई देती। इसके द्वारा दलीय विभाजनों पर अनावश्यक रूप से जोर दिया जाता है। एक तरीका यह है कि पार्षदों का किसी योजना के अनुसार बैठाया जाये। यह योजना ऐतिहासिक भी हो सकती है और भौगोलिक भी, चाहे आधार कुछ भी हो किन्तु बैठने की एक व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए ताकि सभी पार्षद वहाँ शुरू से लेकर अन्त तक बैठ सकें। सीटों की व्यवस्था जिस प्रकार भी की जाय उसकी सूचना जनता को प्रेस को तथा परिषद के सभापति को दे देनी चाहिए ताकि जब कोई सदस्य बोल रहा हो तो वे उसका नाम जानने में कठिनाई का अनुभव न करें। इससे उस क्लर्क को भी लाभ होता है जो कि उपस्थिति से सम्बन्धित या अन्य कार्य करता है जिसके लिए कि सदस्यों का नाम जानना जरूरी बन जाता है।

परिषद की बैठक का कार्यक्रम निर्धारित समय पर सभी सदस्यों में बाँट दिया जाना चाहिए तथा उसे चिपका भी दिया जाना चाहिए ताकि सामान्य जनता यह जान सके कि बैठक कहाँ और कब होने जा रही है। कार्यक्रम से सम्बन्धित परचा छोटा होता है और इसमें केवल बैठक की सूचना रहती है एवं किये जाने वाले कार्य के मुख्य शीर्षक रहते हैं। कार्यक्रम के साथ जो अन्य कागजात बाँटे जाते हैं उनमें अन्य प्रकार की सूचनायें होती हैं। छोटी सत्ताओं को छोड़ कर सभी परिषदें अपनी कार्यवाही का प्रारूप छपाकर बैठक के पूर्व ही वितरित कर देती हैं। यह कार्यवाही किस रूप में छापी जाएगी यह निश्चित कर लिया जाता है किन्तु फिर भी कई एक बातों पर भिन्नताएँ भी पाई जाती हैं। वाद-विवाद का अभिलेख रखना एक कठिन कार्य है। यदि उनको संक्षिप्त रूप में ही लिखा जाए तो यह

खतरे से खाली नहीं है, जब तक कि पूरे विषय को न पढ़ लिया जाए तब तक एक सदस्य को यह विश्वास ही नहीं होता कि ये सब बातें वही हैं जो कि उसके द्वारा कही गई थी। अभिलेख रखने का चाहे कोई भी तरीका अपनाया जाए किन्तु उसको संक्षिप्त रूप करने से सदैव ही बचना चाहिए। एक नियम यह है कि परिषद की बैठक में सामान्य रूप से किसी विषय पर उस समय तक वाद-विवाद नहीं किया जा सकता जब तक कि उस विषय से सम्बन्धित सूचना पहले से ही न दे दी जाये। अन्य विषयों को भी समय रहते क्लर्क के पास भेजा जा सकता है ताकि वह उनको बैठक के कार्य-क्रम में उन्हें स्थान दे सके।

एजेन्डा के साथ जो अन्य कागजात होंगे उनमें विभिन्न समितियों के प्रतिवेदन होंगे। ये प्रतिवेदन दो रूपों में पाये जा सकते हैं। एक सरल तरीका यह है कि समिति के कार्यों का पूरा वृत्तान्त (Minutes) ज्यों की त्यों परिषद के सामने रख दिया जाये। यह तरीका सरल इसलिए कहा जा सकता है क्योंकि समितियों के कार्यों का वृत्तान्त तो वैसे भी अभिलिखित किया जायगा। उनकी कुछ कापियाँ और बनाली जायें ताकि उनको समिति के बाहर भी भेजा जा सके। इस व्यवस्था का अपना लाभ है वह यह कि समितियों के कार्यों का वृत्तान्त बहुत विस्तृत हो सकता है तथा जो सदस्य उसकी बैठकों में उपस्थित नहीं थे उनको इसे समझने में समय लगेगा। ऐसी स्थिति में उपयुक्त यह समझा जाता है कि उन सभी सदस्यों को लिखित रूप में सारी बातें स्पष्ट कर दी जायें ताकि वे यह आसानी से जान जायें कि समिति क्या कार्य कर रही है। व्यवस्था को और अधिक सरल बनाने के लिए यह भी किया जा सकता है कि प्रत्येक समिति से उसके प्रतिवेदन का संक्षिप्त रूप माँगा जाये तथा उसको ही वितरित किया जाये। इस प्रकार का प्रतिवेदन तैयार करते समय विषयों के बीच अन्तर स्थापित किया जाता है। समिति द्वारा किये गये कार्य, परिषद को प्रतिवेदित कार्य एवं क्रियान्वित होने से पूर्व परिषद के प्रस्ताव की आवश्यकता रखने वाले कार्यों के बीच अन्तर किया जाता है। ये प्रतिवेदन कार्यवाही के वृत्तान्त की तुलना में अत्यन्त छोटे होते हैं क्योंकि इनमें उन बहुत सी बातों को निकाल दिया जाता है जो कि प्रचलित होती हैं। इस प्रकार का विशेष प्रतिवेदन अच्छा समझा जाता है क्योंकि इसे परिषद अच्छी प्रकार से समझ सकती है और परिषद के सामने भी अनावश्यक चीजें नहीं आ पाती अतः उसका समय खराब होने से बच जाता है किन्तु विशेष प्रतिवेदन तैयार करने का कार्य विशेष एवं योग्य स्टाफ द्वारा किया जाना चाहिए इसे कनिष्ठ स्टाफ को सौंपना उपयोगी नहीं रहेगा। मिनिट्स (Minutes) तथा प्रतिवेदन (Reports) में से चाहे कोई सा भी तरीका अपनाया जाये, इसको परिषद के कुछ लक्ष्यों को पूरा करना चाहिए। प्रथम, मिनिट्स या प्रतिवेदन में समितियों की क्रियाओं अथवा सिफारिशों को इस रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए कि जो कुछ भी कहा गया है या परामर्श दिया गया है उसे परिषद भली प्रकार से समझ सके। दूसरे, उनमें सम्बन्धित अधिकारियों के लिए एवं

विभागों के लिए जो निर्देश दिये जाये उनके शब्दों को सावधानी के साथ रखा जाना चाहिए। तीसरे, कानूनी सीमाओं एवं प्रशासकीय वाछनीयता को ध्यान मे रख कर उसका रूप ऐसा बनाया जाना चाहिए कि सामान्य जनता के सामने जब उसको प्रेस द्वारा प्रतिवेदित किया जाये तो वह इन्हे समझ सके। इन तीनो ही बातो का पूरा-पूरा ध्यान रखना सरल नही है।

स्थानीय परिषदो की प्रक्रिया समिति की अपेक्षा अधिक औपचारिक होती है। इस प्रक्रिया के कुछ विषयो को कानून द्वारा विनियमित किया जाता है तथा अन्य को स्थानीय परिषद द्वारा ही बनाये गये स्थायी आदेशो द्वारा। कानून के अनुसार प्रत्येक वर्ष परिषद की कम से कम चार बैठकें होनी चाहिए। सभापति या मेयर को यह शक्ति सौपी गई है कि वह आवश्यकता समझने पर इसकी अतिरिक्त बैठकें भी बुला सकता है। परिषद के सदस्यो की एक निश्चित सख्या की पार्थना पर भी इसकी अतिरिक्त बैठकें बुलाई जा सकती हैं। वास्तविक व्यवहार मे ऐसी कोई भी स्थानीय सत्ता नही होती जो कि वर्ष भर मे केवल चार बैठकें कर के ही अपने कार्य का प्रबन्ध कर सके। अनेक काउन्टी परिषदें वार्षिक चार बैठको के अतिरिक्त बजट के लिए बैठक बुलाती है तथा और भी बैठकें करती हैं। अनेक वारो परिषदें कभी भी बैठकें बुलाना आवश्यक मानती हैं। वे प्राय: मासिक बैठक बुलाती हैं।

स्थानीय सत्ताओ को अपनी बैठको मे सामान्य जनता को बुलाने की जरूरत नही होती किन्तु वे प्राय: ऐसा करती हैं। यह व्यवस्था की गई है कि 'प्रेस' परिषद की बैठको मे, उसकी समितियो की बैठको मे तथा उन निकायो की बैठको में जिनको कि शक्ति हस्तातरित की गई है, उपस्थित हो सकती है। यद्यपि परिषद एक प्रस्ताव पास करके अपनी बैठको से प्रेस को यह कह कर बाहर रख सकती है कि ऐसा करना जनहित मे है, किन्तु यह सम्भव नही है कि वह अपनी सभी बैठको मे से प्रेस को अलग रखने का प्रस्ताव पास करदे। यद्यपि यह सामान्य जनता को बाहर रखने का नियम बना सकती है। सम्भवत: यह देखा जाता है कि परिषदें यह चाहती हैं कि प्रेस एव जनता दोनो ही उसकी बैठको मे भाग लें। जब कभी परिषद यह चाहती है कि व्यक्तिगत रूप से बैठक करे तो वह समिति रूप में अपनी बैठक कर सकती है। ऐसे कई अवसर आते हैं जब कि पूरी परिषद ही समिति के रूप मे बैठ जाती है। उदाहरण के लिए जब नीति से सम्बन्धित कोई मामला इतना बड़ा हो कि उसे पूर्ण एव मुक्त परिषद की सिफारिश के लिए अधिकारी रूप से निर्धारित करने से पूर्व उस पर विस्तार के साथ एव गुप्त बैठक मे विचार किया जाना जरूरी हो। शहरी एवं देहाती जिला परिषदो का जहा तक सम्बन्ध है उसके सम्बन्ध मे प्रावधान है कि मन्त्री द्वारा नियुक्त एक निरीक्षक उनकी परिषदो की बैठकों में उपस्थित होगा। वह प्रक्रिया मे भाग ले सकता है किन्तु उसे मतदान का अधिकार नही होगा। इस शक्ति का बहुत कम प्रयोग किया गया है।

परिषद की बैठको की अध्यक्षता सभापति तथा उसकी अनुपस्थिति मे उपसभापति द्वारा की जाती है। उपस्थित होने वाले लोगो का नाम का अभिलेख रखा जाता है। परिषद के सभी निर्णय प्राय: उपस्थित एवं मतदान

करने वालों के बहुमत से लिए जाते हैं किन्तु कानून द्वारा किसी विषय के बारे में विशेष प्रावधान कर दिया जाये तो बात दूसरी है। अध्यक्षता करने वाला व्यक्ति दूसरा वोट [Casting Vote] भी रखता है। मिनिट्स रखना जरूरी होता है। उन पर उसी बैठक में या अगली बैठक में हस्ताक्षर किये जाने चाहिए। मिनिट्स को कार्यवाही का वास्तविक प्रमाण माना जा सकता है। बिना किसी अन्य गवाही के ही इनको प्रमाण माना जा सकता है।

इसके अतिरिक्त अनेक ऐसे प्रावधान हैं जो कि स्थानीय सत्ताओं के कार्य को प्रभावित करते हैं। इनको कुछ समितियां रखनी होती हैं किन्तु सामान्य व्यवहार के आधार पर स्थानीय सत्तायें स्वयं ही यह तय करती हैं कि वे किस प्रकार कार्य करेंगी। इसके लिए वे स्थायी आदेश जारी करती हैं। यदि सामान्य कानून द्वारा कोई शक्ति नहीं दी गई है तो भी स्थानीय सत्ता उस विषय में स्थायी आदेश जारी करने का अधिकार रखती है; क्योंकि जब इसे कुछ कार्य करने या शक्तियों का प्रयोग करने के लिए उत्तरदायी ठहरा दिया जाता है तो यह स्वयं ही इस बात का निर्णय करती है कि वह कार्य किस प्रकार सम्पन्न किया जायेगा। कानून द्वारा कुछ विषय निश्चित कर दिये गये हैं, इन पर स्थायी आदेश जारी करना अनिवार्य समझा जाता है। स्थायी आदेशों का सम्बन्ध परिषद के कार्य संचालन से होता है किन्तु फिर भी यह परिषद की बैठकों की प्रक्रिया से अधिक विषयों पर विचार करते हैं। ये समितियों की बनावट उनके पारस्परिक सम्बन्ध तथा परिषद एवं समितियों के सम्बन्ध तथा महत्वपूर्ण स्टाफ से सम्बन्धित अनेक विषयों पर भी विचार करते हैं।

जहां कहीं समितियों के व्यवहार में तथा कार्य के सगठन के सम्बन्ध में अनेक विभिन्नतायें होती हैं वहां पर बैठकों के व्यवहार के नियमों को उस समय तक के लिए प्रमाणीकृत कर दिया जाता है जब तक कि सामान्य रूप से स्वीकृत आचरण की संहिता न बन जाये। जब कभी एक परिषद स्थायी आदेश [Standing Orders] बनाना चाहती है तो एक सामान्य व्यवहार यह है कि समान प्रकार एवं आकार की अन्य परिषदों के स्थायी आदेशों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। साथ ही मन्त्रालय द्वारा निश्चित किये गये स्थायी आदेशों के नमूनों को अपनाया जाता है। इन परम्पराओं को निर्देशक बनाकर जब व्यवहार किया जाता है तो स्थायी आदेश का एक सन्तोषजनक प्रारूप तैयार करना सरल बन जाता है जिसके आधार पर वांछित व्यवहार को तय किया जा सके। इस व्यवस्था में स्थानीय विशेषताओं को भी पर्याप्त महत्व देने के लिए स्थान प्राप्त हो जाता है।

कभी-कभी यह प्रश्न किया जाता है कि स्थानीय परिषदों में प्रथम से नियम क्यों बनाये जायें, उन नियमों के आधार पर ही कार्य क्यों न किया जाये जो कि ससद में बहस के समय अपनाये जाते हैं। संसद की प्रक्रिया के नियम उनके विशेष कार्य के आधार पर तय किये जाते हैं। कार्यपालिका के क्षेत्र में ससद को इसके अतिरिक्त कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता कि वह कार्यकारिणी पर नियन्त्रण रखती है तथा मन्त्रियों की आलोचना कर सकती है। व्यवस्थापन के क्षेत्र में इसको विधेयक के संक्षिप्त शब्दों पर ही

सहमत होना पड़ता है। जो व्यक्ति किसी समिति की कार्यवाही के लिए प्रारूप तैयार करता है उसे इस कार्य की कठिनाई का पूरा भान रहता है। संसद को प्रारूप बनाने की समस्या का सामना एक ऐसी सभा में करना होता है जिसकी संख्या छः सौ में भी अधिक होती है। यही कारण है कि आचरण संहिता के स्पष्ट नियम बनाने होते हैं तथा उनका पालन करने की ओर पर्याप्त ध्यान दिया जाता है। संसद के विशेष कार्य के लिए ये नियम संतोष जनक एवं सही माने जासकते हैं। स्थानीय सत्ताओं की आवश्यकतायें संसद से निश्चय ही भिन्न होती है। वे अपने कार्य का संचालन उन सरल आचरण के नियमों से भली प्रकार कर सकती है जिनको कि उन्हीं के द्वारा विकसित किया गया है। स्थायी आदेशों को छपे रूप में वितरित किया जाता है, इससे परिषद के सदस्यों एवं अन्य सम्बन्धित लोगों को पर्याप्त सुविधा रहती है। यह सुझाव दिया जाता है कि इन आदेशों को एक डायरी के रूप में प्रकाशित करना चाहिए जिसमें कि समितियों की सूची हो, उनका कार्य-क्षेत्र हो, सदस्यता हो तथा परिषद एवं समितियों की बैठकों की तारीखें हों। इस प्रकार सभी आवश्यक सूचना लोगों को हृदय में ही मिल सकेगी।

स्थायी आदेशों की व्यवस्था चाहे कितनी ही स्पष्ट क्यों न हो उसे अपरिवर्तनीय नहीं माना जाना चाहिए। प्रत्येक वर्ष स्थानीय सरकार की किसी न किसी सेवा के क्षेत्र में परिवर्तन होते ही रहते हैं और इन परिवतनों का प्रशासकीय यन्त्र पर प्रभाव पड़ना भी अनिवार्य है। समिति के कार्य का संगठन एवं विभागीय बनावट भी इससे पर्याप्त प्रभावित होती है। प्रशासकीय संगठन की समय-समय पुनरीक्षा करते रहना उपयोगी होता है ताकि उसे बदलती हुई परिस्थितियों के अनुकूल बनाया जा सके। स्थायी आदेशों के माध्यम से ऐसा किया जाता है। इन्हे वार्षिक रूप से बदल दिया जाता है। कार्यकुशल स्थानीय सत्तायें इसी व्यवहार को अपनाती हैं।

परिषद की कार्यवाही में सभापति का मुख्य स्थान होता है। इस दृष्टि से मेयर एवं सभापति की स्थिति में किसी प्रकार का अन्तर नहीं होता वे दोनों ही कुछ कुछ एक जैसे कार्य ही सम्पन्न करते हैं। परिषद का सभापतित्व मेयर, सभापति, उपसभापति आदि द्वारा किया जाता है। सभापति का कार्य कुछ एक दृष्टियों से तो समिति के सभापति से मिलता है। जब वह बैठकों का कार्य-क्रम तैयार करता है तो ठीक उसी प्रकार व्यवहार करता है किन्तु परिषद के सामने जो विषय विचारार्थ आते हैं उनके विषय में वह समिति के सभापति से भिन्न व्यवहार करता है। उसका कार्य बैठक की केवल अध्यक्षता करना मात्र होता है वह किसी विशेष नीति को अपना कर नहीं चलता। सभापति का यह कर्त्तव्य है कि वह बैठक में सभापतित्व करने से पूर्व ही बैठक के कार्य-क्रम एवं उसके साथ लगे कागजों को अच्छी प्रकार से पढ़ ले परिषद के क्लर्क से बात चीत करने के बाद वह उन पर निशान लगा लेगा तथा आवश्यकता के अनुसार समय पर कार्यवाही करने की सिफारिश करेगा। विशेष रूप से वह विषयों में इस आधार पर भेद कर लेना है कि किसको परिषद में विचारार्थ औपचारिक रूप से प्रस्तुत किया जाये और किसको प्रस्तुत नहीं किया जाये। जब एक या दो समितियों के प्रतिवेदन

प्रस्तुत किये जाने के बाद कुछ विषय विचारार्थ सामने आते हैं तो परिषद द्वारा एक विशेष तरीका अपनाया जाता है। उदाहरण के लिए एक साधारण से केस को लिया जा सकता है जहाँ कि व्यय समिति यह सिफारिश करती है कि अतिरिक्त स्टाफ की नियुक्ति की जाये, वित्त समिति अनुमानों के बारे में सिफारिश करती हुई अतिरिक्त वेतन की सलाह देती है जबकि स्टाफ समिति की सिफारिश स्टाफ की संख्या एवं ग्रेड्स से सम्बन्धित होगी। ऐसी परिस्थित में प्रथम सिफारिश को देखकर कोई निर्णय नहीं लिया जाना चाहिए जब तक अन्य सिफारिशों को भी अच्छी प्रकार से न देख लिया जाये क्योंकि यह हो सकता है कि प्रथम प्रतिवेदन पर ही जो निर्णय लिया जाये उससे बाद वाली भी समस्यायें हल हो जाये। अतः यह प्रथा डाली गई है कि परिषद किसी निर्णय पर आये इससे पूर्व वह सभी समितियों द्वारा व्यक्त विचारों का अध्ययन करती है। अधिकांश परिषदों में यह व्यवहार अपनाया जाता है कि यहाँ यदि प्रक्रिया के मामले में कोई विवादपूर्ण प्रश्न उठ खड़ा हो तो सभापति ऐसा प्रबन्ध करता है कि क्लर्क उन कठिनाइयों को परिषद में स्पष्ट कर दे तथा यह बता दे कि उनको किस प्रकार दूर किया जा सकता है प्रायः अन्य अधिकारियों से इस सम्बन्ध में विचार-विमर्श नहीं किया जाता। फिर भी सभापति को यह अधिकार है कि यदि वह किसी विशेष समस्या पर विशेष अधिकारी से परामर्श लेना चाहे तो वह ऐसा कर सकता है।

समिति का सभापति समिति के विशेष कार्य में रुचि लेता है तथा उसके बारे में स्वयं दृष्टिकोण भी रखता है। उसे इस अर्थ में पक्षपातपूर्ण कहा जा सकता है कि वह समिति को एक सुझाव की अपेक्षा दूसरे को स्वीकार करने की सिफारिश कर सकता है। किन्तु वह एक दृष्टि से पक्षपात रहित भी होता है। क्योंकि वह समिति के प्रत्येक सदस्य को समस्या के बारे में उसके विचार प्रस्तुत करने का अवसर देता है चाहे वह स्वयं उनसे सहमत हो अथवा न हो। इस प्रकार समिति के सामने सभी प्रकार के दृष्टिकोण रख दिये जाते हैं। इतना करने के बाद समिति का सभापति कोई भी पक्ष ग्रहण करके उसके अनुसार दृष्टिकोण अपना सकता है। इसके विपरीत परिषद के सभापति को कोई पक्ष नहीं लेना चाहिए। उसका मुख्य उत्तरदायित्व तो परिषद के कार्य का उचित रूप से संचालन करना है। वह यह देखता है कि परिषद की प्रक्रिया में सभी सम्बन्धित स्थायी आदेशों एवं वाद-विवाद के सामान्य नियमों का पालन किया जाये। इसके लिए वह विवादपूर्ण प्रश्नों को इतने सरल रूप में प्रस्तुत करता है जितना वे कर सके। यदि वह किसी विषय पर, बोलना चाहे तो निश्चय ही बोल सकता है किन्तु वह ऐसे अवसरों को यथा सम्भव दूर ही रखता है। ऐसा वह विवाद से बचने के लिए करता है। जब तक एक परिषद का वाद-विवाद पर्याप्त गर्मा-गर्म रूप धारण कर लेता है तो सभापति ऐसी स्थिति में उस विवाद को नहीं सुलझा पाएगा जब कि वह स्वयं भी एक पक्ष की ओर हो। सभापति का मुख्य कार्य निष्पक्षतापूर्वक अध्यक्षता करना होने के कारण यह उचित समझा जाता है कि उसकी नियुक्ति करते समय राजनैतिक दलों को महत्व नहीं दिया जाए। सभापति के पद पर कार्य करने वाले व्यक्ति सार्वजनिक कार्य का पर्याप्त अनुभव

रखने वाला होना चाहिए। उसमें मानसिक एवं बौद्धिक विशेषताएं उच्च-स्तर की होनी चाहिए। उसका दृष्टिकोण बहुमत से मिलता है या नहीं इससे कोई मतलब नहीं होता।

स्थानीय प्रशासन के अपने कुछ गुण हैं जो कि इस तथ्य पर आधारित हैं कि स्थानीय प्रशासन स्थानीय अभिकरण द्वारा सम्पन्न किया जाता है। इसमें स्थानीय निकाय नागरिकों एवं उपभोक्ताओं से मिल कर बनता है। इसके अतिरिक्त यह स्थानीय नियन्त्रण एवं पर्यवेक्षण के आधीन कार्य करता है। स्थानीय प्रशासन में ये सारे गुण बहुत कुछ समिति व्यवस्था के कारण उत्पन्न होते हैं। जब स्थानीय निकायों में निर्वाचित प्रतिनिधियों तथा नियुक्त अधिकारियों के बीच पारस्परिक सहयोग स्थापित कर दिया जाता है तो जनता की समस्यायें अधिक आसानी से सुलझने लगती हैं। प्रशासन में विशेषज्ञों का परामर्श एवं गैर विशेषज्ञों का निर्देशन मिल कर पर्याप्त उपयोगी सिद्ध होता है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत नगरपालिका यन्त्र में तथा उसके द्वारा सेवित जनता उपभोक्ताओं के बीच पर्याप्त महत्वपूर्ण उपयोगी सम्पर्क स्थापित हो जाते हैं। जनता के साथ प्रशासन की निकटता स्थापित करने के लिए एक स्थायी समिति नियुक्ति की जाती है जो कई प्रकार से नागरिकों की सेवा करती है। यह उनकी शिकायतों, आलोचनाओं और सुझावों को प्राप्त करती है। सरकारी निगमों एवं अन्य स्थानीय सत्ताओं द्वारा जनता को जो सेवाएं प्रदान की जाती हैं उन पर संसद का प्रत्यक्ष नियन्त्रण एवं पर्यवेक्षण नहीं के बराबर रहता है। इसके अपने लाभ भी हैं और हानियां भी। पर्याप्त समन्वय के अभाव में दोहराव एवं अपव्यय की सम्भावनाएं बढ़ जाती हैं किन्तु इससे स्थानीय निकायों को जो स्वायत्तता प्राप्त होती है उसका अपना महत्व है।

५

स्थानीय सरकार के सेवीवर्ग का प्रबन्ध

[PERSONNEL MANAGEMENT OF LOCAL GOVERNMENT]

स्थानीय सरकार में विभिन्न उत्तरदायित्वों का सचालन करने वाले दो पहियों में से जनता का प्रतिनिधि एक पहिया होता है। यह यद्यपि गाड़ी का महत्वपूर्ण अंग है किन्तु फिर भी पर्याप्त नहीं है और केवल इसी के सहारे गाड़ी का चलना या गति ग्रहण करना असम्भव है। स्थानीय सरकार की गाड़ी का दूसरा पहिया नियुक्त अधिकारी होते हैं जो कि यद्यपि निर्वाचित प्रतिनिधियों के आधीन रह कर उनके निर्देशन में कार्य करते हैं किन्तु वास्तविक व्यवहार में उनका योगदान अधिक महत्वपूर्ण होता है। ये अधिकारी किस प्रकार नियुक्त किए जाते हैं? किस प्रकार इन्हें प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है? इनके वेतन तथा सेवा की अन्य शर्तें क्या हैं और आवश्यकता के समय इनके विरुद्ध क्या अनुशासनात्मक कार्यवाही की जाती है? आदि प्रश्न विशेष महत्व के होते हैं जिन पर विचार किए बिना स्थानीय सरकार का अध्ययन पूर्णता से बहुत दूर रहता है। इस सम्बन्ध में मि॰ जैक्सन का यह कहना पूर्णतः सत्य है कि स्थानीय सरकार की सफलता बहुत कुछ उन विभिन्न गुणों के अच्छे समायोजन का परिणाम है जो कि निर्वाचित व्यक्तियों एवं वैतनिक अधिकारियों द्वारा प्रदान किया जाता है।† इस दृष्टि से यह अत्यन्त महत्वपूर्ण समझा जाता है कि स्थानीय सत्ता का स्टाफ अत्यन्त योग्य हो तथा उसकी भर्ती, प्रशिक्षण एवं सेवा की शर्तें औचित्य पूर्ण हों। कानून के अनुसार ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सत्तायें भर्ती करने के पूरे अधिकार रखती हैं। वे कभी किसी को हटा सकती हैं। उनको इस सम्बन्ध में सर्वोच्च सत्ता प्राप्त है। स्थानीय सरकार के अधिकारियों

---

†" ………The success of Local Government has been attributed very largely to a good combination of the different qualities that are contributed by elected people and paid officials."

—*R. M. Jackson, Op. Cit.*, P. 102.

पर प्रतिरोध एवं नियन्त्रण की जो व्यवस्था लागू की जाती है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह कर्मचारी बहुत कुछ अपने नियुक्तिकर्ता की दया पर निर्भर रहते है।

स्थानीय सरकार की सेवा मे उनके पद ऐसे है जो कि पिछली कई शताब्दियों से चले आ रहे हैं। कई एक पुराने बारोज का यह रिकार्ड है कि उनमे मध्य युग से चला आ रहा काउन्टी क्लर्क का पद अब भी ज्यों का त्यों बना आ रहा है। वैसे कई व्यावहारिक दृष्टियों से देखा जाए तो स्थानीय सरकार की सेवाए उस समय उत्पन्न हुयी जबकि आधुनिक स्थानीय सरकार प्रारम्भ हुई अर्थात् करीब एक शताब्दी पूर्व। उन्नीसवी शताब्दी के प्रारम्भ तक स्थानीय सरकार की सेवाओ का प्रशासन सामान्य रूप से वैतनिक अधिकारियो द्वारा नही किया जाता था। स्थानीय सरकार के कार्यों मे सबसे महत्वपूर्ण पद शान्ति के न्यायाधीश का होता था जो कि एक अवैतनिक पदाधिकारी था। इसी प्रकार से विभिन्न पेरिशों के अधिकारी भी बिना वेतन पाए ही सेवाए प्रदान करते थे। ज्यों ज्यों सेवाओ का विस्तार हुआ तथा उनका क्षेत्र एवं संख्या बढी त्यों-त्यों वैतनिक अधिकारियो की आवश्यकताए महसूस होने लगी। उन्नीसवी शताब्दी के मध्य तक अवैतनिक अधिकारियो के स्थान पर पूरे समय कार्य करने वाले वैतनिक कर्मचारियो की नियुक्ति की जाने लगी। जब काउन्टी परिषदें और जिला परिषदें अस्तित्व मे आई तो स्थानीय सत्ताओ द्वारा कई एक अधिकारी नियुक्त किए गए। ये व्यक्ति अन्य सत्ताओ के कर्मचारियो के साथ बहुत कम सम्बन्ध रखते थे। सन् १९०५ तक उनका कोई व्यवसायिक संघ नहीं कहा जा सकता था।

बीसवी शताब्दी के प्रारम्भ मे बडे आकार की स्थानीय सत्ताए इस बात मे रुचि लेने लगी कि उनके मुख्य अधिकारीगण व्यवसायिक योग्यताओ से सम्पन्न हो। इस समय भी जो अधिकारी स्थानीय सत्ताओ मे कार्य कर रहे थे वे अधिक विशेषज्ञ नही थे केवल कुछ ही प्रगतिशील सत्ताए ऐसी थी जो कि नियुक्ति के समय प्रतियोगी परीक्षाए लेती थी किन्तु फिर भी व्यवहार मे नियुक्त या पारिवारिक, राजनैतिक एव धार्मिक प्रभाव के परिणाम-स्वरूप होती थी। दिए जाने वाले वेतन का कोई राष्ट्रीय स्तर नही था। सेवा की शर्तें अत्यन्त नीची थी, प्रत्येक स्थानीय सत्ता एक पृथक इकाई थी जिसमे कि भर्ती एव पदोन्नति के कोई सामान्य सिद्धान्त नही थे। इस प्रकार अंग्रेजी स्थानीय सत्ताओ के अधिकारी कोई एक ऐसा निकाय नही बनाते जिसे की एक मालिक द्वारा नियुक्त नागरिक सेवा कहा जा सके।

स्थानीय सरकार की सेवाओ की अव्यवस्थित स्थिति मे सुधार करने के प्रयासो का प्रारम्भ स्वय स्थानीय सत्ताओ के स्टाफ द्वारा ही किया गया। अधिकारियो की विभिन्न श्रेणियों ने अपने विशेष वतन स्तर को सुधारो के लिए व्यावसायिक निकायों की स्थापना पर जोर दिया जो कि परीक्षाओ द्वारा योग्यताओ का पता लगा सके, इस प्रकार वे अप्रशिक्षित अधिकारियो के प्रवेश पर रोक लगाने की आशा करते थे। प्रारम्भ मे सेवाओ के सुधार की ओर किए गए उन प्रयासों की

ग्रोर बहुमत का ध्यान नहीं दिया गया क्योंकि सेवा की शर्तों को सुधारना तथा एकीकृत स्थानीय सरकारी सेवा की स्थापना करना इन व्यावसायिक निकायों की शक्ति के बाहर की बात थी। वास्तविक व्यापारिक संघ ग्रान्दोलन (Trade union Movement) सन् १६०५ से प्रारम्भ होता है जब कि स्थानीय सरकार अधिकारियों की राष्ट्रीय संस्था (National Association of local govt officers=NALGO) की रचना हुई। यह निकाय सभी व्यवसायों एवं स्तरों के स्थानीय अधिकारियों को अपना सदस्य बना लेती थी।

नाल्गो का एक मुख्य उद्देश्य स्थानीय सत्ता के स्टाफ के लिए सेवा की राष्ट्रीय दशाएं प्रदान करना था। एक प्रकार से स्थानीय सरकार सेवाओं को नाल्गो की रचना ही कहा जा सकता है क्योंकि यह सेवा उस समय तक अस्तित्व में नहीं आ सकती थी जब तक कि अधिकारियों के विभिन्न स्तरों एवं समूहों को एक बड़े संगठन में नहीं मिला दिया जाता। नाल्गो ने स्वयं अपने सदस्यों के प्रशिक्षण, शिक्षा एवं योग्यताओं को अपने आन्दोलन का एक भाग माना और इतने उत्साह के साथ इन उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जितना कि स्थानीय सत्ताओं ने भी नहीं दिखाया। नाल्गो का एक तात्कालिक कार्य इनको भर्ती करना था जो कि असंगठित थे तथा स्थानीय सत्ताओं से अपनी संस्था की मान्यता प्राप्त करना था ताकि यह एक समझौता कराने वाले निकाय के रूप में विकसित हो जाए। सन् १६१८ तक इस संस्था की सदस्यता बहुत हो गई। सन् १६४८ तक इस संस्था की सदस्यता स्थानीय सत्ताओं के बौद्धिक अधिकारियों तक ही सीमित थी किन्तु जब विद्युत, गैस एवं अस्पतालों से सम्बन्धित सेवाएं स्थानीय सत्ता से लेकर अन्य निकायों को सौंप दी गई तो भी इन सेवाओं का स्टाफ नाल्गो का सदस्य बना रहा और इस प्रकार से नाल्गो के सदस्यों में वे अधिकारी भी आ गए जो कि स्थानीय सरकार के बाहर कार्य करते थे। ऐसी स्थिति में नाल्गो का नाम बदल कर सन् १६५२ में राष्ट्रीय एवं स्थानीय सरकार अधिकारियों की संस्था (National and Local Govt. Officers' Association) रख दिया गया।

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान सरकार द्वारा कर्मचारियों एवं नियुक्ति कर्त्ताओं के बीच सम्बन्ध स्थापित करने के लिए एक समिति नियुक्त की गई जो कि अपने सभापति के नाम से ह्विटले समिति (Whitley Committee) कहलाई। उस समिति ने यह सिफारिश की कि कर्मचारियों एवं भर्तीकर्त्ताओं के बीच एक स्थायी समझौताकर्त्ता यन्त्र स्थापित कर दिया जाए ताकि उनके बीच मुसीबत खड़ी होने से पूर्व ही समायोजन पूर्ण सम्बन्ध स्थापित किया जा सके। स्थानीय सरकार पर भी यह सिद्धान्त लागू किया गया। सन् १६१६ में नाल्गो और स्थानीय सत्ता संघों के बीच विचार-विनिमय के बाद एक राष्ट्रीय संयुक्त परिषद बनाई गई। यह प्रयास असफल रहा किन्तु राष्ट्रीय संयुक्त परिषद द्वारा जो प्रान्तीय परिषदें स्थापित की गई वे पर्याप्त सफलता-पूर्वक कार्य करती रहीं।

सन् १६३० मे स्थानीय सरकार पर शाही आयोग की सिफारिशों के आधार पर सरकार ने एक समिति स्थापित की और उसे स्थानीय सरकार के अधिकारियों की योग्यता, भर्ती, प्रशिक्षण और पदोन्नति के बारे में प्रतिवेदन देने को कहा गया। इस समिति के सभापति सर हेनरी हेडो (Sir Henry Hadow) थे। इसने सन् १६३४ मे अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इस समिति ने बताया कि स्थानीय सरकार के अधिकारियों की योग्यता में इस शताब्दी के प्रारम्भ से लेकर अब तक बहुत सुधार हुआ है। स्थानीय सरकार की सेवाओं ने एक उच्चस्तर प्राप्त कर लिया है किन्तु फिर भी स्थिति में सुधार की आवश्यकता है। इस समिति ने भर्ती, प्रशिक्षण और पदोन्नति के बारे में अनेक सुझाव रखे। सन् १६३५ के बाद अधिकाधिक प्रान्तीय परिषदें स्थापित की जाने लगी। उन्होंने अपने आपको भर्ती के मापदण्ड, वेतन के प्रान्तीय स्तर तथा ऐसे अन्य विषयों से सम्बन्धित रखा। सन् १६३६ मे राष्ट्रीय संयुक्त परिषद को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया गया। उसका जन्म तो हो गया, वह सन्तोषजनक रूप से कार्य नहीं कर सकी क्योंकि परिषद मे जिन स्थानीय सत्ताओं का प्रतिनिधित्व होता था वे इस बात पर सहमत नहीं हो सकी कि बडी एव छोटी स्थानीय सत्ताओं को इसमे कितना प्रतिनिधित्व दिया जाए। प्रतिनिधित्व का नया आधार स्थापित किया गया और सन् १६४५ मे परिषद की पुनर्रचना की गई।

वर्तमान मे ब्रिटिश कानून के अनुसार स्टाफ के सभी सदस्य स्थानीय सत्ता के सेवक हैं किन्तु सामान्य लोगो द्वारा वस्तु स्थिति को इसके रूप मे नहीं समझा जाता और इस प्रकार कानूनी स्थिति एव वास्तविक व्यवहार मे पर्याप्त अन्तर है। यहां सेवक का अर्थ उसका साधारण शाब्दिक अर्थ नहीं है वरन उसका एक तकनीकी एव कानूनी अर्थ है वह यह है कि ऐसे व्यक्ति ने नियुक्तिकर्ता की कानूनी आज्ञाओं का पालन करना होगा। इस प्रकार इसमें सभी नियुक्त व्यक्ति आ जाते हैं चाहे उनकी स्थिति ऊंची हो अथवा नीची हो। ब्रिटिश स्थानीय सरकार की सेवाओं की कई एक विशेषताएं हैं जैसे प्रत्येक पद पर योग्यता के आधार पर चयन किया जाता है। योग्यता की जाच तथा वेतन शृंखला तथा निर्धारण एक ही सत्ता द्वारा किया जाता है। वह है ट्रेजरी जो कि नागरिक सेवा आयुक्तो की सलाह से अपना कार्य करती है। उम्मीदवार लिखित परीक्षा द्वारा अथवा मौखिक जाच द्वारा एक दूसरे से प्रतियोगिता करते हैं। यह प्रतियोगिता सभी लोगों के लिए खुली रहती है चाहे वे देश के किसी भी भाग से आएं। जिन वर्गों की प्रकृति सामान्य होती है उनकी योग्यताएं निर्धारित कर दी जाती हैं चाहे उनका विभाग एव सेवा की प्रकृति कुछ भी हो। योग्यता की परीक्षा नागरिक सेवा आयोग द्वारा की जाती है। यह अभिकरण किसी भी सरकारी विभाग के अधीन नहीं होता। यह पूरी तरह से स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करता है। व्हिटले परिषदों के माध्यम से अनुशासनात्मक मामलों मे न्याय एवं अपील की गारन्टी दी गई।

जिस समय स्थानीय सरकार के स्टाफ पर विचार किया जाए उस समय कर्मचारियों की विभिन्न श्रेणियों के बीच अन्तर स्थापित कर लेना

उपयोगी रहेगा। कर्मचारियों की प्रथम श्रेणी मे अधिकारी स्टाफ आता है अर्थात् विभिन्न विभागो के अध्यक्ष तथा उनके आधीन कार्य करने वाले अन्य लोग जैसे समिति की बैठको एव परिषद की बैठको के लिए कागज तैयार करना, लेखे रखना, धन प्राप्त करना और भुगतान करना तथा परिषद और समितियो के निर्णय को क्रियान्वित करना आदि कार्यो से सम्बन्धित लोग होते है। दूसरे समूह मे विभिन्न श्रेणियो वाले अनेक कर्मचारी आते हैं, जैसे अध्यापक, नगरपालिका उद्यमो के प्रबन्धक एव कार्यपालिका पदो पर कार्य करने वाले अन्य लोग। तीसरे समूह मे वे कर्मचारी आते हैं जो कि विभिन्न सेवाओ मे शारीरिक श्रम करते हैं, जैसे सडक बनाना जल वितरण तथा परिषद द्वारा किए जाने वाले ऐसे ही अन्य कार्य। द्वितीय एव तृतीय समूहो मे आने वाले कर्मचारियो की योग्यता, नियुक्ति एव कार्यों की सामान्य शर्तों की दृष्टि से स्थिति वैसी ही होती है जैसी कि व्यक्तिगत रोजगार मे होती है। स्थानीय सत्ताओ के अधिकारियो से हमारा तात्पर्य प्रथम समूह मे आने वाले अधिकारियो से है। इन अधिकारियो मे भी उच्च एव मध्यम श्रेणी के लोग ध्यान के प्रधिक केन्द्र हैं क्योकि अन्य कार्य तो यहा भी ऐसा ही होता है जैसा कि अन्य विभागो मे।

स्थानीय सत्ता अपनी आवश्यकता के अनुसार कुछ अधिकारियों की नियुक्ति करती है एक क्लर्क या सचिव एव वे विशेष विभागीय अध्यक्ष जो कि उस विशेष स्थानीय सत्ता की प्रकृति एव कार्यों से मेल खाते हो। ये अधिकारी अन्य ऐसे अधिकारियो की नियुक्ति करते हैं जो कि उनके कार्यो के सचालन के लिए आवश्यक सिद्ध हो। नियुक्ति की शक्तियां परिषद मे निहित होती है वही कर्मचारियो का वेतन निश्चित करने के लिए भी उत्तरदायी है तथा उसी के द्वारा सेवा की शर्तें निश्चित की जा सकती हैं। स्थानीय सरकार के अधिकारी अपने पद पर परिषद के प्रसाद पर्यन्त ही रहते हैं। यदि उनको पद विमुक्त करना हो तो एक निश्चित समय पूर्व नोटिस दे दिया जाता है। ये कानूनी प्रावधान हैं। वास्तविक व्यवहार मे कोई भी परिषद अपने कर्मचारियो को मनमाना वेतन नही दे सकती और न ही वह चाहे जैसी शर्तें निश्चित कर सकती हैं। वैधानिक व्यवस्था के अतिरिक्त स्थानीय सरकार के सगठन के सम्बन्ध मे अनेक परम्परायें स्थापित हो गई हैं। यही बात उसके कार्यालय के बारे मे भी सही है यद्यपि कानून के अनुसार तो उसका कार्यकाल निश्चित नही होता किन्तु वास्तविक व्यवहार मे प्रत्येक अधिकारी को कार्य सम्बन्धी पर्याप्त सुरक्षा प्राप्त रहती है।

स्थानीय परिषद को अधिकारियो की नियुक्ति वेतन, एवं पदविमुक्ति आदि के बारे मे जो अधिकार प्राप्त हैं उनके कुछ अपवाद भी हैं। कुछ अधिकारियों के सम्बन्ध मे कानून द्वारा यह कहा गया है कि उनके बारे मे केन्द्रीय सरकार को पर्याप्त नियत्रण रखने का अधिकार है। अतः इन अधिकारियो की नियुक्ति, वेतन एव पदविमुक्ति आदि के बारे मे केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति आवश्यक समझी जाती है। इङ्गलैण्ड मे काउन्टी परिषदों के क्लर्को की नियुक्ति पर केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति ली जाती है। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य के अधिकांश मैडीकल अधिकारियो एवं जनस्वास्थ्य निरी-

क्षकों की पदविमुक्त करने के सम्बन्ध में भी उसकी स्वीकृति आवश्यक समझी जाती है। इस प्रकार के प्रावधानों के पीछे ऐतिहासिक कारण है। केन्द्रीय सरकार निश्चय ही इस बात में रुचि लेती है कि स्थानीय सरकार में उच्च पदों पर किसकी नियुक्ति की जा रही है। यही कारण है कि इस सम्बन्ध में किये गये व्यवस्थापन ने केन्द्रीय सरकार के हस्तक्षेप की मात्रा को बढ़ा दिया है।

जहाँ कहीं भी यह व्यवस्था की गई है कि अधिकारियों की नियुक्ति, वेतन या पद विमुक्ति आदि पर केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति प्राप्त की जाये वहाँ इन प्रावधानों का उद्देश्य स्थानीय सरकार के इन अधिकारियों के कार्यों को प्रभावित करना नहीं होता है वरन् उनको उनकी परिषद के विरुद्ध सुरक्षा प्रदान करना होता है। इतना होने पर भी अधिकारी को स्थानीय सत्ताओं के सभी आदेश एवं निर्देश मानने होते हैं वह किसी भी अर्थ में केन्द्र सरकार का सेवक नहीं बन जाता। सैद्धान्तिक रूप में यह सब सच होते हुए भी व्यावहारिक रूप में ऐसा नहीं हो पाता क्योंकि केन्द्रीय सरकार के हाथों में स्थानीय सरकार के सेवकों के भाग्य की बागडोर रहती है उसकी ओर निर्देशन के लिए निहारना इन अधिकारियों के लिए स्वाभाविक है। अनुभव के आधार पर यह माना जाता है कि एक अधिकारी को अपनी पूरी स्वामिभक्ति उसी संस्था के प्रति रखनी चाहिए जिसकी कि वह सेवा कर रहा है। यदि वह केन्द्र सरकार को खुश रखकर अपना लाभ करने की धुन में रहेगा तो निश्चय ही स्थानीय सरकार के प्रति वह अपने दायित्वों को पूरा कर पायेगा। जेक्सन (R M Jackson) महाशय का यह कथन पर्याप्त महत्व नहीं रखता है कि स्थानीय सत्ताओं को इस सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार की किसी भी शक्ति को अवांछित मानना चाहिए जिसे कि केवल अपवाद रूप परिस्थितियों में ही न्यायोचित कहा जा सकता है।* स्थानीय सत्ता की परिषद को यह अधिकार होता है कि वह स्टाफ से सम्बन्धित किसी भी विषय पर विचार विमर्श कर सके। किन्तु यह विचार विमर्श परिषद की साधारण बैठक में नहीं किया जाना चाहिए जहाँ पर सामान्य जनता एवं प्रेस उपस्थित रहती है। अधिकारी को अपना पक्ष स्पष्ट करने का अवसर ही प्राप्त नहीं हो पाता अतः उसकी दृष्टि से यह व्यवस्था अन्यायपूर्ण मानी जायेगी। जहाँ तक सम्भव हो सके स्टाफ से सम्बन्धित मामलों को समिति में ही सुलझाया जाना चाहिए तथा परिषद में उसके ऊपर वाद-विवाद नहीं किया जाना चाहिए। यदि स्वयं परिषद इन मामलों पर विचार करना चाहे तो उसको समिति के रूप में की जाने वाली अपनी गुप्त बैठक में ही ऐसा करना चाहिए। इस व्यवस्था को प्राप्त करने के लिए कई एक स्थानीय सत्तायें यह स्थायी आदेश स्वीकार कर लेती हैं कि "यदि परिषद की बैठक में नियुक्ति पदोन्नति, पदविमुक्ति, वेतन या

---

*"Hence, local authorities should always regard any powers of the central government in this respect as being undesirable and to be justified only in exceptional circumstances."

—*R. M. Jackson*, Op. Cit., P. 104.

सेवा की शर्तों से सम्बन्धित अथवा परिषद द्वारा नियुक्त व्यक्तियों के व्यवहार से सम्बन्धित कोई प्रश्न उठे तो इन पर परिषद द्वारा समिति का रूप धारण करके विचार किया जाना चाहिए यदि परिषद अन्य कोई प्रावधान करदे तो बात दूसरी है।

अधिकारियों की नियुक्ति एवं प्रशिक्षण
[Recruitment and Training of Officers]

सार्वजनिक सेवा के कर्मचारियों की भर्ती एवं प्रशिक्षण के लिए दो प्रकार के तरीके अपनाये जा सकते हैं अर्थात् केन्द्रीय सरकार द्वारा की गई नियुक्ति और स्थानीय सरकार द्वारा की गई नियुक्ति। ग्रेट ब्रिटेन की नागरिक सेवा को पर्याप्त प्रबन्धकुशल माना जाता है तथा समय-समय पर इसमें सुधार करने के सुझाव दिये जाते रहे हैं। प्रारम्भ में भर्ती के लिए कोई परीक्षा लेने की व्यवस्था नहीं थी। बिना किसी जांच के ही बाहरी प्रभाव के आधार पर सेवा में प्रवेश प्रदान करदिया जाता था। नियुक्तियां मंत्री द्वारा की जाती थी। जब कभी किसी अधिकारी की मृत्यु या सेवा निवृति के कारण पद रिक्त होता था उस पर मंत्री के मित्रों एवं सम्बन्धियों को नियुक्त कर दिया जाता था। इन पदों का वेतन बहुत अच्छा होता था। पद के कर्त्तव्यों को अधीनस्थ अधिकारी के कन्धों पर डालकर पदाधिकारी बड़े आराम का जीवन व्यतीत कर सकता था। सरकारी कार्यालयों में कार्य करने वाले लोग प्रायः अस्वस्थ एवं कमजोर होते थे। उनको और कहीं भी स्थान प्राप्त नहीं होता था तथा वे व्यक्तिगत संस्थाओं में भी कार्य नहीं कर सकते थे अतः वे सरकारी सेवा में प्रविष्ट हो जाते थे ताकि आराम से अपना कार्य करते रहें। जब इस व्यवस्था में सुधार किया गया तो यह सिद्धान्त स्वीकार किया गया कि भर्तियां खुली प्रतियोगिता के आधार पर की जायें। इस व्यवस्था को लागू करने के लिए नागरिक सेवा आयोग की स्थापना की गई जो कि एक निष्पक्ष निकाय होता है।

भर्ती की पुरानी व्यवस्था में 'योग्यता' बेकार जाती थी क्योंकि जिस व्यक्ति को क्लर्क नियुक्त किया जाता था उसको नीचे से ही प्रारम्भ करना होता था। अतः जिस व्यक्ति में अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य के लिए योग्यता, बुद्धि एवं प्रशिक्षण था उसे अपने प्रारम्भिक वर्ष कागजों की कापियां करने तथा अन्य ऐसे ही सरल कार्य करने में ही बिताना होता था। इस व्यवस्था को हटाने के लिए प्रतियोगितापूर्ण परीक्षाओं के साथ ही सेवा के विभिन्न वर्ग भी बना दिये गये जिनके लिए आवश्यक प्रशिक्षण योग्यताएं अलग-अलग निर्धारित कर दी गई।

स्थानीय सेवा का वर्गीकरण (Classification) तीन वर्गों में किया गया। सबसे निम्न वर्ग में लिपिक अधिकारी थे जिनमें टंकणकर्त्ता आदि भी शामिल थे। इन अधिकारियों के कर्त्तव्यों का प्रकार पर्याप्त होता था वे किसी भी विषय को सुपरिभाषित विनियमों, निर्देशों एवं सामान्य व्यवहार के आधार पर लेखों को, दावों को, तथा रिटर्नों को देखते थे, छानबीन करते थे, चैक करते थे। निर्देशों के अनुसार ही रिटर्न के लिए विषय को तैयार करते थे तथा निर्धारित रूप में लेखों एवं सांख्यिकी को तैयार करते थे।

ऐसी आवश्यक सामग्री तैयार करते थे जिसके आधार पर कि निर्णय लिये जा सकें तथा लिपिक सहायकों के कार्य को पर्यवेक्षित किया जा सके। अधिकारियों का दूसरा वर्ग कार्यपालिका वर्ग (Executive Class) था। यह वर्ग लिपिक वर्ग एवं प्रशासकीय वर्ग के बीच का था। इसका मुख्य कार्य स्थापित नियमों की सीमा में रह कर दिन प्रतिदिन के कार्यों को सम्पन्न करना था। इसके द्वारा वितरण, वित्त, लेखा कार्य एवं अन्य विशेषतापूर्ण कार्य भी किये जाते थे जिनमें किसी व्यावसायिक योग्यता की आवश्यकता नहीं होती थी। तीसरा वर्ग, जो कि सर्वोच्च वर्ग था, प्रशासनिक वर्ग (Administrative Class) था। वे मुख्य रूप से नीति से सम्बन्धित रहते हैं। वे विभागों के कार्यों का निर्देशन करते हैं, मंत्रियों को संसदीय एवं विभागीय मामलों पर परामर्श देते हैं साथ ही प्रशासनिक क्रियाओं में आवश्यक समन्वय की स्थापना करते हैं।

सशोधित व्यवस्था में यह सिद्धान्त अपनाया गया कि लोक सेवा को इन तीनों ही वर्गों के लिए प्राप्त व्यक्तियों में से योग्यतम की नियुक्ति करनी चाहिये। इस सिद्धान्त को व्यवहारिक रूप में परिणित करने के लिए यह जरूरी होता है कि प्रत्याशी की परीक्षा ली जाये और परीक्षा भी उन विषयों में ली जाये जिनका सम्बन्ध उसके विशेष कार्यों से रहता है। सार्वजनिक सेवाओं में प्रविष्ट होने के लिए यह आवश्यक होना चाहिये कि प्रत्याशी को प्रशासन, कानून, अर्थशास्त्र, तथा विभागीय कार्य से सम्बन्धित सामाजिक विज्ञान की अन्य शाखाओं का ज्ञान होना चाहिये। किन्तु इस सिद्धान्त को व्यवहार में कम अपनाया गया तथा प्रत्याशी से ली जाने वाली परीक्षा का सम्बन्ध उस विषय से बहुत कम होता था जिसके अनुसार कि उसे अपने भावी पद के दायित्वों को सम्पन्न करना है।

लिपिक वर्ग की सेवाओं में प्रवेश पाने वाले लड़के-लड़कियों की उम्र सोलह और अठारह के बीच में होती है। इनकी परीक्षा के विषय रखे जाते हैं अंग्रेजी, अंकगणित या तीन अन्य विषय जिनका चयन प्रत्याशी द्वारा गणित, विज्ञान, भाषा, इतिहास, एवं भूगोल में से किया जाता है। प्रत्याशी प्रायः वे होते हैं जिन्होंने साधारण स्तर पर शिक्षा का सामान्य प्रमाणपत्र लिया है। कार्यपालिका वर्ग की परीक्षाओं के विषय कुछ अधिक व्यापक होते हैं। प्रशासकीय वर्ग के सेवाओं के प्रत्याशी प्रायः स्नातक होते हैं तथा वे उन विषयों में से कोई भी विषय ले सकते हैं जो कि उन्होंने विश्वविद्यालय में डिग्री स्तर पर पढ़े हैं।

परीक्षाओं द्वारा प्रत्याशी को योग्यता के अनुसार क्रम से रखा जाता है तथा फिर रिक्त स्थानों के अनुसार उम्मीदवारों को ऊपर से ही लिया जाता है। इस व्यवस्था में यह हो सकता है कि जिस व्यक्ति को सेवा के लिए छांटा गया है उसको उन विषयों के बारे में थोड़ी भी जानकारी न हो जो कि उसके पद से सम्बन्ध रखते हैं। इसके पीछे मूल विचार यही कार्य करता है कि परीक्षा के द्वारा प्रत्याशी की सामान्य सूझ एवं बुद्धि के स्तर को मापा जाता है न कि उसके विषय ज्ञान को। विषय का ज्ञान तो केवल एक माध्यम मात्र है। जब एक व्यक्ति एक कार्य में योग्य सिद्ध हो जाता है तो

आशा की जाती है कि अन्य कार्य को भी वह योग्यता पूर्वक ही सम्पन्न करेगा। सभी वर्गो की सेवाओं में प्रवेश पाने के लिए लिखित परीक्षा के अतिरिक्त मौखिक परीक्षा भी की जाती है ताकि प्रत्याशी के व्यक्तित्व का पूरी तरह से अध्ययन किया जा सके।

ग्रेट ब्रिटेन मे प्रत्याशी को उसके कार्य का प्रशिक्षण तब प्रदान किया जाता है जब कि वह नियुक्त कर लिया जाता है। नियुक्ति के बाद प्रशिक्षण देने की प्रथा सभी देशो मे समान रूप से नही अपनायी जाती। उदाहरण के लिए जर्मनी मे एक व्यक्ति को प्रशासनिक पद के लिए उस समय उपयुक्त समझा जाता है जब कि वह विश्वविद्यालय का अध्ययन करने के अतिरिक्त प्रशासन मे भी विशेष प्रशिक्षण प्राप्त करले। सेवा-पूर्व प्रशिक्षण को कुछ सेवाओं मे उपयुक्त समझा जाता है किन्तु अन्य सेवाओं मे इसे अव्यावहारिक माना जाता है। मुख्य रूप से बौद्धिक कार्यों मे इस प्रकार का प्रशिक्षण अधिक प्रभावशाली सिद्ध नहीं होता। अभियन्ताओं के लिए इस प्रकार का प्रशिक्षण उपयोगी हो सकता है किन्तु नागरिक सेवा मे इस व्यवस्था को अपनाने मे कठिनाई होगी। जेक्सन के कथनानुसार इस व्यवस्था को नागरिक सेवा मे नही अपनाया जा सकता क्योंकि यहां नियुक्तिकर्ता अनेक प्रकार के नही होते। नागरिक सेवक को या तो कार्य पर ही सीखना चाहिये अथवा सीखना ही नहीं चाहिये।*

वर्तमान युग मे प्रशासकीय वर्ग की नियुक्ति से सम्बन्धित परीक्षा प्रणाली मे कुछ अन्तर आ गया है। विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप भर्ती की प्रणाली पर भारी प्रभाव पड़ा। युद्ध के बाद यह सम्भव नहीं था कि सेना मे कार्य कर रहे व्यक्तियों से यह कहा जाए कि वे विश्वविद्यालयों से हाल ही मे डिग्री प्राप्त प्रत्याशियों के साथ प्रतियोगिता करें। इसके परिणामस्वरूप साक्षात्कार का समय बढ़ा तथा लिखित परीक्षा के प्रसार एवं प्रभाव को कम किया गया। इन परिवर्तनों के बावजूद भी मूल सिद्धान्त मे किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया गया कि प्रत्याशी को उसकी सामान्य योग्यता के आधार पर नियुक्त किया जाए न कि उसकी किसी तकनीकी योग्यता के आधार पर। प्रशासकीय वर्ग की सेवाओं मे सामान्य योग्यता के आधार पर लोगो की नियुक्ति करने के पीछे यह मान्यता थी कि प्रशासन एक अपने ही प्रकार की व्यावसायिक कुशलता है तथा इसको सीखने का एकमात्र साधन इसको करना है।† वर्तमान प्रशासन मे व्यावसायिक कुशलता एवं तकनीकी

* "A similar system could not be devised for the civil service because there is no variety of employer; he must learn on the job or not learn at all."

—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 108

† "The idea of an administrative class selected for its general ability is that administration is a professional skill in its own right, and that the only way in which it can be learnt is by doing it."

—Ibid.

योग्यता का महत्व पहले की अपेक्षा बहुत बढ गया है किन्तु फिर भी विशेपज्ञ अधिकारियों को प्रशासन के उच्च शिखर पर नही बैठाया जा सकता, उनका प्रभाव अवश्य उल्लेखनीय रहता है। सिद्धान्त रूप मे ये लोग परामर्श देने एव सहायता करने का कार्य करते हैं। यह व्यवस्था उपयोगी है अथवा नही ? सतोपजनक है अथवा नही ? ये अलग प्रश्न हैं जिनके बारे मे विचारक एकमत नही है। नागरिक सेवकों मे तकनीकी योग्यताए नागरिक सेवक बनने के बाद भी आ सकती हैं और उनको ही उपयोगी माना जायेगा। सभी वर्गों के सेवकों को सेवाकालीन प्रशिक्षण दिया जाना ही अधिक उपयोगी माना जाता है। औपचारिक रूप से कुछ निर्देश भी दिए जा सकते हैं किन्तु प्रशिक्षण का अधिकाश भाग किसी उच्च अधिकारी के तात्कालिक पर्यवेक्षण मे व्यतीत होता है।

उक्त व्यवस्था ब्रिटिश नागरिक सेवा के राष्ट्रीय स्तर पर अपनाई जाती है। यदि हम स्थानीय स्तर की ओर दृष्टिपात करें तो पायेंगे कि स्थिति पूर्ण रूप से उल्टी है। स्थानीय स्तर पर प्रायः सभी उच्च पदों पर व्यावसायिक योग्यता सम्पन्न व्यक्ति रहते हैं तथा यहां नागरिक सेवा की भाति प्रशासकीय वर्ग नही होता। यहा यह प्रश्न उठ सकता है कि स्थानीय सेवा की तकनीकी प्रकृति का कारण क्या है कि भिन्न व्यवस्था [illegible] अपनाया गया। इसके स्पष्टीकरण स्वरूप यही कहा जा सकता है कि स्थानीय सरकार की सेवाए कुछ विशेष कार्य को सम्पन्न करने के लिए अस्तित्व में आई जो कि मुख्य रूप से इन्जीनीयरिंग प्रकृति का था। स्थानीय परिषदों को ऐसे लोगों की आवश्यकता थी जो कि जल वितरण एवं सफाई का कार्य सम्भाल सकें, भवनों एव सडकों की रचना कर सकें, पुल बनवा सकें। यह सारा कार्य कोई भी गैर-विशेषज्ञ अधिकारी सफलता के साथ नही कर सकता था अत: इन सेवाओं के लिए डाक्टरों, अभियन्ताओं, मैडीकल व्यवहार-कर्ताओं आदि को लिया गया। एक वकील को रखा गया ताकि वह परिषद को कानूनी सीमाओं के अन्तर्गत ही रख सके। ऐसी स्थिति मे जो व्यवस्था अपनाई गई उसके अनुसार परिषद का मुख्य अधिकारी अर्थात क्लर्क या टाउन क्लर्क एक कानूनवेत्ता (Lawyer) होता था एव दूसरे विभागों के अध्यक्ष भी अपने-अपने विभाग के व्यावसायिक विशेषज्ञ होते थे। एक अन्य बात जो यहा उल्लेखनीय है वह यह है कि पहले स्थानीय सरकार द्वारा किसी अधिकारी को पूरे समय के लिए नियुक्त नही किया जाता था वरन् केवल आंशिक समय के लिए ही नियुक्त किया जाता था। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक था कि ऐसे ही व्यक्ति को काम दिया जाता जो कि व्यक्तिगत रूप से एक विशेष व्यवसाय मे अभ्यास कर रहा है।

स्थानीय सरकार की सेवाए देखने मे तो ऐसी लगती हैं कि मानो वे एक ही सेवा होगी किन्तु यह वास्तविकता नही है। प्रत्येक स्थानीय सत्ता अपनी आवश्यकता के अनुरूप मात्रा मे नियुक्तियाँ करती है। इस प्रकार स्थानीय सरकार की सेवाए उतनी ही हो जाती हैं जितनी कि विभिन्न स्थानीय सत्ताए होती हैं। वैसे वर्तमान समय मे स्थानीय सरकार के अधिकारी सुसगठित निगाय बन गए हैं। राष्ट्रीय सयुक्त समझौतों

के परिणामस्वरूप अब ये इतनी एकरूपता प्राप्त कर चुके हैं कि इनको सामान्य व्यवस्था कहा जा सकता है।

स्थानीय सरकार के अधिकांश अधिकारियों की नियुक्ति प्रत्यक्ष रूप से उसी समय करली जाती है जब कि प्रत्याशी स्कूल छोड़ कर आता है। इस अवसर पर उनको जो पद प्रदान किया जाता है वह अधीनस्थ स्तर का होता है तथा उनको अवसर प्रदान किया जाता है कि वह अपने पद पर रह कर ही कार्य का प्रशिक्षण पा सके। उसके बाद इन अधिकारियों की पदोन्नति की जाती है। इनको उस समय तक उच्च पद पर नहीं रखा जा सकता जब तक कि वह अपने व्यवसाय में कुशल एवं विशेषज्ञ न बन जायें। इस प्रक्रिया द्वारा एक व्यक्ति जिस सर्वोच्च पद तक पहुँच सकता है वह समिति के क्लर्क का पद होता है। इस पदाधिकारी का कार्य समिति के कार्यों की देख-भाल करना है। समिति से सम्बन्धित सभी आवश्यक कार्य इसी के द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं। उदाहरण के लिए कार्य-क्रम तैयार करना, बैठक की प्रक्रिया का अभिलेख रखना, बैठक में पास किये गये प्रस्ताव पर उचित कार्यवाही की गई है अथवा नहीं की गई है यह देखना आदि। यह कार्य पर्याप्त महत्वपूर्ण होता है किन्तु फिर भी कई एक लेखक इस कार्य को सर्वोच्च श्रेणी का मानना नहीं चाहते। उनके कथनानुसार यह कार्य मध्यम श्रेणी का माना जा सकता है। अतः यदि इस पद पर कोई व्यक्ति बिना व्यवसायिक योग्यता प्राप्त किये ही पहुँच जाये तो कोई आश्चर्य नहीं मानना चाहिए। जो पद वास्तव में उच्च स्तर के होते हैं उन तक पहुँचने के लिए व्यवसायिक योग्यताओं का प्राप्त करना अत्यन्त अनिवार्य माना जाता है।

मैडिकल इन्जीनियरिंग, भवन-निर्माण, सड़क-रचना एवं ऐसे ही अन्य कार्यों में व्यवसायिक योग्यता प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय खर्च करना होता है। ऐसा नहीं हो सकता कि एक व्यक्ति अपनी जीविका भी कमाता रहे और इस प्रकार की योग्यता भी अर्जित करता रहे। जब स्थानीय सरकार द्वारा विशेषज्ञता प्राप्त व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है तो उसकी सहायता के लिए एक व्यक्ति दिया जाता है तथा अध्ययन कार्य के लिए उनको छुट्टियाँ प्रदान की जाती हैं। कुछ ऐसी भी सम्भावनायें हैं कि सेवा में आने के बाद भी व्यक्ति अपनी व्यवसायिक योग्यता का अर्जन एवं विकास कर सके। इसके लिये सन्ध्या-कालीन प्रशिक्षणालयों का होना जरूरी है। यह सुविधा होने के बाद भी अनेक लोग इसका लाभ नहीं उठा पाते क्योंकि ऐसा करने के लिए उनमें शक्ति, उत्साह एवं लगन का अभाव रहता है।

विशेषज्ञता प्राप्त करने का मार्ग चाहे कुछ भी अपनाया जाये किन्तु यह एक तथ्य है कि उच्च पद पर आने से पूर्व व्यक्ति का विशेषज्ञ होना जरूरी है। इन उच्च पदों का विश्वविद्यालयों के उन स्नातकों को कोई स्थान नहीं प्राप्त हो सकता जो कि नागरिक सेवा के प्रशासकीय वर्गों में सेवा प्राप्त करने की योग्यता रखते हैं। इनका एक अपवाद शिक्षा विभाग है। स्थानीय शिक्षा विभाग के उच्च पदों पर जो नियुक्तियां की जाती हैं उनके लिए किसी व्यवसायिक योग्यता की आवश्यकता नहीं समझी जाती किन्तु सामान्यतः यह आशा की जाती है कि वे स्कूलों में अध्यापन का कुछ अनुभव रखते हों।

कुछ बड़ी स्थानीय सत्तायें पिछले कुछ वर्षों से विश्वविद्यालय के स्नातकों को अपने स्टाफ के सामान्य कार्यों पर नियुक्त कर रही हैं। भविष्य में इनकी पदोन्नति किस दिशा में की जायेगी इस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट नीति नहीं अपनायी गई है। इस नीति से बाद में चल कर पर्याप्त कठिनाई उत्पन्न हो सकती है इसका कारण यह है कि गैर-विशेषज्ञ स्टाफ कभी यह नहीं चाहता कि किसी ऐसे व्यक्ति को प्रवेश प्राप्त हो जाये जिसको कि उच्च पद दिया जा सके और वे स्वयं उच्च पद प्राप्त नहीं कर सकें। ऐसी स्थिति में जो भी रास्ता अपनाया जायेगा उसके परिणामस्वरूप आवश्यक रूप से संघर्ष उत्पन्न होगा और विभिन्न पदाधिकारियों में सहयोग के स्थान पर आपसी वैमनस्य पैदा हो जायेगा।

नागरिक सेवा एवं स्थानीय सेवा की प्रकृति का अध्ययन करने के बाद यदि हम इनका तुलनात्मक रूप में मूल्यांकन करने का प्रसार करें तो पायेंगे कि ऐसा करना अधिक न्यायसंगत नहीं रहेगा। इसका कारण यह है कि दोनों स्तरों पर सेवाओं के दायित्वों की प्रकृति में पर्याप्त भिन्नता रहती है। ऐसा नहीं हो सकता कि एक की व्यवस्था को दूसरी में अपना लिया जाये। हो सकता है कि नागरिक सेवा राष्ट्रीय स्तर पर अधिक सफलतापूर्वक कार्य कर रही हो किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि उसे स्थायी सत्ताओं में भी लागू कर दिया जाये। यदि ऐसा किया गया तो लाभ के स्थान पर हानियां अधिक होने की सम्भावना है। नागरिक सेवा में उच्च अधिकारियों को नीति से सम्बन्धित विषयों पर मन्त्रियों को परामर्श देना होता है। वे राष्ट्रीय विकास योजनाओं को कार्यान्वित करने में भी सम्बन्ध रखते हैं। ऐसी स्थिति में इन पदाधिकारियों में विशेषज्ञता के साथ-साथ सामान्यज्ञान का होना भी अत्यन्त अनिवार्य समझा जाता है। दूसरी ओर स्थानीय सेवा के उच्च पदाधिकारीगण नीति सम्बन्धी विषयों में किसी को परामर्श नहीं देते अपितु वह स्वयं नीतियों को क्रियान्वित करने से सम्बन्ध रखते हैं। स्थानीय सत्ताओं का मुख्य सम्बन्ध सेवाओं के संचालन से रहता है। इसका प्रशासकीय निकाय सम्भवतः परिषद है जो कि अपनी समितियों के माध्यम से कार्य करती है। विभाग के अध्यक्ष को मुख्य अधिकारी माना जा सकता है। इन सेवाओं की प्रकृति भिन्न होने के कारण यहां राष्ट्रीय नागरिक सेवा की व्यवस्था को नहीं अपनाया जा सकता क्योंकि इस प्रकार नियुक्त किया गया पदाधिकारी तकनीकी प्रकृति के कार्यों को सम्पन्न कर सकने में असमर्थ रहेगा। वह कार्यों को या तो बहुत तकनीकी रूप में सम्पन्न करना चाहेगा अथवा वह सामान्य नीति के विषयों से अपने को सम्बन्धित रखने का प्रयास करेगा जो कि समितियों एवं परिषद के विचार के विषय हैं।

कई एक लेखकों का यह मत है कि नागरिक सेवा एवं स्थानीय सेवा के उच्च अधिकारियों के बीच जो अन्तर दिखाया जाता है वह वास्तव में इतना नहीं है। स्थानीय सेवा के उच्च अधिकारी विशेषज्ञ होते हुए भी कार्य करते-करते पर्याप्त सामान्य ज्ञान सम्पन्न बन जाते हैं। इसी प्रकार केन्द्रीय सरकार के सेवक भी पूरी तरह से गैर-विशेषज्ञ नहीं कहे जा सकते। हो सकता है कि वे अपनी नियुक्ति के समय ऐसे रहे हों किन्तु बाद में कार्य करते-

करते उनमे पर्याप्त व्यवसायिक योग्यता आजाती है। वे उस ढंग से पूरे विशेषज्ञ बन जाते हैं जिस के अनुसार सार्वजनिक कार्यों को सम्पन्न किया जाना चाहिए। एक दृष्टि से केन्द्रीय सरकार को स्थानीय सत्ताओं की तुलना में उन्नत कहा जा सकता है और वह यह है कि निम्न पदों पर जो नियुक्तियां की जाती हैं उनके बारे में वे उत्कृष्ट व्यवस्था अपनाती हैं। स्थानीय सत्तायें अपने अधिकांश कर्मचारियों को माध्यमिक शिक्षा प्राप्त प्रत्याशियों में से छाटती है। परिणामस्वरूप इनके कर्मचारियों का शैक्षणिक स्तर नीचा रहता है। इसके अतिरिक्त स्थानीय सत्ताओं में भर्ती की व्यवस्था का रूप भी एक जैसा नहीं है। ऐसे पद अधिक न होने के कारण स्थानीय सेवा आयोग रखने की आवश्यकता भी नहीं समझी जाती। यदि स्थानीय सत्ताओं को इस दृष्टि से मिला दिया जाये तो अवश्य ही सेवा आयोग की व्यवस्था की जा सकेगी।

स्थानीय सत्ताओं को अपने अधिकारी नियुक्त करने की दृष्टि से पर्याप्त स्वायत्तता प्राप्त रहती है। जिन अधिनियमों द्वारा स्थानीय निकायों की रचना की जाती है उनके द्वारा यह भी व्यवस्था कर दी जाती है कि वे आवश्यकता के अनुसार स्वयं ही अधिकारियों की नियुक्ति कर सकें। कुछ नियुक्तियां केन्द्र सरकार द्वारा भी की जाती है अथवा करने में पर्याप्त सहयोग दिया जाता है। कुछ अपवादों को छोड़ कर इन अधिकारियों की योग्यता, चयन का तरीका एवं वेतन आदि बातें कानून द्वारा निर्धारित नहीं की जाती तथा स्थानीय सत्ताओं की स्वेच्छा पर ही छोड़ दिया जाता है। स्थानीय सत्ता ही इन सेवाओं का प्रशासन करती है। नियुक्ति की नीति के सम्बन्ध में स्थानीय सत्ताओं को पूर्णतः स्वायत छोड़ दिया जाता है यह एक मूल सिद्धान्त है। वर्तमान प्रावधानों के अनुसार आडीटर को तथा कानून के न्यायालयों को यह अधिकार दिया गया है कि वे वेतन के आधार पर स्थानीय सरकार के अधिकारियों के औचित्य पर प्रश्न कर सकते है किन्तु वे भी उनकी योग्यताओं के आधार पर अधिकारियों की नियुक्ति को गलत नहीं ठहरा सकते।

अपवादस्वरूप अधिकारी
[The Exceptional Officers]

कुछ अधिकारियों में पद उक्त सिद्धान्त के अपवाद होते हैं अर्थात् उनको स्थानीय सरकार की स्वेच्छा पर नहीं छोड़ा जाता वरन् उनको केन्द्रीय निर्देशन एवं नियमन का विषय बनाया जाता है। ये अपवाद रूप सेवायें प्रायः वे होती हैं जो कि अत्यधिक महत्व रखती हैं तथा समस्त समाज का प्रतिनिधित्व करने वाली केन्द्रीय सरकार उनको स्थानीय सत्ताओं की स्वेच्छा पर नहीं छोड़ सकती। इन सेवाओं का नामोल्लेख एवं इनसे सम्बन्धित अपवादों पर ही यह स्पष्ट कर देगा कि इनके बारे में विशेष प्रावधान क्यों रखे गये हैं। साथ ही यह भी स्पष्ट हो जावेगा कि अन्य सेवाओं को क्यों नहीं नियन्त्रित किया गया है। इन अधिकारियों में मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं—स्वास्थ्य के मेडीकल अधिकारी, सफाई निरीक्षक, स्वास्थ्य-दर्शक, माप-तोल निरीक्षक, निर्धन अधिनियम अधिकारी, अध्यापक एवं मुख्य सिपाही

आदि । पुलिस की योग्यता एवं वेतन के बारे में भी कुछ विनियमन किये गये हैं।

मेडीकल अधिकारी [Medical Officers]—जब १८७५ में जन-स्वास्थ्य सम्बंधी अधिनियम पास किया गया तो प्रत्येक शहरी एवं जिला सफाई सत्ता को एक योग्य एवं उचित स्वास्थ्य का मेडीकल अधिकारी भी नियुक्त करना होता था। इस पद पर किसी भी ऐसे व्यक्ति को नियुक्त नहीं किया जा सकता था जो कि कानूनी रूप से वह एक मेडीकल अभ्यास कर्त्ता न हो। सन् १९२९ तक यह व्यवस्था अपनायी गई कि यदि स्थानीय सत्ता द्वारा मैडिकल अधिकारी के वेतन के लिए अनुदान स्वीकार किया जा रहा है तो स्वास्थ्य मंत्री को इस अधिकारी की योग्यता, नियुक्ति, कर्त्तव्य, वेतन एवं कार्यकाल आदि के बारे में सन्तुष्ट करना जरूरी होता था। जहाँ अनुदान नहीं लिया जाता था वहाँ भी मंत्री को यह अधिकार था कि वह आदेश जारी करके इन अधिकारियों की योग्यता एवं कर्त्तव्य निर्धारित कर सके। सन् १९२९ से मेडीकल अधिकारियों के खातिर दिया जाने वाला विशेष अनुदान बन्द कर दिया गया किन्तु मंत्री के पास नियंत्रण की शक्तियां अब भी बनी रहीं। १८८८ के अधिनियम ने काउन्टी परिषदों को यह शक्ति दी थी कि वे स्वास्थ्य के मैडीकल अधिकारियों की नियुक्ति कर सकें। मंत्री को इस सम्बन्ध में केवल यह देखने का अधिकार दिया गया कि किसी ऐसे व्यक्ति को यह पद न दे दिया जाये जो कि कानूनी रूप में मैडिकल अभ्यास नहीं करता है। गृहनिर्माण एवं शहर नियोजन से सम्बन्धित १९०९ के अधिनियम द्वारा इस अधिकारी की नियुक्ति करना काउन्टीज के लिए बाध्यकारी बना दिया गया। अधिनियम द्वारा मंत्री को यह अधिकार दिया गया कि वह एक सामान्य आदेश द्वारा इस अधिकारी के कर्त्तव्य निर्धारित कर सके। यह भी प्रावधान रखा गया कि यह अधिकारी उस समय तक नहीं हटाया जा सकता जब तक कि स्वास्थ्य मंत्री की स्वीकृति प्राप्त न कर ली जाये। अधिकारी को असीमित समय तक के लिए नियुक्त किया जाता था। सन् १९२१ के अधिनियम ने यह स्पष्ट व्यवस्था की कि सभी मैडिकल अधिकारियों को व्यक्तिगत कार्य करने से रोक दिया जायेगा। उनकी नियुक्ति असीमित समय के लिए की जायेगी तथा बिना मंत्री की स्वीकृति के उसको हटाया नहीं जा सकेगा।

सफाई निरीक्षक (Sanitary Inspector) को स्थानीय स्वास्थ्य सत्ताओं पर सर्वप्रथम १८४८ में थोपा गया था तथा १८७५ के अधिनियम द्वारा इसको बाध्यकारी बना दिया गया। सन् १८९१ से इन अधिकारियों की योग्यताओं को केन्द्रीय सरकार द्वारा विनियमित किया जाने लगा। १९२९ तक यह व्यवस्था थी कि जो स्थानीय सत्तायें सहायता अनुदान प्राप्त नहीं करती थीं वे बिना योग्यता देखे ही इस पद पर नियुक्तियां कर सकती थीं। केन्द्रीय सरकार के विभिन्न कानूनों ने उनके हाथ में स्वास्थ्य मैडीकल अधिकारी, सफाई अधिकारी स्वास्थ्य दर्शक तथा माप और तोल के निरीक्षक आदि की योग्यताओं एवं नियुक्ति से सम्बन्धित अन्य बातों के बारे में प्रावधान बना दिये।

निर्धन कानून अधिकारी [Poor law officers]—स्थानीय सरकार की संस्थाओ द्वारा निर्धन कानून के पालन को पर्याप्त महत्व प्रदान किया गया किन्तु यह कार्य उस समय तक उचित रूप से सम्पन्न नही किया जा सकता था जब तक कि कुछ उत्तरदायी अधिकारी इस कार्य को न सम्भाल लें। इसका प्रशासन जब अकुशल ओवरसीयरो को सौंप रखा था तो इसका कार्य सतोषजनक न हो सका। १८३४ के अधिनियम मे सरक्षको (Guardians) को यह अधिकार दिया कि वे इसके लिए अधिकारी नियुक्त कर सकें किन्तु इन अधिकारियो की योग्यतायें कर्त्तव्य, नियुक्ति का तरीका, वेतन, इनकी सख्या आदि वाते केन्द्रीय सत्ता द्वारा ही तय किये जाते थे। केन्द्रीय सरकार को इन अधिकारियो को पद से हटाने का भी अधिकार दिया गया। यदि सरक्षक अपने इस अधिकार का प्रयोग करने से मना कर दे तो केन्द्रीय सरकार स्वयं इन अधिकारियो की नियुक्ति कर सकती थी।

अध्यापक [Teachers]—यदि स्कूलो द्वारा अनुदान को स्वीकार किया जा रहा है तो प्राथमिक एव माध्यमिक स्कूल अध्यापको की योग्यतायें शिक्षा मण्डल द्वारा निर्धारित कर दी जाती थी। मापदण्ड का निर्धारण करने की सर्व-सर्वा शक्तिया मण्डल को प्राप्त थी। स्थानीय शिक्षा सत्ता शिक्षामत्री की पूर्व स्वीकृति के बिना मुख्य शिक्षा अधिकारी की नियुक्ति नही कर सकती थी।

अग्नि रक्षक [Firemen]—अग्निरक्षको की नियुक्ति के अधिकार पर भी पर्याप्त केन्द्रीय नियत्रण था। सन् १९४७ के अग्नि सेवा अधिनियम के अनुसार गृह सचिव को यह शक्ति प्रदान की गई थी कि अग्नि-रक्षा के मुख्य अधिकारी की नियुक्ति के तरीको को विनियमित कर सके। वह नियुक्ति की योग्यतायें, पदोन्नति की व्यवस्था, तथा उसे प्रशासित करने का तरीका आदि भी निर्धारित कर सकता था। यह सब कार्य वह केन्द्रीय अग्निरक्षक सत्ता के साथ परामर्श के बाद ही करता था।

पुलिस [Police]—सन् १९१९ के अधिनियम द्वारा तथा उसके आधीन बनाये गये नियमों के अनुसार पुलिस की नियुक्ति, पदोन्नति, अनुशासन, प्रशिक्षण, आदि के बारे मे गृह कार्यालय को नियत्रण की पर्याप्त शक्तिया सौंपी गई। सन् १८३९ के बाद से ही यह व्यवस्था है कि अब काउन्टीज द्वारा मुख्य कान्सटेबुल को नियुक्त किया जाता है तो उस पर गृह कार्यालय की स्वीकृति प्राप्त की जाती है। इस शक्ति का प्रयोग गृह कार्यालय द्वारा काउन्टी बारोज के प्रसग मे अधिक किया जाता है। उनके सम्बन्ध मे वह सहायता अनुदान को रोकने की भी शक्ति रखता है।

इन प्रमुख सेवाओ के सम्बध मे केन्द्रीय सरकार के इतने अधिक नियत्रण एव नियमन की व्यवस्था के पीछे कई एक कारण उत्तरदायी रहे हैं। इसका एक कारण तो यह था कि इनमे से कुछ अधिकारियों के कर्त्तव्य ऐसे थे जिनके द्वारा वे किसी को कुछ लाभ पहुँचाने की शक्ति रखते थे उदाहरणार्थ मैडिकल अधिकारी, निर्धन अधिनियम अधिकारी, कान्सटेबुल आदि। इन अधिकारियो एव पारषदो अथवा उनके मित्रों या सम्बन्धियों के बीच हितों का टकराव होने की सम्भावना थी। इस खतरे को रोकने के लिए यह उप-

योगी समझा गया कि अन्तिम अधिकार केन्द्र सरकार अपने हाथ में ले ले ताकि ये अधिकारी भी गलत रूप से किसी को फायदा न पहुँचाये अथवा पहुँचाने से वंचित न रखें और दूसरी ओर कोई व्यक्ति भी इनको ऐसा फायदा पहुँचाने के लिए बाध्य न करे। दूसरे, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं पुलिस आदि सेवाओं के बारे में यह माना गया कि इनका महत्व पर्याप्त है तथा इनमें अकार्यकुशलता रहने के गम्भीर परिणाम हो सकते है अतः इनमें कम से कम योग्यता से सम्बधित एकरूपता अवश्य अपनायी जाये। स्थानीय सरकार द्वारा सेवाओं के सम्बंध में मुख्य रूप से वेतन का ध्यान रखा जाता है तथा यह हिसाब लगाया जाता है कि वेतन को बढाना पर रेट को कितना बढाना होगा। वे सेवा की आवश्यकताओं एवं योग्यताओं की पर्याप्तता पर ध्यान नहीं देती। केन्द्रीय नियम का एक तीसरा कारण यह है कि धीरे-धीरे केन्द्रीय सरकार ने स्थानीय सरकार के व्यय में योगदान करने का भार सम्भाल लिया है। इसके साथ ही यह भी उनका कर्त्तव्य बन जाता है कि इस धन को अकार्य-कुशल लक्ष्यों पर खर्च न होने दें। जहाँ कहीं भी आंशिकरूप से या पूर्णरूप से सेवाओं का कार्यकाल एवं योग्यता आदि को केन्द्रीय सत्ता द्वारा विनियमित किया जाता है वहा पर यह आशा की जा सकती है कि प्रशासन में एकरूपता की मौलिक आवश्यकता को पूरा किया जा सकेगा।

स्थानीय सरकार की विभिन्न सेवाओं को हर्मन फाइनर (Herman Finer) ने तीन मुख्य भागों में विभाजित किया है ये हैं– व्यावसायिक एवं तकनीकी वर्ग, प्रशासकीय वर्ग एवं शारीरिक कार्य करने वाला वर्ग। इनमें से अन्तिम वर्ग के सेवकों की नियुक्ति, पदोन्नति, वेतन आदि से सम्बन्धित विषयों को व्यापारिक संघों (Trade Unions) द्वारा विनियमित किया जाता है जब कि प्रथम दो वर्गों की सेवाओं के बारे में स्थानीय सत्ताओं को पर्याप्त शक्तियां सौंपी जाती हैं। जहा तक व्यावसायिक एवं तकनीकी वर्ग का प्रश्न है उसके सम्बन्ध में स्थानीय सरकारों का व्यवहार कई प्रकार से दोष पूर्ण है। जहा तक छोटी सत्ताओं का सम्बन्ध है उनमें खजान्ची या लेखा अधिकारी के रूप में कार्य करने के लिए अलग से कोई अधिकारी नहीं नियुक्त किया जाता वरन् क्लर्क अथवा स्थानीय बैंक को ही यह कार्य सौंप दिया जाता है। इस व्यवस्था के फलस्वरूप इन सत्ताओं में स्थायी प्रकृति का आन्तरिक आडिट नहीं हो पाता। जितने भी तकनीकी अधिकारी है उनकी सूची को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि उन पदों पर नियुक्त किये जाने वाले व्यक्तियों की योग्यता का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। यदि ऐसा न किया गया तो इसके कई गम्भीर परिणाम निकल सकते हैं। उदाहरण के लिए सड़कें टूट जायेंगी, भवन गिर जायेंगे, गैस का कार्य समाप्त हो जायेगा, विद्युत यन्त्र कार्य नहीं करेंगे, गलियां गन्दगी से भर जायेंगी, जलधरों में नहीं भेजा जा सकेगा लेखे गलत रखे जायेंगे, अधिकारी एवं पार्षद भी असंवैधानिक तरीकों को अपना सकते हैं ट्रामें या तो चलाई ही नहीं जायेंगी और यदि चलाई भी गई तो समय पर नहीं चलेंगी।

इस प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में अकार्य-कुशलता के घातक परिणाम देखने को प्राप्त होंगे। ऐसी स्थिति में इन सेवाओं को सम्पन्न करने वाले अधि–

कारियों का योग्य एवं कार्यकुशल होना परम आवश्यक है। यह योग्यता उनमें तभी आ सकती है जब कि भर्ती के समय इस बात का पूरा ध्यान रखा जाय कि केवल योग्यतम व्यक्ति का ही चयन किया जाय। दूसरे, सेवा में भर्ती कर लेने के बाद व्यक्ति को पूरा अवसर प्रदान किया जाये कि वह अपनी व्यावसायिक एवं तकनीकी योग्यताओं का विकास कर सके। स्थानीय अधिकारियों की अवस्था को सुधारने में स्थानीय पारषदों की अपेक्षा अधिकारियों की संस्थाओं ने ही अधिक भाग लिया है। कुछ ऐसे भी उदाहरण है जहां कि एक प्रत्याशी को प्रशिक्षण एवं योग्यता की परीक्षा लिए बिना ही भर्ती कर लिया जाता है। वह प्रत्याशी सेवा में प्रवेश पाने के बाद स्थानीय तकनीकी स्कूलों की सहायता से अथवा स्थानीय सरकार अधिकारियों की राष्ट्रीय संस्था द्वारा संचालित पत्र व्यवहार द्वारा अध्ययन की सहायता से अपनी योग्यताओं को बढ़ाता है। यह प्रणाली उपयुक्त होते हुए भी कुछ सेवाओं में लागू नहीं की जा सकती। उदाहरण के लिए मेडीकल अधिकारी, मुख्य शिक्षा अधिकारी, मुख्य अभियन्ता आदि को इस प्रकार प्रशिक्षित नहीं किया जा सकता जब कि सेवाओं की अन्य शाखाओं में शिक्षा एवं पदोन्नति प्राप्त करते-करते उच्च शिखर तक पहुंचा जा सकता है।

प्रशासकीय एवं लिपिक वर्ग के कर्तव्य कार्यालय से सम्बन्धित होते हैं। इस वर्ग के सेवकों की स्थिति प्रथम वर्ग के सेवकों से भिन्न होती है। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि लिपिक वर्ग के अधिकारियों से हम क्या आशा करते है। हो सकता है कि हम उनसे एक निश्चित गति से लिखित कार्य कराना चाहें तथा गलतियों की ओर कम ध्यान दें। यह भी हो सकता है कि हम गति की अपेक्षा विषय के सही होने पर अधिक ध्यान दें। इन पदों के लिए सामान्य शिक्षा ही पर्याप्त मानी जाती है। इस सम्बन्ध में कई लेखकों का यह सुझाव है कि स्थानीय सत्ताओं को यह नियम बना देना चाहिये कि वे कम से कम सोलह वर्ष के लड़के-लड़कियों को जिन्होंने मेट्रिक का प्रमाणपत्र या इसके बराबर ही पास कर लिया है, वे भर्ती करेंगी और तब उनको प्रशिक्षण प्रदान करेंगी जब तक कि वे प्रौढ़ न हो जायें। इस व्यवस्था को अपना लेने पर कार्यकुशलता की समस्या का बहुत कुछ समाधान हो जायेगा। स्थानीय सत्ताओं में उम्र एवं योग्यता के सम्बन्ध में जो नियम अपनाये गये है वे प्रायः एकरूप नहीं हैं।

एकरूपता न होने के कारण स्थानीय सरकार की सेवाओं में कई एक कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती हैं। इस एकरूपता का अभाव भी अस्वाभाविक ही नहीं है इसके पीछे कई कारण हैं। पहला कारण तो यह है कि स्थानीय सत्ताओं का आकार एवं रूप अलग-अलग है। यही कारण है कि उनके द्वारा नियुक्त किये जाने वाले अधिकारियों की संख्या में पर्याप्त अन्तर रहता है। एंगेलेसे (Anglesey) काउन्टी में नियुक्त अधिकारियों की संख्या केवल ३६ है जब कि वैस्ट रिडिंग (West Riding) में यह संख्या ६३४० है। पन्द्रह हजार से कम की जन-संख्या वाली स्थानीय सत्ताओं में एक पूर्वकालीन क्लर्क की आवश्यकता मुश्किल से ही रहती जब तक कि वह सम्बन्धी

(Treasurer) का भी कार्य न करे। आंशिक समय कार्य करने की व्यवस्था में यह भी सम्भावना रहती है कि अधिकारी के व्यक्तिगत अभ्यास के दायित्वों एवं उसके सरकारी दायित्वों के बीच संघर्ष उत्पन्न हो जायेगा। स्थानीय सरकार के कार्यकर्त्ताओं की नियुक्ति स्थानीय जनता में से ही करनी चाहिये। इसका कारण क्षेत्रवाद नहीं है वरन् यह है कि पन्द्रह या सोलह वर्ष के लड़के या लड़कियां अपने जिलों को छोड़ कर अन्य जिलों में आना पसन्द नहीं करेंगे। एकरूपता के अभाव का दूसरा मुख्य कारण यह है कि स्थानीय सत्ताओं की सेवाओं की प्रकृति अलग-अलग है।

कुछ स्थानीय सत्ताओं की सेवाएं इस प्रकार की होती हैं जिनको कि जीवन का व्यवसाय बनाया जा सकता है किन्तु दूसरी सत्ताएं केवल आंशिक समय कार्य करने के अवसर ही प्रदान करती हैं। तीसरे, एक ही सामान्य श्रेणी में भी स्थानीय सत्ताओं का आकार, वित्त एवं कार्य इतने पृथक एवं भिन्न होते हैं कि उच्च अधिकारी के कार्य की प्रकृति भी विभिन्न सत्ताओं में अलग-अलग रहती है। इसका अर्थ यह हुआ कि भर्ती में एकरूपता बहुत कम रह पायेगी। चौथे, स्थानीय स्तर की सेवाओं में अधिकारियों की योग्यताओं एवं उनके कार्य के बीच पर्याप्त अन्तर रहता है। असल बात तो यह है कि स्थानीय सत्ताओं के कार्य इतनी तीव्रता से बढ़ रहे हैं कि अनेक अधिकारियों की योग्यतायें, चाहे वे निश्चित भी कर दी गई हैं, शीघ्र ही अनुपयुक्त सिद्ध हो जाती हैं। स्थानीय स्तर पर निरन्तर शिक्षा के लिए कुछ प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

स्थानीय स्तर पर सेवाओं के लिए कोई एक-रूप व्यवस्था क्यों नहीं की गई उसका सबसे प्रमुख कारण यह है कि नैतिक एवं कानूनी आधार पर स्थानीय निकायों को स्वायत्तता प्रदान की जाती है। स्थानीय स्तर पर जन-सेवा की शर्तों को एक-रूप बनाने का प्रयास किया गया तो कई एक सत्ताओं से उसका कठोरता के साथ विरोध किया गया। पिछले बीस वर्षों में स्थिति में कुछ परिवर्तन आ गया है। अब एक सत्ता से दूसरी सत्ता में स्थानान्तरण हो जाते हैं।

भर्ती की भांति पदोन्नति में भी कई प्रकार की विभिन्नताएं पाई जाती हैं। विभिन्न परिषदों की बनावट में अन्तर पाया जाता है तथा कार्यों में विभिन्नताएं पाई जाती हैं। इसके परिणामस्वरूप यह भिन्नता उत्पन्न होती है। पदोन्नति की जिस व्यवस्था को अपनाया जाता है उसमें वरिष्ठता एवं योग्यता को संयुक्त कर दिया जाता है। केवल लन्दन ही एक ऐसा उदाहरण है जहां पर कि छोटे स्तर के अधिकारियों को बड़े स्तर तक पहुंचाया जाता है। इसका कारण यह है कि वहां इस प्रकार के वर्गीकरण के लिए पर्याप्त स्टाफ रहता है। जहां तक पदोन्नति की प्रक्रिया का प्रश्न है उसमें बाह्य हस्तक्षेप की सम्भावनाएं बहुत कम रहती हैं किन्तु फिर भी एकरूपता लाने के लिए कुछ प्रयास किए जा सकते हैं।

स्थानीय सत्ताओं के अधिकारियों की नियुक्ति एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था के साथ-साथ यह देखना भी उपयोगी रहेगा कि इन सत्ताओं के महत्वपूर्ण अधिकारी कौन-कौन से होते [redacted]। काउन्टी परिषद का मुख्य कानूनी

एवं प्रशासकीय अधिकारी काउन्टी का क्लर्क होता है। सन् १८८८ के अधिनियम के द्वारा शान्ति के न्यायाधीश के क्लर्क के पद को इसे सौंप दिया गया। जिस समय यह व्यवस्था की गई उस समय काउन्टी परिषद को बहुत थोड़े कार्य करने पड़ते थे। काउन्टी परिषद के कार्यों को तथा न्यायाधीशों के न्यायिक कार्यों को मिला दिया गया ताकि इन दोनों कार्यों के बीच समन्वय स्थापित किया जा सके और एक पूरे समय के क्लर्क की नियुक्ति की जा सके। यह तर्क दिया गया कि यदि इन दोनों कार्यालयों को अलग-अलग कर दिया गया तो शान्ति के क्लर्क को वर्ष में केवल कुछ दिन ही कार्य करना होगा। इसके अतिरिक्त इस सम्बन्ध में भी काफी जोर डाला गया कि काउन्टी परिषद के क्लर्क को कानूनी व्यवसाय का सदस्य होना चाहिए। इस विचार का विरोध किया गया कि ऐसे प्रशासकों को इस पद पर नियुक्त न किया जाए जो बिना कानूनी प्रशिक्षण प्राप्त किए विश्वविद्यालय में केवल सामान्य शिक्षा एवं विभिन्न अनुभव प्राप्त करके स्थानीय सरकार में आ जाते हैं। इस विचार के समर्थकों ने यह बताया कि क्लर्क की नियुक्ति कानून-वेत्ताओं या वकीलों में से ही करनी चाहिए। क्लर्क की शक्ति केवल परामर्श देने की ही नहीं है वरन् वह तर्क कर सकता है तथा समझा भी सकता है। एक प्रकार से क्लर्क की स्थिति सामान्य एकता एवं समायोजन स्थापित करने की है।

इन मतों के होते हुए भी वास्तविक व्यवहार को देखने से पता चलता है कि जो व्यक्ति इस पद पर नियुक्त किए गए वे केवल वकील ही नहीं थे बल्कि उनमें से अधिकांश ऐसे थे जिन्होंने काउन्टी क्लर्क के कार्यालय में अथवा टाउन क्लर्क के कार्यालय में सहायक के रूप में कार्य किया था। जो बातें काउन्टी क्लर्क के व्यवसाय एवं योग्यताओं के बारे में सच हैं उनमें से अधिकांश कस्बे एवं जिलों के क्लर्कों के बारे में भी सच हैं। ब्रिटिश संविधान की भांति टाउन क्लर्क के कर्त्तव्य भी कानून द्वारा निर्धारित न हो कर अभ्यास एवं परम्पराओं द्वारा निर्धारित हुए हैं। टाउन क्लर्क की स्थिति प्रबन्ध-कर्ता एवं समन्वयकर्ता की स्थिति है जो कि विभिन्न समितियों के बीच तथा परिषद के विभिन्न कार्यों के बीच एकरूपता स्थापित करता है।

स्थानीय अधिकारी की नियुक्ति करते समय इस बात पर बहुत जोर दिया जाता है कि स्थानीय पदों पर अधिक से अधिक स्थानीय लोगों को स्थान दिया जा सके। यह प्रकृति निम्नतर वर्ग की सेवाओं के सम्बन्ध में पर्याप्त सन्तोषजनक कही जा सकती है किन्तु मध्यवर्गी एवं उच्चवर्गी सेवाओं के सम्बन्ध में यह इतनी उपयोगी नहीं है। इन वर्गों की सेवाओं में जब कभी कोई रिक्त स्थान हो तो यह उचित समझा जाता है कि प्रार्थना-पत्र व्यापक रूप से आमन्त्रित किये जायें। जब तक अन्य स्थानीय सत्ताओं के प्रार्थियों पर पूरा विचार नहीं किया जाएगा उस समय तक स्थानीय पदों पर योग्यतम को लाना कठिन होगा। यदि एक व्यक्ति एक ही सत्ता में बना रहे तो उसकी पदोन्नति के अवसर कम हो जाते हैं क्योंकि ऐसा भी हो सकता है कि उसके तुरन्त बाद ही कोई वरिष्ठ अधिकारी हो जो कि उसके भावी विकास पर रोक लगा दे। ऐसी स्थिति में यह जरूरी है कि वह कहीं भी जा कर उच्च

पद को प्राप्त कर सके। इगलैण्ड मे इसी व्यवस्था को अपनाया जाता है वहा उच्च पद आसीन व्यक्ति अपने वर्तमान पद पर आने से पूर्व कई एक सत्ताओ मे घूम चुका होता है। जब कभी एक स्थानीय सत्ता के अधिकारी किसी रिक्त पद के लिए एक प्रत्याशी के बारे मे विचार कर रहे हो तो वे अपना निर्णय कभी इस आधार पर न ले कि वे उम्मीदवार को व्यक्तिगत रूप से जानते है। इस सम्बन्ध मे मि० जैक्सन का यह कहना अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रतीत होता है कि स्थानीय सरकार स्थानीय है। इस तथ्य का यह अर्थ नही होता कि इसे सकीर्ण होना चाहिए तथा बाहर वालो के लिए एक दीवार खीच देनी चाहिए।*

जैक्सन महोदय तो यहा तक सुझाव देते हैं कि जब कभी एक स्थानीय सत्ता मे कोई रिक्त स्थान हो और उस स्थान के लिए स्थानीय सत्ता मे ही उपयुक्त व्यक्ति हो तो भी उस पद को विज्ञापित करना चाहिए। प्रत्येक प्रार्थना-पत्र मे प्रत्याशी की शिक्षा, योग्यता पूर्व और वर्तमान कार्य, अनुभव तथा पद से सम्बन्धित अन्य आवश्यक प्रश्न होने चाहिए। जब तक ऐसा नही किया जाएगा तब तक विभिन्न प्रार्थनापत्रो का तुलनात्मक अध्ययन करना मुश्किल पड जाएगा और योग्यता के आधार पर कोई सूची नहीं बनाई जा सकेगी। इस व्यवस्था का अगला कदम यह है कि जब प्रार्थना-पत्रो पर विचार कर लिया जाए तो उनमे से कुछ प्रत्याशियो को साक्षात्कार के लिए आमन्त्रित कर लिया जाए। साक्षात्कार के लिए आमन्त्रित किए जाने वाले प्रत्याशियो की सूची बनाने का कार्य तथा साक्षात्कार करने का कार्य किसके द्वारा किया जाएगा वह इस बात पर निर्भर करता है कि नियुक्ति मध्यवर्ग के अधिकारियो की की जा रही है अथवा उच्चवर्ग के अधिकारियो की। जब कभी एक नए क्लर्क की अथवा अन्य उच्च अधिकारी की नियुक्ति की जाए तो चयन मे परिषद को सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए। परिषद को चाहिए कि वह एक विशेष समिति नियुक्त करे और यह समिति आए हुए प्रार्थना-पत्रो पर विचार-विमर्श करने के बाद कुछ प्रार्थियो की एक सूची बनाए जिनको कि साक्षात्कार के लिए बुलाया जाना है चयन किए गए व्यक्ति परिषद के सम्मुख उपस्थित होंगे और आवश्यक विचार-विमर्श के बाद परिषद यह निर्णय करेगी कि किस व्यक्ति को नियुक्त किया जाए। इस कार्य के लिए पूर्ण समिति को उपयुक्त नही समझा जाता अतः यह सिफारिश की जाती है कि प्रार्थियो का साक्षात्कार समिति द्वारा किया जाए और परिषद उस समिति द्वारा सुझाए गए नाम को स्वीकार कर ले। जहा कही नियुक्तिया परिषद के विभिन्न विभागो के लिए की जा रही हैं उनके सम्बन्ध मे नियुक्त एवं जाच के उत्तरदायित्व विभिन्न समितियो को सौंप देने चाहिएं अथवा सभी विभागों के लिए एक स्टाफ-समिति होनी चाहिए।

---

*"The fact that the Local Government is Local does not mean that it should be parochial and have barrier against outsiders."

—*R. M. Jackson*, Op. Cit., P. 113.

सामान्यत: जिस व्यवहार को अपनाया जाता है वह यह है कि विभिन्न विभागो के लिए उत्तरदायी समितियां नियुक्ति करती हैं। वरिष्ठ पदो के सम्बन्ध मे प्रक्रिया यह है कि एक उपसमिति द्वारा साक्षात्कार के लिए उम्मीदवारो को छांटा जाए और पूरी समिति द्वारा प्रत्याशियो का साक्षात्कार किया जाए। निम्न पदो की नियुक्तियो का कार्य समिति को उपसमिति के हाथ मे छोड देना होगा। निम्नतर नियुक्तियो से सम्बन्धित सभी विषयो में अन्तिम शक्तियां सभापति को सौंप दी जाती है जो कि उस विभाग के अध्यक्ष पद पर स्थित अधिकारी मे विश्वास कर सकता है। ये सब बातें इस बात पर निर्भर करती हैं कि पदो को पूरी रुचि के साथ विज्ञापित किया गया है या नही। जिस पद पर नियुक्ति करने की आवश्यकताए अधिक होती हैं उसके सम्बन्ध में विशेष व्यवस्थाए अपनाना जरूरी हो जाता है।

जिस व्यवस्था मे प्रत्येक समिति को अपना स्टाफ छाटने का अधिकार दे दिया जाता है वहा लगातार इस बात की देखभाल करनी पडती है कि विभिन्न विभागो मे स्टाफ के बीच एकरूपता बनी रहे जहा तक सम्भव हो सके वहा तक ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि प्रत्येक विभाग मे एक साकार्य करने के लिए एक ही स्तर के अधिकारी रखे जाए और उनको एक जैसा वेतन दिया जाए। जब तक इस व्यवस्था के लिए देख माल की व्यवस्था नही की जाएगी तब तक यह आशका रहेगी कि एक विभाग मे यह अच्छी प्रकार से कार्य करे और दूसरे विभाग मे यह सन्तोषजनक सिद्ध न हो। इसके परिणामस्वरूप आन्तरिक ईर्ष्या उत्पन्न होगी और स्टाफ की दशाए खराब हो जायेगी। स्टाफ समिति के रूप मे कार्य करने वाली एक विशेष समिति इन सभी बातो का ध्यान रख सकती है। यदि कोई समिति यह चाहती है कि उसका स्टाफ बढाया जाए तो उसे परिषद से कहना होगा तथा यह प्रस्ताव वित्त समिति के पास भी जाएगा ताकि वह भी परिषद को अपना प्रतिवेदन दे सके। जिस व्यवस्था मे समितियां स्वय का स्टाफ नियुक्त करती हैं उसमे यह भी प्रावधान रहता है कि ऐसे प्रस्ताव को स्टाफ समिति के पास भेजा जाए। स्टाफ समिति इस बात पर विचार करेगी कि क्या कार्य इतना है कि एक अधिकारी की नियुक्ति कर दी जाए और यदि की जाए तो उसके लिए स्तर एव वेतन क्या होना चाहिए। यदि समिति एव स्टाफ समिति के बीच मतभेद पैदा हो जाए तो विषय को परिषद के सम्मुख भेजा जाता है।

स्टाफ समिति स्थानीय सेवाओ की पदोन्नति के सम्बन्ध मे भी कार्य करती है। समिति के सदस्यों को प्राय यह प्रवृति होती है कि जब किसी अधिकारी द्वारा उनकी विशेष रूप से सेवा की जाती है तो वे यह चाहते हैं कि वे उसके लिए कुछ करें अर्थात् उसकी पदोन्नति करदें। इस प्रकार की पदोन्नतियो के मार्ग मे सबसे बडी कठिनाई यह है कि इसका अन्य विभागो पर भी प्रभाव पडता है। अनेक अधिकारी ऐसे होते हैं जिनका कार्य सदस्यो द्वारा बहुत कम देखा जाता है। ये अधिकारी यह अनुभव करते हैं कि उनके कार्यों पर विचार ही नही किया जाएगा क्योंकि उनको मुख्य स्थिति प्राप्त

नहीं है। एक प्रावधान के अनुसार पदोन्नति से सम्बन्धित सभी मामले स्टाफ समिति के पास जाते हैं।

व्यवहार मे प्रायः यह देखा जाता है कि नियुक्ति की अपेक्षा पदोन्नति मे कठिनाईया अधिक होती हैं। नियुक्ति करते समय कोई पद रिक्त होता है जिसे कि किसी के द्वारा भरा जाता है यदि वाछित स्तर का कोई उम्मीदवार मिल जाए तो इस सम्बन्ध मे कोई कठिनाई नही होती। यद्यपि पदोन्नति के समय ये सारे कार्य नही करने होते किन्तु फिर भी पदोन्नति से सम्बन्धित प्रश्नों द्वारा स्टाफ के पारस्परिक सम्बन्धो को पर्याप्त प्रभावित किया जाता है। यदि पदोन्नति उस समय न की जाए जिस समय कि जरूरी है तो इससे स्टाफ के सम्बन्धो मे पर्याप्त अड़चने आती हैं। पदोन्नति का प्रश्न केवल यही प्रश्न नही है कि उचित व्यक्ति को ऊपर उठा दिया जाए किन्तु साथ ही यह भी है कि उसको समय पर उठाया जाए। यदि पदोन्नति समय से बहुत पूर्व दे दी गई तो इसके परिणामस्वरूप पारस्परिक ईर्ष्या और बुरी भावनाए उत्पन्न हो जाऐगी तथा यदि पदोन्नति मे देर की गई तो हो सकता है कि अच्छा व्यक्ति अपने विशेष कार्य मे ही रमजाए और वह मस्तिष्क की लोचशीलता को खो दे जो कि उच्च पद के कर्त्तव्यो का निर्वाह करने के लिए जरूरी होती है। इस सम्बन्ध मे कोई एक तरीका नही अपनाया जा सकता। पदोन्नति की दृष्टि से यह व्यवस्था अत्यन्त उपयोगी समझी जाती है कि विभिन्न कर्मचारियो का वार्षिक रूप से मूल्याकन किया जाए तथा उनसे सम्बन्धित सभी अभिलेख रखे जाए। जब किसी पदाधिकारी की पदोन्नति करनी हो तो उसके कार्य सम्पन्नता के अभिलेखन को देखना उपयोगी रहेगा इसके परिणामस्वरूप विभागाध्यक्ष के ऊपर एक भारी उत्तरदायित्व आ जाता है। एक सफल उच्च अधिकारी की यह एक आवश्यक विशेषता मानी जाती है कि वह अपने अधीनस्थो के साथ सफल माना जा सके। ऐसा तभी हो सकता है जब कि अधीनस्थ लोग अपने उच्च अधिकारी के प्रति विश्वास और आदर की भावना रखें तथा एक टीम के रूप मे उन सभी को एक साथ कार्य करने के लिए प्रेरित कर सकें।

पदोन्नति के सम्बन्ध मे जो व्यवस्था अपनाई जाती है उसके अनुसार अधिकाश नियुक्तिया स्टाफ समिति द्वारा की जाती हैं। कई एक लेखकों के कथनानुसार यह कोई अच्छा व्यवहार नही है क्योकि जो समितियाँ विभिन्न सेवाओ को सचालित करने के लिए उत्तरदायी हैं उन्हें वे अधिकारी छाटने का अधिकार होना चाहिए जिनके द्वारा ये सेवाए सचालित की जाऐगी यदि ऐसा नही किया गया तो ये अधिकारी अपने कार्यों मे पूरी तरह से रुचि नही लेगा। एक स्टाफ समिति उन सभी आवश्यक विशेषताओ से परिचित नही हो सकती जो कि विभिन्न कार्यों के लिए उपयोगी समझे जाते हैं। इसके अतिरिक्त उस व्यवस्था को अधिक सन्तोषजनक माना जाता है जिसमे कि वह व्यक्ति अधिकारियो के चयन का कार्य करे जिसे कि उनके साथ कार्य कार्य करना है एक दूसरा विचार यह भी है कि जब स्थानीय सत्ता की सेवाओं की नियुक्ति एव पदोन्नति की प्रक्रिया एक स्टाफ समिति में केन्द्रीकृत कर दी जाती है तो इससे भ्रष्टाचार एवं भाई-भतीजेवाद का जोर हो

जाता है। यदि यह शक्ति विभिन्न समितियों को सौंप दी जाए तो इतना खतरा न रहे। स्टाफ समिति का असली कार्य नियुक्तियां करना नहीं है किन्तु परिषद की विभिन्न क्रियाओं के दौरान यह देखना है कि तत्कालीन वेतन एवं अच्छे भविष्य की दृष्टि से एक जैसी प्रकृति के कार्यों को समान रूप से पुरस्कृत किया जाए।

स्टाफ से सम्बन्धित अनेक सामान्य प्रश्न होते हैं जो कि समिति को कार्यरत रख सकें। ये प्रश्न हैं—कार्य के घन्टे, कार्य की दशाएं, परिषद की ओर से दिए जाने वाले यात्रा भत्ते, छुट्टियां तथा विभिन्न पदों पर नियुक्त किये जाने वाले व्यक्तियों से सम्बन्धित अन्य विषय आदि। यह जरूरी नहीं है कि स्टाफ समिति की अलग से ही नियुक्ति की जाए। यह भी हो सकता है कि इसके कार्यों को वित्तीय समिति के साथ मिला दिया जाए अथवा वित्तीय समिति की उपसमिति को कार्य सौंप दिए जाएं।

राष्ट्रीय संयुक्त परिषद, जिसे कि सन् १९४५ में पुनर्गठित किया गया था, ने सेवाओं की शर्तों के सम्बन्ध में एक राष्ट्रीय योजना को स्वीकार किया। इस योजना को स्थानीय सरकार के क्षेत्र में चार्टर कहा जाता है। इस चार्टर में यह व्यवस्था की गई थी कि जो युवक स्थानीय सेवाओं में प्रवेश पाएं उनके लिए प्रशिक्षण का पर्याप्त प्रबन्ध किया जाना चाहिए। नए लोगों को परिपक्व उम्र पर प्रवेश प्रदान किया जाए और प्रवेश के बाद भी प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जाए। यह आशा की गई थी कि इस प्रावधान के द्वारा कार्य-कुशलता में विकास होगा एवं उच्च पदों के अधिकारियों को प्रशिक्षण प्राप्त होगा साथ ही कार्य करने वाले अधिकारियों को कई अवसर प्राप्त होंगे। सन् १९४५ से ही स्थानीय सरकार की सेवाओं में भारी कठिनाइयां भर्ती तथा प्रशिक्षण के प्रसंग में उत्पन्न हो जाती है कि अन्य लोक-सेवाओं में स्थित हैं। कई बड़ी सत्ताएं तो भर्ती के लिए प्रतियोगी परीक्षाएं करती हैं किन्तु छोटी सत्ताएं कम शिक्षा सम्बन्धी योग्यताओं वाले प्रत्याशियों को निम्न पदों पर नियुक्त कर लेती हैं निम्न पदों पर कार्य करने वाले ये कर्मचारी प्रायः स्थानीय निवासी ही होते हैं। कोई भी निम्न पद पर कार्य करने वाला यदि अन्य विभाग में जाएगा तो वह अपने उसी पद पर जा सकता है। यदि वह पदोन्नति चाहता है तो उसे इसके लिए योग्य बनना होगा। स्थानीय सरकार के किसी कार्य में विशेषीकरण करना होगा। उच्च पदों के लिए तो उचित अनुभव एवं योग्यताएं प्रायः अनिवार्य होती हैं। इस चार्टर में कहा गया था कि कार्य का विस्तृत अनुभव एक मूल्यवान प्रशिक्षण होता है।

चार्टर द्वारा यह व्यवस्था की गई थी कि २१ वर्ष की उम्र तक के कर्मचारियों को एक विभाग से दूसरे विभाग में स्थानान्तरित किया जा सके। दूसरे कुछ चुने हुए वरिष्ठ अधिकारियों को अन्य विभागों में भेजा जाए ताकि वे विस्तृत अनुभव प्राप्त कर सकें। तीसरे, जब कभी एक विभाग में स्थान रिक्त हो तो दूसरे विभागों के स्टाफ को भी सूचित कर दिया जाना चाहिए कि वे भी यदि चाहें तो इस पद के लिए प्रार्थना-पत्र भेज सकें। चार्टर द्वारा जो योजना रखी गई उसमें एक ओर तो योग्यता के आधार पर व्यक्तियों को स्थानीय सेवाओं में प्रवेश देने की बात कही गई थी

और दूसरी ओर यह व्यवस्था करने के लिए भी कहा गया था कि अधिकारी-गण सेवाओं में प्रवेश पाने के बाद भी अपने अध्ययन को जारी रख सकें। इसलिए कुछ कदम उठाने की सिफारिश की गई। उदाहरण के लिए सामान्य शिक्षा में विकास हेतु आंशिक-कालीन कक्षाओं में उपस्थिति के लिए प्रोत्साहन देना, अधिकारियों को उचित व्यावसायिक या तकनीकी योग्यताएं प्राप्त करने के लिए वित्तीय सहायता तथा अन्य सुविधा देना, उचित अधिकारियों को लोक प्रशासन में डिग्री या डिप्लोमा लेने के लिए पर्याप्त सुविधाएं प्रदान करना, अधिकारियों को स्थानीय सरकार की समस्याएं व्यवस्थित रूप से समझने के लिए प्रोत्साहित करना, स्थानीय सत्ताओं द्वारा कोर्स, भाषण, पुस्तकालय एवं शोध कार्यों की सुविधाएं प्रदान करना, प्रवेशोत्तर प्रशिक्षण की सभी योजनाओं को स्थानीय सत्ता के स्थानीय संयुक्त समिति प्रतिनिधि द्वारा पर्यवेक्षित किया जाना चाहिए। वह स्टाफ के प्रतिनिधियों के साथ मिल कर ऐसा करे। इन सभी उपायों को अपनाने के बाद यह आशा की जा सकती है कि सेवाकालीन प्रशिक्षण की पर्याप्त व्यवस्था हो जाएगी।

वेतन शृंखला एवं सेवा की अन्य शर्तें
[Pay Scales and Other Conditions of Service]

स्थानीय स्तर पर विभिन्न अधिकारियों के वेतन को निर्धारित करने के लिए सेवाओं को कई वर्गों में बांट दिया गया है। चार्टर के अनुसार इन सेवाओं के मुख्य रूप से पांच वर्ग बताए गए हैं। प्रथम वर्ग सामान्य सम्भाग (General Division) था। इसमें वे अधिकारी सम्मिलित थे जो कि स्पष्ट निर्देशों एवं पर्यवेक्षण के आधीन प्रचलित कार्यों से सम्बन्धित कर्त्तव्यों में संलग्न रहते हैं। इस वर्ग में उन नवीन प्रवेश-कर्ताओं को सम्मिलित किया जाता था जिन्होंने अंग्रेजी, गणित, विज्ञान तथा अन्य विषयों में साधारण स्तर पर शिक्षा परीक्षाओं का सामान्य प्रमाण-पत्र प्राप्त किया है। इस वर्ग में उन नव-प्रवेश-कर्ताओं को भी लिया जाता था जो कि राष्ट्रीय प्रवेश परीक्षा पास कर चुके हैं। दूसरे, पहले एक उच्च सामान्य सम्भाग (Higher General Division) भी था जिसमें कई एक सेवाएं वे थीं जिनको कि अब प्रथम श्रेणी में ही मिला दिया गया है। अतः अब यह श्रेणी समाप्त कर दी है। प्रवेश परीक्षाओं को भी बन्द कर दिया गया है। तीसरा वर्ग लिपिक सम्भाग (Clerical Division) होता है। इस सम्भाग में वे अधिकारी आते हैं जो कि उत्तरदायित्वपूर्ण लिपिक कर्त्तव्यों का निर्वाह कर रहे हैं। इन अधिकारियों की योग्यता सामान्य सम्भाग वालों की तुलना में अधिक होती है।

इसमें वे अधिकारी भी आते हैं जो कि विभाग में कार्य के सम्भागों का पर्यवेक्षण करते हैं। चौथी श्रेणी प्रशासकीय, व्यावसायिक एवं तकनीकी सम्भाग (A. P. T. Division) की है। इन अधिकारियों द्वारा सम्पन्न किए जाने वाले कर्त्तव्यों का सम्बन्ध नीति के निर्माण और परिषद की ... के सामान्य प्रशासन से होता है। ये अधिकारी विभागों को निय... सकते हैं या कानूनी लेखा या अन्य विभागों में विशेषीकृत राय ... रते हैं। इस सम्भाग में वे वैधानिक, वैज्ञानिक या अन्य योग्यताओं

वाले अधिकारी भी आते है जो कि नागरिक अभियन्ताओ, सर्वेक्षणकर्त्ताओं एवं भवन-निर्माताओ के रूप मे कार्य करते है। पाचवा वर्ग अन्य सम्भाग (Miscellaneous Division) कहा जाता है। इस सम्भाग मे कार्य करने वाले अधिकारी उन कर्त्तव्यो का निर्वाह करते हैं जिनकी प्रकृति पूर्ण रूप से लिपिक वर्गी नही होती किन्तु उनकी विशेषीकृत प्रकृति होती है। इन अधिकारियो को प्रायः निम्न पदो पर नियुक्त नही किया जाता। उदाहरण के लिए कल्याण अधिकारी [Welfare Officer] इस श्रेणी मे आते है। इन विभिन्न वर्गो की सेवाओ की वेतन श्रृंखलाए अलग-अलग निर्धारित की जाती हैं।

वेतन श्रृंखलाओ का प्रयोग इतना सरल नही होता जितना कि यह समझा जाता है। विभिन्न परिस्थितियो के लिए विभिन्न प्रकार की वेतन श्रृंखलाए होती हैं। मुख्य अन्तर उन पदो के अन्दर किया जाएगा जिनमे कि कार्य की छोटी परिभाषा की जा सकती है तथा ऐसे पद जिनमे कार्य को परिभाषित नही किया जा सकता। कुछ पद ऐसे होते हैं जिनका कि नाम लेते ही उस पद से सम्बन्धित कर्त्तव्यो का ज्ञान हो जाता है तथा वास्तविक प्रकृति ज्ञात हो जाती है। यदि हम यह कहे कि एक व्यक्ति टाउन क्लर्क है या स्वास्थ्य का मेडीकल अधिकारी है या शिक्षा सचालक है तो हम फौरन यह समझ जायेंगे कि उस अधिकारी के पद की क्या स्थिति है तथा उससे क्या कार्य करने की आशा की जा सकती है। इनके विपरीत ऑफिस स्टाफ का एक सामान्य निकाय भी होता है जिसके लिए कि कोई एक ऐसा नाम प्रयुक्त नही किया जा सकता जो हमे यह बता सके कि वे पदसोपान मे किस स्तर पर आते है। यदि हम यह कहे कि एक व्यक्ति परिषद का अधिकारी है तो यह हो सकता है कि वह व्यक्ति कोई निम्न अधिकारी हो अथवा वह महान श्रेणी का भी हो सकता है या सम्भव है कि वह उच्च-श्रेणी का हो। इस प्रकार स्थानीय सरकार के अधिकारियो की दो श्रेणिया बन जाती हैं। जिस श्रेणी के अधिकारियो के कर्त्तव्यो को परिभाषित किया जा सकता है, उनके लिए वेतन श्रृंखला निर्धारित करना भी सम्भव है। किन्तु वेतन श्रृंखला का दूसरा प्रकार जो कि परिभाषित कार्यो से सम्बन्धित नही होता, उसमे कई एक वेतन स्तर आते है। इनमे प्रत्येक एक विशेष संख्या पर शुरु होता है तथा वार्षिक वृद्धि द्वारा अधिक से अधिक संख्या तक बढता जाता है। वेतन शृंखला को निश्चित करने की व्यवस्था के पीछे मूल बात यही है कि तुलनात्मक रूप से समान कार्य करने वाले अधिकारियो को एक ही स्तर मे रखा जाय।

अधिकारियों का आचरण [**Conduct of the Officers**]—चार्टर द्वारा अधिकारियो के आचरण के लिए कुछ नियम भी आधारित किये गये हैं। इस सम्बन्ध मे एक बात तो यह कही गई कि अधिकारियो को यह स्पष्ट रूप से घोषणा कर देनी चाहिए कि क्या वे किसी सदस्य से सम्बन्धित है। यदि वे स्थानीय सत्ता के किसी सदस्य से अथवा उसके किसी उच्च अधिकारी से सम्बन्धित हो तो उनको इस बात की सूचना लिखित रूप मे देनी चाहिये। यदि कोई उम्मीदवार जानबूझ करके इस प्रकार की सूचना

देने मे असफल रहता है अथवा गलत सूचना देता है तो इसके लिए उसको पद से हटाया भी जा सकता है। दूसरे, एक उम्मीदवार यदि स्थानीय सत्ता की सेवा मे प्रवेश पाना चाहता है तो उसे इसके लिए किसी सदस्य से जा कर नही कहना चाहिए अर्थात् अपनी नियुक्ति कराने के लिए वह किसी भी सदस्य के पास सिफारिश लेकर नही जा सकता। तीसरे यदि नियुक्तिकर्त्ता अधिकारी द्वारा दिए गये किसी ठेके मे स्वय अधिकारी का आर्थिक हित सलग्न हो तो उसे इस बात की सूचना दे देनी चाहिए। चौथे, उसे समिति के किसी परिपत्र मे निहित सूचना को अथवा समिति की प्रक्रिया को किसी बाहर वाले व्यक्ति के सामने नही खोलना चाहिए। पाचवें, चार्टर के अनुसार वर्णित आचरण सहिता में एक बात यह भी कही गई थी कि अधिकारी को अपने नियुक्तिकर्त्ता अधिकारी के प्रति पूरी स्वामीभक्ति दिखानी चाहिए। यद्यपि सत्ता का सम्बन्ध अधिकारी के व्यक्तिगत कार्यों से उस समय तक नही रहता जब तक कि वे उसकी सेवा से सम्बन्धित उत्तरदायित्वो के साथ सघर्षपूर्ण न हो। केवल यही पर्याप्त नही है कि अधिकारी का आचरण उच्च स्तर का हो किन्तु प्रत्येक को यह स्पष्ट रूप से ज्ञात भी होना चाहिए कि यह ऐसा है। इस सम्बन्ध में मि० स्टोन्स (Stones) का यह कथन पूर्णत: सच है कि स्थानीय सरकारी अधिकारी को न केवल तथ्य रूप मे ईमानदार होना चाहिये किन्तु उसे बेईमानी के सन्देह मे भी परे रहना चाहिए।* स्थानीय सरकारी अधिकारी को अपने आपको ऐसी स्थिति मे नही डालना चाहिए जिसमे कि उसके व्यक्तिगत हित एव सार्वजनिक उत्तरदायित्वो के बीच सघर्ष उत्पन्न हो जाय। सामान्य जनता स्थानीय सरकार के अधिकारी से ईमानदारी का एक उच्चस्तर चाहती है जो कि केवल कठोर नही है वरन् किसी भी बेईमानपूर्ण व्यवहार से पृथक है।

जहा तक अधिकारी के व्यक्तिगत जीवन का प्रश्न है उसे वे सब स्वतन्त्रताए एव सुविधाए प्राप्त होती हैं जो कि सामान्य नागरिक को प्रदान की जाती हैं। अन्य अनेक लोगो की तरह से वह भी पूरे समय के कार्य के लिए नियुक्त किया जाता है। इसका अर्थ यह है कि उसे अन्य किसी ऐसे कार्य का उत्तरदायित्व नही लेना चाहिए जिसमे कि उसके पद सम्बन्धी दायित्वो पर उल्टा असर पडे। अधिकारियो के आचरण के बारे मे उस समय कठिनाई उत्पन्न हो जाती है जब कि परिस्थितियो को परिभाषित करना कठिन बन जाता है। सामान्य रूप से यह समझा जाता है कि सरकारी सेवको को न्यायाधीशो की भाति तथा सरकारी कार्यालयो के अन्य अधिकारियो की भाति इस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए कि उनके जीवन के ढग के बारे मे कोई विरोधी विचार प्रकट न किये जा सकें।

---

*"The Local Government Officer must be not only honest in fact, but he must be beyond the suspicion of dishonesty."

—Quoted by *P. Stones*, Op. Cit., P. 89. (from Charter)

चार्टर के अनुसार स्थानीय सरकार के अधिकारियों के आचरण के बारे में स्पष्ट रूप से निर्देश किया गया है।* उसके अनुसार एक स्थानीय सरकारी अधिकारी का प्रथम कर्त्तव्य उसे नियुक्त करने वाली सत्ता के प्रति अविभाजित स्वामी भक्ति रखना है। उसकी व्यक्तिगत क्रियाओं में सत्ता का सामान्य रूप से उस समय तक कोई सम्बन्ध नहीं रहता जब तक कि उसके आचरण में उस सेवा के विरुद्ध कोई बात न हो जिसमें कि वह अधिकारी है।

इस प्रकार के आचरण के लिए लोक सेवाओं में उच्चस्तर की आवश्यकता है। कानूनी न्यायालयों के लिए जो कहावत निर्धारित की गई है वह स्थानीय सरकार के अधिकारियों पर भी उतनी ही लागू होती है। यह कहावत तथा मौलिक महत्व की बात है कि न्याय को केवल किया ही नहीं जाए बल्कि वह करता हुआ देखा भी जाना चाहिए। थोड़ा बहुत संदेह होने की स्थिति में भी अधिकारी की ईमानदारी के बारे में सन्देह किया जा सकता है। चार्टर में यह भी कहा गया था कि सरकारी अधिकारी को उन सभी के प्रति नम्रतापूर्ण होना चाहिए जिनके साथ वह सम्पर्क में आता है।

इन सिद्धान्तों को स्टाफ के सदस्यों पर लादना नहीं चाहिए। इनको स्टाफ की ओर से पूरी तरह से माना गया है और संयुक्त संगठन द्वारा सरक्षित किया गया है। स्थानीय सरकार के अधिकारियों ने एक संगठित निकाय बनाने की प्रक्रिया में सेवाओं में सुधार लाने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है। आचरण के स्तर को उचित बनाए रखने के लिए स्वयं अधिकारियों से अधिक कोई भी उत्सुक नहीं हो सकता।

स्थानीय अधिकारियों के संघ

[The Associations of Local Goverament Officers]

स्थानीय सरकार के अधिकारियों को संघ बनाने का अधिकार सौंपा गया है। यही कारण है कि वर्तमान काल में यह आशा नहीं की जाती कि स्वयं नियुक्तिकर्ता ही अपने स्टाफ की नियुक्ति के लिए समस्त नियमों एवं शर्तों को बनाएगा। व्यापारिक संघों की धारणा आज इतनी विकसित हो चुकी है कि अधिकांश वेतन तथा अन्य शर्तों को दोनों पक्षों के बीच समझौते द्वारा तय किया जाता है। नवीन विकासों के अनुसार ऐसे समझौते पूर्ण निकाय बन चुके हैं जो कि नियुक्तिकर्ता एवं कर्मचारी-वर्ग दोनों के प्रतिनिधियों द्वारा बने होते हैं। यदि यह निकाय तय करदें तो नियुक्तिकर्ता को वही वेतन तथा शर्तें प्रदान करनी होती हैं। दूसरी ओर कर्मचारियों को भी उसे मानना होता है। यदि समझौता नहीं हो सका तो झगड़ा जारी रहेगा और यह झगड़ा कई रूप धारण कर सकता है जैसे हड़ताल, तालाबन्दी, पंच फैसला तथा घेराव जो कि आज तक भारतीय औद्योगिक जगत का सरदर्द बना हुआ है। ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सत्ताओं ने इसी सामान्य रूप

---

*Para 37 of the scheme of conditions of service of the English National Joint Council for Local Authorities' Services.

को अपनाया है किन्तु वहां संघर्ष की स्थिति मे हड़ताल नही होती बल्कि मामला पंच फैसले को सौंप दिया जाता है। प्रत्येक प्रकार की स्थानीय सत्ता का राष्ट्रीय संगठन है। ये संगठन स्थानीय सत्ताओं के कार्यों एवं संविधान के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्ध रखते हैं। उनका मुख्य सम्बन्ध सरकार एवं संसद की नीति के विकासों को देखने से रहता है।

स्थानीय सरकार की सत्ताओं को संघ क्यों नहीं बनाने चाहिए इस सम्बन्ध मे प्रायः कोई कारण दिखाई नहीं देता। यदि वे व्यापारिक संघो के सदस्य हो सकते हैं तो इस प्रकार के संघ भी बना सकते है। उनके कार्यों की प्रकृति व्यापारिक कार्यों एवं वाणिज्य से भिन्न होती है अतः उनको व्यापारिक संघो [Trade Unions] से नहीं मिलाया जा सकता। वर्तमान मे स्थिति यह है कि स्थानीय सरकार के लगभग ६०% अधिकारी राष्ट्रीय एवं स्थानीय सरकार के अधिकारियो के संघ के सदस्य होते है। नालगो (Nalgo) एक प्रकार से व्यापारिक संस्था ही है किन्तु इसकी कुछ अपनी विशेषतायें हैं। इनके कारण यह अन्य व्यापारिक संस्था से कुछ भिन्न बन जाती है। प्रथम तो यह सेवा के सभी स्तर के अधिकारियों के लिए होती है। नागरिक सेवा मे हम यह पाते हैं कि वहां प्रत्येक स्तर के अधिकारी की अलग से संस्था होती है किन्तु नालगो मे निम्न-स्तर से लेकर ऊपर के स्तर तक के प्रायः सभी अधिकारी होते हैं। दूसरे, नालगो व्यापारिक संघ, कांग्रेस से अथवा मजदूर दल आदि किसी से भी संलग्न नहीं होती। एक निकाय के रूप मे यह किसी भी राजनैतिक दल से अपने आप को नहीं बांधती। तीसरे, नालगो स्थानीय सत्ताओं के साथ पूरे सहयोग के साथ कार्य करती है। यही कारण है कि यह परम्परागत व्यावसायिक संघो की अपेक्षा स्थानीय सरकार की सेवाओं के रूप में विकास करने मे पर्याप्त सफल सिद्ध हुई है। नालगो की अन्य विशेषता यह है कि इसकी सदस्यता अन्य संगठनो से भी संगठन रखती है। कुछ एक सेवायें ऐसी भी है जिनको कि पहले स्थानीय सत्ताओं द्वारा सम्पन्न किया जाता था अतः उनके अधिकारी नालगो के सदस्य थे किन्तु बाद में इन सेवाओं को अन्य सत्ताओं के लिए हस्तांतरित कर दिया गया। इस परिवर्तन के बाद भी इनके अधिकारी नालगो के पूर्ववत् सदस्य ही बने रहे।

स्थानीय सरकार के अधिकारियों के इन संघो का विकास भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अपने इतिहास के प्रारम्भ मे स्थानीय सत्ताओं ने इसमे पर्याप्त लाभ का अनुभव किया कि एक ही स्तर की सत्ताओं के बीच संघ बना दिये जायें। इस प्रकार के संघो मे नगर निगम संघ, काउन्टी परिषद संघ, शहरी जिला परिषद संघ, देहाती जिला परिषद संघ आदि का नाम लिया जा सकता है। ये सभी संघ सत्ताओं के स्तर की ही भिन्नता रखते हैं किन्तु वैसे इनके लक्ष्य सभी सामान्य हैं। ये इन लक्ष्यो को ऐसे तरीकों से प्राप्त करने का प्रयास करती हैं जो कि दिखने में भिन्न प्रतीत नहीं होते। ये अपने सदस्यो के लिए प्रायः एक जैसी ही सेवायें प्रदान करती हैं।

नगरनिगम संघ [The Association of Municipal Corporation]—नगर निगम संघ स्थानीय सत्ताओं द्वारा बनाया गया प्रथम संघ

माना जाता है। इनकी स्थापना नगर निगमों के एक समूह द्वारा अपने हितो की रक्षा के लिए तथा राष्ट्रीय स्तर पर अपना एक वक्ता रखने की दृष्टि से १८७३ मे की गई थी। इस सघ के द्वारा सदस्यता प्रारम्भ से ही ऐच्छिक रखी गई। अब इसको प्राय. सभी काउन्टी बारोज, गैर-काउन्टी बारोज तथा राजधानी बारोज का प्रतिनिधित्व किया जाता है। इस सघ का लक्ष्य, जैसा कि इसके सविधान मे वर्णित किया गया है, नगर निगमो के हितो, अधिकारियो एव विशेषाधिकारियो की व्यक्तिगत व्यवस्थापन या सरकारी व्यवस्थापन के विरुद्ध रक्षा करना है।

सघ द्वारा प्रतिदिन जो कार्य सम्पन्न किये जाते हैं वे मुख्य रूप से दो प्रकार के होते है। प्रथम, सघ द्वारा यह प्रयास किया जाता है कि बारोज की आवाज को ससद मे तथा सरकारी विभागो मे सुना जाये, विशेषकर उस व्यवस्थापन के प्रश्न पर जो कि इसके सदस्यो को प्रभावित करता हो। दूसरे, अपने सदस्यो को कानूनी, सवैधानिक, प्रशासकीय एव वित्तीय समस्याये उत्पन्न होने पर परामर्श देना तथा सहायता करना।

सघ द्वारा परिषदो की सहायता इस प्रकार की जाती है कि निगम के एक सदस्य का अनुभव दूसरे सदस्यो के लिए भी उपयोगी बना दिया जाता है। ये सस्थायें एक ओर तो निगम के सदस्यो का अनुभव संसद के सामने रखती है और दूसरी ओर ससद द्वारा पारित व्यवस्थापन को निगम के सदस्यो के सामने स्पष्ट करती है।

सघ का सगठन भी उल्लेखनीय है। संघ को सौ सदस्यो की एक परिषद द्वारा प्रशासित किया जाता है। ये सभी सदस्य मतदान के माध्यम से चुने जाते हैं। प्रत्येक निर्वाचित निगम को इस परिषद मे अपने तीन प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है किन्तु जो मतदान किया जाता है वह एक शहर, एक मत के हिसाब से ही होता है। यह परिषद सामान्यतः वर्ष मे पाच बार मिलती है। यह सघ के कार्यों का प्रबन्ध करती है, इसकी `यों के सम्बन्ध मे निर्णय लेती है तथा मतदान द्वारा इसकी समितियो को निर्वाचित करती है।

सघ के विस्तृत कार्यों को सपन्न करने के लिए चौदह स्थायी समितियां होती हैं। ये हैं—बाल शिक्षा, अग्नि सेवा, सामान्य लक्ष्य, स्वास्थ्य, सड़क और यातायात, गृहनिर्माण, कानून, पुस्तकालय, अजायबघर एवं कला सस्थान बाजार एव वधिकघर, पुलिस, रेटिंग, व्यापार, नियोजन, कल्याण। सघ के कार्यों मे उप-समितियो द्वारा भी महत्वपूर्ण रूप से भाग लिया जाता है। स्थायी उप-समितियां होती हैं जैसे अनुदान, जल, नागरिक रक्षा आदि से सम्बन्धित। जब कभी एक विशेष विषय की जांच करनी हो तो उसके लिए विशेष समिति भी नियुक्त की जाती है उदाहरणार्थ वाहनों को रखने के स्थान के सम्बन्ध मे। इसके अतिरिक्त "...." सरकार को प्रभावित करने वाले प्रत्येक ससदीय विधेयक का अध्ययन करने के "..." एक विशेष उपसमिति नियुक्त की जाती है।

जिस प्रकार परिषद के लिए व्यक्तियो का नहीं अपितु बारोज का चुनाव किया जाता है उसी प्रकार से समितियों मे भी व्यक्ति का नहीं वरन्

बारोज का ही चुनाव किया जाता है। प्रत्येक बारो परिग्द यह निर्णय करती है कि उसका प्रतिनिधित्व किस सदस्य के द्वारा किया जायेगा। इस व्यवहार के दो अपवाद बताये जाते हैं। ये हैं—सामान्य उद्देश्य की समिति और कानून समिति। सामान्य उद्देश्य की समिति का कार्य समन्वय स्थापित करना होता है अत: इसमे निर्वाचित सदस्यो के अतिरिक्त स्थायी समितियो के सभी सभापति भी रहते हैं। कानून समिति के सदस्य सभी टाउन क्लर्क होते हैं जिनको व्यक्तिगत सामर्थ्य के आधार पर चुना जाता है। विशेषीकृत ज्ञान वाले अधिकारियो को सभी प्रकार की समितिया एवं उपसमितियो मे सेवा करने के लिए नियुक्त किया जाता है। इस प्रकार सघ के कार्य मे अनुभव एवं ज्ञान का अधिक से अधिक योगदान रहता है। परिषद के कार्यों मे जो व्यय होता है उसका भार बारोज द्वारा उठाया जाता है। अपनी जनसख्या के आधार पर प्रत्येक सदस्य द्वारा वार्षिक योगदान दिया जाता है। इस प्रकार से यदि कोई छोटा बारो है तो वह पाच पौण्ड प्रति वर्ष तक दे सकता है जबकि चार लाख की जनसख्या वाले बड़े बारोज द्वारा एक हजार पौण्ड प्रति वर्ष दिये जाते हैं।

काउन्टी परिषदो का संघ [County Councils Association]—जब सन् १८८८ के अधिनियम द्वारा काउन्टी परिषदो की स्थापना की गई थी उसके साथ ही काउन्टी परिषद सघ भी बना दिया गया। इस सघ मे इगलैण्ड तथा वेल्स की सभी काउन्टी परिषदें सम्मिलित हैं। इस सघ का मुख्य उद्देश्य सरकारी या व्यक्तिगत व्यवस्थापन द्वारा प्रभावित होने वाले हितो, अधिकारो, एव विशेष अधिकारो की रक्षा करना है तथा काउन्टी परिषदो के लिए महत्वपूर्ण सूचना प्रदान करना। साथ ही वह कार्य करना है जिसमें काउन्टी परिषद रुचि लेती हो।

शहरी जिला परिषद सघ [Urban District Councils Association]—इस सघ की स्थापना सन् १८६४ मे की गई थी। इसने अपने से दस वर्ष पूर्व निर्मित स्थानीय मण्डलो के सघ का स्थान ग्रहण किया। इसमे इंगलैण्ड तथा वेल्स की वे जिला परिषदें होती हैं जो कि इसका सदस्य बनना चाहें। इसका मुख्य उद्देश्य सरकारी विभागो के नियमो या आदेशो से अथवा व्यक्तिगत या सरकारी व्यवस्थापन से प्रभावित होने वाले शहरी जिला परिषदो के हितो अधिकारो एव विशेष अधिकारो की रक्षा करना है। यह उन क्षेत्रो मे कार्य करती है जिनमे कि शहरी जिला परिषदें सामान्य रूप से रुचि लेती हैं। यह सघ उन कार्यों को प्रोत्साहन देता है जिनका कि परामर्श लिया जाना चाहिए। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सघ द्वारा वे तरीके अपनाए जाते हैं जो कि नगर निगमो द्वारा अपनाये जाते हैं। यहा यह बात उल्लेखनीय है कि सघ ससद में अपने प्रभाव को बढाने का प्रयास करता है। इसके लिए इसने नियम बनाया है कि अठारह उपाध्यक्षों को ससद के किसी सदन का सदस्य बनाया जाए जो कि स्थानीय सरकार में रुचि लेते हैं। सघ की क्रियाओ मे होने वाला व्यय प्रत्येक शहरी जिला परिषद द्वारा दिया जाता है। किस सदस्य द्वारा कितना योगदान दिया जाएगा यह सघ

की वार्षिक बैठक में तय कर लिया जाता है। इसके रेट भी जनसंख्या के आकार पर निर्भर करते हैं।

देहाती जिला परिषद संघ [Rural District Councils Association]--देहाती जिला परिषदों की स्थापना स्थानीय सरकार अधिनियम द्वारा सन् १८६४ में की गई तथा यह संघ सन् १८६५ में बनाया गया। इस संघ का आधार स्वेच्छा है और वे ही इसके सदस्य बन सकते हैं जो कि बनना चाहें। संघ का उद्देश्य प्रस्तावित या निर्मित व्यवस्थापन से प्रभावित होने वाले देहाती जिला परिषदों के अधिकारों एवं हितों की रक्षा करना है।

स्थानीय सरकार के सेवकों के वेतन, आचरण, संस्था बनाने के अधिकार आदि बातों से स्थानीय संस्थाएं पर्याप्त प्रभावित होती हैं। जब कभी कार्य के घन्टे, कार्य की शर्तें, भत्ता, छुट्टियां, आदि बातों के सम्बन्ध में कोई विरोध उत्पन्न होता है तो संयुक्त समझौता यन्त्र द्वारा उसे सुलझाने का प्रयास किया जाता है।

अधिकारियों की राजनैतिक क्रियाएं [The Political Activities of Officers]—जनहित एवं लोक सम्बों के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सरकारी अधिकारियों की क्रियाओं पर कुछ ऐसे प्रतिबन्ध लगाए जाते हैं जो कि सामान्य नागरिकों की क्रियाओं पर नहीं होते। इन प्रतिबन्धों में महत्वपूर्ण प्रतिबन्ध यह है कि उसे सार्वजनिक कार्यों में भाग नहीं लेना चाहिए। सार्वजनिक कार्यों से अर्थ यहां राजनैतिक दलों से है। सामान्य धारणा के अनुसार यह समझा जाता है कि एक प्रजातन्त्रात्मक समाज के प्रत्येक नागरिक को देश की विभिन्न समस्याओं के बारे में सक्रिय रूप से योगदान करना चाहिए तथा उसे चाहिए कि सार्वजनिक जीवन में अधिक से अधिक योगदान कर सके। इस दृष्टि से सोचने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि सरकारी अधिकारियों को चाहे वे केन्द्रीय सरकार के अधिकारी हों अथवा स्थानीय सरकार के, एक नागरिक के रूप में मत देने का तथा सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने का अधिकार होना चाहिए। उसे ऐसा करने का अधिकार उस समय तक है जब तक उसके दायित्वों पर कोई विरोधी प्रभाव नहीं पड़ता। ग्रेट ब्रिटेन में अपनाई गई परम्पराओं के अनुसार सरकारी अधिकारियों की किस श्रेणी पर राजनैतिक दृष्टि से प्रतिबन्ध लगाए गए हैं पर जर्मनी में ऐसा नहीं होता। वहां सामान्यतः यह पाया जाता है कि स्थानीय सरकार के उच्च अधिकारी अपने राजनैतिक दलों में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं। जर्मनी में जब कोई सरकारी पद रिक्त होता है तो उस पर किसी उम्मीदवार को तब तक लिए जाने की उम्मीद नहीं होती जब तक कि उसके दल का परिषद में बहुमत न हो। इस व्यवस्था के अपने कुछ लाभ हैं किन्तु यह कहा जाता है कि लाभों की अपेक्षा इसकी हानियां अधिक हैं।

प्रोफेसर आर० एम० जैक्सन के कथनानुसार सरकारी अधिकारियों की राजनैतिक क्रियाओं पर प्रतिबन्ध लगाने के तीन स्पष्ट लाभ हैं। प्रथम यह है कि अधिकारियों को नीति से सम्बन्धित मामलों में परामर्श देना होता है। केन्द्रीय सरकार के अधिकारी मन्त्रियों को तथा स्थानीय सरकार के उच्च अधिकारी परिषद की समितियों को परामर्श देते हैं। ऐसी स्थिति

मे यह महत्वपूर्ण समझा जाता है कि उनके द्वारा दिया गया परामर्श निष्पक्ष होना चाहिए और वह किसी राजनैतिक दल के कार्यक्रम मे रगा हुआ नही होना चाहिए। मन्त्रीगण तो आते और जाते रहते हैं किन्तु अधिकारी प्रायः अपने पद पर ही बने रहते हैं। ऐसी स्थिति मे व्यवस्था यह होनी चाहिए कि नए आने वाले मन्त्रीगण सरकारी अधिकारियो मे इस बात का विश्वास रख सकें कि वे उनकी नीतियो को क्रियान्वित करते रहेंगे। यह तभी हो सकता जबकि अधिकारियो को राजनैतिक दलबन्दी से अलग रखा जाए। एक दूसरा महत्वपूर्ण लाभ यह है कि अधिकारियो को राजनैतिक दलो से दूर रखने पर वे जनता का विश्वास प्राप्त करने योग्य बन जाते हैं। प्रजातन्त्र मे यह अत्यन्त आवश्यक होता है कि जनता सरकारी अधिकारियो की निष्पक्षता मे विश्वास करे। मन्त्रियो को तथा परिषद की समितियो को परामर्श देने का कार्य उच्च अधिकारियो द्वारा किया जाता है, उनसे जनता का सम्पर्क कम रहता है किन्तु नीचे के पदो पर स्थित अधिकारियो के साथ जनता घनिष्ट रूप से सम्बन्धित रहती है। कल्याणकारी राज्य के सन्दर्भ मे सामाजिक सेवाओं का विस्तार हो जाने के कारण अधिकारियो एव जनता का सम्पर्क और अधिक व्यापक एव महत्वपूर्ण बन गया है। यदि सरकारी अधिकारियो को राजनैतिक दलो में भाग लेने की इजाजत दे दी जाए तो वे वाछित रूप मे समाज सेवाए प्रदान करने मे असमर्थ रहेंगे। जनता भी यह स्पष्ट रूप से जान जाएगी कि उनके हितो को निष्पक्ष रूप से नही देखा जाएगा।

इस प्रकार के प्रतिबन्ध का एक तीसरा लाभ यह है कि यदि अधिकारियो को राजनैतिक दलबन्दी मे खुला छोड दिया गया तो सरकारी सेवा मे लूट प्रणाली (Spoils System) का बोलबाला हो जाएगा। इसका अर्थ यह हुआ कि जो पार्टी बहुमत मे होगी वह अपने दल के लोगो मे से ही सारी नियुक्तिया कर लेगी तथा सभी अधिकारी अथवा कम से कम उच्च अधिकारी नए राजनैतिक दल के शक्ति मे आते ही हटा दिए जाएगे। इस प्रकार की व्यवस्था जब नीचे तक फैल जाती है तो कई एक बुराइयो की जननी बन जाती है। इस व्यवस्था का व्यवहार जर्मनी मे और सयुक्त राज्य अमेरीका के कुछ भागो मे देखा जा सकता है। इस व्यवस्था के कारण जर्मनी मे उत्पन्न विशेष स्थिति का वर्णन करते हुए आर. एम. जैक्सन महोदय ने बताया है कि यदि जर्मनी स्थानीय सत्ता मे किसी गृह अधिकारी (Housing officer) का पद रिक्त हो तो प्राय ऐसे व्यक्ति को ही नियुक्त किया जाता है जोकि नियुक्तिकर्ता के अपने दल का हो। जब जैक्सन महोदय ने इस तथ्य के सम्बन्ध मे पूछताछ की तो उनको बताया गया कि ऐसा करने से ही दल के समर्थकों को मकान मिल सकते हैं।

इसका अर्थ यह हुआ कि परिषद के सदस्य एक प्रकार से अपने राजनैतिक ऋण का भुगतान करते हैं। इस सम्बन्ध मे स्पष्टीकरण करते हुए यह बताया गया कि यदि किसी अन्य राजनैतिक दल के व्यक्ति को गृह-अधिकारी बना दिया जाए तो बनाने वाले को स्वय को मकान मिलना मुश्किल बन जाए। यह तो बिल्कुल असम्भव है कि राजनैतिक दृष्टि से किसी निष्पक्ष

व्यक्ति को इस पद पर बैठाया जाए क्योंकि ऐसा व्यक्ति मिलता ही नहीं है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जब एक बार राजनैतिक दलों से सम्बन्धित अधिकारियों की व्यवस्था को अपना लिया जाता है तो अधिकारी वर्ग में प्रत्येक व्यक्ति अपने आप को राजनैतिक दल से बांध लेता है और उसका भविष्य आवश्यक रूप से चुनाव में उसके दल की सफलता पर निर्भर करने लगता है। इस व्यवस्था को तोड़ना असम्भव बन जाता है क्योंकि उस समय प्रत्येक दल यह कह कर विरोध करता है कि यदि वह परिवर्तन करेगा तो उसके विरोधी द्वारा इस व्यवस्था का लाभ उठाया जाएगा।

लूट-प्रणाली का एक स्वाभाविक परिणाम यह भी है कि जब अधिकारीगण राजनैतिक दलों में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं तो वे मन्त्री से यह भी आशा करने लगते हैं कि उनको पदोन्नति अथवा अन्य किसी लाभ द्वारा पुरस्कृत किया जाए। मन्त्री को चुनाव में सफल बनाने के लिए कई एक व्यक्तियों द्वारा महत्वपूर्ण योगदान किया जाता है और मन्त्री बनने के बाद उस व्यक्ति का यह प्रमुख कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अपने साथियों एवं सहयोगियों के उपकार का बदला दे। दलीय समर्थकों को पुरस्कृत करने के कई एक तरीके हो सकते हैं। जब राजनैतिक आधार पर नियुक्तियां एवं पदोन्नतियां की जाती हैं तो उनमें संगठन के अधिकारियों के बीच मतभेद और ईर्ष्या की भावना उत्पन्न होती है।

उपर्युक्त सभी कारणों से यह उचित समझा जाता है कि अधिकारियों की राजनैतिक क्रियाओं पर कुछ प्रतिबन्ध लगाए जाएं। इस सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि अधिकारियों के किस स्तर पर कितना प्रतिबन्ध लगाया जाए। जहां तक उच्चतम अधिकारियों का प्रश्न है, उनके ऊपर पूरा नियन्त्रण रखा जाना चाहिए अर्थात् वे अपने आपको किसी दल से सम्बद्ध न करें। वे किसी राजनैतिक दल के सदस्य हो सकते हैं तथा मतदान भी कर सकते हैं किन्तु दलीय राजनीति में वे कोई सार्वजनिक भाग नहीं ले सकते। इसके विरुद्ध कर्मचारियों का एक निम्नतम वर्ग है जो कि शारीरिक श्रम करता है। इस वर्ग के लोग यदि राजनैतिक दलों में भाग लें तो इसमें कोई हानि होने की सम्भावना नहीं रहती। एक व्यक्ति जो कि कार्यालय के कागजों को एक कमरे से दूसरे कमरे तक ले जाता है वह यदि राजनैतिक संगठन में भाग लेगा तो उस संगठन की अधिक हानि नहीं होगी। इन दोनों वर्गों के बीच का जो वर्ग है उसकी क्रियाओं के सम्बन्ध में बीच का रास्ता अपनाना होगा अर्थात् मध्य वर्ग के लोगों को प्रार्थना करने पर राजनैतिक दलों में भाग लेने की अनुमति दी जा सकती है। नागरिक सेवा में एवं स्थानीय सेवा के उत्तरदायी स्तरों पर कार्य करने वाले अधिकारियों को दलीय राजनीति में सक्रिय रूप में भाग लेने से रोकने के लिए यह जरूरी है कि इन पदों पर नियुक्तियां करते समय उम्मीदवार के राजनैतिक दल के बारे में कुछ न पूछा जाए। केन्द्रीय सरकार यह जानकारी रखती है कि उसके अधिकारी साम्य-वादीय हैं अथवा नहीं हैं क्योंकि सरकार के कुछ कार्य ऐसे हैं जिन पर सुरक्षा की दृष्टि से साम्यवादियों को नहीं रखा जाता। स्थानीय सत्ताओं को इस प्रकार का प्रतिबन्ध लगाने की कोई आवश्यकता नहीं होती। इस सिद्धान्त

का पालन कई बार बड़ा कठिन बन जाता है क्योंकि पारषद प्रायः सिद्धान्तों को बनाए रखने के महत्व पर अधिक ध्यान नहीं देते। वैसे सामान्यतः यह देखा जाता है कि ग्रेट ब्रिटेन में अधिकारियों का दृष्टिकोण दलीय राजनीति के प्रभाव से पक्षपातपूर्ण नहीं बनता।

कार्यकाल की सुरक्षा
(Security Of Tenure)

सेवा को उस समय सन्तोषजनक कहा जा सकता है जब कि उसकी स्थिति एवं दशाएं अधिकारी तथा नियुक्तिकर्त्ता दोनों के लिए सन्तोषजनक हों। सेवा के प्रति कर्मचारियों के सन्तोष का एक मुख्य आधार कार्यकाल की सुरक्षा होता है। ब्रिटिश स्थानीय सरकार की व्यवस्था के अनुसार परिषद द्वारा किसी भी अधिकारी को सूचना देकर पद-विमुक्त किया जा सकता है। यह व्यवस्था देखने में पर्याप्त असन्तोषजनक लगती है क्योंकि इसमें अधिकारियों को पूरी तरह से पारषदों की दया पर छोड़ दिया जाता है। कुछ अपवादों को छोड़कर स्थानीय सत्ताएं किसी भी अधिकारी की नियुक्ति को अपनी स्वेच्छा से रद्द कर सकती हैं। अपवादों में मेडीकल अधिकारी, सफाई निरीक्षक, सर्वेक्षणकर्त्ता आदि अधिकारी आते हैं जिनके वेतन के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा योगदान किया जाता है। ब्राउन बनाम डैगेन्हम (Brown V/s Dagenham) के मामले में यह स्पष्ट किया गया कि स्थानीय सत्ताएं कानूनी रूप से पूरी सूचना देने के लिए बाध्य नहीं हैं। वे जब भी कभी चाहें अपनी खुशी से किसी भी अधिकारी को हटा सकती हैं। यह व्यवस्था इसलिए की गई है ताकि स्थानीय सत्ताएं अयोग्य, उदासीन एवं अनुपयुक्त सेवक से पीछा छुड़ा सकें। जहां एक अधिकारी तकनीकी दृष्टि से योग्य होते हुए भी यदि संगठन के अन्य सदस्यों को नामन्जूर होता है तो परिषद उसे हटाने का अधिकार रखती है। यदि ऐसा नहीं किया गया तो संगठन में मनमुटाव पैदा होने का डर रहता है। दूसरी ओर स्थानीय सरकार के अनेक अधिकारी ऐसे भी हो सकते हैं जिनके कर्त्तव्य उनके व्यक्तिगत एवं निहित स्वार्थों के बीच संघर्ष उत्पन्न कर दें। जिला छोटा होने के कारण सरकारी सेवकों और उनके मालिकों अर्थात् स्थानीय पारषदों के मध्य स्थित सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ट एवं प्रत्यक्ष होता है।

कानूनी व्यवस्था के इस रूप के होते हुए भी स्थानीय सरकार के अधिकारियों का कार्यकाल पर्याप्त सुरक्षित रहता है। कार्यकाल की सुरक्षा के लिए कुछ लोग यह सुझाव देते हैं कि अधिकारियों को अपनी सत्ता के साथ पांच या दस साल का एक लम्बा करार कर लेना चाहिए किन्तु इसमें यह सन्देह किया जाता है कि इस प्रकार का समझौता चलता रहेगा। इस समझौते को दोनों पक्षों में से कोई भी तोड़ने के लिए मजबूर हो सकता है। यदि स्थानीय सरकार अपने कर्मचारियों को आगे बढ़ने के लिए सचमुच परिस्थितियां प्रदान करना चाहती है तो विभिन्न सत्ताओं के बीच पर्याप्त आदान प्रदान होना चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि जब भी कहीं रिक्त स्थान हो तो उसकी सूचना अन्य सत्ताओं को भी दी जाए और यदि उनमें कार्य करने वाला कोई अधिकारी अधिक योग्य साबित

हो तो उसे अवश्य नियुक्त किया जाए। यदि कर्मचारी से कोई दीर्घकालीन समझौता कर लिया जाए तो वह इसका समय पूरा होने से पूर्व अपनी पदोन्नति नहीं कर सकता और जिस अवसर को वह प्राप्त करना चाहता था, वह भविष्य में काफी दिनों बाद प्राप्त होगा। ऐसी स्थिति में उस व्यवस्था को उपयुक्त समझा जाता है जिसमें कि पूर्व सूचना देने के बाद कर्मचारी पद छोड़ सके अथवा नियुक्तिकर्त्ता उसे पद से हटा सके। निश्चित समय के लिए समझौता करके कार्यकाल को सुरक्षित बनाने का प्रयास अधिक उपयुक्त नहीं समझा जाता। कार्यकाल को सुरक्षित बनाने का एक अन्य तरीका यह है कि एक अधिकारी को पदविमुक्त करने से पूर्व केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति लेना जरूरी बना दिया जाए। कुछ मामलों में जिनको कि अपवादस्वरूप ऊपर उल्लेखित किया गया है, उस व्यवस्था को अपनाया जाता है।

यह कहा जाता है कि जब तक एक विशेष परिस्थिति उत्पन्न न हो, उस समय तक इस प्रकार का प्रावधान बनाया जाना पूर्णतः अनुपयुक्त समझा जाना चाहिए। कई बार ऐसा हो जाता है कि स्थानीय सत्ताओं एवं केन्द्रीय सरकार के बीच कुछ मन-मुटाव एवं संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। ऐसी स्थिति में कोई अधिकारी केन्द्रीय सरकार से अपने कार्यकाल की सुरक्षा के सम्बन्ध में कम आशा कर सकता है। इंगलैण्ड का अनुभव तो यह है कि वहां बिना दीर्घकालीन समझौता किए और बिना केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण की व्यवस्था किए ही स्थानीय सरकार के अधिकारी अपनी नियुक्तियों में कार्यकाल की अधिक सुरक्षा का उपभोग कर सकते हैं। अधिकारियों की स्थिति असल में दो बातों पर निर्भर करती है, उनकी व्यावसायिक योग्यता एवं कुशलता तथा उनका संगठन। यह कहा जाता है कि स्थानीय सरकार की सेवा में उच्च पदों पर व्यावसायिक कुशलता का होना जरूरी है तथा पदाधिकारी ऐसी स्थिति में सफल हो पाते हैं जब कि वे अपने कार्य में पूर्णतः योग्य हों। केवल योग्यता प्राप्त करना ही पर्याप्त नहीं होता किन्तु यह भी जरूरी है कि परिषद के सदस्य, कार्यों को यह अनुभव करें कि आवश्यकता के समय सम्पन्न करने में अधिकारियों द्वारा उनकी सहायता की जा सकती है। वह अधिकारी उस समय तक सफल नहीं माना जा सकता जब तक कि सदस्य यह अनुभव न करें कि वह एक अच्छा आदमी है और वे उसे चाहते हैं। ऐसा होने पर ही सम्बन्धित अधिकारी का कार्यकाल सुरक्षित रह सकता है।

स्थानीय सेवाओं के कार्यकाल की सुरक्षा का एक दूसरा साधन उनके संगठन हैं। अनेक ऐसे व्यावसायिक संघ होते हैं जिनमें कि स्टाफ के वरिष्ट अधिकारी सदस्य रहते हैं। यदि स्थानीय सत्ता कोई अनुचित कार्य करे तो इन संघों द्वारा उस अनुचित कार्य का विरोध किया जाएगा। एक अवसर पर इंगलैण्ड की स्थानीय सत्ता ने एक पद से सम्बन्धित विज्ञापन ऐसा निकाला जिसमें रखी गई शर्तें उस पद से सम्बन्धित संघ को मन्जूर नहीं थी। फलतः संघ ने यह निर्णय लिया कि कोई सदस्य इस पद के लिए उस समय तक प्रार्थना न करे जब तक कि तीन परिवर्तनों के साथ पद को पुनर्विज्ञापित नहीं

किया जाए। जिन स्थानीय अधिकारियों के पास व्यावसायिक योग्यताएं नहीं होतीं, वे अपने प्रभावशाली एवं शक्तिशाली संगठन द्वारा अपने हितों की रक्षा करते हैं। जब कभी एक स्थानीय सत्ता अपने अधिकारियों को स्वीकृत सिद्धान्तों के अनुसार नहीं देखती, उस समय तक वह सत्ता उचित व्यक्ति को भर्ती करने में कठिनाई का अनुभव करेगी। जब नियुक्तिकर्त्ता यह जानता है कि उसके द्वारा हटाया गया व्यक्ति अपने व्यावसायिक संघ का परामर्श एवं सहायता प्राप्त करेगा तो वह स्वेच्छापूर्ण रूप से कार्य नहीं कर सकता क्योंकि इसमें उसका संघर्ष न केवल उस व्यक्ति के प्रति छिड़ेगा बल्कि एक संगठन के प्रति छिड़ जाएगा। ह्विटले परिषदों की स्थापना से स्थानीय सत्ताओं को अन्तिम शब्द कहने की शक्ति नहीं रही है। अधिकारियों को यह शक्ति है कि वे संयुक्त निकाय के सम्मुख अपील कर सकें। यह अधिकारियों की सुरक्षा का एक श्रेष्ठ तरीका है।

अधिकारियों के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही
[Disciplinary Action against Officers]

प्रत्येक संगठन तभी कार्यकुशल रूप से अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में आगे बढ़ सकता है जब कि संगठन का अध्यक्ष अपने स्टाफ की पूरी देख-भाल करता रहे कि वे उचित रूप से कार्यकुशलता के साथ कार्य कर रहे हैं अथवा नहीं। परिषद के सदस्यों को यह अधिकार नहीं दिया जाता कि वे प्रशासन के दिन-प्रतिदिन के मामलों में हस्तक्षेप करें। उनका कार्य तो केवल यह देखना है कि विभाग कुशलतापूर्वक संचालित होता रहे। पारपदों को वरिष्ट अधिकारियों का स्थान नहीं लेना चाहिये। अनुशासनात्मक कार्यवाही से सम्बन्धित विषय को परिषद के सदस्यों के सामने उसी समय लाना चाहिए जब कि मामला अत्यन्त गम्भीर हो और विभागाध्यक्ष उस पर विचार करना न चाहे अथवा वह मामला स्वयं मुख्य अधिकारी से ही सम्बन्ध रखता हो।

स्टाफ को नियन्त्रित करने की शक्ति तथा अधिकारियों को पदविमुक्त करने की शक्ति परिषद में रहती है। साधारण कर्मचारियों एवं कम महत्व के पदों के सम्बन्ध में अनुशासन रखने की अपनी शक्तियों को परिषद एक समिति को सौंप सकती है। वह समिति आवश्यक कदम उठाती है और परिषद के सामने अपने द्वारा किए गए कार्यों का प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है। अन्य विषयों पर परिषद स्वयं कार्यवाही करती है। यहां प्रश्न यह उठता है कि आवश्यक जांच का कार्य एवं सिफारिश देने का कार्य किसे सम्पन्न करना चाहिये। यह सेवा से सम्बन्धित समिति द्वारा भी किया जा सकता है और स्टाफ समिति द्वारा भी। ये समितियां किस सीमा तक इस मामले से सम्बन्धित रहेंगी, यह बात दोषित गलत व्यवहार की प्रकृति पर निर्भर करती है।

गत व्यवहार का सम्बन्ध एक विशेष सेवा के संचालन से है तो सम्बन्धित समिति को उस मामले की जांच करनी चाहिये और उस मामले के तथ्यों का अध्ययन करना चाहिये। यदि समिति के मतानुसार अधिकारी को सेवा में बनाये रखना अनुचित रहेगा तो वह यह सिफारिश कर सकती

है कि उसे उन कर्त्तव्यों से हटा देना चाहिए। स्टाफ समिति का कार्य यह देखना होता है कि पूरे स्टाफ के साथ एक जैसा व्यवहार किया जाए तथा बराबर की योग्यता के लिए बराबर पुरस्कार दिया जाये। इससे अधिकारियों को यह विश्वास होगा कि विभिन्न सेवाओं में अनुशासनात्मक कार्यवाही समान रूप से की जाती है।

इसलिए यह कहा जाता है कि संयुक्त समिति को भी मामले पर विचार करना चाहिये और परिषद को अपनी सिफारिशें भेजनी चाहिये। स्टाफ समिति और दूसरी सम्बन्धित समितियों में परस्पर संघर्ष होना आवश्यक नहीं है। इसका कारण यह है कि विशेष सेवा से सम्बन्धित समिति उस सेवा की आवश्यकताओं पर जोर देती है और स्टाफ समिति पूरे स्टाफ की दृष्टि से परिषद के हितों पर विचार करती है। जब स्टाफ के मामलों को ह्विटले परिषदों की नीति के आधार पर विचार का विषय बनाया जाता है तो अनुशासनात्मक कार्यों पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। जहां संयुक्त समझौतों की व्यवस्था उच्च रूप से विकसित हो जाती है वहां किसी झगड़े को प्रायः संयुक्त निकाय के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है। इस सम्बन्ध में सामान्य व्यवहार यह है कि उस विशेष स्थानीय सत्ता के नियमों का पालन किया जाता है। उदाहरण के लिए स्टाफ समिति मामले की सुनवाई करती है एवं सम्बन्धित अधिकारी को उसकी इच्छानुसार तथ्य सामने लाने का अवसर दिया जाता है तथा इसके अतिरिक्त अपील के रूप में संयुक्त संगठन के सामने भी मामले को उठाया जा सकता है। जहां कहीं संयुक्त व्यवस्था कार्य नहीं करती वहां स्थानीय सत्ता इस प्रकार व्यवहार करती है कि अधिकारी को उसके विरुद्ध लगाये गये आरोपों से सूचित कर दिया जाए और उन्हें अपना पक्ष प्रस्तुत करने का पूरा अवसर दिया जाय।

सेवा-निवृत्ति एवं पेंशन
[Retirement and Pensions]

सभी प्रकार की सरकारी सेवाओं के सेवा-निवृत्ति एवं पेंशन के सम्बन्ध में उपयुक्त प्रावधान किया जाता है। इङ्गलैण्ड की स्थानीय सरकार ने इस सम्बन्ध में जो प्रावधान रखे हैं उनकी प्रकृति कुछ जटिलतापूर्ण है। यह इसलिए है कि व्यवस्था का विकास धीरे-धीरे हुआ है और विषय की प्रकृति भी ऐसी ही है। कुछ स्थानीय सत्ताओं को पेंशन योजनाओं की शक्ति संसद के स्थानीय अधिनियमों द्वारा प्राप्त हो गई और उसके बाद सन् १९२२ में सामान्य शक्ति सौंप दी गई। इस अधिनियम की प्रकृति कुछ-कुछ स्वेच्छाजनक थी अर्थात् स्थानीय सत्ता स्वयं इस बात पर निर्णय करती थी कि वह इस अधिनियम को क्रियान्वित करे या न करे। सन् १९३७ के अधिनियम द्वारा स्थानीय सत्ताओं को आवश्यक रूप से पेंशन कार्यक्रम मानने के लिए व्यवस्था की गई। इस विकास के परिणामस्वरूप कुछ स्थानीय सत्ताएं तो पेन्शन कार्यक्रमों को बहुत वर्षों से लागू कर रही हैं जब कि अन्य स्थानीय सत्ताओं ने उसको सन् १९३७ के व्यवस्थापन द्वारा लागू किया जो कि सन् १९३९ में क्रियान्वित किया गया। स्थानीय सरकार की सेवाओं की पेंशन की व्यवस्था योगदान पूर्ण है। अधिकारियों से उनके वेतन का छ

प्रतिशत भाग लिया जाता है। यह धन उनके वेतन मे से प्रति माह काट लिया जाता है और सेवा निवृत्ति होने पर अधिकारियो के वेतन से काटे हुए धन के बराबर धन मिला कर स्थानीय सत्ता द्वारा उन्हे प्रदान किया जाता है। एक स्थानीय सत्ता पेन्शन कोष मे प्राप्त धन को न्यास सुरक्षाओ मे व्यय कर सकती है अथवा उस पर अनेक सुरक्षाए लगा सकती है। यह इस धन के द्वारा किसी प्रोजेक्ट को भी धन प्रदान कर सकती है।

जब योगदान (Contribution) के आधार पर पेन्शन व्यवस्था को लागू किया जाता है तो अनेक प्रकार की समस्याए सामने आती हैं क्योंकि सेवा के वृद्ध लोग केवल कुछ समय तक ही योगदान करेंगे जब कि नव-प्रविष्टो को जीवन भर तक योगदान करना होगा। इन अन्तरो को ध्यान मे रख कर अलग-अलग प्रावधान बनाया जाना जरूरी है। इस योजना का सही मूल्यांकन करने के लिए यह उपयोगी रहेगा कि योजना प्रारम्भ होने से पहले ही कार्य कर रहे व्यक्तियो की अवहेलना की जाये तथा केवल उन लोगो को ध्यान मे रखा जाय जो कि सारे जीवन भर योगदान करेंगे। ऐसे लोगों को सेवा निवृत होने पर पेन्शन देने के लिए १९३७ के अधिनियम द्वारा प्रावधान किया गया। यह सेवा निवृत्ति कई रूप मे हो सकती है, जैसे सेवा के दस साल पूरे करने पर यदि कर्मचारी का स्वास्थ्य स्थायी रूप से खराब हो जाय, या चालीस वर्ष की सेवा हो जाये एवं साठ वर्ष या इससे अधिक की उम्र हो जाये, या दस साल की सेवा पूरी करने के बाद ६५ साल की उम्र पूरी हो जाये।

पेन्शन के रूप मे कितना धन दिया जायेगा यह भी एक प्रश्न है। पेन्शन के धन की मात्रा दो तत्वो के आधार पर तय की जाती है अर्थात् सेवा की अवधि तथा औसतन वेतन अर्थात् पिछले पाच वर्ष से अधिकारी को प्राप्त होने वाला वेतन। पेन्शन का धन सेवा समाप्त होने तक के औसतन वेतन का १/६० भाग होता है तथा इसके साथ ही औसतन का १/३ भी दिया जाता है। इस प्रकार स्कूल से निकल कर सेवा मे प्रवेश पाने वाला विद्यार्थी चालीस वर्ष की सेवा समाप्त करने तक साठ वर्ष का हो जाता है। इस प्रकार वह अपने पिछले पाच वर्षों के औसतन वेतन के अधिक से अधिक २/३ भाग पेन्शन पर सेवा-निवृत हो जायेगा। यदि उसने ३० वर्ष की उम्र मे सेवा मे प्रवेश पाया है तो ६५ वर्ष की उम्र पर पहुचते-पहुचते उसकी ३५ वर्ष की सेवा हो जायेगी तथा उसे पेन्शन के रूप मे औसत का ३५/६० मिलेगा।

युद्ध के बाद यह आवश्यक समझा जाने लगा कि पेन्शन से सम्बंधित सभी लोक सेवाओ मे स्थित प्रावधानो को बदला जाये। यह अनुभव किया गया कि जिस व्यक्ति ने सेवा समाप्त करली है उसको पेन्शन के सम्बन्ध मे रखे ये प्रावधान तो सन्तोषजनक हैं किन्तु जो अधिकारी सेवा काल मे ही गुजर चुका है उसके आश्रितो को सहायता देने के सम्बन्ध मे संतोषजनक प्रावधान नही है। सन् १९५४ मे एक नई योजना को प्रारम्भ किया गया। १९३७ या उससे पूर्व के व्यवस्थापन द्वारा जो पेन्शन सम्बन्धी अधिकार, अधिकारियों को प्रदान किये गये थे। वे चाहते तो उनको ही जारी रख सकते

थे अथवा नये कार्यक्रम के आधीन आ सकते थे। १९५४ के अधिनियम द्वारा नवीन प्रवेश-कर्त्ताओं को भी आवश्यक रूप से अपने में समाहित कर लिया। नये कार्य-क्रम के अनुसार भी पेन्शन का आधार सेवा की अवधि तथा औसत वेतन को ही रखा गया किन्तु अब इसको अन्तिम तीन वर्षों के आधार पर कूता जाता था। नवीन व्यवस्था मे पेन्शन की मद को कुछ कम कर दिया गया और इस प्रकार से बचाये गये धन का प्रयोग दो प्रकार से किया गया। प्रथम तो सेवानिवृत्त होने वाले अधिकारी को सेवा निवृत्त भुगतान के रूप में दिया जाने लगा और दूसरे, विधवाओ को पेन्शन देने के काम मे लिया गया। यदि किसी कर्मचारी की पत्नी ही नही है अर्थात् उसकी विधवा को पेन्शन देने का प्रश्न ही नही उठता तो ऐसे कर्मचारी को सेवा-निवृत्ति भुगतान की रकम अधिक प्रदान की जाती है। जो धन एक अधिकारी को दिया जाता है उसे प्रदान करने के लिए यह व्यवस्था की जाती है कि यदि वह न भी जाये तो यह अनुदान उसके व्यक्तिगत प्रतिनिधि को सौंप दिया जाता है। इन सब प्रावधानो का मूल लक्ष्य व्यक्ति को यह निश्चित रूप से विश्वास दिला देना होता है कि यदि वह सेवा–काल में ही गुजर गया तो उसको कुछ पेन्शन उसकी विधवा को दे दी जायेगी और यदि वह कार्य करता रहा तो सेवा-निवृत्ति के बाद स्वयं ही पेन्शन पायेगा। यदि वह पेन्शन काल मे ही अपनी पत्नी को छोड़ कर मर जाये तो उसको (विधवा) पेन्शन सौंप दी जायेगी। नये कार्य-क्रम मे भी यह प्रावधान है कि यदि एक व्यक्ति अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करते समय दुर्घटना-ग्रस्त हो जाये अथवा घायल हो जाये तो उसको वार्षिक भत्ता दिया जायेगा। एक अधिकारी यदि अपनी सेवा-निवृत्ति के बाद भी पद पर कार्य करना चाहे और सत्ता उससे सहमत हो जाये तो उसको अधिक पेन्शन प्रदान की जायेगी। यद्यपि सत्तर वर्ष से अधिक की आयु मे अथवा पैंतालीस साल की सेवा के बाद जो पेन्शन दी जायेगी वह मात्रा में सामान्य से अधिक नही होगी।

जब स्थानीय सरकार के अधिकारियो को एक सत्ता से दूसरी सत्ता मे बदलने के लिए कह दिया जाता है तो उनकी पेन्शन के अधिकारो के सम्बन्ध मे भी उचित व्यवस्था की जाती है। यह व्यवस्था इस प्रकार की जाती है कि जब एक अधिकारी किसी सत्ता को छोड़ कर दूसरी सत्ता मे कर्मचारी बनता है तो पहली सत्ता को पेन्शन के रूप मे उसका जो धन जमा है वह उसकी नवीन सत्ता को स्थानान्तरित कर दिया जाता है। यदि अधिकारी तीसरी सत्ता मे चला जाये तो पेन्शन कोष का पुनः स्थानान्तरण कर दिया जाता है। अब उसके साथ कुछ धन और भी मिला दिया जाता है। इस प्रकार का स्थानान्तरण होने पर जिस सत्ता को धन देना होता है वह किसी प्रकार से टोटे में नहीं रहती क्योंकि वह धन पूरी तरह से अधिकारी के लाभ के लिए ही होता है तथा उसको अन्य किसी कार्य मे प्रयुक्त नहीं किया जा सकता। जब एक सत्ता किसी अधिकारी के धन को दूसरी सत्ता के लिए हस्तान्तरित करती है तो वह उस व्यक्ति से सम्बन्धित समस्त भावी उत्तरदायित्वों को भी सौंप देती है। इसके परिणामस्वरूप जब वह अधिकारी सेवा-निवृत्त होता [redacted] तो उसकी पेन्शन उसी सत्ता द्वारा प्रदान की जाती है जो कि पेन्शन के समय उसकी सेवायें प्राप्त कर रही है।

जब विद्युत एवं गैस का राष्ट्रीयकरण किया गया तथा अस्पतालो को स्वास्थ्य मन्त्रालय के लिए सौंपा गया तो अनेक अधिकारी इसी प्रकार एक सत्ता से अन्य मे स्थानान्तरित हुए। उनके लिए प्रावधान अलग से बनाये गये। जिस प्रकार एक अधिकारी एक सत्ता से अन्य सत्ता मे जा सकता है उसी प्रकार वह स्थानीय सरकार से अन्य किसी सार्वजनिक सेवा मे जाने का भी अधिकार रखता है। इन सब व्यवस्थाओ के परिणामस्वरूप पेन्शन से सम्बन्धित प्रावधान अत्यन्त जटिल बन जाते हैं तथा इनके बीच पर्याप्त भ्रम पैदा हो जाता है।

स्थानीय सरकार एवं केन्द्रीय सरकार: पर्यवेक्षण एवं नियन्त्रण

[LOCAL GOVERNMENT AND CENTRAL GOVERNMENT: SUPERVISION AND CONTROL]

स्थानीय सरकार की सत्ताएं अपने आप में कोई पृथक अस्तित्व नहीं रखती, वे केन्द्रीय सरकार का ही एक आवश्यक एवं अभिन्न भाग होती हैं। उनके द्वारा जो कार्य किए जाते हैं एवं जो निर्णय लिए जाते हैं उन पर केन्द्रीय सरकार के नियमों एवं अधिनियमों का पर्याप्त प्रभाव रहता है। यदि किसी अवसर पर केन्द्रीय सरकार एवं स्थानीय सत्ता की इच्छाओं के बीच विरोध पैदा हो जाए तो यह स्वाभाविक है कि केन्द्रीय इच्छा को प्राथमिकता दी जाएगी। केन्द्रीय सरकार के साथ स्थानीय सरकार का बन्धन कई साधनों द्वारा व्यवहृत किया जाता है। उदाहरण के लिए संसद को वे अधिनियम पास करने का अधिकार होता है जिन्हें कि वह स्थानीय सत्ताओं द्वारा प्रशासित कराना चाहे। दूसरे न्यायालयों द्वारा संसद द्वारा पारित अधिनियमों के लक्ष्यों की व्याख्या की जाती है। तीसरे, संसद द्वारा जिन मन्त्रियों को कुशल प्रशासन के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है वे स्थानीय सत्ताओं पर पर्यवेक्षण रखते हैं। जिन विभागों का सम्बन्ध स्थानीय सत्ताओं के साथ मुख्य रूप से रहता है उनमें प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं—गृहनिर्माण एवं स्थानीय सरकार मन्त्रालय, वेल्स के लिए राज्य सचिव का कार्यालय, शिक्षा एवं विज्ञान विभाग, स्वास्थ्य मन्त्रालय, यातायात मन्त्रालय, व्यापार मण्डल एवं श्रम मन्त्रालय। इन सभी केन्द्रीय मन्त्रालयों एवं कार्यालयों का नियन्त्रण विभिन्न सेवाओं पर अलग-अलग मात्राओं में होता है। इस नियन्त्रण एवं पर्यवेक्षण की प्रकृति सम्बन्धित अधिनियमों द्वारा निर्धारित की जाती है।

कुछ अधिनियमों द्वारा स्थानीय सत्ताओं को प्रशासन में पूर्ण स्वतंत्रता दे दी जाती है जब कि कुछ अधिनियमों के अनुसार स्थानीय सत्ताओं को कार्य करने से पहले किसी विशेष सरकारी विभाग की स्वीकृति अथवा निर्देशन

प्राप्त करना होता है। कुछ अधिनियम सेवा से सम्बन्धित पहलुओं के लिए विभाग को विशेषरूप से उत्तरदायी बना देते हैं। सरकारी विभागों द्वारा अपने कर्त्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का निर्वाह करने में किस तरीके को प्रयुक्त किया जाएगा, यह वाञ्छनीय पर्यवेक्षण की मात्रा पर निर्भर करता है। जहाँ कहीं हल्का नियन्त्रण पर्याप्त समझा जाता है वहां विभाग द्वारा स्थानीय सत्ताओं के लिए उत्तरदायित्वों के सम्बन्ध में केवल निर्देश प्रसारित कर दिए जाते हैं और स्थानीय सत्ताओं द्वारा जो सूचना तथा सांख्यिकी प्रदान की जाती है उसे विभाग द्वारा परीक्षित किया जाता है। जहां कहीं अधिक कठोर नियन्त्रण जरूरी होता है वहां उसे वित्तीय साधनों द्वारा प्रयुक्त किया जाता है। उदाहरण के लिए सरकारी अनुदान को देने या रोकने की विभाग की शक्ति, ऋण लेने से सम्बन्धित प्रभाव को स्वीकृत या अस्वीकृत करने की शक्ति एवं निरीक्षण आदि साधनों द्वारा। इसके अतिरिक्त स्थानीय सत्ताओं के कुछ कार्यक्रम एवं प्रस्ताव इससे सम्बन्धित विभाग द्वारा परीक्षित किए जाते हैं जो कि उन्हें प्रभावशील होने से पहले ही स्वीकृत या अस्वीकृत करने की शक्ति रखते हैं। स्थानीय सत्ताओं से तथा उनके कार्यों से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित विभागों में गृहनिर्माण एवं स्थानीय सरकार मंत्रालय तथा वेल्स कार्यालय का यह मुख्य उत्तरदायित्व माना जाता है कि वे स्थानीय सरकार से सम्बन्धित श्वेत पत्र एवं व्यक्तिगत विधेयक संसद में प्रस्तुत करते हैं। 'लन्दन में तो स्वयं महान लन्दन परिषद को ही विधेयकों को प्रोत्साहित करने के विस्तृत अधिकार हैं वह लन्दन बारोज एवं लन्दन शहर को प्रभावित करने वाले विधेयकों के सम्बन्ध में भी ये सब अधिकार रखती है।

स्थानीय सरकार से सम्बन्धित व्यवस्थापन करते समय तथा ऐसे ही अन्य विषयों के बारे में यह परम्परा है कि स्थानीय सत्ताओं के साथ पर्याप्त विचार-विमर्श कर लिया जाये। इन संघों को निर्मायक स्थानीय सत्ताओं की परिषदों या कार्यपालिका परिषदों द्वारा प्रबन्धित किया जाता है। इनकी समितियां भी होती हैं जिनमें कि समस्त सत्ताओं के प्रतिनिधि होते हैं। इनके द्वारा उनकी शक्तियों, कर्त्तव्यों एवं कार्यों का भी पता लग जाता है।*

नियन्त्रण की आवश्यकता [The necessity of Control]—कई बार यह संदेह प्रकट किया जाता है कि केन्द्रीय नियन्त्रण रहने पर स्थानीय स्वायत्तता किस प्रकार रह सकेगी। स्थानीय सत्ताओं की स्थापना का मुख्य लाभ यह बताया जाता है कि इनसे स्थानीय जनता को पहल करने का अवसर प्राप्त होता है। वह आगे आकर सार्वजनिक कार्यों में भाग लेती है, दूसरे शब्दों में प्रजातन्त्र की जड़ों को यदि गहरी करना हो तो इसके लिए यह

---

*"The associations are managed by councils or executive councils of the constituent local authorities and have a committee system comprising representatives of the member authorities, which reflects their representative powers, duties and functions."

—Local Government in Britain, B.I.S., R.F.P. 5504/65, P. 24.

अत्यन्त आवश्यक है कि ग्राम जनता को प्रशासन के क्षेत्र मे सक्रिय किया जाये तथा उन्हें स्वय की समस्यायें स्वय ही सुलझाने को प्रेरित किया जाये। केन्द्रीय नियत्रण को इन लक्ष्यों की पृष्ठभूमि मे उचित नही समझा जाता। यह दृष्टिकोण एवं केन्द्रीय सत्ताओं द्वारा स्थानीय सत्ताओं के सगठन तथा कार्यों पर रखे जाने वाले नियन्त्रण का विरोध कुछ विचारको के मतानुसार उपयुक्त नही है। इन विचारको का कहना है कि केन्द्र का नियत्रण स्वाभाविक है, आवश्यक है तथा उपयोगी है। देश के प्रशासन के लिए मूलतः केन्द्रीय सरकार ही उत्तरदायी होती है यदि वह स्थानीय सत्ताओं को पूर्ण स्वायत्तता सौप दे तो प्रशासनिक अव्यवस्था फैल जायेगी। समन्वय के प्रभाव मे वह कार्यकुशलता समाप्त हो जायेगी जिसे प्राप्त करने के लिए केन्द्र सरकार स्थानीय सत्ताओं का सगठन करती है।

केन्द्रीय नियन्त्रण की अनिवार्यता के पीछे अनेक कारण है। इसका सर्वप्रथम कारण यह है कि स्थानीय सरकार द्वारा जो सेवायें प्रदान की जाती हैं वे पर्याप्त महगी होती हैं तथा इतना व्यय करने की शक्ति स्थानीय सत्ताओं मे नही होती। जब तक उनको बाहर से कोई सहायता प्रदान न की जाये, उस समय तक वे अपने कार्यों का सचालन नही कर सकती। यह सहायता केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुदानो के रूप मे प्रदान की जाती है। इसके साथ सरकार यह भी आशा करती है कि स्थानीय सत्तायें अपने दायित्वो का पालन सतोषजनक रूप से करेंगी। वह कुछ मापदण्ड निर्धारित करके यह देखना चाहेगी कि उन मापदण्डो के अनुसार ही कार्य किया जा रहा है अथवा नही। दूसरे, स्थानीय सरकार का अनुभव सीमित होता है तथा वे सूचनायें अपर्याप्त होती हैं जिनके आधार पर यह अपने कार्य को सचालित कर सके। ऐसी स्थिति मे यदि उनको स्वय के साधनो पर ही छोड़ दिया गया तो उनके कार्य गैर-विशेषज्ञ लोगो द्वारा संचालित किये जायेंगे। केन्द्रीय नियन्त्रण के माध्यम से वे अधिक योग्य बन जाती हैं क्योंकि वे देश भर की स्थानीय सत्ताओं के अनुभवो का मूल्यांकन करके अपनी समस्याओं के सम्बन्ध मे निर्णय ले पाती है। तीसरा कारण यह है कि केन्द्रीय सरकार स्वयं के हित को ध्यान मे रखते हुए स्थानीय सत्ताओं को अप्रतिबन्धित स्वेच्छा का अधिकार नही दे सकती। वैसे ससद द्वारा अनेक बातो मे उनको पर्याप्त स्वेच्छा प्रदान की जाती है।

कई एक स्थानीय सेवायें ऐसी हैं जिनके कुशल संचालन पर ही देश का कल्याण निर्भर करता है, उदाहरण के लिए जन-स्वास्थ्य एवं शिक्षा आदि। ये सेवायें देश भर मे एक समान स्तर की माग करती है। असमान स्तर रहने पर कई प्रकार की समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं। इन सभी कारणों को मध्य नजर रखते हुए यह कहना पर्याप्त उपयुक्त प्रतीत होता है कि प्रशासन मे कुशलता, एकरूपता, समन्वय, उपयोगिता आदि गुणो को लाने के लिए यह जरूरी है कि स्थानीय सत्ताओं पर वाछनीय नियन्त्रण रखा जाये। सर मैक्नेल्टी (Sir A. S. MacNalty) के कथनानुसार स्थानीय सेवाओं के उचित निर्देशन, एकीकरण तथा समन्वय के लिए केन्द्रीय सत्ता के नियन्त्रण के किसी यन्त्र का होना परम आवश्यक है। ऐसा न होने पर विभिन्न

जिलो मे इन सेवाओ का स्तर एव प्रसार असमान रहेगा तथा यह कुल जनसख्या के लिए अन्यायपूर्ण रहेगा। † वैसे स्थानीय सत्ताओ पर नियन्त्रण की समस्या अपने आप मे अत्यन्त जटिल है। स्थानीय सत्ताओ की शक्ति का स्रोत ससद है किन्तु सरकारी विभागो द्वारा उस पर समय-समय जो नियन्त्रण लागू किया जाता है, वह एक जैसा नही होता वरन् समय-समय पर बदलता रहता है। स्थानीय सत्ता को कितनी स्वतन्त्रता प्रदान की जाये, उसे कितना अधिकार प्रदान किया जाये तथा केन्द्रीय नियन्त्रण की मात्रा कितनी रखी जाये आदि प्रश्न इस प्रकार के हैं जिनके सम्बन्ध मे निश्चय अनेक पहलुओ से प्रभावित होता है।

केन्द्रीय सत्ता द्वारा स्थानीय मामलो मे नियन्त्रण एव समन्वय स्थापित करने के पीछे एक अन्य कारण और भी रहता है। स्थानीय सत्तायें अनेक होती है। ये सत्तायें मानवीय होती है और इसी कारण इनमे उन सभी कठिनाइयो के उत्पन्न होने की पूरी-पूरी सम्भावना रहती है जो कि व्यक्तियो के साथ रहने पर उठ सकती है। स्थानीय सत्तायें एक दूसरे के अत्यन्त निकट होती हैं और इसलिए एक के कार्यों एव नीतियो का प्रभाव आवश्यक रूप से दूसरी पर भी पडता ही है। एक पडौसी सत्ता के कार्यों से पीडित होने का डर उसकी प्रगति से होने वाले लाभों की तुलना मे अधिक प्रभाव डालता है। यही मानवीय स्वभाव की कमजोरियो का प्रतीक है। यह भी हो सकता है कि एक स्थानीय सत्ता द्वारा अपनाई गई गलत नीतियो का प्रभाव दूसरे देश पर ही पडे। ऐसी स्थिति मे केन्द्र सरकार का नियन्त्रण अनिवार्य हो जाता है। इस नियन्त्रण के पसार एवं क्रियान्विति मे अनेक राजनैनिक दार्शनिको, विचारको एव लेखको की रचनाओ ने प्रभाव डाला। इस दृष्टि से एडविन चाडविक (Edwin Chadwick), जेरेमी बैन्थम जे. एस. मिल आदि द्वारा प्रकट किये गये विचारो का भी उल्लेखनीय प्रभाव रहा। स्थानीय सरकार के विकास के दौरान शिक्षा, निर्धन राहत, पुलिस, सडकें एव जन-स्वास्थ्य आदि के क्षेत्र मे जो अनेक प्रतिवेदन एवं ससदीय बहसें सामने आई, वे भी पर्याप्त प्रभावशील रही।

स्थानीय सत्ताओ के कार्यों पर केन्द्रीय नियन्त्रण की मात्रा हर युग मे एक जैसी नही रही वरन् वह परिस्थितियों के अनुसार समय-समय पर बदलती रही है। केन्द्रीय हस्तक्षेप नागरिको के व्यक्तिगत जीवन मे मुख्य रूप से अराजकता को रोकने के लिए होता रहा है। इस हस्तक्षेप के पीछे अनेक बुद्धिपूर्ण तर्क प्रस्तुत किये जा सकते हैं। प्रथम तर्क यह है कि स्थानीय

---

† 'In Local Government it is clear that some system of control by the central authority is required for proper direction, unification, and co-ordination of the services of Local authorities. Otherwise the standards and extent of these services would be dissimilar in many districts and this would be manifestly unfair to the population as a whole."

सत्ताओं का ज्ञान अधूरा होता है क्योंकि इनका कार्य-क्षेत्र अपेक्षाकृत कम व्यापक होता है। ऐसा निम्न कारणों से होता है—

प्रथमतः उनका सम्बन्ध देश के एक छोटे भू-भाग से रहता है। इसके अतिरिक्त पारषदों को तीन वर्ष के लिए चुना जाता है तथा केवल कुछ ही पारषद ऐसे होते हैं जो कि नगरपालिका के कार्यों में निरन्तर रूप से रुचि लेते हैं। दूसरी ओर केन्द्रीय स्तर पर कार्य करने वाले व्यावसायिक अधिकारी अपने पद पर प्रायः स्थायी रूप से कार्य करते हैं। यहां यह तथ्य उल्लेखनीय है कि एक स्थानीय सत्ता का आकार ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है उसके परामर्शदाता एवं प्रशासकों की नियुक्ति अधिक स्थायी बनती चली जाती है और इस प्रकार उनके सम्बन्ध में केन्द्रीय नियन्त्रण भी कम होता चला जाता है।

दूसरे, केन्द्रीय नियन्त्रण इसलिए भी अनिवार्य हो जाता है ताकि स्वास्थ्य, शान्ति, सुरक्षा, शिक्षा, यातायात आदि से सम्बन्धित सेवाओं में एक उच्च-स्तर बनाये रखा जा सके तथा इन सेवाओं में कुप्रशासन से होने वाले दुष्परिणामों को हटाया जा सके।

तीसरे, स्थानीय समाज में शक्ति-सम्पन्न स्वार्थ अपने हितों के विरुद्ध भी कार्य कर सकते हैं, उदाहरण के लिए स्थानीय कसाई लोग इसमें रुचि लेंगे कि सफाई के निरीक्षण कार्य में भ्रष्टाचार रहे। इसी प्रकार गलती करने वालों द्वारा पुलिस को रिश्वत दी जाती है। समाज को इसके स्वयं के हमले से बचाना बड़ा मुश्किल है। यह कार्य स्थानीय सत्ता नहीं कर सकती बल्कि किसी बाहरी शक्ति को हस्तक्षेप करना होगा।

चौथे, कई बार प्रजातन्त्रात्मक तरीकों से चलाई जाने वाली स्थानीय सरकार के प्रति गहरा अविश्वास प्रकट किया जाता है क्योंकि इसमें कार्यों में अकुशलता आती है तथा वे कम उपयोगी रह जाते हैं। केन्द्रीय सत्ता इस प्रकार कार्य करती है कि वह स्थानीय सत्ताओं को संकट से बचा लेती है। ऐसे अवसरों पर जब कि किसी गलत कार्य के प्रति आवश्यक कदम न उठाया गया हो तो केन्द्रीय सरकार उसमें हस्तक्षेप करके स्वयं उस कार्य को कर सकती है।

पांचवें, व्यक्ति स्वयं पर कर लगाने से कतराते हैं। यदि केन्द्रीय सत्ता यह चाहती है कि अमुक सामाजिक नीति सफल हो जाए तथा क्रिया-न्वित की जाए तो वह स्थानीय सत्ताओं को अपना योगदान करने के लिए बाध्य कर सकती है। वैसे देखा जाए तो प्रत्येक स्थानीय कार्य का प्रारम्भ स्वेच्छाजनक रूप से हुआ था किन्तु बाद में उसको आज्ञाकारी बना दिया गया।

छठे, प्रायः सभी स्थानीय सत्ताएं इस योग्य नहीं होतीं कि वे अपनी आवश्यकता के अनुसार कम से कम सेवाएं सम्पन्न कर सकें।

स्थानीय सरकार के क्षेत्रों का निर्माण करते समय उनके वित्तीय स्रोतों का जरा भी ध्यान नहीं रखा गया है। ऐसी स्थिति में राष्ट्र की सुव्यवस्था को ध्यान में रख कर केन्द्र- सरकार स्थानीय स्तर पर नियन्त्रण

रखती है। केन्द्रीय नियन्त्रण की दो सीमाएं हैं। प्रथम का सम्बन्ध स्थानीय स्वतन्त्रता से है जिसके अनुसार प्रत्येक स्थानीय जनता के अधिकारों एवं स्वतन्त्रता का सम्मान किया जाता है। दूसरे, व्यावहारिक दृष्टि से प्रशासन में एकरूपता स्थापित नहीं की जा सकती। स्थानीय स्तर पर अनेक क्षेत्र हैं तथा इनकी ओर से केन्द्रीय नियन्त्रण के प्रति किया जाने वाला विरोध भी अत्यन्त व्यापक है। स्थानीय एवं केन्द्रीय सरकारों के बीच सम्बन्धों की यह समस्या बहुत पुरानी है।

सन् १८७१ के शाही सफाई आयोग ने इन सम्बन्धों की समस्या के सम्बन्ध में अपनी सिफारिश प्रस्तुत की है। आयोग के मतानुसार स्थानीय सरकार के सिद्धान्त को राष्ट्रीय स्तर पर एक अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्धान्त माना गया है। केन्द्रीय निर्देशन के अधीन स्थानीय प्रशासन ब्रिटिश सरकार की एक मुख्य विशेषता है। सिद्धान्त यह है कि जितना कार्य हो सके वह स्थानीय सत्ताओं द्वारा किया जाना चाहिए और सार्वजनिक व्यय का नियन्त्रण मुख्य रूप से उसी के द्वारा होना चाहिए जो उसके लिए योगदान करता है। दूसरी ओर जिसका सम्बन्ध पूरे राष्ट्र से है उन समस्याओं पर राष्ट्रीय सरकार द्वारा विचार किया जाना चाहिये किन्तु जो समस्याएं केवल एक स्थानीय जिले से ही सम्बन्ध रखती हैं उनको पूरी तरह से जिले की इच्छा पर छोड़ दिया जाए। स्थानीय प्रशासन की अपनी कुछ कमियां हैं जिनके रहते हुए वह अपने कार्यों को सन्तोषजनक रूप से उचित समय पर सम्पन्न नहीं कर पाता। स्वेच्छाचारी सरकार द्वारा प्राय: सफल योजना एवं एकरूपता व्यवहार प्रकट किया जाता है। ऐसी स्थिति में सरकारी यन्त्र का अधिक पूर्ण होना स्वाभाविक है। यद्यपि उनके कार्य प्राय: कम प्रभावशाली होते हैं। ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय प्रशासन की जो व्यवस्था की गई, उस पर संयुक्त राज्य अमरीका तथा फ्रान्स की सरकार का पर्याप्त प्रभाव पड़ा। ये दोनों देश इङ्गलैण्ड की स्थानीय सरकार को व्यवस्थित करने के लिए उत्तरदायी हैं।

स्थानीय सत्ता का आकार जितना बड़ा होता है उसे अपने कार्यों में स्वायत्तता भी उतनी ही अधिक प्राप्त रहती है। सन् १८३४ के निर्धन कानून अधिनियम में यह बताया गया था कि केन्द्रीय नियन्त्रण इसलिए परमावश्यक है क्योंकि स्थानीय सत्ताएं छोटे आकार की हैं। छोटे आकार की सत्ताएं सुयोग्य अधिकारियों की नियुक्ति करने में असमर्थ रहती हैं, इसका संगठन अकार्यकुशल रहता है, इसका ज्ञान का क्षेत्र अपर्याप्त होता है तथा साथ ही इसमें जन-उत्साह की भावना नहीं रहती। यह एक तथ्य है कि केन्द्रीय सरकार छोटी इकाइयों पर कड़ा नियन्त्रण रखती है। ये सेवाएं ज्यों ही बड़ी सत्ताओं को सौंपी गई, विशेष रूप से काउन्टीज और काउन्टी बारोज को, तो केन्द्रीय नियन्त्रण कम हो गया और केन्द्रीय सरकार का कार्य भार हल्का हुआ और वह स्थानीय सत्ताओं को केवल नेतृत्व प्रदान करने का कार्य करने लगी।

प्राय: यह अनावश्यक समझा जाने लगा कि इन पर्याप्त धन सम्पन्न एवं कुशल कार्यकर्ताओं वाले निकायों के कार्यों में अनावश्यक रूप से हस्तक्षेप

किया जाए। पुलिस, शिक्षा, जन सहयोग आदि कार्यों के प्रशासन मे केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ताओ के साथ, सहयोग करके चलती थी। जहा कही केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण की सीमाओ को पारिभाषित नही किया जाता है वहा वे असीमित बन जाती हैं। केन्द्रीय सरकार की रुचि कभी इस बात मे नही रहती कि वह ससद के द्वारा कानून पास कराके स्थानीय सत्ता को नष्ट कर दे अथवा उसके सारे अधिकार स्वय अपने हाथ मे ले ले। इसके विपरीत उसकी रुचि इस बात मे रहती है कि उसके सहयोग के लिए ऐसी स्थानीय सत्ता हो, जिनमे बोलने वाले लोग हों, जिसके पास पर्याप्त अधिकार हो और जो उपयुक्त ऐतिहासिक एव सवैधानिक स्थिति रखती हो। समय-समय पर केन्द्रीय सरकार उनका सहयोग चाहती है और उनसे आज्ञा-पालन की आशा करती है।

प्रारम्भ मे केन्द्रीय नियन्त्रण की प्रकृति प्रतिरोधात्मक थी। वर्तमान समय मे भी प्राय. इसी नीति को अपनाया जाता है। इसके अनुसार हम पहले सभी सम्भावित गलतियो का अनुमान लगा लेते हैं और उसके बाद एक स्थायी एव योग्य कर्मचारियो वाले विभाग को यह देखने का कार्य सौप देते हैं कि ये गलतिया न हों। जिस समाज मे राज्य के कार्यों का क्षेत्र सीमित होता है वहा नियन्त्रण के पुराने तरीको को अपनाया जा सकता है किन्तु वर्तमान औद्योगिक सभ्यता से पूर्ण शहरी इलाको मे यह नियन्त्रण प्राय: अव्यावहारिक बन गया है। प्रशासकीय नियन्त्रण एव न्यायिक नियन्त्रण जो कि प्रारम्भ मे प्रयुक्त किये जाते थे, आज भी काम मे लिए जाते है। प्रशासकीय नियन्त्रण का तरीका प्रतिरोधात्मक होता है। नियन्त्रण की यह शक्ति किसी न किसी अधिनियम से प्राप्त की जाती है। केन्द्रीय विभाग इन अधिनियमो के अतिरिक्त अन्य कोई शक्ति नही रखते। इतने पर भी ऐतिहासिक विकास की स्थिति मे केन्द्रीय विभागो ने नियन्त्रण के कुछ ऐसे अधिकार भी प्राप्त कर लिए हैं जिनका अधिनियमो से बहुत कम सम्बन्ध रहता है।

नियन्त्रण मुख्य रूप से एक सम्मान का प्रश्न है। व्यक्तिगत जीवन की भांति सार्वजनिक जीवन मे भी सस्थाए किसी बाहरी सत्ता का दबाव या नियन्त्रण प्राय: उसके सम्मान के कारण ही स्वीकार करती है। यदि केन्द्रीय सरकार का स्थानीय सत्ताओ की दृष्टि से कोई आदर न हो तो कानूनी प्रावधान भी नियन्त्रण की दृष्टि से उपयोगी नही हो सकते। स्थानीय सत्ताओ के सम्बन्ध मे केन्द्रीय सत्ताओ का सम्मान मुख्य रूप से दो बातो पर निर्भर करता है। प्रथम यह कि वे नियन्त्रण एव पर्यवेक्षण के अधिकार का प्रयोग कितने समय से कर रही हैं और दूसरे, उनके द्वारा अब तक प्रयुक्त शक्तियो का परिणाम क्या रहा है। जब एक स्थानीय परषद एव अधिकारी अपने कार्यालय मे प्रवेश करता है तो सबसे पहले उसे यह तथ्य ज्ञात होता है कि लन्दन में स्थित विभाग उन पर नियन्त्रण की भारी शक्ति रखते हैं और दशाब्दियों से तथा यहा तक कि शताब्दियों से वे नियन्त्रण के लिए अपनी सत्ता, कुशलता, साधन एव सगठन का प्रयोग कर रहे हैं। नियन्त्रण के तरीको का प्रभाव उस समय और भी बढ जाता है जब स्थानीय सत्ता को यह ज्ञात हो कि नियन्त्रणकर्त्ता विभाग के पास लाभ या कष्ट प्रदान करने के साधन उपलब्ध हैं।

नियन्त्रण के रूप
[The Forms of Control]

केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय सत्ताओं पर जो नियन्त्रण रखा जाता है उसके मुख्यतः तीन रूप हैं। इनका वर्णन करते हुए जे० एच० वारेन (J H Warren) लिखते हैं कि एक सम्प्रभु प्रजातन्त्र राज्य को स्थानीय निकायों की स्वायत्तता के लिए कुछ सीमाएं निर्धारित करनी चाहिए। इङ्गलैण्ड में भी हम पाते हैं कि वहां राज्य शक्ति के तीनों अंग अर्थात् व्यवस्थापिका, न्यायपालिका एवं कार्यपालिका स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं पर कुछ नियन्त्रण रखते हैं।*

(1) संसदीय नियन्त्रण [Parliamentary Control]–केन्द्रीय नियन्त्रण का सर्वाधिक मौलिक रूप वह है जो कि संसद द्वारा लागू किया जाता है। संसद कानून बनाने वाली एक मूल संस्था है और इस रूप में वह स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र को विनियमित करने के व्यापक अधिकार रखती है। स्थानीय सत्ताएं अपनी प्रकृति के अनुसार व्यवस्थापिका निकाय नहीं होतीं। वे मूलतः कार्यपालिका निकाय होती हैं जो कि उन शक्तियों का प्रयोग करती हैं और उन कर्तव्यों को सम्पन्न करती हैं जो कि केन्द्रीय संसद द्वारा उनको सौंपे जाएं। नियमानुसार स्थानीय सत्ताएं उन शक्तियों से अधिक किसी शक्ति का उपभोग नहीं कर सकतीं जो संसद द्वारा उनको सौंपी गई हैं। कई बार इस तथ्य का जनता द्वारा विरोध किया जाता है। यह कहा जाता है कि स्थानीय निकाय जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं। वे एक प्रकार से स्थानीय संसद कहे जा सकते हैं किन्तु उनको कोई अधिकार न देना एक अनुपयुक्त नीति है। स्थानीय सत्ता, स्थानीय संसद बनने से बहुत दूर रह जाती है। असल में इङ्गलैण्ड और वेल्स की स्थानीय सत्ताओं की यह एक मुख्य विशेषता मानी जाती है कि उनको अपनी क्रियाओं की प्रकृति एवं क्षेत्र निर्धारित करने का कोई अधिकार नहीं होता, वे कानून नहीं बना सकतीं, उन्हें पूरी तरह से अधीनस्थ निकाय मानना उपयुक्त रहेगा। कभी कभी स्थानीय सत्ता को यह निर्णय करने की स्वतन्त्रता रहती है कि वह एक विशेष कार्य को सम्पन्न करे अथवा न करे। साथ ही वह उस कार्य को सम्पन्न करने के तरीके के बारे में भी निर्णय लेती है किन्तु स्वतन्त्रता की ये शक्तियां स्थानीय सत्ताओं की अन्तर्निहित शक्तियां नहीं होतीं वरन् वे उनको सौंपी जाती हैं। इन स्वतन्त्रताओं का उपभोग उन सीमाओं में रह कर ही किया जा सकता है जो कि संसद द्वारा निर्धारित की जाएं। ऐसी स्थिति में कई बार भ्रम पैदा हो जाता है।

---

*"A sovereign democratic state must always, however, set some limits to the autonomy of local bodies; and even in England we find all three organs of state power—Legislature, judiciary, and executive—exercising some control over the activities of the local authorities."

—*J. H. Warren, Op. Cit.*, P. 56.

सामान्य जनता ऐसे कार्य को न करने के लिए स्थानीय परिषद को उत्तरदायी ठहराती है, जिसे करने की शक्ति असल में उसे प्रदान नहीं की गई होती है। न्यायवेत्ताओं द्वारा जब स्थानीय सत्ताओं को विधि की रचना (Creatures of Statutes) कहा जाता है तो उसके पीछे यही भावना रहती है कि वे ऐसा कोई कार्य नहीं कर सकती जिसे करने की शक्ति संसदीय कानून द्वारा उन्हें नहीं सौंपी गई है। स्थानीय सत्ताएं अपने कर्तव्यों को सम्पन्न करते हुए तथा शक्तियों का उपयोग करते हुए नागरिकों के अधिकारों में हस्तक्षेप कर सकती है। इसी सम्भावना से प्रभावित होकर राज्य सरकार स्थानीय विषयों में अपना हस्तक्षेप प्रारम्भ करती है। संसद द्वारा स्थानीय सत्ताओं को कई प्रकार से शक्ति प्रदान की जा सकती है। संसद सार्वजनिक सामान्य अधिनियमों (Public General Acts) के द्वारा शक्तियां सौंप सकती है। ये अधिनियम वे होते हैं जिनको सम्पूर्ण समाज को प्रभावित करने वाली सरकारी नीति के प्रयास के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस अधिनियम के द्वारा सभी स्थानीय सत्ताओं को शक्ति एवं कर्तव्य सौंपे जा सकते है अथवा एक ही प्रकार की सभी स्थानीय सत्ताओं को ये सौंपे जा सकते हैं। ये शक्तियां स्वेच्छाजनक एवं आवश्यकारी, दोनों ही प्रकार की हो सकती है अर्थात् वे ऐसी भी हो सकती है जिनको कि स्थानीय सत्ता चाहे तो करे और ऐसी भी हो सकती है कि वे स्थानीय सत्ता को करनी ही चाहिए।

दूसरे प्रकार का अधिनियम स्वीकार्य अधिनियम (Adoptive Act) होता है जिसको स्थानीय सत्ता एक प्रस्ताव द्वारा स्वीकार कर सकती है। इस प्रकार यह अधिनियम स्थानीय सत्ता को स्वेच्छापूर्ण शक्तियां प्रदान करता है जिसके अनुसार यदि वह इन अधिकारों को काम में लाना चाहे तो एक प्रस्ताव पास करे ले और यदि नहीं चाहे तो न करे। इन अधिनियमों को स्वेच्छाचारी व्यवस्था के उदाहरण माना जा सकता है तथा इनमें यह भावना छिपी रहती है कि संसद स्थानीय सत्ता की स्वीकृति से उसके सम्बन्ध में व्यवस्थापन करे। इससे प्रगतिशील स्थानीय सत्ताओं को एक ऐसा अवसर प्राप्त हुआ जिसके द्वारा वे समाज की भलाई के लिए अन्य सेवाएं प्रदान कर सकें। इस प्रकार की शक्तियों का जब एक स्थानीय सत्ता प्रयोग करना चाहती थी तो उस रूप में ही प्रयुक्त करना होता था जिसमें कि अन्य सत्ताएं कर रही हैं। सन् १६३६ में कामन्स सभा की एक समिति ने यह सिफारिश की कि इस प्रकार के अधिनियमों की व्यवस्था को बन्द कर दिया जाए उस समय से आज तक ऐसा कोई अधिनियम पास नहीं किया गया है किन्तु इस समय से पूर्व ऐसे अधिनियमों द्वारा जो शक्तियां प्रयुक्त की जा रही थीं वे बाद में भी बनी रहीं।

स्थानीय सत्ताओं को शक्ति प्रदान करने वाले तीसरे प्रकार के अधिनियम व्यक्तिगत स्थानीय अधिनियम (Private Local Acts) होते हैं। यद्यपि स्थानीय सत्ताओं की मुख्य शक्तियां एवं कार्य, सरकारी अधिनियमों में समाहित रहते हैं किन्तु फिर भी अनेक सत्ताएं व्यक्तिगत व्यवस्थापन को प्रोत्साहन देकर भी अधिक शक्तियां प्राप्त करने में सफल हो गई हैं। जब

कभी स्थानीय सत्ता उन शक्तियो की आवश्यकता महसूस करती है जो कि सामान्य व्यवस्थापन मे प्राप्त नही हैं तो यह ससद मे एक ऐसे विधेयक को प्रोत्साहित करती है जो कि यद्यपि अपनी प्रचलित प्रक्रिया द्वारा ही पास किया जाता है किन्तु उसके ऊपर ससद के किसी भी भवन मे पर्याप्त बहस नही की जा सकती। इसके स्थान पर यह विधेयक कामन्स सभा की एक समिति द्वारा विचारा जाता है। स्थानीय सत्ता के कानूनी परामर्शदाता एव विधेयक के विरोधी लोग गवाहियां देते है। समिति की पूरी प्रक्रिया पूरी तरह से एक कानूनी न्यायालय जैसी होती है। व्यक्तिगत विधेयक को सम्पूर्ण समाज के हितों से सम्बन्ध रखने वाली सामान्य नीति के एक प्रयास के रूप मे प्रस्तुत नही किया जा सकता वरन् उसे एक विशेष स्थानीय सरकारी क्षेत्र के हितो की दृष्टि से प्रस्तुत किया जाता है। अधिनियम स्थानीय उद्देश्यों की पूर्ति करता है। ये अधिनियम प्राय नवीन सामान्य व्यवस्थापन के पूर्वगामी होते हैं।

ससद मे स्थानीय सत्ता द्वारा विधेयक प्रस्तुत करने के नियम सन् १६३३ के स्थानीय सरकार अधिनियम मे दिए गए थे। ये काउन्टी, बारोज एव जिला परिषद पर लागू होते थे किन्तु पेरिश परिषदो पर या लन्दन की प्रशासकीय काउन्टी पर लागू नही होते थे। कोई भी व्यक्तिगत विधेयक प्रोत्साहित करने से पूर्व स्थानीय सत्ता की परिषद अपने बहुमत द्वारा एक उचित प्रस्ताव पास करती है। इस प्रस्ताव पर गृह-निर्माण एव स्थानीय सरकार के मन्त्री की स्वीकृति परमावश्यक है। प्रत्येक मतदाता को यह अधिकार है कि वह विधेयक के विरुद्ध मन्त्री के सम्मुख अपने विचार प्रस्तुत कर सके। जब एक ऐसा विधेयक कामन्स सभा मे रख दिया जाए तो काउन्टी या देहाती जिले की परिषद बहुमत से प्रस्ताव पास करके अपने निर्णय पर बनी रही है। इसके बाद विधेयक पर विचार किया जाता है। जहा तक बारोज तथा शहरी जिलो का सम्बन्ध है उनमे इस प्रकार के विधेयक को प्रोत्साहन देने के लिए स्थानीय सरकार के सभी मतदाताओं की एक आम सभा बुलाई जाएगी। इस प्रकार की बैठक मे परिषद के मेयर या सभापति द्वारा अध्यक्षता की जाती है। यदि बैठक मे ऐसा करना उचित समझा जाए तो विधेयक के प्रत्येक पहलू प विचार किया जाएगा और जिसे उचित समझा जाए उसे पास कर लिया एगा। इस बैठक के निर्णय अन्तिम समझे जाते हैं किन्तु यदि पाम दिन के अन्दर अन्दर १/२० मतदाता या एक सौ मतदाताओं द्वारा मतदान की माग की जा सकती हैं।

यदि शह मी इस बैठक मे विधेयक को प्रोत्साहित करने के विरुद्ध निर्णय लिया जा तो परिषद, मतदाताओं द्वारा मतदान की माग कर सकते हैं। यदि मतदाता विधेयक के विरुद्ध मतदान करें तो विधेयक को वापिस ले लिया एगा। ससद द्वारा स्थानीय सत्ताओं को जो शक्तियां दी जाती है उनक चौथा माध्यम प्राविधिक आदेश (Provisional orders) है। प्राविधिक आदेश एक ऐसा आदेश होता है जो कि सरकारी विभाग द्वारा दिया जाता है। ससद के अधिनियम द्वारा मन्त्री को यह आदेश जारी करने की शक्ति प्राप्त होती है। इसके द्वारा वह स्थानीय सत्ता को कुछ

कार्य सम्पन्न करने की शक्तियां दे सकता है। इस प्रक्रिया का प्रारम्भ सन् १६४८ के जन स्वास्थ्य अधिनियम के साथ हुआ और इसके माध्यम से व्यक्तिगत स्थानीय सत्ताओं को कम खर्च के द्वारा अधिक शक्तियां प्रदान की जा सकती हैं। जिस क्षेत्र में मन्त्री प्राविधिक आदेश द्वारा शक्तियां प्रदान कर सकता है, उसमें शक्तियां प्राप्त करने के लिए इच्छुक स्थानीय परिषद मन्त्री से ऐसा करने की प्रार्थना करती है। मन्त्री अपना आदेश जारी करने से पूर्व यह देखता है कि ऐसा करने से किसी को कोई ऐतराज तो नहीं है। इन ऐतराजों की जांच के लिए सार्वजनिक रूप से पूछताछ की जाती है तथा उठाए जाने वाले विरोधों की सुनवाई की जाती है। जब एक आदेश जारी कर दिया जाता है तो उसे प्रभावशाली बनाने से पूर्व संसद की स्वीकृति लेना जरूरी होता है।

स्थानीय सरकार की दृष्टि से उपर्युक्त तरीका अब अधिक महत्वपूर्ण नहीं रहा है क्योंकि संसदीय समिति के विचारार्थ अब व्यक्तिगत विधेयकों को उठाया जा सकता है। यह कम खर्चीला तरीका होता है क्योंकि इसमें स्थानीय सत्ता को संसदीय वकील नियुक्त नहीं करने पड़ते तथा अपने अधिकारी इसे लंदन नहीं भेजने पड़ते। उनको अधिक दिनों तक ठहराना भी जरूरी नहीं रह जाता। जब एक बार प्राविधिक आदेश जारी कर दिया जाता है तो संसद द्वारा उसको स्वीकार कराने में कोई कठिनाई नहीं होती। आदेश के पीछे मंत्रालय का पूरा समर्थन रहता है। यह ऐसी ही संसदीय समिति को विचारार्थ भेजा जाता है जो कि व्यक्तिगत विधेयक पर विचार करती है। केवल महत्वपूर्ण सैद्धान्तिक प्रश्नों पर ही संसद प्राविधिक आदेशों को मानने में अड़चन डाल सकती है वरना वह उनको आम रूप से स्वीकार कर लेती है।

अधीनस्थ व्यवस्थापन अथवा हस्तान्तरित व्यवस्थापन के कारण मंत्रियों को संसद द्वारा स्थानीय सरकार से सम्बन्धित शक्तियां अधिक सौंप दी जाती हैं। मंत्री उस विशेष स्थानीय सत्ता के अनुसार आवश्यकता के माफिक आदेश जारी करेगा। इस प्रकार के कानूनी आदेशों (Statutory Orders) को कानून की उन प्रक्रियाओं में हो कर नहीं गुजरना पड़ता जो कि पर्याप्त जटिल एवं लम्बी होती हैं। हस्तान्तरित व्यवस्थापन के फलस्वरूप एक ओर तो स्थानीय सत्ताओं की शक्तियों में पर्याप्त वृद्धि हुई है और दूसरी ओर इसके द्वारा स्थानीय सेवाओं के संचालन के लिये नया तरीका भी प्रस्तावित किया गया है। यह तरीका प्रशासकीय की अपेक्षा व्यवस्थापिका की प्रकृति का है। पहले स्थानीय सेवाओं के सम्बन्ध में की जाने वाली व्यवस्था को संसद द्वारा उसके अधिनियमों में दिया जाता था किन्तु अब यह कानूनी आदेशों, नियमों, विनियमों आदि में दी जाती है। यह व्यवस्था अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट एवं व्यापक है। स्थानीय सरकार की दृष्टि से यदि मापदण्डों पर विचार किया जाये तो हम पायेंगे कि विस्तृत व्यवस्थापन का तरीका एक प्रकार से प्रशासकीय ही बन जाता है। इस प्रकार कुछ विचारकों का यह कहना गलत नहीं है कि व्यवस्थापिका का नियन्त्रण मूल रूप से प्रशासकीय नियन्त्रण ही है जो

कि केन्द्र सरकार को स्थानीय सरकारों पर अधिक नियंत्रण रखने के अवसर प्रदान करता है।

न्यायिक नियंत्रण [Judicial Control]—ग्रेट ब्रिटेन मे फ्रास के विपरीत कानून का शासन (Rule of law) स्थित है जिसके अनुसार वहा स्थानीय सत्ता एवं उसके सभी अधिकारी प्रायः उसी न्यायालय एव न्यायिक व्यवस्था के विषय होते हैं जिसके कि सामान्य नागरिक होते हैं। कानून की निगाह मे उनको कोई विशेष स्तर प्रदान नहीं किया गया है। एक सामान्य नागरिक अपनी स्थानीय परिषद पर मुकदमा चला सकता है और यदि वह सफल हो जाये तो परिषद से अपना सारा हर्जाना वसूल करने का अधिकार रखता है। स्थानीय सत्ताओ को कानून द्वारा बनाया जाता है तथा उनका ऐसा कोई भी अधिकार या कर्त्तव्य नही होता जो कि उनको कानून द्वारा नहीं दिया गया है। अपने जन्म से लेकर आज तक स्थानीय सत्तायें मूल रूप से कानून द्वारा ही नियंत्रित की गई है। स्थानीय सत्ता को एक निगम का रूप दिया गया है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका व्यक्तित्व अपना स्वय का होता है। यह व्यक्ति की भांति ही कानून की दृष्टि से एक जैसे अधिकार एव शक्तियां रखती है।

स्थानीय सत्ता द्वारा प्रदान की गई सेवाओ से यदि किसी को असतोष या शिकायत है तो उसके लिए न्यायालय का द्वार सदैव ही खुला रहता है। उदाहरण के लिए हम एक ऐसे भवन को ले सकते हैं जिसकी रचना स्थानीय सत्ता द्वारा कराई गई है। यह भवन माना कि अत्यन्त कमजोर है तथा ऐसा होने के कारण यह किसी नागरिक या नागरिको को नुकसान पहुँचा देता है तो वे प्रभावित व्यक्ति स्थानीय सत्ता के विरुद्ध न्यायिक कार्यवाही करने के लिए अधीकृत हैं। इसी प्रकार यदि स्थानीय सत्ता द्वारा बनाई गई दोषपूर्ण सड़क से किसी वाहन को कोई क्षति पहुचती है तो उसका स्वामी भी इसी प्रकार का अधिकार रखता है। नगरपालिका द्वारा चलाई जाने वाली बसो के चालक यदि अपनी गति को अधिक रखें तो उनके विरुद्ध चालान किया जा सकता है। शहर की परिषद को उस चालक के व्यवहार के लिये उत्तरदायी बनना होगा। यह सब तथ्यपूर्ण स्थिति एक प्रकार से इस तथ्य की द्योतक है कि स्थानीय सत्ताए कानून के आधीन रहती हैं किन्तु इससे यह स्पष्ट नही होता कि उन पर न्यायिक नियन्त्रण रहता है। यह सब कानून के अनुसार व्यवहार करना था किन्तु न्यायिक नियन्त्रण का क्षेत्र कानून के अनुसार व्यवहार करने से भी कुछ अधिक है।

स्थानीय सत्ताओ को अनेक अधिकार एवं कर्त्तव्य सौंपे जाते हैं तथा ऐसी व्यवस्था की जाती है कि वे उन कार्यों को सम्पन्न करें जो कि उनको करने चाहिए तथा उन कार्यों को न करे जो कि उनको न करने चाहिएं। ये सत्ताएं सार्वजनिक निकाय होती हैं अतः उनको क्या कार्य करना चाहिए, यह बात कानून के न्यायालयों द्वारा निर्धारित की जाती हैं। इस प्रकार के नियन्त्रण का एक भाग बहुत कुछ ऐसा ही होता है जो कि व्यक्तिगत उद्यमो पर लागू किया जाता है। जिस प्रकार व्यापारिक निगम कोई भी गैर-कानूनी कार्य नहीं कर सकती उसी प्रकार स्थानीय सत्ता भी ऐसा कोई कार्य नही

कर सकती। यह एक प्रकार से निषेधात्मक पहलू है। कानून के अनुसार प्रशासन के पीछे जो विचार निहित है वह विधेयात्मक (Positive) एवं निषेधात्मक दोनों ही है। कानून द्वारा कुछ कार्यों को सम्पन्न करने की माग भी की जा सकती है तथा यह भी व्यवस्था की जा सकती है कि एक स्तर को बनाए रखा जाए। ग्रेट ब्रिटेन में स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं को न्यायालयों द्वारा जिस प्रकार पुनरीक्षित किया जाता है, वह तरीका अनेक कानूनी सिद्धान्तों पर आधारित है। इन सिद्धान्तों, नियमों एवं व्यवहारों को कभी भी नियमबद्ध नहीं किया गया है। इनमें से कुछ तरीके तो पूरी तरह से बुद्धिपूर्ण हैं किन्तु अधिकांश ऐसे भी हैं जिनकी सीमाओं को अच्छी प्रकार से पारिभाषित नहीं किया जाता। नियन्त्रण की अनेक प्रक्रियाएं हैं जो कि भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में उपयुक्त समझी जाती है ये प्रक्रियायें वैसे तो इतनी तकनीकी एवं उलझी हुई प्रकृति की है कि इनको केवल वकीलों का ही विषय कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी किन्तु फिर भी कुछ प्रक्रियाओं का यहां उल्लेख किया जा सकता है।

प्रथम प्रक्रिया उस परम्परावादी विचारधारा पर आधारित है जिसके अनुसार यह सोचा जाता था कि समाज इस बात पर निर्भर है कि उसका प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्त्तव्यों का पालन करे। यदि सभी नागरिक शान्ति को भंग होने से रोके, अपराधियों को पकड़ने में तथा गलती करने वालों को रोकने में सहायता करें तो इसका कोई अर्थ नहीं कि कानून और व्यवस्था की स्थापना न हो सके। कानून के अनुसार इन कर्त्तव्यों का निर्वाह करने में किसी प्रकार की असफलता को एक अपराध माना गया था जिसके लिए अपराधी व्यक्ति के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जा सकती थी। इस प्रकार एक व्यक्ति को, जिसने डाकू को पकड़ने में सहायता नहीं की, उसी प्रकार अपराधी माना जाता था जिस प्रकार डाकू को। यद्यपि उसको दिया गया दण्ड केवल कुछ जुर्माना ही हो सकता था जब कि डाकू को फांसी तक की सजा। आज से लगभग दो शताब्दी पूर्व इंगलैंड के लोग इस व्यवस्था को पूर्णतः स्वाभाविक मानते थे। उनका कहना था कि प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्त्तव्य का पालन करना चाहिए और यदि वह नहीं कर पाता है तो एक प्रकार से अपराधी है और उसके विरुद्ध न्यायिक कार्यवाही किया जाना पूर्णतः तर्कसंगत है। इस प्रकार की व्यवस्था द्वारा ही एक व्यक्ति को उसके दायित्वों के प्रति जागरूक बनाया जा सकता है। यदि पूरा समाज ही अपने दायित्वों को पूरा न कर पाये तो उसको भी अभियुक्त बनाया जा सकता है। यदि पेरिस के निवासी एक सड़क की मरम्मत न कर पायें तो उनके विरुद्ध अभियोग लगा दिया जाना चाहिए।

इस प्रकार के अभियोग की व्यवस्था में एक बड़ी कठिनाई यह उपस्थित हो जाती है कि गलती की परिभाषा किस प्रकार की जाये तथा कैसे निश्चित व्यक्तियों को गलती करने के लिए दोषी ठहराया जाय। वर्तमान परिस्थितियों में यह असामयिक बन चुका है। आज हम यह नहीं कह सकते कि सामाजिक श्रम के आधार पर सड़कों की रचना कर ली जाये

कन्तु फिर भी इस व्यवस्था को पूरी तरह से महत्वहीन नही कहा जा सकता । सन् १६२६ मे अनेक लोगो को यह जान कर आश्चर्य हुआ कि पेरिस के निवासियो पर सडक की मरम्मत न करने का अभियोग लगा दिया गया। प्रश्न यह था कि रास्ता व्यक्तिगत था अथवा सरकारी व्यय पर इसकी मरम्मत की जानी थी । पुराने समय के कानून ने स्थानीय सत्ताओ पर जो अनेक दायित्व लाद रखे थे आज वे प्रायः सभी समाप्त प्राय: हो गये हैं अथवा महत्वहीन बन गये है । स्थानीय सत्तायें आज यदि अपने दायित्वो को पूरा न करें तो उनके विरुद्ध अन्य कार्यवाही की जा सकती है जो अभियोग की अपेक्षा अधिक सुविधाजनक है ।

दूसरे, स्थानीय सरकार के उप-कानूनो [By-laws] का उल्लघन करने पर नागरिको के विरुद्ध कार्यवाही की जाती है । जब कभी ऐसे अवसर उपस्थित होते हैं तो न्यायालय को स्थानीय सत्ता के उप-कानूनो पर विचार करने एव उनकी व्याख्या करने का भी अवसर प्राप्त हो जाता है । न्यायिक कार्यवाही मजिस्ट्रेट के न्यायालय मे प्रारम्भ होती है तथा सत्तापूर्ण निर्णय के लिए कानून को उच्च न्यायालय के पास भेजा जाता है। केन्ट [Kent] की काउन्टी परिषद ने यह उप-कानून बना रखा है कि यदि कास्टेबुल मना कर दे तो किसी भी व्यक्ति को निवास-गृहो से १५ गज के भीतर की सडक पर या किसी सार्वजनिक स्थान मे सगीत या आवाजपूर्ण साधन पर शोर की आवाज करना या गाना नही चाहिए । यदि उस घर मे रहने वाला व्यक्तिगत रूप से या अपने सेवक द्वारा मना करे तो भी ऐसा नही करना चाहिए । एक व्यक्ति को इस कानून का उलघन करने पर पकड लिया गया क्योकि वह उप-कानून द्वारा मना किये गये तरीके के विपरीत गा रहा था। इसके विरुद्ध यह कहा गया कि स्वय उप कानून ही अनुचित [Ultra-Vires] है क्योकि यह अबुद्धिपूर्ण है अतः अनुचित है । इसके परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय से पूछा गया कि इस प्रकार के मामलो मे उप-कानून के सम्बन्ध मे क्या सिद्धान्त अपनाये जाने चाहिए ।

न्यायालय ने बताया कि जहाँ तक हो सके स्थानीय सत्ता के उप-कानूनो का समर्थन किया जाना चाहिए । उनको केवल तभी अबुद्धिपूर्ण माना जा सकता है जब कि उनके पालन मे पक्षपात किया जा रहा हो या असमानता बरती जा रही हो; यदि वे स्पष्टत अन्यायपूर्ण हो तथा नागरिको के जीवन मे अनुचित रूप से हस्तक्षेप करते हो । दूसरे शब्दो मे एक कानून को केवल इसलिए अस्वीकार नही किया जा सकता कि न्यायाधीश उसे सामान्य रूप से अबुद्धिपूर्ण मानते हैं किन्तु ऐसा केवल तभी किया जा सकता है जब कानून सिद्धान्त रूप मे ही खराब हो। कई बार कानून की व्याख्या करने का प्रश्न भी उपस्थित हो जाता है । ऐसी परिस्थितियां आती हैं जब न्यायालय को स्थानीय निकाय द्वारा बनाये गये उप-कानूनों की व्याख्या करनी होनी है । उदाहरण के लिए ग्लेमोर्गन [Glamorgan] काउन्टी-परिषद के एक स्थानीय अधिनियम मे यह प्रावधान है कि काउन्टी की किसी गली मे कोई भी व्यक्ति व्यापार या वाणिज्य या उसके किसी भाग के प्रचार के लिए

लाउडस्पीकर का प्रयोग नही करेगा। लाउडस्पीकर से अर्थ एम्पलीफायर या ऐसे ही प्रसाधन से है।

गाडी पर एक आइसक्रीम बेचने वाली कम्पनी ने यह प्रचार किया कि उपस्थिति की सूचना घन्टी बजा कर दी जायेगी। जब ऐसी एक गाडी आई तथा उसने घन्टियो की आवाज की तो कम्पनी को कानून का उलघन करने के जुर्म मे पकड लिया गया। मजिस्ट्रेट के न्यायालय मे कार्यवाही करने के बाद मामले को उच्च न्यायालय मे ले जाया गया। इसमे मुख्य बात यह थी कि लाउडस्पीकर से क्या अर्थ लगाया जाये। न्यायालय ने बताया कि एक बडे क्षेत्र मे आवाज करने वाले यन्त्र को इस व्याख्या मे लिया जा सकता है अतः उसने कार्यवाही को रोक दिया।

तीसरे, न्यायिक रूप से स्थानीय सत्ता के कार्यों पर जो नियन्त्रण रहता है उसका एक अन्य रूप यह है कि जिस व्यक्ति को स्थानीय सत्ता के कार्य गलत रूप मे करने से या न करने से जो हानि हुई है वह इसके विरुद्ध न्यायालय मे कार्यवाही कर सकता है। अभियुक्त सत्ता यह दावा कर सकती है कि वह किसी व्यक्ति के नुकसान के लिए उत्तरदायी नही है क्योकि वह कानून की सीमा में रहकर ही कार्य करती है। यदि कानूनी शक्तियो का प्रयोग करने पर किसी व्यक्ति को कोई नुकसान या कठिनाई होती है तो उसके लिए वह जिम्मेदार क्यो ठहराई जायेगी। ऐसे प्रश्नो ने विषय मे एक मामले पर विचार करते हुए लार्ड सभा ने यह बताया कि इस प्रकार का तर्क अनुपयुक्त है। एक सरकारी विकास के सेवक भी अपने कर्तव्यो का पालन करने के लिए ठीक उसी प्रकार उत्तरदायी है जिस प्रकार कि एक व्यक्तिगत व्यापारिक कम्पनी होती है।

चौथे, स्थानीय सत्ता के किसी कार्य या प्रस्तावित कार्यों की वैधानिकता को जाचने के लिए उच्च न्यायालय से घोषणा करने के लिए कहा जा सकता है। यद्यपि ये दो अलग-अलग साधन हैं किन्तु दोनो का प्रयोग एक साथ भी किया जा सकता है अत. दोनो पर एक साथ विचार किया जाना उपयुक्त रहेगा। आदेश प्रायः उस समय जारी किए जाते है जबकि यह देखा जाये कि स्थानीय सत्ता सम्पत्ति के अधिकारो मे हस्तक्षेप कर रही है। जब इस प्रकार के अधिकारो मे हस्तक्षेप किया जाता है तो की गई हानि के भुगतान को प्रायः अपर्याप्त समझा जाता है। आदेश जारी करके न्यायालय, दोषी को ऐसा करने से रोक सकती है जो कि उसे नही करना चाहिए अथवा उसे कुछ [illegible] कदम उठाने के लिए कह सकती है। यदि स्थानीय सत्ता ने किसी व्यक्ति के अधिकारो का उलघन करते हुए एक भवन का निर्माण किया है तो न्यायालय अपने आदेश द्वारा उसे नष्ट करने के लिए कह सकता है। न्यायालय द्वारा दिए जाने वाले निर्देश सुस्थापित सिद्धान्तो [illegible] रहते है। [illegible] विषय पर आदेश जारी किया जायेगा या नही, यह [illegible] स्पष्ट हो चुकी है। यह आदेश स्वेच्छा पर आधारित होता है। जब यह देखा जाये कि हानि का भुगतान ही पर्याप्त रहेगा तो यह आदेश जारी नही किये जाते। यदि व्यक्तिगत अधिकारों में हस्तक्षेप करने के कारण किसी स्थानीय [illegible] के विरुद्ध कार्यवाही की जाये तो न्यायालय इस बात पर [illegible] करेगा कि [illegible] देश

जारी किया जाये अथवा नही । इस प्रकार के आदेश स्थानीय सत्ता को अनुचित कार्य (Utra-Vires) करने से रोकने के लिए या किसी सार्वजनिक अधिकार की रक्षा के लिए जारी किया जा सकता है । इस सम्बन्ध मे नियम यह है कि कोई व्यक्ति केवल तभी कार्यवाही कर सकता है जबकि उसके व्यक्तिगत अधिकारो के साथ-साथ किसी सार्वजनिक अधिकार का भी उल्लंघन हुआ हो । उदाहरण के लिए यदि स्थानीय सत्ता के किसी कार्य द्वारा रास्ते मे चलने के सार्वजनिक अधिकार का विरोध किया जाता है तथा इसके साथ ही इस कार्य से किसी व्यक्ति की सम्पत्ति का अधिकार भी प्रभावित होता है तो ऐसी स्थिति मे अटोर्नी जनरल कार्यवाही कर सकता है ।

न्यायालय द्वारा घोषणा करने की कार्यवाही इससे कुछ भिन्न होती है । न्यायालय को साधारणत. यह घोषित करने के लिए आमन्त्रित किया जाता है कि स्थानीय परिषद द्वारा किया गया अथवा किया जाने वाला कोई कार्य कानूनी है अथवा नही । न्यायालय का यह कार्य आदेश जारी करने की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है । जब किसी सरकारी सत्ता के सम्बन्ध मे यह कह दिया जाता है कि उसका कोई कार्य अवैधानिक है तो आवश्यक रूप से उस सत्ता को अपने कार्यों का रूप बदलना होगा क्योंकि यह आशा की जाती है कि उनको कानून का पालन करना चाहिए । ऐसी स्थिति होने पर कोई भी व्यक्तिगत नागरिक सरकारी सत्ता के विरुद्ध अटार्नी जनरल से कार्यवाही करने के लिए नही कह सकता । घोषणा प्रसारित करने का सबसे बडा लाभ यह है कि न्यायालय द्वारा ये एक बडे क्षेत्र पर की जा सकती हैं । उच्च न्यायालय मे आज्ञा प्रसारित करने एव घोषणा जारी करने के लिए प्रार्थना की जा सकती है ।

पाचवे, न्यायालय द्वारा किए जाने वाले उपचारो (Remedies) के एक समूह मे विशेष अधिकार के लेख जारी करने का अधिकार भी आता है । इसको अग्रेजी कानून का एक अत्यन्त कठिन भाग माना जाता है क्योकि ये उपचार धीरे-धीरे अपनी प्रकृति को बदलते रहे हैं । प्रारम्भ मे राजा की बच के न्यायालय [illegible] मुख्य कर्तव्य यह था कि उन विषयो पर ध्यान केन्द्रित रखे जिनम कि राजा विशेष रुचि लेता है । इन विशेष अधिकारपूर्ण लेखो मे सर्वाधि[illegible] प्रसिद्ध हेबियस कार्पस (Habeas Corpus) है जिसके अनुसार जो व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को गैर-कानूनी रूप से बन्दी बना रहा है, उसे यह आज्ञा दी ज[illegible] है कि वह उस व्यक्ति को राजा के बेंच के सम्मुख प्रस्तुत करे ताकि विषय क[illegible] [illegible]रीक्षा की जा सके और यदि न्यायालय यह देखे कि गैर-कानूनी रूप से ब[illegible] बनाया गया है तो उस व्यक्ति को छोड दिया जाए । मूल रूप मे इस लेख [illegible] जारी करने का उद्देश्य यह था कि राजा की बेंच असल मे [illegible] को [illegible] [illegible]ामने लाना चाहती है क्योकि उसके द्वारा राजा क हितो को प्रभावित [illegible] [illegible] रहा है । इसी कारण इन उपचारो को विशेष अधिकार कहा जा सकता [illegible] [illegible]योकि इनका सम्बन्ध राजा की विशेष शक्तियो एव अधिकारो मे था [illegible] समय के साथ-साथ यह शाही यन्त्र,जनता के लिए उपलब्ध [illegible] [illegible] भी प्रार्थना-पत्र का रूप अब भी क्राउन के नाम पर [illegible]

सन् १९३८ के बाद स्थिति पर्याप्त बदल चुकी है और अब न्यायालय अपने आदेश द्वारा वह कार्य कर सकता है जो कि पहले वह केवल लेख जारी करके ही कर सकता था। यह कहा जाता है कि हेबियस कार्पस की प्रक्रिया को स्थानीय सत्ताओं के विरुद्ध भी किया जा सकता है, यद्यपि उनके पास कोई जेल नहीं होती। उनके पास संरक्षण के लिए बालक होते हैं तथा संस्थाओं वाले अनेक वृद्ध व्यक्ति होते हैं। स्थानीय सरकार की दृष्टि से तीन प्रकार के लेख अधिक महत्वपूर्ण हैं। इनमें प्रथम लेख परमादेश (Mendamus) है। इसका अर्थ होता है 'हम आज्ञा देते हैं।' प्रारम्भ में इसका प्रयोग एक अधीनस्थ न्यायालय को किसी मामले पर विचार करने के लिए बाध्य करने के तरीके के रूप में किया जाता था। स्थानीय स्तर पर न्यायिक एवं प्रशासकीय कार्यों के बीच कोई अन्तर न होने के कारण इस लेख का प्रयोग सरकारी सत्ता को उसके किसी कर्तव्य को सम्पन्न कराने के लिए किया जा सकता है। इस लेख का अधिकार क्षेत्र इतना व्यापक नहीं है जितना कि लगता है। यदि किसी कर्तव्य के पालन में सम्बन्धित सत्ता को स्वेच्छा का अधिकार प्राप्त है तो उसके बारे में उस समय तक यह लेख जारी नहीं किया जायेगा जब तक स्वेच्छा की बुराई इस अधिकार के प्रयोग का ही उलंघन न कर दे। यदि किसी क्षेत्र में कर्तव्य न हो कर केवल शक्ति है तो वहा परमादेश का लेख जारी नहीं किया जा सकता। जब इस लेख को जारी करने के लिए प्रार्थना की जाती है तो यह जरूरी है कि प्रभावित कर्तव्य सार्वजनिक हित में हो और प्रार्थी के व्यक्तिगत हित में भी। इन सभी सीमाओं के होने के कारण परमादेश का प्रयोग स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं को नियन्त्रित करने के लिए बहुत कम किया गया।

एक अन्य लेख जिसके द्वारा स्थानीय संस्थाओं के प्रशासकीय कार्यों की पुनरीक्षा की जा सकती है वह प्रतिरोध या उत्प्रेषण (Prohibition or Certiorari) लेख है। प्रतिरोध का लेख एक अधीनस्थ न्यायालय को ऐसा कार्य करने से रोकने के लिए दिया जाता था जो कि उसके अधिकार क्षेत्र से बाहर है। उत्प्रेषण लेख (Certiorari Writ) इसके लिए जारी किया जाता है ताकि अधीनस्थ न्यायालय की कार्यवाही को राजा की बैंच में मगाया जा सके तथा उसकी छानबीन की जा सके। छानबीन करते समय यह देखा जाता था कि क्या अधीनस्थ न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र में रहकर कार्य कर रहा था और क्या वह उन सिद्धान्तों के अनुसार कार्य कर रहा था जो कि एक न्यायिक प्रक्रिया में अपनाये जाने चाहिए। इन दोनों प्रकार के लेखों में समय का अन्तर है। प्रतिरोध लेख को उस समय जारी किया जाता है जब कि अधीनस्थ न्यायालय ने अपनी कार्यवाही प्रारम्भ नहीं की है अथवा उसमें कार्यवाही चल रही है किन्तु उत्प्रेषण लेख उस समय जारी किया जाता है जब कि अधीनस्थ न्यायालय निर्णय ले चुका होता है। स्थानीय स्तर पर न्याय के न्यायाधीशों के न्यायिक एवं प्रशासकीय कार्यों में कोई अन्तर नहीं किया गया था इसलिए वहां भी इन लेखों को जारी करने की परम्परा अपनाई गई। सिद्धान्त के अनुसार इन उपचारों को प्राय: वहीं अपनाया जाता है जहां कि क्रिया को न्यायिक या अर्धन्यायिक कहा जा सके। जब एक स्थानीय सत्ता रेट (Rate) की एक निश्चित मात्रा तय कर देती है

तो यह एक ऐसा निर्णय है जो कि जनता के अधिकार को प्रभावित करता है, क्योंकि उसे स्तर पर रेट देना जरूरी हो जाता है।

जब स्थानीय सत्ता द्वारा रेट की मात्रा निश्चित की जाती है तो वह ऐसा करते समय कानूनन व्यवहार करती है अर्थात् वह बैठक बुलाने, मतदान करने एव ऐसे ही अन्य कार्य करने मे नियमो के अनुसार चलती है। साथ ही वह इस सामान्य सिद्धान्त का भी ध्यान रखती है कि घाटे का या अनिशय का बजट न बनाया जाए। इस प्रकार स्पष्ट है कि रेट निर्धारण के कार्य को न्यायिक या अर्धन्यायिक नही कहा जा सकता और इसलिए उसके सम्बन्ध मे कोई लेख जारी नही कर सकते किन्तु कई बार स्थानीय सत्ताओ द्वारा न्यायिक प्रकृति के कार्य भी सम्पन्न कर दिये जाते है और ऐसी स्थिति मे न्यायालय हस्तक्षेप कर सकते हैं। उदाहरण के लिए एक बार लन्दन काउन्टी परिषद ने, जो कि सिनेमाओ के लिए लाईसेन्स देने की सत्ता रखती थी, रविवार को सिनेमा खोलने का लाईसेन्स दे दिया। न्यायालय का दृष्टिकोण था कि जब स्थानीय सत्ता लाईसेन्स से सम्बन्धित किसी प्रार्थनापत्र पर विचार करती है तो वह न्यायिक रूप मे कार्य करती है। ऐसी स्थिति मे जब न्यायालय के सम्मुख उत्प्रेषण के लिए प्रार्थना पत्र दिया गया तो न्यायालय ने इस बात की जाच की कि स्थानीय सत्ता को रविवार को सिनेमा खोलने का लाईसेन्स देने का अधिकार था अथवा नही। विचार करने के बाद इसने यह निर्णय लिया कि ऐसी कोई शक्ति उसे प्राप्त नही है और इसलिए परिषद का निर्णय रद्द कर दिया गया क्योंकि यह उसके अधिकार क्षेत्र म नही आता था।

यदि न्यायालय स्थानीय सत्ता द्वारा लिए गए किसी विशेष निर्णय को न्यायिक या अर्धन्यायिक माने तो वह उस प्रक्रिया की जाच करेगा जिसके द्वारा निर्णय लिया गया है। ऐसी स्थिति में न्यायालय स्थानीय सत्ता के निर्णय को न केवल इस आधार पर रद्द कर सकता है कि वह उसके अधिकार क्षेत्र मे नही था वरन् इसके लिए वह प्रक्रिया सम्बन्धी नियन्त्रण भी लागू कर सकता है। जब कोई स्थानीय सत्ता इस प्रकार के निर्णय ले तो उसे एक पचालय (Tribunal) की भाति न्यायाधिकरण के मौलिक सिद्धान्तों को मानना होगा जो कि सामान्यत: प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्त कहे जा सकते हैं। ये मुख्य रूप से दो हैं। प्रथम, एक व्यक्ति को स्वय के मामले मे न्यायाधीश नही बनाया जाना चाहिए। जब कभी ऐसा प्रतीत हो कि एक न्यायिक निकाय या उसका कोई सदस्य किसी भी पक्ष के बारे मे पक्षपात कर सकता है तो उस निकाय या उस व्यक्ति को मामले की सुनवाई नही करनी चाहिए। न्यायधिकरण करने वाले लोगो को यह ज्ञात होना चाहिए कि वित्तीय स्वार्थ, सम्बन्ध, निकायो की सदस्यता एव अन्य बहुत सी बातें पक्षपात की परिधि मे आती हैं। पक्षपात का अर्थ केवल यह नहीं होता कि किसी व्यक्ति ने अपने स्वार्थ से प्रभावित होकर कार्य किया है। किन्तु इसका वास्तविक अर्थ यह है कि एक व्यक्ति को उस समय न्यायाधिकरण मे भाग नही लेना चाहिए जब कि वह यह सोचता हो कि उस स्वार्थ के कारण वह पक्षपातपूर्ण हो सकता है। न्याय का एक अन्य प्राकृतिक

नियम यह है कि किसी व्यक्ति को बिना उसकी सुनवाई किए दोषी नहीं ठहराना चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रभावित व्यक्ति को प्रक्रियाओं की पूरी जानकारी दे दी जाए तथा उसे अपना पक्ष प्रस्तुत करने का पूरा अवसर दिया जाए। लिखित प्रतिनिधित्व के ऊपर भी निर्णय लिया जा सकता है। यह जरूरी नहीं है कि पक्षों की मौखिक सुनवाई ही की जाए किन्तु इतना अवश्य है कि जो भी तरीका अपनाया जाए, उसमें दोनों ही पक्षों के साथ समानता बर्ती जाए।

ये सभी प्राचीन प्रक्रियाएं हैं जिनके द्वारा न्यायिक पुनरीक्षा की जा सकती है किन्तु कोई भी व्यक्ति उनके सम्बन्ध में निश्चित नहीं है तथा इनकी सीमाओं के बारे में स्पष्ट नहीं है। सच तो यह है कि जब कभी न्यायाधीश यह चाहें कि वे किसी प्रशासकीय निकाय की क्रियाओं में हस्तक्षेप करें तो वे यह कहते हैं कि प्रक्रिया किसी न किसी प्रकार से न्यायिक थी। ऐसा होने पर वे प्रतिरोध या उत्प्रेषण का लेख जारी कर सकते हैं किन्तु न्यायाधीश किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करना चाहें तो वे यह कह सकते हैं कि निर्णय शुद्ध रूप से प्रशासकीय है और उपचारों की सीमा में नहीं आता। अमल में न्यायिक नियन्त्रण के विषयों में न्यायालयों को पहल करने का अधिकार नहीं है और वे केवल तभी कार्यवाही करते हैं जब कि स्थानीय सत्ता से हानि दुखित कोई व्यक्ति कानूनी कार्यवाही करने का प्रयास करता है। स्थानीय सत्ताओं के कार्यों को स्वार्थ रखने वाले दलों द्वारा निरीक्षित किया जाता है और ऐसी स्थिति में सत्ताओं को कोई भी नई नीति अपनाते समय अथवा किसी नई क्रिया में उलझते समय बहुत सजग रहना पड़ता है। कुछ मामलों में कानूनी प्रक्रियाएं सामान्य जनता की ओर से अटार्नी जनरल द्वारा की जा सकती हैं।

छठे, कई विषयों में व्यवस्थापन द्वारा स्थानीय सत्ता के निर्णय के विरुद्ध न्यायालय में अपील करने की व्यवस्था की जाती है। अपील करने का यह कोई सामान्य अधिकार नहीं है। यह केवल कुछ विषयों में प्राप्त एक विशेष अधिकार है। जहां कहीं व्यवस्थापन द्वारा अपील के ये अधिकार प्रदान किए जाते हैं वहां उद्देश्य यह होता है कि न्यायालय अनेक ऐसे विषयों पर विचार करे जिन पर कि स्थानीय संस्था पहले ही कर चुकी है। न्यायालय इन विषयों की दुबारा सुनवाई करता है और योग्यता के आधार पर अपना निर्णय देता है। कई एक कानूनों ने स्थानीय काउन्टी न्यायालय को अपील का अधिकार दिया है। उदाहरण के लिए जब स्थानीय सत्ता किसी स्वास्थ्यप्रदारक घर की मरम्मत के लिए या इसको समाप्त करने के लिए या इसे बन्द करने के लिए आज्ञा प्रसारित करे तो सम्पत्ति के स्वामी को यह अधिकार है कि वह काउन्टी न्यायालय में अपील कर सके। ऐसी स्थिति में पूरे प्रश्न पर पूर्ण रूप से विचार किया जाएगा और परिणामस्वरूप न्यायाधीश का दृष्टिकोण स्थानीय सत्ता के दृष्टिकोण से अधिक महत्वपूर्ण माना जाएगा। यह प्रक्रिया केवल एक घर के सम्बन्ध में अपनाई जा सकती है किन्तु विषयों का सम्बन्ध खराब घरों के क्षेत्र से हो तो उनकी योजना स्वीकृति के लिए मन्त्री के पास जाती है और उसके विरुद्ध न्यायालयों में अपील नहीं की जा सकती।

न्यायिक नियन्त्रण का प्रभाव
[The Effect of Judicial Control]

स्थानीय सत्ताओं के विभिन्न कार्यों की न्यायिक नियन्त्रण की जो व्यवस्था की जाती है उसका एक व्यापक प्रभाव होता है। कानूनी प्रक्रिया के जिन विभिन्न रूपों की व्यवस्था की गई है उनके परिणामस्वरूप किसी कार्य को प्रस्तावित कार्य की वैधानिकता को न्यायालय में जाचा जा सकता है। कानूनी प्रक्रिया के विशेष रूप का चयन एक तकनीकी प्रश्न होता है जिस पर निर्णय लेने के लिए विशेषज्ञों के कानूनी परामर्श की सदैव आवश्यकता रहती है। एक विशेष प्रश्न के सम्बन्ध में निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि परमादेश या आदेश या घोषणा करने के उपचारों में से किस को अपनाया जाए। मुख्य बात यह है कि किसी न किसी प्रकार से वैधानिकता के प्रश्न को उठाया जा सकता है, किन्तु यह जानना अत्यन्त कठिन है कि वैधानिकता के नाम पर न्यायालय कितना नियन्त्रण रख सकते हैं। न्यायिक नियन्त्रण की प्रक्रिया में शब्दों की व्याख्या का प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। इसके सम्बन्ध में अलग-अलग प्रकार के मत व्यक्त किए जाते हैं। उन मतों में से सही कौनसा है, इसका निर्णय करना एक महत्वपूर्ण समस्या होती है। यह समस्या अपरिहार्य है। नियमों को अभिव्यक्त करने के लिए शब्द काम में लाए जाते हैं और शब्दों को चाहे कितनी ही सावधानी से अपनाया जाए किन्तु वे उन परिस्थितियों पर लागू नहीं हो पाते जिनकी कल्पना कानून बनाते समय नहीं की जाती थी।

शब्दों के अतिरिक्त जब हम स्थानीय सत्ता द्वारा प्रयुक्त शक्तियों पर विचार करते हैं तो हम यह पाते हैं कि न्यायालय द्वारा व्यवस्थापन की परिभाषा उस रूप में की जाती है जिस रूप में कि वह असल में नहीं है। इसके पक्ष में एक वैधानिक तर्क यह दिया जाता है कि कानून का एक सामान्य नियम यह है कि जब एक सरकारी सत्ता अपनी किसी शक्ति का प्रयोग करे तो उसे अच्छे विश्वास से, बुद्धिपूर्ण तरीके से तथा उद्देश्य के लिए ऐसा करना चाहिए जिसके लिए कि वह शक्ति प्राप्त हुई है। व्यवस्थापन को कानून के सामान्य रूप में समायोजित होना चाहिए। किन्तु यह समायोजन क्या है और किस शक्ति का प्रयोग अच्छे विश्वास, बुद्धिपूर्ण तरीके तथा प्रदत्त सीमाओं के अन्तर्गत हो रहा है अथवा नहीं, इस बात का पता कैसे लगाया जाए—यह एक मुख्य समस्या है जो कि स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र में न्यायालयों की शक्ति को बढ़ा लेती है। मि० आर० एम० जैक्सन (R. M. Jackson) ने लिखा है कि उपयुक्तता के इन सिद्धान्तों के माध्यम से न्यायालय स्थानीय सत्ताओं की क्रियाओं पर बहुत अधिक नियन्त्रण रख सकते हैं किन्तु न्यायालयों ने असल में पर्याप्त उदारता दिखाई है। *

---

*"Through these doctrines of reasonableness it would be possible for the courts to exercise a large amount of control over the activities of local authorities, but in fact the courts have shown great moderation."
—*R. M. Jackson*, op. cit., P. 234.

स्थानीय सरकार से सम्बन्धित अधिकांश लोग यह अनुभव करते हैं कि न्यायिक नियन्त्रण को स्थानीय सत्ताओं के विरुद्ध अधिक भार प्रदान किया गया है। यह मत तथ्यों को देखने पर कुछ सही भी प्रतीत होता है। इसका कारण यह है कि यदि हम उन तथ्यों का अध्ययन करें जिनमें कि स्थानीय सत्ता की शक्तियों पर न्यायिक नियन्त्रण रखा गया था तो हम पाएंगे कि न्यायालय स्थानीय सत्ता के विरुद्ध उसके पक्ष में निर्णय लेने की अपेक्षा अधिक रुचि लेते हैं। कुछ लेखकों के कथनानुसार जब न्यायालय सार्वजनिक सत्ताओं के सम्बन्ध में विचार करते हैं तो वे न्यायिक पक्षपात से काम करते हैं। इस सम्बन्ध में एक अन्य कठिनाई यह भी है कि वकील कानून की एक ऐसी परम्परा में विकसित होते हैं जो कि मुख्य रूप से अतीतकालीन है। अधिकांश आधुनिक कानून समस्तिवादी हैं और वे समाज के ऐसे संगठन से सम्बन्धित हैं जो कि अनियमित अवस्था की अपेक्षा अधिक संतोषजनक अवस्थाएं प्राप्त कर सके। इस दृष्टि से जनता की सम्पत्ति के सम्बन्ध में अधिक विनियमन होता है। कुल मिला कर यह व्यवस्था आय, शिक्षा, गृह-निर्माण तथा जीवन के अन्य विभिन्न पहलुओं में जो परिवर्तन लाती है, वह मुख्य रूप से समाजवादी है किन्तु कानून परम्परागत रूप से पूर्णतः व्यक्तिवादी होता है। अतीत काल में कानूनवेत्ताओं की मुख्य लड़ाइयां राजा और उसकी सरकार के विरुद्ध की गई थीं। वकीलों ने सरकार सत्ता के प्रति अविश्वास को परम्पराओं से प्राप्त किया है। असल में कानून वेत्ताओं के दिलों में एक वर्ग भावना पैदा हो जाता है।

वस्तु स्थिति को देख कर कई एक लोग यह निर्णय देते हैं कि इस विरोधाभास है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि न्यायिक नियन्त्रण प्रायः स्थानीय सत्ता को वह कार्य करने से रोक देता है जो कि स्थानीय दृष्टि से वाञ्छनीय है तथा उसे करना अत्यन्त अनिवार्य है। न्यायालयों की प्रवृत्ति यह रही है कि स्थानीय सत्ताओं के कार्यों पर सीमा लगाई जाए। वे उसके कार्यों का प्रसार नहीं देख सकते। कई बार बड़ा अटपटा लगता है कि न्यायालय बेकार की बातों पर बहस करने में अपना समय नष्ट करते हैं। उदाहरण के लिए एक बार न्यायालय ने यह विचार किया कि बर्मिंघम नगर को क्या उसी रूप में बसों का प्रयोग करना चाहिए जैसे कि वह कर रहा है। पर्याप्त विचार करने के बाद न्यायालय इस निर्णय पर आया कि उसे कानून द्वारा ऐसा करने की शक्ति नहीं है। न्यायालय के इस व्यवहार ने एक ऐसी स्थिति उत्पन्न करदी जिसमें कि बर्मिंघम तथा अन्य स्थानों को स्वतन्त्र एवं विशेषतः सस्ते यातायात की व्यवस्था की स्वीकृति देने के लिए नया कानून पास किया जाए। यह कठिनाई तथा परेशानी होते हुए भी न्यायालय का नियन्त्रण भी आवश्यक बन जाता है क्योंकि निगम को अपना धन केवल उन्हीं कार्यों में खर्च करना होता है जो कि कानून द्वारा स्वीकृत हैं। वह समाज के किसी भी विशेष वर्ग का उस समय तक पक्षपात नहीं कर सकता जब तक कि उसे ऐसा करने की स्पष्ट रूप से कानूनी शक्ति प्राप्त न हो। असल में न्यायिक नियन्त्रण का व्यवहार स्थानीय सरकार की व्यवस्था में अपनी गहरी जड़ें रखता है, उससे बचा नहीं जा सकता और न ही हम बुद्धिपूर्वक यह आश

कर सकते हैं कि न्यायाधीश अपनी विशेषताओं को बदल लेंगे। इस सम्बन्ध मे केवल यही किया जा सकता है कि स्थानीय सरकार से सम्बन्धित कानून को अधिक से अधिक सामयिक बनाया जाए। साथ ही सामान्य व्यवस्थापन द्वारा स्थानीय कानूनो की शक्तियो को भी बढाया जाए। न्यायालयो को स्थानीय सरकार के क्षेत्र मे नियन्त्रणकारी शक्तिया प्रदान करना जरूरी होता है क्योकि हो सकता है कि जनता कानून को समझ न सके और यदि वह समझ भी ले तो उसका पालन न करे। अत. ऐसी स्थिति मे न्यायालयो को कानून की व्याख्या करने एव उसका उलघन करने वालो को सजा देने का अधिकार दिया जाता है।

प्रशासकीय नियत्रण [Administrative Control]—वर्तमान काल मे स्थानीय सेवायें राष्ट्रीय महत्व का विषय बन गई है तथा स्थानीय सत्ताओ द्वारा उन सेवाओ पर जो व्यय किया जाता है उसका अधिकाश भाग ससद प्रदान करती है। ऐसी स्थिति मे स्थानीय क्रियाओं पर केन्द्र का नियन्त्रण स्वाभाविक एव अपरिहार्य रहेगा। यह नियत्रण इतना व्यापक बनाया जा सकता है कि वह स्थानीय स्वार्थ एव पहल को ही समाप्त कर दे किन्तु यह प्रजातन्त्रीय स्थानीय सरकार के हित मे समझा जाता है कि नियत्रण कम से कम रखा जाये। प्रजातन्त्रात्मक मूल्यो की रक्षा के लिए प्रशासन की कुशलता एव सरकार की एकरूपता को भी बलिदान किया जा सकता है। केन्द्रीय नियत्रण का प्रसार एक ही समय मे नही हो गया वरन् यह धीरे-धीरे क्रमिक गति से हुआ है। उन्नीसवी शताब्दी [illegible] शान्ति के न्यायाधीश स्थानीय सरकार के मुख्य व्यक्तित्व होते थे, वे अनेक कार्यो को अपने रूप मे करने के लिए स्वतन्त्र थे। जब १८३४ मे निर्धन अधिनियम मे सशोधन किया गया तो कुछ मात्रा मे केन्द्रीय नियत्रण को लागू किया गया, किन्तु १८३५ के नगर निगम अधिनियम ने केन्द्रीय नियत्रण की ओर थोडा ही ध्यान दिया था। १८४८ के जन स्वास्थ्य अधिनियम द्वारा केन्द्रीय नियत्रण के प्रसार का कुछ प्रयास किया गया किन्तु जनमत केन्द्रीय नियत्रण के पक्ष मे नही था। समय के साथ-साथ ज्यो-ज्यो केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय म [illegible] को दिये जाने वाले अनुदान की मात्रा बढती गई, त्यो-त्यो उसके निय [illegible] का भी प्रसार होता चला गया। अनुदान व्यवस्था आज भी स्थानीय सत्ताओ की क्रियाओं को नियत्रित करने का महत्वपूर्ण साधन है।

प्रशासकीय नियत्रण के प्रायः अनेक रूप होते हैं, किन्तु इनमे से प्रत्येक रूप कानूनी सत्ता पर आधारित रहता है। जब कभी केन्द्रीय नियत्रण के प्रसार का अध्ययन किया जाय तो यह देखना उपयोगी रहेगा कि कानून द्वारा कौन-कौन सी शक्तिया सौंपी गई हैं। ये शक्तिया केन्द्र सरकार या व्हाइट हॉल (White Hall) को दी जाती हैं किन्तु कानून एवं व्यावहारिक दृष्टि से ये शक्तिया किसी विशेष मत्री को सौंपी जाती हैं। किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नही होता कि स्थानीय सरकार से सम्बन्धित समस्त शक्तिया उसी को सौंप दी जाती हैं। शिक्षा [illegible] सम्बन्धित शक्तिया शिक्षा मत्री को दी जाती हैं और इसी का[illegible] स्वास्थ्य से सम्बन्धित सेवायें स्वास्थ्य मंत्री को सौंपी जाती हैं।

प्रशासकीय नियंत्रण के रूप:—सरकारी विभागों द्वारा स्थानीय सत्ताओं पर जो नियन्त्रण रखा जाता है, उसके कई रूप हो सकते है जिनका संक्षिप्त अध्ययन केन्द्रीय नियंत्रण के अध्ययन को सार्थक बनाने की दृष्टि से उपयोगी रहेगा।

(१)प्रशासकीय नियंत्रण का प्रथम रूप सामान्य नियंत्रण (General Supervision) है। केन्द्रीय विभागों को कानून द्वारा उनके अधिकार क्षेत्र में आने वाली सेवाओं की कार्यकुशलता के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है। संसद द्वारा कुछ मन्त्रियों को स्थानीय सत्ताओं पर सामान्य एवं प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण रखने का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है। उदाहरण के लिए स्वास्थ्य मन्त्रालय को इंगलैण्ड तथा वेल्स की जनता के स्वास्थ्य को सुधारने के लिए स्थापित किया गया है, गृह विभाग को पुलिस प्रशासन के लिए संगठित किया गया है। इसी प्रकार १९४४ के शिक्षा अधिनियम ने शिक्षा मन्त्रालय को यह दायित्व सौंपा है कि वह इंगलैण्ड तथा वेल्स के लोगों की शिक्षा को प्रोत्साहन दे तथा इस लक्ष्य में संलग्न संस्थाओं का प्रगतिशील विकास करे। वह प्रत्येक क्षेत्र में भिन्न रूप एवं व्यापक शिक्षा सेवायें प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय नीति को उन स्थानीय सत्ताओं द्वारा क्रियान्वित कराये जो कि उसके नियन्त्रण एवं निर्देशन में है। इस प्रकार शिक्षा मंत्री को स्थानीय कार्यों में हस्तक्षेप करने का स्पष्ट अधिकार सौंपा गया है। जहां कानून द्वारा किसी मन्त्री को स्पष्ट रूप से स्थानीय कार्यों में हस्तक्षेप करने की शक्तियां नहीं सौंपी गई हैं वहां भी प्राय: यह प्रवृत्ति देखी जाती है कि मन्त्री गण अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाले कार्यों में हस्तक्षेप करते हैं। वे उनको सौंपी गई सेवाओं के लिए सामान्य रूप से उत्तरदायी होते हैं और इसलिए पथप्रदर्शक, दार्शनिक, मित्र एवं प्रोत्साहन कर्ता के रूप में शक्तियों के स्थानीय स्तर पर क्रियान्विति के लिए उत्तरदायी सत्ताओं को सहयोग प्रदान करते हैं। इस रूप में उनकी प्रवृति को उनके द्वारा वार्षिक रूप से दिये जाने वाले प्रतिवेदनों एवं अवसरगत विशेष प्रतिवेदनों में देखा जा सकता है।

मन्त्रालय द्वारा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों की सिफारिशें स्थानीय सत्ताओं को भेजी जाती हैं ताकि उनको समय के अनुकूल बनाये रखा जा सके। यह भी व्यवस्था की गई है कि विभाग स्थानीय सत्ताओं को उनके कार्यों की सूचना एवं प्रतिवेदन प्रस्तुत करने को कह सके। केन्द्रीय विभाग समय-समय परामर्शपूर्ण एवं स्पष्टीकरणपूर्ण पत्र या आदेश भी स्थानीय सत्ता को भेजते रहते हैं। जब सभी स्थानीय सत्ताओं से उनकी प्रगति एवं कार्य से सम्बन्धित सांख्यिकी प्राप्त हो जाती है तो उसका तुलनात्मक रूप में अध्ययन किया जाता है और कुछ मुख्य महत्वपूर्ण निर्णय लिए जाते हैं। आवश्यकता के समय स्थानीय सत्ता को केन्द्रीय सरकार द्वारा परामर्श एवं निर्देशन प्रदान किया जाता है। स्थानीय समस्याओं के सम्बन्ध में जांच समितियां अथवा परामर्शदाता निकाय गठित किये जाते हैं। कई एक स्थानीय सत्ताओं के व्यय का विश्लेषण किया जाता है तथा इसे प्रकाशित किया जाता है। केन्द्रीय विभाग द्वारा इस बात की भी पूरी निगरानी की जाती है कि उसने जो परामर्श दिया है अथवा नहीं। व्यवस्थापन

किया गया है उसका स्थानीय सत्ता पर क्या और कितना प्रभाव पडा ? अपने निरीक्षण के आधार पर ही वह नवीन नीतिया तय करता है । स्थानीय सत्ता को इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप कभी-कभी दबना पडता है तथा अपनी स्वेच्छा के अधिकारो को सीमित करना होता है किन्तु असल मे यह कई बार उनके लिए अत्यन्त उपयोगी भी सिद्ध होता है । स्थानीय सत्ता समय पर तुरन्त उच्च श्रेणी की सूचना प्राप्त कर पाती है जिसे वैसे प्राप्त करने के लिए पर्याप्त धन खर्च करना होता है । प्रोफेसर फाईनर लिखते हैं कि इस सबके परिणामस्वरूप स्थानीय प्रशासन मे सुधार हुआ है, केन्द्रीय सत्ताओ का ज्ञान बढ़ा है, स्थानीय सत्ताओ का तथा उनको केन्द्रीय विभागों की ओर ऐसे सहायक के रूप मे देखने को प्रेरित किया है जो कि स्थानीय सरकार मे सुधार से सम्बन्धित है ।*

जब कभी स्थानीय सत्ता अपनी शक्तियो का प्रसार करने के लिए विधेयक रखना चाहती है तो ऐसा करने से पूर्व मन्त्री की स्वीकृति लेना अनिवार्य होता है । जब तक गृह एव स्थानीय सरकार मन्त्री की स्वीकृति न ली जाये उस समय तक इस प्रकार के विधेयक को आगे नही बढाया जा सकता । विधेयक पर विचार कर लेने के बाद भी मन्त्री उस पर सामान्य पर्यवेक्षण रख सकता है । वह चाहे तो ससद मे उस विधेयक के प्रस्तावो की उपयोगिता पर भाषण दे ।

(२) केन्द्रीय विभागो को स्थानीय सत्ताओ से सम्बन्धित वित्तीय नियन्त्रण के व्यापक अधिकार प्राप्त हैं । केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार है कि वह सामान्य अनुदानो के भुगतान को कम कर दे या बन्द करदे । इस शक्ति के कारण केन्द्रीय सत्ता स्थानीय सरकार पर अत्यन्त दबाव का प्रयोग कर सकती है । तथ्यपूर्ण अध्ययन के आधार पर यह ज्ञात होता है कि स्थानीय सरकार की सेवाओ का लगभग आधा भाग सहायता अनुदान द्वारा दिया जाता है । जब केन्द्रीय सरकार को यह शक्ति प्रदान कर दी गई है कि वह अपनी इच्छानुसार कभी भी इस सहायता अनुदान को रोक दे या कम करदे तो स्पष्ट है कि वह स्थानीय मामलो मे महत्वपूर्ण रूप से हस्तक्षेप कर सकती है । इस सम्बन्ध मे कोई कदम उठाने से पूर्व केन्द्रीय सरकार पहले यह निर्णय लेती है कि क्या स्थानीय सत्ता सेवा के कम से कम स्तर को बनाए रखने मे असफल रही है अथवा उसको दी जाने वाली सहायता की मात्रा बहुत अधिक या अबुद्धिपूर्ण है । यह नियन्त्रण का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपाय है । इसका अस्तित्व ही पर्याप्त प्रभावशील रहता है तथा इसका प्रयोग करने की आवश्यकता ही उत्पन्न नही होती । आर० एम० जैकसन महोदय लिखते हैं कि इस शक्ति को सुरक्षित के रूप मे प्रयुक्त करना

---

*"All this improves local administration, adds to the knowledge of the central authorities, evokes the gratitude of the local authorities, and leads them to look to the Central Department as benevolently concerned with the improvement of Local Government."

—*Herman Finer*, Op. cit., P. 303.

चाहिए और इसका प्रयोग करते समय संसद की राय जानना जरूरी होता है।*

(३) केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय सत्ताओं पर एक अन्य नियन्त्रण उनकी कर्ज लेने की शक्ति पर रखा जाता है। स्थानीय सत्ताओं को यह अधिकार है कि वे नए कार्यों जैसे स्कूलों एवं गृह-निर्माण पर, जिसका कि एक लम्बा जीवन होता है और जिससे प्राप्त होने वाला फायदा भविष्य में मिलने वाला है, होने वाले खर्चे की व्यवस्था कर्ज लेकर कर सकती है। प्राय: ऐसा होता है कि जब कभी स्थानीय सत्ता कर्ज लेना चाहे तो उसे ऐसा करने के लिए गृह-निर्माण एवं स्थानीय सरकार मन्त्री की स्वीकृति लेनी होती है। इस प्रकार मन्त्री को परिषद की प्रमुख नीति पर पर्यवेक्षण रखने का विस्तृत अधिकार रहता है। यह पर्यवेक्षण छोटी सत्ताओं के सम्बन्ध में अधिक जरूरी होता है क्योंकि वे अधिक योग्य स्टाफ की नियुक्ति नहीं कर सकती। जब कभी किसी कार्यक्रम की वित्तीय व्यवस्था के लिए आवश्यक कर्ज पर मन्त्री की स्वीकृति प्राप्त की जाती है तो इस अवसर पर मन्त्रालय के योग्य विशेषज्ञ उस प्रोजेक्ट की देखभाल करते हैं। यह तर्क दिया जाता है कि बड़ी स्थानीय सत्ताओं को बिना मन्त्री की स्वीकृति के ही कर्ज लेने की अनुमति प्रदान की जानी चाहिए। वर्तमान प्रवृत्ति के अनुसार स्थानीय सत्ताएं पूंजीगत व्यय के अपने छोटे विषयों का प्रबन्ध साधारण आय द्वारा कर लेते हैं और इसलिए उनको कर्ज लेने की जरूरत नहीं होती तथा साथ ही मन्त्री का हस्तक्षेप भी हट जाता है।

स्थानीय सत्ताओं पर उनकी कर्ज लेने की शक्ति की दृष्टि से केन्द्रीय द्वारा दो प्रकार से नियन्त्रण रखा जाता है। प्रथम, ये सत्ताएं केवल कुछ नियमों के अनुसार ही कर्ज ले सकती हैं जिसमें कि उसके उद्देश्य को परिभाषित किया जाता है तथा भुगतान का अधिक से अधिक समय भी बता दिया जाता है और दूसरे, केन्द्रीय विभागों द्वारा कार्यक्रम एवं कर्ज के आधार को स्वीकृति दी जाती है तथा उसके भुगतान के समय में भी वह स्वेच्छापूर्ण शक्तियों का प्रयोग करता है। कर्ज के सम्बन्ध में स्वीकृति देने की सत्ता मुख्य रूप से स्वास्थ्य मन्त्रालय में निहित होती है, यद्यपि अन्य विभागों द्वारा भी इस पर सामान्य अधीक्षण रखा जाता है। यहां दो बातें मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं। प्रथम यह कि कर्ज की अनुमति देने की शक्ति एक ही विभाग में केन्द्रित कर दी गई है और दूसरे यह कि कुछ सामान्य सिद्धान्त अपनाए गए हैं जिनके आधार पर केन्द्रीय विभाग स्वीकृति देने अथवा रोकने का कार्य करते हैं। एक विभाग में इस शक्ति को केन्द्रित करने के पक्ष में बताते हुए स्वास्थ्य मन्त्रालय ने कहा कि कर्ज की स्वीकृति देने की शक्ति एक विभाग में केन्द्रित करने के पीछे पर्याप्त संगत कारण है क्योंकि यही एक

---

*"It should be regarded as being is reserve and its use is subject to very important safe-guard of the matter having to be brought before parliament."

—P M Jackson Op cit . P २१९.

जा सकता है कि काउन्टी एवं गैरकाउन्टी बारोज को आडिट से छुटकारा क्यों दिया गया है तथा जहां कहीं केन्द्रीय सत्ता को आडिट की शक्तियां प्राप्त है, उसके सिद्धांत, व्यवहार एवं समस्याएं क्या होती है ?

प्रायः सभी स्थानीय सत्ताएं अपने लेखो को ३१ मार्च तक तैयार कर देती हैं तथा उन पर जिला आडिटर का आडिट प्रारम्भ हो जाता है। जिन बारोज को छूट दी गई है, उनके वार्षिक लेखो को स्थानीय रूप से निर्वाचित आडिटर द्वारा आडिट किया जाता है। यदि जिला आडिटर यह देखे कि किए गए खर्च की कोई मद कानूनी नही थी तो यह उस मद को खर्च करने की अनुमति देने वाले परिषद सदस्यो को, किया गया खर्च अपने जेब से देने के लिए कह सकता है अर्थात वह उनसे खर्च को वापस माग सकता है। वह किसी ऐसे अधिकारी से भी खर्च को देने के लिए कह सकता है जिसने कि खर्च करने मे प्रमादवधानी बर्ती है या उसे गलत रूप से काम मे लिया है। कानून के अनुसार ऐसी स्थिति मे खर्च को वसूल नही किया जाता जब कि खर्च करने से पूर्व गृह एवं स्थानीय सरकार-मन्त्री की स्वीकृति ले ली गई हो। इस प्रकार जब कभी स्थानीय परिषदो को व्यय की किसी मद के बारे मे कोई भी सन्देह होता है तो वे सामान्य रूप से मन्त्री की स्वीकृति प्राप्त कर लेती हैं। इस तरीके से मन्त्री व्यय पर अप्रत्यक्ष रूप से नियन्त्रण रखता है।

काउन्टी बारोज और गैर-काउन्टी बारोज को केन्द्रीय आडिट से मुक्त रखने के कारण का वर्णन करते हुए प्रोफेसर हरमन फाईनर ने बताया है कि ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि जब सन् १८३५ मे गैर-काउन्टी बारोज का सुधार किया गया तो प्रजातन्त्रात्मक भावनाओ का प्रभाव पूरे जोर पर था। उस समय यह विश्वास किया गया कि प्रशासन की पवित्रता को सुरक्षित रखने के लिए चुनाव ही पर्याप्त रहेगे। चुनावो के द्वारा जो वायदे किये जाते हैं तथा धमकियां दी जाती हैं, उनके द्वारा लेखो को शुद्ध रखा जा सकता है। उस समय का जनमत इस बात की माग करता था कि बारोज को केन्द्रीय आडिट से मुक्त रखा जाए।

केन्द्रीय आडिट व्यवस्था का स्थानीय सत्ताओ पर पर्याप्त महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। पिछले दस वर्षों मे एक दो मामले ऐसे आए जिनको कि भावनात्मक दृष्टि से पर्याप्त महत्वपूर्ण माना गया। आडिटर को सामाजिक सुधारको द्वारा एक ऐसा व्यक्ति समझा जाता है जो कि पर्याप्त अशान्ति फैला सकता है और बड़े-बड़े विकल्प स्थापित कर सकता है। वह असल मे एक शक्तिशाली व्यक्ति होता है। स्वास्थ्य मन्त्रालय के वार्षिक प्रतिवेदन को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उसके द्वारा जो कार्य सम्पन्न किए जाते हैं वे क्रान्तिकारी प्रकृति के हैं। स्थानीय सत्ताओ को सदैव यह डर रहता है कि कहीं उनसे धन वसूल न किया जाए। इसलिए वे प्रायः संदिग्ध खर्चे को करने से पूर्व आडिटर से भली प्रकार विचार-विमर्श कर लेती हैं। ज्यो-ज्यो समय गुजरता गया, आडिटरों ने यह अनुभव किया कि व्यय में होने वाली गलतियां कम होती चली जाती हैं।

आडिट की व्यवस्था के व्यापक महत्व के परिणामस्वरूप कोई भी यह नहीं चाहता कि उसको पूरी तरह से समाप्त किया जाए। कुछ लोग आन्तरिक आडिट की व्यवस्था को प्राथमिकता देते हैं किन्तु अधिकांश का विचार है कि यह आन्तरिक आडिट निरन्तर रूप से खर्चे की वैधानिकता पर नियन्त्रण नहीं रख पाएगा और इसलिए इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। यदि स्थानीय पारषद एवं अधिकारी पूरी तरह से ईमानदार होते और कानून से भली प्रकार परिचित होते तो सम्भवतः आडिट के लिए कोई स्थान नहीं होता। जिस मात्रा में इन चीजों की कमी रहती है, उसी मात्रा में आडिट अपरिहार्य बन जाता है। आडिट अपरिहार्य है, जरूरी है, उपयोगी भी है किन्तु यह सब होते हुए भी इसके अपने दोष हैं। प्रथम, इससे स्थानीय सत्ताओं की स्वतन्त्रता बाधित हो जाती है। दूसरे, प्रतिबन्धों की प्रकृति का निर्णय ऐसे न्यायाधीशों द्वारा किया जाता है जो कि प्रशासन में नहीं बल्कि कानून के व्यक्तिवादी सिद्धान्तों में प्रशिक्षित होते हैं जो कि राज्य समष्टिवाद की वर्तमान प्रकृति के प्रति रुचिहीन हैं। तीसरे, स्वास्थ्य मन्त्रालय द्वारा आडिटर को सामाजिक रूप से प्रगतिशील स्थानीय सत्ताओं के व्यय पर प्रश्न करने की शक्ति दी जा सकती है। सरकार के आडिटर द्वारा किया जाने वाला आडिट कुछ लेखकों के मतानुसार प्रशासकीय नियन्त्रण नहीं समझा जाना चाहिए। आडिटर अपनी व्यावसायिक तकनीकों का प्रयोग करते हुए यह देखता है कि किया जाने वाला व्यय क्या कानूनी रूप से उचित है तथा उसके करने की सत्ता प्रदान की गई है अथवा नहीं। आडिटर के निर्णय के विरुद्ध न्यायालय में अपील की जा सकती है। इसलिए इसको प्रशासकीय नियन्त्रण की अपेक्षा न्यायिक नियन्त्रण मानना अधिक उचित रहेगा।

(५) स्थानीय सत्ताओं पर नियन्त्रण रखने के लिए केन्द्रीय सरकार को यह शक्ति दी गई है कि वह उसकी विभिन्न समस्याओं के बारे में जाँच के लिए समिति नियुक्त कर सके। जब कभी एक स्थानीय सत्ता किसी कार्य के प्रस्ताव पर एक मन्त्री की स्वीकृति चाहती है तो मन्त्री उस विषय में सम्बन्धित पूछताछ कर सकता है। इस प्रकार की पूछताछ उस समय भी हो सकती है जब कि किए गए प्रस्तावों का सम्बन्ध बहुत सारे लोगों से है या पूरी स्थानीय जनता से है या उनके विरुद्ध कुछ आपत्तियाँ उठाई गई हैं। इस प्रकार की जाँच पूछताछ को इसलिए महत्वपूर्ण समझा जाता है क्योंकि बुद्धिपूर्ण केन्द्रीय नियन्त्रण की एक मौलिक शर्त स्थानीय परिस्थितियों का ज्ञान प्राप्त करना है। केन्द्रीय विभागों को तथ्यगत सूचना निरन्तर रूप से प्राप्त होती रहती है। जब कभी केन्द्रीय सत्ता स्थानीय सत्ता के क्षेत्र, शक्ति एवं संगठन आदि में परिवर्तन करना चाहती है तो वह जाँच के तरीके को काम में लेती है। कई अधिनियमों द्वारा यह व्यवस्था की गई है कि स्थानीय सत्ताएँ समय-समय पर आवश्यक सूचना प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत करती रहें। इस स्थानीय पूछताछ को स्थानीय सत्ता एवं नागरिकों के बीच एक प्रकार का पंच-फैसला माना जा सकता है। इनकी प्रकृति अर्ध-न्यायिक होती है और मन्त्रालय के किसी अधिकारी के सभापतित्व में यह की जाती है।

कुछ स्थानीय सेवाओं के सम्बन्ध मे सम्बन्धित मन्त्री द्वारा निरीक्षकों या अन्य अधिकारियो की नियुक्ति की जा सकती है जो कि सत्ताओं एवं मन्त्री के बीच सम्बन्ध बनाए रख सकें। उदाहरण के लिए शिक्षा मन्त्री काननी रूप से यह शक्ति रखता है कि वह निरीक्षक द्वारा यह मालूम करता रहे कि स्कूल की सीमाओं मे दिए गए नियमो एव निर्देशो का पालन किया जाता है अथवा नही । गृह सचिव भी स्थानीय सत्ताओं की अग्नि सेवाओ तथा पुलिस सेवाओ का निरीक्षण करने के लिए निरीक्षक नियुक्त करता है। वैसे स्थानीय सरकार को निरीक्षित करने की केन्द्रीय सरकार के पास कोई सामान्य शक्ति नही है। विभिन्न सेवाओ के लिए जो निरीक्षक नियुक्त किए जाते है उनको स्वतन्त्र स्तर प्रदान करने के लिए उन्हें क्राउन द्वारा नियुक्त किया जाता है। मन्त्री द्वारा सहायक निरीक्षको की नियुक्ति की जाती है। निरीक्षकों का कार्य केवल यह है कि वे जो कुछ देखें उसके सम्बन्ध मे प्रतिवेदन दे दे। उनको किसी प्रकार की अनुशासनात्मक शक्ति प्राप्त नही होती। यदि निरीक्षको द्वारा किसी असन्तोषजनक स्थिति का पता लग या जाए तो यह शक्ति मन्त्रियो की होगी कि वे उठाए जाने वाले उपयुक्त कदम के बारे मे विचार करें। वैसे निरीक्षको द्वारा पर्याप्त परामर्श प्रदान किया जाता है। वे व्यापक अनुभव एवं सम्मान वाले लोग होते हैं। जहा कही मन्त्री को एक सेवा का निरीक्षण करने की शक्ति नही होती वहा भी वह सेवा को निरीक्षित करने तथा पर्यवेक्षित करने के लिए एक अधिकारी की नियुक्ति करके पर्याप्त प्रभाव का उपयोग कर सकता है। कुछ लेखकों के विचारानुसार ये अधिकारी सत्ताओं को केवल सुझाव या परामर्श ही प्रदान नही करते वरन् ये मन्त्री के आख और कान होते हैं। विभागीय नीति के बारे मे उनके सामने जो मत व्यक्त किए जाते है और वे जो कुछ भी देखते हैं उस सबको अपने प्रतिवेद स्थान देते हैं। वे कम कार्यकुशल सत्ताओं को ऐसे तरीको का सुझाव देते हैं जो कि अधिक सफल सत्ताओं द्वारा अपनाए जा रहे है और ऐसा करके वे सेवा के स्तर को ऊंचा उठाने का प्रयास करते हैं।

जब कभी एक स्थानीय सत्ता किसी कार्य को करने के लिए या धन उधार देने के लिए कोई प्रस्ताव करती है तो मन्त्री अपना निर्णय लेते समय निरीक्षक के प्रतिवेदन को आधार बनाता है। कई बार यह सम्भावना व्यक्त की जाती है कि निरीक्षण की व्यवस्था द्वारा स्थानीय सत्ताओं को यह अनुभव होने लगता है कि उनके ऊपर जासूसी की जा रही है और इसलिए केन्द्रीय विभाग तथा स्थानीय सत्ता के बीच सरलता से मनमुटाव पैदा हो सकता है। जहा तक शिक्षा सेवाओ का प्रश्न है उनके सम्बन्ध मे इस सम्भावना को कम कर दिया गया है। इसका प्रथम कारण यह है कि केन्द्रीय विभाग स्थानीय शिक्षा सत्ता को अपना एक हिस्सेदार मानते हैं तथा हमेशा यह चाहते हैं कि शिक्षा सेवा के विभिन्न पहलुओ की परीक्षा के लिए परामर्शदाता समितियां नियुक्त करे। स्थानीय विशेषज्ञो को समिति के सम्मुख गवाही देने की सुविधा दी जाती है तथा शिक्षा मन्त्री प्रायः समिति की सिफारिशो को मान लेता है। दूसरे, शिक्षा मन्त्रालय अपनी इच्छा को स्थानीय शिक्षा सत्ता पर उस समय नही लादना चाहेगा जब तक कि कोई राष्ट्रीय नीति नहीं उलझती है।

(६) कानून द्वारा मन्त्रियो को अधीनस्थ व्यवस्थापन की जो शक्ति दी जाती है उसके द्वारा भी केन्द्रीय नियन्त्रण की मात्रा बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए शहर एवं देश के नियोजन को लिया जा सकता है जहा कि दिन प्रति दिन के बहुत बड़े भाग को अनेक विनियमो द्वारा नियुक्त किया जाता है। ये विनियम अपने आप मे किसी प्रशासकीय नियन्त्रण की रचना नही करते क्योकि ये तो शुद्ध रूप से व्यवस्थापन होते हैं किन्तु इन विनियमो के द्वारा ही कुछ ऐसी अनुमतिया प्रदान की जाती हैं जिन्हे प्रशासकीय नियन्त्रण का जनक माना जा सकता है।

(७) जब कोई निश्चित प्रावधान नही होता तो स्थानीय सत्ता अपने कार्य को जैसा उपयुक्त समझती है उसी रूप मे सगठित कर लेती है किन्तु इन कार्यों को करते समय उसे मन्त्री से प्राप्त निर्देशो के अनुसार कार्य करना होता है। एक सामान्य प्रावधान के अनुसार मन्त्री पड़ौस की स्थानीय सत्ताओ को इस बात के लिए मजबूर कर सकता है कि वे किसी विशेष उद्देश्य से सयुक्त निकाय की रचना करे और यदि सेवा के लिए छोटे निकाय की जरूरत है तो वह बड़ी स्थानीय सत्ता को छोटी सत्ताओ के लिए शक्ति हस्तान्तरित करने को कह सकता है। स्थानीय सगठन पर एक अन्य प्रकार का नियन्त्रण यह होता है कि कानून द्वारा यह व्यवस्था की जाए कि किसी भी समिति के सविधान को मन्त्री द्वारा स्वीकृत होना चाहिए। इसका अर्थ यह नही है कि मन्त्री समिति के वास्तविक नामो कोस्वीकार करे किन्तु केवल यह है कि वह उनकी केवल सख्या एव सामान्य बनावट के सम्बन्ध में निर्देश दे सकता है।

(८) स्थानीय सत्ताओ पर केन्द्रीय नियत्रण का एक रूप यह है कि स्थानीय सत्ता को कई एक मामलों मे निर्णय लेने से पूर्व केन्द्र की अनुमति प्राप्त करनी होती है। ऐतिहासिक रूप से इसको नियत्रण का एक आधुनिकतम रूप माना जाता है। वर्तमान अधिनियमो की यह प्रवृत्ति है कि वे स्थानीय सत्ताओ को जो सेवाये सौंपते हैं उनके बारे में वे एक कार्य-क्रम की रचना को आवश्यक बना देते हैं। स्थानीय सत्ता अपने लिए निर्धारित कार्यक्रमो को सम्पन्न करने के लिए विस्तृत योजनायें बनाती है। ये सभी योजनायें विस्तृत रूप मे उचित मन्त्री के पास भेजी जाती हैं। मन्त्री को यह अधिकार है कि वह सशोधन के साथ अथवा उसके बिना ही योजना को स्वीकार करे या न करे। इस प्रकार केन्द्रीय मन्त्रालय स्थानीय सत्ताओ के नवीन कार्यों का रूप निर्धारित करने मे महत्वपूर्ण रूप से नियन्त्रण रखता है।

प्रोफेसर फाइनर के कथनानुसार केन्द्रीय विभाग को मुख्य रूप से चार क्षेत्रो मे स्वीकृति की सत्ता (Sanctioning authority) प्राप्त है।* प्रथम, यह स्थानीय निकायो के क्षेत्र मे परिवर्तन करने की स्वीकृति प्रदान करता है; दूसरे, उपकानूनो (Bye-laws); तीसरे, कानून द्वारा निर्धारित सेवाओ की क्रियान्विति की प्रशासकीय योजनायें तथा चौथे, स्थानीय सत्ता द्वारा लिये जाने वाले फीस एवं अन्य कर आदि के क्षेत्र मे।

**Herman Finer*, Op. cit., P. 311.

स्थानीय सत्ताओ को या तो उनके संविधान द्वारा अथवा किसी विशेष कानून द्वारा उपकानून बनाने की शक्ति प्राप्त होती है। इस शक्ति का मूल आधार यह है कि क्षेत्र की समस्याओ पर तत्काल ही कुछ कार्य वाही करने के लिए इन सत्ताओ के हाथ मे कुछ अधिकार होना चाहिए ताकि होने वाली देरी के कारण असुविधाये एव नवीन समस्याये उत्पन्न न हो जायें। उपकानूनो के माध्यम से स्थानीय सत्ता लाउडस्पीकर एव बेतार के तार आदि द्वारा होने वाली असुविधा को रोकने की दिशा मे महत्वपूर्ण कदम उठाती है। स्थानीय सत्ताओ को ये शक्तिया यदि निर्बाध रूप से प्रयुक्त की जायें तो कई एक समस्याये पैदा कर देती है। अत: उचित यह समझा जाता है कि सरकार के अधीनस्थ क्षेत्रों को कुछ राष्ट्रीय सिद्धान्तो का विषय बनाया जाये। इस दृष्टि से उपकानून बनाने की स्थानीय सत्ताओ की शक्ति को दो प्रकार के नियन्त्रण का विषय बनाया जाता है अर्थात प्रशासकीय नियन्त्रण एव न्यायिक नियन्त्रण। इस नियन्त्रण का पर्याप्त महत्व होता है। केन्द्रीय सत्ताओ का व्यापक अनुभव यह सम्भव बनाता है कि निर्णय लेने मे अथवा कानून बनाने मे गलती न की जाये तथा स्थानीय सत्ता अपने लक्ष्य को आसानी से प्राप्त कर सके। केन्द्रीय सरकार द्वारा जो आदर्श या नमूने के उपकानून बनाये गये है वे सैकडो ही सत्ताओ के प्रस्तावो पर तथा लम्बे अनुभव पर आधारित हैं। कोई भी स्थानीय सत्ता अपने मौलिक उपकानून को स्वीकृत कराने मे कठिनाई का अनुभव करती है क्योंकि प्रत्येक उपकानून पर विचार करते समय केन्द्रीय विभाग परम्पराओ की माग करते है।

उपकानूनो पर नियन्त्रण का एक अन्य साधन कानून का न्यायालय है। उपकानून बनाने की शक्ति कानून द्वारा प्रदान की जाती है और इस अर्थ मे इसे अधीनस्थ व्यवस्थापन भी माना जा सकता है। इसे बुद्धिपूर्ण होना चाहिए। यदि वह ऐसा नही है तो न्यायालय द्वारा अनुचित करार दिया जा सकता है।

स्थानीय सत्ताओ द्वारा कुछ जन-उपयोगी सेवाओ को प्रशासित किया जाता है। इसके सम्बन्ध मे जो कीमत उपभोक्ताओ से वसूल की जाती है उस पर मन्त्री की पूर्व स्वीकृति अनिवार्य है। इस प्रकार श्मशान फीस, बाजार कर, अधिक गृह कर आदि के सम्बन्ध मे स्वास्थ्य मन्त्रालय को सत्ता सौपी गई है। सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि केन्द्रीय सत्ता को अधिकतम कीमत निश्चित करने का अधिकार दिया गया है। ऐसा करते समय केन्द्रीय सत्ता दो बातो का ध्यान रखती है। प्रथम तो यह कि सेवा कहीं घाटे मे न चली जाये और दूसरे, यह कि लाभ थोडा ही हो तथा जनता के कन्धो पर अधिक भार न पडे।

(६) कानून द्वारा मत्री को स्थानीय सरकार अधिकारियो की नियुक्ति, वेतन एव पदविमुक्ति आदि के सम्बन्ध मे कुछ नियन्त्रण रखने का अधिकार दिया गया है। उदाहरण के लिए काउन्टी परिषद क्लर्क का वेतन मत्री द्वारा स्वीकृत किया जाता है तथा उसको बिना मत्री की स्वीकृति के हटाया नही जा सकता। इसी प्रकार काउन्टी के स्वास्थ्य के मेडीकल अधिकारी की योग्यतायें [illegible]ारा निर्धारित की जाती है इसी प्रकार उसे [illegible]विमुक्त करते समय

मन्त्री की स्वीकृति ली जाती है। अन्य स्थानीय सत्ताओं के कई एक अधिकारियों के सम्बन्ध में भी केन्द्रीय सत्ता के नियन्त्रण की व्यवस्था की गई है। यह नियन्त्रण इस बात पर निर्भर करता है कि वे स्थानीय सत्तायें उन सेवाओं के लिए केन्द्रीय अनुदान प्राप्त करती हैं अथवा नहीं। पहले स्थानीय शिक्षा सत्ता को यह अधिकार दिया गया था कि वह स्वेच्छापूर्वक जिसे चाहे उसी को शिक्षा अधिकारी के पद पर नियुक्त कर दे। इस पद के लिए कोई निश्चित योग्यता नहीं थी। परम्परागत रूप से उम्मीदवार के पास विश्वविद्यालय की डिग्री हो तथा कुछ अध्यापन का अनुभव हो एवं कुछ प्रशासकीय अनुभव हो। किन्तु सन् १९४४ के शिक्षा अधिनियम ने स्थानीय शिक्षा सत्ता के कर्तव्यों को बताते हुए कहा कि सत्ता के मुख्य शिक्षा अधिकारी के पद पर वह किसी उपयुक्त व्यक्ति को नियुक्त करे किन्तु कोई भी स्थानीय सत्ता इस प्रकार की नियुक्ति बिना मन्त्री से पूर्व विचार किए नहीं कर सकती और जब मन्त्री से इस प्रकार का विचार-विमर्श करना हो तब वह सत्ता मन्त्री के पास उम्मीदवारों के नाम, पूर्व अनुभव, योग्यताएं एवं अन्य विवरणात्मक सूचनाएं भेजती हैं लेकिन मन्त्री के मतानुसार इस प्रकार प्रस्तुत व्यक्तियों के नामों में कोई भी योग्य नहीं है तो वह इस प्रकार की नियुक्तियों को रोकने के लिए निर्देश जारी कर सकता है। इस प्रावधान को व्यावहारिक रूप में स्थानीय सत्ता मन्त्री की स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करती है और मन्त्री उसमें से योग्यता के आधार पर उम्मीदवारों के सम्बन्ध में अपना मत प्रकट करता है। मन्त्री को यह अधिकार है कि वह किसी भी व्यक्ति की योग्यताओं के बारे में सन्देह करके उसके नाम को काट सके। वह इन नामों को उस समय तक काटता रह सकता है जब तक कि उसे सन्तोषजनक सूची प्राप्त न हो।

स्थानीय अधिकारियों के सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण रखने के पीछे कई कारण हैं। प्रथम यह है कि किसी भी स्थानीय प्रशासकीय निकाय पर विश्वास नहीं किया जा सकता कि वह पर्याप्त सुयोग्य अधिकारियों की नियुक्ति कर सकेगी तथा उस प्रकार का वेतन प्रदान कर सकेगी जो कि योग्य उम्मीदवारों को आकर्षित कर सके। दूसरे, ग्रेट ब्रिटेन में यद्यपि स्थानीय अधिकारियों के ऊपर नियन्त्रण रखा गया है किन्तु फिर भी यह नियन्त्रण इतना नहीं है कि वह उन अधिकारियों को केन्द्रीय सरकार का केवल एजेन्ट मात्र बना दे।

(१०) अनेक विषय हैं जो कि स्थानीय सत्ताओं द्वारा निर्णीत किए जाते हैं तथा रकों के अधिकारों पर प्रभाव डालते हैं। नागरिक अधिकारों को के लिए ऐसे विषयों में यह प्रावधान किया जाता है कि प्रभावित व्यक्ति नीय सत्ता के विरुद्ध अपील कर सकें। यह भी कहा जा सकता है कि अ न्यायालय में की जाए किन्तु कई एक उदाहरणों में यह अपील मन्त्री को जाती है। उदाहरण के लिए यदि स्थानीय सत्ता द्वारा किसी व्यक्ति को मे का विकास करने से मना कर दिया जाए तो प्रभावित व्यक्ति को यह धिकार है कि वह गृह निर्माण एवं स्थानीय सरकार मन्त्री से अपील कर मन्त्रालय द्वारा उसके स्टाफ में से किसी ऐसे व्यक्ति को स्थानीय पूछताछ लिए भेजा जाता है जो कि पर्याप्त तकनीकी योग्यताएं

रखना हो। ऐसी स्थिति में दोनों ही पक्षों द्वारा अपनी-अपनी बात कही जाती है और इन बातों के आधार पर निरीक्षक एक व्यक्तिगत प्रतिवेदन तैयार करता है और मन्त्रालय उन पर निर्णय लेता है। कई एक व्यक्तियों द्वारा जिनमें कि मुख्य रूप से वकील लोग शामिल हैं, यह मत प्रकट किया जाता है कि अपील की यह प्रक्रिया उचित नहीं है क्योंकि इससे अनन्त में यह ज्ञात नहीं हो पाता कि निर्णय किसके द्वारा लिया गया है। इन प्रक्रिया में यह भी सम्भावना रहती है कि निर्णय दी गई गवाहियों के आधार पर न लिए जाएं किन्तु उन तथ्यों के आधार पर लिए जाएं जो कि कार्यालय की फाईलों में हैं तथा जो प्रार्थी के लिए अज्ञात हैं। यह समस्या अत्यन्त जटिल है और इस पर निर्णय लेने के लिए अधिकारियों की एक समिति को नियुक्त किया गया। वास्तविक कठिनाई यह है कि इनके निर्णयों की प्रकृति कुछ न्यायिक होती है जिससे कि प्राय नीति के प्रश्न भी उलझ जाते हैं।

जब दो या दो से अधिक स्थानीय सत्ताओं के बीच कोई झगड़ा उत्पन्न हो जाए तो उनका निर्णय करने की शक्ति अनेक अधिनियमों द्वारा मंत्री को सौंपी गई है। इस शक्ति के माध्यम से केन्द्रीय सरकार सत्ताओं के बीच के सम्बन्धों को नियमित करती है। स्वास्थ्य मन्त्रालय को यह अधिकार दिया गया है कि दो स्थानीय शिक्षा संस्थाओं के बीच झगड़ा उत्पन्न होने पर तथा स्थानीय शिक्षा संस्था एवं स्कूल प्रबन्धक के बीच मतभेद उत्पन्न होने पर की जाने वाली अपीलों के बारे में विचार करे। शिक्षा मंत्रालय की भांति स्वास्थ्य मन्त्रालय और दूसरे विभागों को भी इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण शक्तियां प्राप्त हैं। यह व्यवस्था झगड़ों एवं मतभेदों को तय करने के लिए अत्यन्त उपयोगी मानी जाती है क्योंकि केन्द्रीय विभाग को किसी अन्य न्यायालय की अपेक्षा स्थिति की अधिक जानकारी होती है और यह प्रक्रिया अन्य न्यायिक प्रक्रियाओं की तुलना में कम खर्चीली होती है। कई एक मामलों में विभागों की अपील की शक्तियां अन्तिम एवं बाध्यकारी होती हैं। उनके निर्णय के विरुद्ध किसी न्यायालय में कार्यवाही नहीं की जा सकती। कुछ विषय ऐसे हैं जिनके सम्बन्ध में न्यायालय भी बोल सकता है।

(११) व्यवस्थापन द्वारा प्राय: मन्त्रियों को यह शक्ति दी जाती है कि यदि स्थानीय सत्ता कोई कार्यवाही करने में असफल रहे तथा वह अपने उत्तरदायित्वों को सन्तोषजनक रूप से पूरा न कर सके तो वह उसके विरुद्ध कार्यवाही करे। इन शक्तियों को अवहेलना की शक्तियां (Default Powers) कहा जाता है। केन्द्रीय सत्ता, स्थानीय सत्ता को अपने कर्तव्यों का निर्वाह करने में बाध्य बनाने के लिए परमादेश का लेख जारी कर सकती है जो कि एक प्रकार से स्थानीय सत्ताओं को उनके कानूनी कर्तव्यों को सम्पन्न करने की आज्ञा होती है। सन् १८७५ के जन-स्वास्थ्य अधिनियम के सम्भाग २९९ में अवहेलना की इन शक्तियों का वर्णन किया गया है। इसके द्वारा स्वास्थ्य मन्त्रालय को यह शक्ति दी गई कि वह भुलाए गए कर्तव्यों को सम्पन्न करने की दिशा में कदम उठा सके। जो व्यक्ति सम्भावित सेवा में रुचि लेता है वह मन्त्रालय के सम्मुख अपनी शिकायत प्रस्तुत करेगा। ऐसी स्थिति में मन्त्रालय उस कार्य को पूरा करने के लिए व्यक्तियों को नियुक्त

करने की शक्ति रखता है। साथ ही वह यह भी निर्देश जारी कर सकता है कि की जाने वाली सेवा मे जो खर्चा होगा और नियुक्त व्यक्तियो को जो वेतन दिया गया, उस सारे खर्चे को सम्बन्धित स्थानीय सत्ता द्वारा दिया जाए। इस प्रकार के आदेश को यदि जरूरी हो तो न्यायालय द्वारा भी प्रभावी बनाया जा सकता है। इस प्रकार की सेवा सम्पन्न करने के लिए नियुक्त व्यक्ति वे सारे अधिकार रखते हैं जो कि सम्बन्धित स्थानीय सत्ता के उस सम्बन्ध मे हैं किन्तु वे कर संग्रह नही कर सकते।

अवहेलना की शक्तियो के प्रयोग का एक अन्य रूप यह भी हो सकता है कि जब मन्त्री यह देखे कि एक स्थानीय सत्ता ने वह कार्य नही किया है जो कि उसे करना चाहिए था तो वह एक ऐसा आदेश जारी कर सकता है कि वे इस कार्य को सम्पन्न करें। इस आज्ञा को जब स्थानीय सत्ता द्वारा नहीं माना जाता है तो मन्त्री न्यायालय द्वारा परमादेश का लेख जारी करा सकता है। स्थानीय सत्ता द्वारा अपने कर्त्तव्यो की अवहेलना किए जाने पर मन्त्री एक कदम यह भी उठा सकता है कि वह उन शक्तियो को सत्ता से छीन ले। ऐसा भी प्रावधान है कि मन्त्री उन शक्तियो को अन्य स्थानीय सत्ता के लिए सौंप दे। द्विसूत्रीय स्थानीय सरकार की व्यवस्था मे सामान्यत: यह प्रावधान पाया जाता है कि यदि निम्न सूत्र कर्त्तव्यो की अवहेलना का दोषी पाया जाए तो इसकी शक्तिया बड़ी सत्ता को सौंपी जा सकती हैं। जब स्थानीय सत्ता न्यायालय के आदेशो का पालन नही करती तो इसे न्यायपालिका की अवहेलना समझा जाता है। नियन्त्रण के इस प्रकार के तरीको को बहुत कम काम मे लाया जाता है। इनको केन्द्रीय सत्ता भी काम में लाना पसन्द नही करती। केवल गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो जाने पर ही ये काम मे लाए जाते हैं। कुछ लोगो का कहना है कि अवहेलनापूर्ण कार्यों के सम्बन्ध में उठाए जाने वाले ये कदम स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप कहे जा सकते हैं। इनको असंवैधानिक रूप से स्थानीय स्वायत्त सरकार की परम्पराओं का उलंघन कहा जा सकता है। केन्द्रीय सत्ता अपनी इच्छाओं को क्रियान्वित करने के लिए प्राय: इनका प्रयोग नही करती किन्तु जब कभी उसे चुनौतिया दी जाती है तो वह उनको बाध्य हो कर अपनाती है। अवहेलनापूर्ण कार्यों के सम्बन्ध मे किस कदम को उठाया जाएगा, इस बात का निर्णय करते समय कई एक बातो को ध्यान मे रखा जाता है।

प्रथम बात यह ध्यान मे रखी जाती है कि यदि मन्त्रालय स्थानीय सत्ता के अधिकारो को अपने हाथ में ले लेता है तो क्या वह उनको सम्पन्न कर पाएगा। यदि वह सम्पन्न करने म कठिनाई का अनुभव करे तो हो सकता है कि स्थिति और भी अधिक बिगड़ जाए। शिक्षा-सेवाओ को इसके उदाहरण के रूप मे प्रस्तुत किया जाता है। यह कहा जाता है कि यदि शिक्षा सत्ता अपने कर्त्तव्यो को करने मे असफल हो जाए तो उन्हे केन्द्रीय सत्ता द्वारा सम्भालना अधिक सुविधाजनक नही रहेगा क्योंकि स्कूलो का सचालन करने मे मन्त्रालय अनेक प्रकार की कठिनाइयो मे उलझ जाएगा। शिक्षा-मन्त्रालय के पास अध्यापको का इतना स्टाफ भी नही होता कि वह उचित रूप से इन नए दायित्वो का निर्वाह कर सके। ऐसी स्थितियो मे तथा इस

प्रकार की सेवाओं के सम्बन्ध मे यह उचित समझा जाता है कि मन्त्री सत्ता को अवहेलनापूर्ण (Default) घोषित कर दे तथा यह आदेश जारी करे कि उस सत्ता को क्या करना चाहिए। यदि वह सत्ता उन कार्यों को सम्पन्न न करे तो मन्त्री न्यायालय के द्वारा परमादेश की आज्ञा जारी करा दे। कुछ ऐसी भी सेवाए होती हैं जिनको सम्पन्न करने की शक्ति एवं सामर्थ्य मन्त्री मे होती है। उदाहरण के लिए नागरिक-सुरक्षा को प्रस्तुत किया जा सकता है। जब कभी अवहेलनापूर्ण शक्तियो का प्रयोग किया जाता है तो स्थानीय सत्ता किसी प्रकार से वित्तीय लाभ मे नही रहती। इन सेवाओं का सचालन चाहे स्वय उनके द्वारा किया जाए अथवा केन्द्रीय मन्त्रालय द्वारा, उसके व्यय का भार अन्तिम रूप से स्थानीय सत्ता द्वारा ही वहन किया जाता है। जब कॅवेन्ट्री (Coventry) नगर मे नागरिक-सुरक्षा सेवाए सीधे गृह कार्यालय द्वारा प्रदान की गई तो भी इनका खर्चा स्थानीय सत्ता द्वारा ही दिया गया था। प्रावधान के अनुसार समय पर मन्त्री इन सेवाओं के लिए स्वयं धन खर्च कर सकता है क्योकि यह धन काउन का धन होता है इसलिए वह इसे वापस लेने का अधिकार रखता है। यदि स्थानीय सत्ता इस धन को प्रदान न करे तो केन्द्रीय सत्ता द्वारा अन्य प्रकार के दबावो को काम मे लाया जा सकता है। यदि इन अवहेलनापूर्ण शक्तियो का प्रयोग करने के कारण कोई स्थानीय सत्ता कर्जदार हो जाए तो उसको दिए जाने वाले अनुदान का उतना भाग रोक लिया जाएगा।

प्रशासकीय नियन्त्रण का सामान्य प्रभाव [The General Effect of Administrative Control]—प्रशासकीय नियन्त्रण के विभिन्न साधनो का प्रयोग करके केन्द्रीय सत्ता स्थानीय सत्ताओं के क्षेत्र मे पर्याप्त महत्वपूर्ण हस्तक्षेप का अधिकार रखती है। मन्त्रियो को जिन मामलो की सूचना दी जाती है वे उनमे हस्तक्षेप कर सकते हैं। वे स्वय भी स्थानीय सत्ताओं के कार्यों को निरीक्षित कर सकते हैं तथा अनुदान रोक कर अथवा अन्य प्रकार से उनकी क्रियाओं को प्रतिबन्धित कर सकते हैं। नियन्त्रण के ये विभिन्न प्रावधान स्थानीय स्वतन्त्रता एवं पहल को पूरी तरह से समाप्त नही कर देते; इसके विपरीत उनमे पहल एव स्वायत्तता पर्याप्त मात्रा मे प्राप्त होती है। केन्द्रीय सरकार प्रायः इस बात मे रुचि लेती है कि स्थानीय सत्ताए अपना कार्य करती रहे। वह उनको कार्य करने से प्रतिबन्धित नही करती। केन्द्रीय नियन्त्रण बहुत कुछ अप्रत्यक्ष एवं हल्का होता है। मन्त्री केवल इसीलिए हस्तक्षेप करते है कि सत्ता को उचित रूप से कार्य करने के लिए प्रेरित कर सकें।

जब केन्द्रीय नियन्त्रण के विभिन्न प्रकारो को एक साथ मिला दिया जाता है तो उनकी मात्रा अत्यन्त हो जाती है। केन्द्रीय सरकार किसी न किसी तरीके से स्थानीय सरकार की सभी क्रियाओं को रोकने मे समर्थ है। वह चाहे तो स्थानीय सत्ता को सरकार का दृष्टिकोण क्रियान्वित करने के लिए बाध्य कर सकती है; किन्तु जैसा कि आर० एम० जेक्सन [R. M. Jackson] का कहना है कि इसका अर्थ यह नही होता कि केन्द्रीय सरकार असल मे नियन्त्रण की सभी शक्तियो को काम मे लेती है या वह ऐसा कर

सकती है, फिर भी ये शक्तियां उनको मिली हुई है। * इन शक्तियों के सम्बन्ध मे दो बातो की जानकारी अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है। प्रथम यह कि नियन्त्रण की इन शक्तियो का प्रयोग किस सीमा तक किया गया है और दूसरा यह कि किस आधार पर केन्द्रीय सरकार के इन कार्यो को न्यायोचित ठहराया जा सकता है। प्रायः यह कहा जाता है कि इन शक्तियों का विकास नवीन युग की देन है किन्तु यह पूरी तरह से सच नही है क्योंकि नियन्त्रण के प्रमुख रूपो का विकास पिछली दशाब्दी मे स्थानीय सरकार के विकास के साथ-साथ होता रहा है। नियन्त्रण के इन तरीको का विकास केन्द्रीय सरकार एव स्थानीय सत्ताओ के बीच स्थित सम्बन्धो की बदलती हुई परिस्थितियो से प्रभावित होता रहा है। जब एक कस्बा शाही चार्टर प्राप्त करके बारो बन जाता था तो वह बहुत कुछ इस नियन्त्रण से बच जाता था जो कि काउन्टीज मे प्रयुक्त किया जाता था। शताब्दियो तक बारोज को अपने कार्यों को उनकी इच्छा से सम्पन्न करने के लिए स्वतन्त्र छोड दिया गया था।

अन्य स्थानीय निकाय जैसे पेरिश तथा काउन्टीज आदि को शान्ति के न्यायाधीशो द्वारा सचालित किया जाता था, इनको भी केन्द्रीय नियन्त्रण से बहुत कुछ मुक्त रखा गया। वर्तमान युग में औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप स्थानीय एव राष्ट्रीय सरकार की प्रवृत्तियो मे महत्वपूर्ण परिवर्तन आए है। कस्बो की गन्दी स्थिति के कारण स्थानीय सत्ताओ को उप-कानून बनाने की शक्ति दी गई। इसके अतिरिक्त कानून और व्यवस्था की स्थापना तथा गरीबो को राहत देने के कार्यों के क्षेत्र मे अनेक नई समस्याएं उत्पन्न हुई। इन समस्याओ के समाधान के लिए जो व्यवस्था की गई, उसमे केन्द्रीय नियन्त्रण को बहुत कठोर रखा गया। निर्धन राहत प्रशासन के क्षेत्र मे केन्द्रीय सरकार द्वारा अनेक विनियमन किए गए अनेक निर्देश एव आदेश निरन्तर रूप से जारी किए गए। इन सबके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र मे स्थानीय सत्ताओ के अधिकार न के बराबर हो गए हैं। जो स्थानीय अधिकारी इस कार्य को सम्पन्न करते थे, उन पर केन्द्रीय नियन्त्रण प्रत्यक्ष रूप से इतना अधिक था कि उनको स्थानीय सरक्षको का अधिकारी नही कहा जा सकता था बल्कि ऐसा लगता था कि उन्हे सीधे कानून द्वारा शक्ति प्राप्त है। इसके अतिरिक्त निरीक्षण, आडिट एवं वित्तीय नियन्त्रण पूरे तरह से था इस व्यवस्था से पूर्व की स्थिति इतनी खराब थी कि जनता ने इस व्यवस्था को बिना किसी विरोध के अपना लिया।

स्थानीय सरकार के विकास काल के प्रारम्भ मे यह प्रवृत्ति रही कि केन्द्रीय सरकार को व्यापक शक्तियां सौंपी जाए और केन्द्रीय सरकार भी इनका प्रयोग करने के लिए इच्छुक रहती थी। यदि केन्द्रीय हस्तक्षेप लागू

---

* "This does not mean that the central Govt. does, in fact, exercise all its powers of control or that it is likely to do so, but nevertheless the powers are there."

—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 244

न किया जाता तो यह सम्भावना थी कि स्थानीय सरकार विशेष रूप से जन-स्वास्थ्य के क्षेत्र मे वे कदम न उठा पाए जो कि राष्ट्रीय एव क्षेत्रीय जतना की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक हैं। केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण ने समर्थ एव ईमानदारी स्थानीय प्रशासन प्रदान करने की दिशा मे महत्वपूर्ण कार्य किया। नियन्त्रण की इस कठोर व्यवस्था ने अपना कार्य कैसे सम्पन्न किया, इसका एक मुख्य कारण यह है कि केन्द्रीय सरकार के अधिकारियो की सामान्य बुद्धिमत्ता का स्तर स्थानीय स्तर पर काम करने वाले अधिकारियो की तुलना मे पर्याप्त ऊचा था।

पिछले पचास या इससे अधिक वर्षों मे स्थानीय प्रशासन ने अपनी प्रवृत्ति को बहुत कुछ बदल दिया है तथा पहले जिन कारणो को केन्द्रीय नियन्त्रण का उचित आधार समझा जाता था उनको अब कम महत्वपूर्ण समझा जाने लगा। अब केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ता का कोई कार्य करने मे असमर्थता महसूस करने लगी। पहले यह होता था कि किसी भी प्रस्ताव को स्थानीय सत्ता केवल इस आधार पर अस्वीकार कर देती थी कि उसमें पर्याप्त धन खर्च हो जाएगा। ऐसी स्थिति मे करदाता स्वय उस सेवा की व्यवस्था करते थे। मतदाताओ की भी यह प्रवृत्ति थी कि वे किसी ऐसी सेवा के लिए धन नही देना चाहते थे जो गरीबो का लाभ करे। किन्तु आजकल यह प्रवृत्ति बदल चुकी है तथा स्थानीय सत्ता पर अधिक से अधिक सेवा प्रदान करने के लिए दबाव डाले जाते हैं। आज कोई भी यह नही चाहता कि स्थानीय सरकार की सेवाओ मे कटौती की जाए किन्तु प्रयास यह रहता है कि इन सेवाओ को अधिक कुशलतापूर्वक सम्पादित करके, कर की मात्रा को कम किया जाए अथवा करदाताओ को उनके धन का अधिक से अधिक मूल्य प्रदान किया जाए। आज केन्द्रीय विभाग स्थानीय सत्ताओ के मामलो मे कठोरतापूर्ण रवैया तभी अपनाते है जब कि स्थानीय परिषदें राष्ट्रीय स्तर की राजनीति मे भाग लेने लगी हैं।

स्थानीय प्रशासन का स्तर बढ चुका है। अब उसमें भ्रष्टाचार एवं कर्त्तव्यो के प्रति उदासीनता बहुत कम रह गई है। स्थानीय सरकार के क्षेत्रो मे प्राय: यह विश्वास किया जाता है कि केन्द्रीय विभागो के स्टाफ को बहुत लापरवाही से सगठित किया जाता है। लोक प्रशासन मे कार्यकुशलता की मान्यता अब पर्याप्त कठिन बन चुकी है। वर्तमान परिस्थितियो मे केवल यह कहना पर्याप्त नही है कि प्रशासन को यथासम्भव कार्य करने चाहिए किन्तु इसके साथ ही यह कहना भी जरूरी बन जाता है कि वह कार्य किस उपयुक्त स्तर पर किया जाए। यह स्तर भी परिस्थितियो के अनुसार बदलता रहता है। समय के साथ चलने वाले स्थानीय प्रशासन के विकास के इन विभिन्न परिवर्तनो के प्रसग मे जो परिणाम प्राप्त हुए तथा स्थानीय एव केन्द्रीय सम्बन्धो का रूप बदला, उसे आर. एम जैक्सन के शब्दो मे रखते हुए यह कहा जा सकता है कि अब केन्द्रीय एव स्थानीय सम्बन्ध नियन्त्रण से हटकर परामर्श एव सहायता देने की ओर उन्मुख हो गए हैं।*

* "... the central-local relationship would have moved away from control and towards the giving of advise and assistance." —*R. M. Jackson*, op. cit., P. 251.

द्वितीय विश्व युद्ध से कुछ वर्ष पहले केन्द्रीय एवं स्थानीय सम्बन्धों को जिस रूप में समझा जाता था उसकी प्रवृत्ति यह थी कि स्थानीय सत्ताएं केन्द्रीय नीति को क्रियान्वित करने का निकाय हुआ करती हैं। द्वितीय विश्व युद्ध ने केन्द्रीय सरकार की शक्तियों को बढा दिया। सन् १९४० के संकट-कालीन शक्ति अधिनियम ने यह प्रावधान रखा कि परिषद की आज्ञा से स्थानीय व्यक्ति अपनी सेवाएं जन-सुरक्षा के हेतु राजा को सौंप सके। विश्व युद्ध के दौरान केन्द्रीय सरकार ने यह सोचा कि स्थानीय अग्नि-रक्षक व्यवस्था द्वारा हिटलर के आक्रमण के विरुद्ध उचित कार्य नहीं किया जा रहा है तो इन सेवाओं को स्थानीय सत्ताओं से अस्थायी समय के लिए ले लिया गया और राष्ट्रीय अग्नि सेवाओं का भाग बना दिया गया। युद्धकाल में अन्य कई एक परिवर्तन इस दिशा में किए गए किन्तु युद्ध समाप्त हो जाने के बाद भी इन किए गए परिवर्तनों को ज्यों का त्यों जारी रखा गया। वर्तमान समय में जब कि आर्थिक क्षेत्र में सरकार के उत्तरदायित्व बढ गए हैं और उससे देश के आर्थिक विकास के लिए बडी-बडी आशाएं की जाती हैं तो यह स्वाभाविक है कि राष्ट्रीय सरकार को स्थानीय सेवाओं पर अधिक से अधिक नियन्त्रण करने की व्यवस्था की जाए। देशव्यापी आर्थिक नियोजन के सन्दर्भ में स्थानीय सत्ताओं पर केन्द्रीय नियन्त्रण की मात्रा और भी बढ गई है। यदि स्थानीय सत्ता कोई नया निर्माण-कार्य प्रारम्भ करना चाहे तो इसके लिए उसके पास बहुत कम स्वतन्त्रता रहती है।

स्थानीय क्रियाओं पर केन्द्रीय नियन्त्रण की आवश्यकता कई एक परिस्थितियों में पर्याप्त बढ जाती है। उदाहरण के लिए जब प्रमुख सेवाओं में देश के विभिन्न भागों के बीच अनावश्यक अन्तर को कम करने के लिए एक स्तर की स्थापना एवं प्राप्ति का प्रयास किया जाए। दूसरे, जब कि सामान, श्रम, साधन एवं पूंजी का नियन्त्रित करके सत्ताओं को यह अनुभव कराया जाए कि उन्हें उनका न्यायपूर्ण हिस्सा मिल रहा है। तीसरे, व्यापक वित्तीय नियन्त्रण एवं नियोजन के द्वारा स्थानीय क्रियाओं को राष्ट्रीय नीति में समायोजित किया जाए। इन सभी स्थितियों में स्थानीय सत्ताएं केन्द्रीय नियन्त्रण को स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाती हैं किन्तु वे नियन्त्रण की अतिशय मात्रा का विरोध करती हैं। विशेषतः उनके द्वारा अपने अधिकांश प्रस्ताव केन्द्रीय विभागों को प्रस्तुत करने के लिए मना किया जाता है। कार्य-क्रमों को तैयार करने एवं प्रस्तुत करने से सम्बन्धित सामान्य प्रावधान इतने अधिक बढ गए कि स्थानीय सत्ताओं को यह अनुभव होने लगा कि जैसे नीति सम्बन्धी विषयों में उनको कोई अधिकार नहीं है। यह स्थिति उस समय इतनी खराब नहीं होती जब कि स्थानीय सत्ताओं को यह अनुभव होता है कि उनकी योजनाओं एवं कार्यक्रमों को केन्द्रीय सरकार के ऐसे अधिकारियों द्वारा देखा जा रहा है जो उनकी अपेक्षा अधिक योग्य, विशेषज्ञ एवं समर्थ हैं किन्तु स्थिति यह नहीं है और स्थानीय सत्ताओं को यह अच्छी तरह ज्ञात है कि कई बार जो योजनाएं योग्य एवं स्थानीय विशेषज्ञों द्वारा तैयार की जाती है उनको केन्द्रीय विभागों के ऐसे अधिकारियों द्वारा आलोचित किया जाता है जो कि निश्चय ही योजना बनाने वालों से अधिक योग्य नहीं

होते । असल मे उनकी शिकायत यह रहती है कि स्थानीय सत्ताओ को केवल स्थानीय एजेन्ट समझा जाता है जो किसी कार्य के लिए विशेष रूप से उत्तरदायी नही हैं और जिनके प्रत्येक व्यवहार पर निगरानी रखना, प्रतिबन्ध लगाना और किसी केन्द्रीय अधिकारी की स्वीकृति प्राप्त करना अत्यन्त जरूरी है ।

स्थानीय केन्द्रीय सम्बन्धों के विषय मे उठने वाले विभिन्न प्रश्नो के बारे मे स्थानीय सत्ता सस्थाओ तथा सम्बन्धित मन्त्रालयो के बीच पर्याप्त विचार-विमर्श हुआ । इसके परिणामस्वरूप जनवरी, १६४६ मे स्थानीय सरकार मानव शक्ति समिति (Local Goverment Man-Power Committee) नियुक्त की गई । यह समिति चासलर आफ एक्सचेकर द्वारा नियुक्त की गई । इसमे सरकारी विभागों के प्रतिनिधि, स्थानीय सत्ताओ के प्रतिनिधि एव स्थानीय सत्ता सघो के सचिव थे । समिति का मुख्य कार्य स्थानीय एवं केन्द्रीय सत्ताओ के बीच प्रक्रिया के बारे मे व्यापक सिफारिशें करना था ताकि मानवीय शक्ति मे मितव्ययता लाई जा सके । अपने कार्य को सम्पन्न करने के लिए समिति ने अनेक उपसमितियो का गठन किया ।

वर्तमान समय की स्थितियों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि अनेक क्षेत्रो मे केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ताओं के कार्यों पर अपना नियन्त्रण रख सकती है । आजकल इस बात पर जोर दिया जाता है कि केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण उन कार्यों तक सीमित कर दिया जाए जो कि अच्छी सरकार के लिए महत्वपूर्ण हैं तथा इस नियन्त्रण का व्यवहार एवं प्रशासन इस रूप मे किया जाए कि स्थानीय सत्ताओ को यथासम्भव स्वतन्त्रता प्राप्त हो सके । केन्द्रीय सरकार का स्थानीय सत्ताओ के प्रति जो दृष्टिकोण होता है उससे अनेक कठिनाइया पैदा हो जाती है । प्रक्रिया एव दृष्टिकोण से सम्बन्धित विभिन्न समस्याओ के पीछे मुख्य रूप से आर्थिक आधार होता है । यह एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त बन चुका है कि यदि धन का स्रोत एक्सचेकर है तो केन्द्रीय विभागो को उसके व्यय पर नियन्त्रण रखना चाहिए तथा यह देखना चाहिए कि क्या उसे उसी रूप मे खर्च किया जा रहा है जो कि केन्द्रीय नीति के अनुकूल है । कई एक लेखको का यह सन्देह पूर्णतः उपयुक्त दिखता है कि जब तक स्थानीय सरकार केन्द्रीय धन पर अवलम्बित है, उसके व केन्द्रीय सरकार के बीच अच्छे सम्बन्धो की आशा बहुत कम है ।

स्थानीय सरकार का वित्त

[THE FINANCE OF LOCAL GOVT.]

स्थानीय सरकार के वित्तीय स्रोतो की प्रकृति, सामर्थ्य एव भविष्य के आधार पर स्थानीय सरकार के कार्य, शक्तियां एव उत्तरदायित्व बदलते रहते है। कई बार इसके कार्य एव उत्तरदायित्वों मे परिवर्तन के परिणाम-स्वरूप भी वित्तीय स्रोतो मे परिवर्तन किए जाते है। वर्तमान समय मे स्थानीय सत्ताओ द्वारा किये जाने वाले व्यय की व्यवस्था मुख्य रूप से तीन स्रोतो द्वारा की जाती है। प्रथम, सरकारी अनुदान जो कि करीब २/५ हिस्सा होता है; दूसरे, भूमि एव भवनो के स्वामियो द्वारा दी जाने वाली स्थानीय रेट जिसकी मात्रा भी लगभग इतनी ही होती है और तीसरे, नगरपालिका गृहो का किराया तथा ब्याज आदि से प्राप्त आमदनी जो कि कुल आय का लगभग १/५ हिस्सा होता है। स्थानीय सरकार द्वारा जो भी पूंजीगत व्यय (Capital Investment) किए जाते हैं उनका अधिकांश भाग कर्ज लेकर प्रबन्धित किया जाता है।* स्थानीय सरकार के इन विभिन्न वित्तीय स्रोतों का विस्तार के साथ अध्ययन किया जाना उपयोगी रहेगा।

सहायता अनुदान
[Grants-in-aid]

मि० सिडनीवेब (Sidney Webb) के कथनानुसार सहायता अनुदान से ब्रिटिश प्रशासक द्वारा उस सहायता से अर्थ लगाया जाता है जो कि ग्रेट ब्रिटेन का एक्सचेकर स्थानीय सरकारी सत्ता को उसके कुछ या सभी कानूनी कर्तव्यों का निर्वाह करने के लिए देता है।† इस प्रकार की सहायता कभी अलग से भी दी जा सकती है किन्तु प्रायः इसको वार्षिक अनुदान के

*. Local Govt. in Britain, B. I. S. in India, RF. P. 5505/65., P. 19.

†"By a grant-in-Aid, the English administrator understands a sub-vention payable from the Exchequer of the United Kingdom to a local Govt Authority, in order to assist that authority in the execution of some or all of its statutory duties."

—*Sidney webb.*

रूप मे दिया जाता है। यह समय की परिस्थितियों के अनुरूप अलग-अलग मात्रा मे हो सकती है अथवा बिना किसी शर्त के एक जैसी मात्रा मे भी हो सकती है। इनकी मात्रा मुख्य रूप से जनसख्या के विकास या उसके किसी एक भाग के विकास या किसी विशेष सेवा की मात्रा पर अथवा नियुक्त किए जाने वाले अधिकारियों की सख्या अथवा उनके वेतन पर या प्राप्त करने वाली सत्ता के व्यय पर तथा उसके जिलों की करारोपण की शक्ति पर, उसके कार्यों की कुशलता पर एव ऐसी ही अन्य शर्तों पर निर्भर करती है।

केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थानीय सत्ताओ को दिए जाने वाले अनुदान की कई एक अच्छाइया बताई जाती हैं। यह कहा जाता है कि कई एक स्थानीय सेवाए जो कि सामान्य कल्याण से सम्बन्ध रखती हैं, ससद द्वारा लागू की जाती हैं और ये असल मे स्थानीय रूप से प्रशासित राष्ट्रीय सेवाएं होती हैं। इस प्रकार का व्यय प्राय: सभी सत्ताओं में एक जैसा होता है और इसका भाग राज्य के सहयोग द्वारा वहन किया जाना चाहिए। ये राज्य द्वारा दिए जाने वाले सहायता अनुदान एक प्रकार से अनुपूरक नहीं हैं किन्तु ये ऐसा धन देते हैं जो कि करदाता से ग्रहण किया जाना चाहिए किन्तु ग्रहण नहीं किया जाता है। बिना इस सहायता के तथा कुछ नियन्त्रण लागू किए यह सम्भव बन जाता है कि वाछित परिणामो एव उपयुक्त लाभों को प्राप्त न किया जा सके। सहायता अनुदान एक प्रकार से उन सत्ताओ के लिए प्रेरक का काम करता है जो कि अपने कार्यों के प्रति अवहेलना बरत सकती हैं। इससे ससद को कुछ ऐसी सेवाओ तथा कार्यों के प्रशासन मे एकरूपता का स्तर बनाने मे सहायता मिलती है जो कि विशेषज्ञों द्वारा पर्यवेक्षित एव समन्वित किए जाने चाहिए। सहायता अनुदान का धन सरकारी कोष से आता है। ऐसी स्थिति मे कई बार यह पसन्द किया जाता है कि इस धन को रेट्स (Rates) मे लिया जाय अथवा करों से। इन दोनो की प्रकृति पूर्णत: भिन्न होती है। रेट्स (Rates) तो स्वामित्व की गई सम्पत्ति के वार्षिक मूल्य पर निर्भर करते हैं जब कि करो का आधार वार्षिक आय तथा कुछ उपयुक्त वस्तुओ का मूल्य है। जो लोग रेट्स (Rates) से प्राप्त व्यय के लाभो का उपभोग करते हैं वे रेट देने से तो बच जाते हैं किन्तु उन्हें कर देना पड़ता है। व्यापारिक लाभ एव व्यक्तिगत सम्पत्ति पर रेट नही लगाया जाता।

सहायता अनुदान की व्यवस्था का कई बार विरोध करते हुए उसे बुरा बताया जाता है। यह कहा जाता है कि यह एक खतरनाक सिद्धान्त है जिसके द्वारा राष्ट्रीय एक्सचेकर पर अनेक दावे किए जा सकते हैं। ऐसे व्यय पर कोई प्रभावशील ससदीय नियन्त्रण नहीं रखा जा सकता और मितव्ययता की भी कोई गारन्टी नहीं रहती। जहा तक स्थानीय सत्ताओं का प्रश्न है, उनको यदि बिना उत्तरदायित्व के सहायता अनुदान दिया गया तो वे उस धन को पानी की तरह खर्च करेंगी। इसके साथ ही उन विषयो को निश्चित रूप से परिभाषित करना कठिन है जिनको राहत मिलनी चाहिए। इसके अतिरिक्त सहायता अनुदान का अनुपात क्या हो तथा विभिन्न क्षेत्रों को कितना सहायता अनुदान दिया जाए, यह निश्चित करना भी अत्यन्त कठिन रहता है। जिस सेवा पर होने वाले खर्च को आशिक रूप से राष्ट्रीय सहायता

अनुदान द्वारा और आंशिक रूप से स्थानीय भुगतान द्वारा वहन किया जाता है, उसमे होने वाले कुल खर्च का अनुमान लगाना कठिन बन जाता है और इसके परिणामस्वरूप अपव्यय का खतरा सदैव बना रहता है।

केन्द्रीय सरकार द्वारा दिया जाने वाला सहायता अनुदान विभिन्न सिद्धान्तो पर आधारित होता है तथा यह अनेक लक्ष्यो को प्राप्त करने के लिए सचालित किया जाता है। यह अनुदान स्थानीय कोष के व्यय को कम करने मे सहायता करते हैं और इस प्रकार रेटिंग (Rating) व्यवस्था में जो असमानता उत्पन्न होती है, उसे दूर करते हैं। उनके द्वारा स्थानीय कार्य-कुशलता के लिए केन्द्रीय नियन्त्रण को सम्भव बनाया जाता है तथा वे आवश्यकतापूर्ण क्षेत्रो को सम्य प्रशासन के कम से कम स्तर पर पहुचने मे सहायता करते हैं। सहायता अनुदान का प्रारम्भिक इतिहास मुख्य रूप से ससदीय विरोध एव प्रतिस्पर्धापूर्ण सुविधाओ का इतिहास रहा है किन्तु वर्तमान समय मे स्थानीय सत्ताओ द्वारा प्रशासित की जाने वाली सेवाओ की प्रकृति भली-भाति स्पष्ट हो गई है और इसलिए इतिहास का यह रूप अब परिवर्तित हो चुका है। वर्तमान समय मे दिए जाने वाले अनुदान अनेक जटिल सिद्धान्तो के योग पर आधारित हैं। उनका मुख्य ध्येय यह रहा है कि स्थानीय सत्ताओ को उनके उत्तरदायित्वो के भार एव उनके साधनो की गरीबी के अनुपात मे सहायता दी जाए। यह सहायता इस रूप मे दी जाय कि सहायता दी गई सेवाओ के प्रशासन के स्तरो पर भी कड़ा नियन्त्रण रखा जा सके।

स्थानीय सरकार सेवाओ के लिए दिए जाने वाले इन सहायता अनुदानो का इतिहास अपेक्षाकृत नवीन युग की देन है। उन्नीसवी शताब्दी पूर्व अनेक स्थानीय सेवाए, स्थानीय कोष के साधनो पर ही निर्भर रहती थी; उनको व्यावहारिक रूप से केन्द्रीय सरकार द्वारा कोई सहायता प्राप्त नही होती थी। किन्तु उन्नीसवी शताब्दी मे स्थानीय सेवाओ का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक हो गया और स्थानीय सरकार इन सेवाओ की अवहेलना करने मे अपने आपको असमर्थ महसूस करने लगी किन्तु साथ ही उसके द्वारा इन सेवाओ का भार भी पूरी तरह से वहन नही किया जा सकता था। धार्मिक एव औद्योगिक पुनर्जागृति के परिणामस्वरूप समाज मे जो चेतना जागृत हुई उसके परिणामस्वरूप कई एक महत्वपूर्ण सेवाओ का प्रावधान किया गया; उदाहरण के लिए शिक्षा, आदि। इस प्रकार की सेवाए राष्ट्रीय महत्व की सेवाए थी ऐसी स्थिति मे यह अनुपयुक्त समझा गया कि इन सेवाओ का सचालन स्थानीय सत्ताओं के कोष से किया जाए।

इसके अतिरिक्त स्थानीय वित्तीय साधनो की असमानता के कारण विभिन्न क्षेत्रों की सेवाओं के स्तर में गम्भीर प्रभाव रहने की भी सम्भावनाएं थीं। जिन क्षेत्रो की जनता गरीब होती है उन क्षेत्रो मे कर एव रेट दोनो से प्राप्त आमदनी बहुत कम होती है। ऐसे क्षेत्रो मे यद्यपि महत्वपूर्ण सेवाओं को प्रदान करना परमावश्यक होता है परन्तु सामर्थ्य के अभाव मे स्थानीय सत्ताए ऐसा नही कर पातीं और वहां सेवा का स्तर नीचा रह जाता है। दूसरी ओर कुछ ऐसे भी क्षेत्र होते हैं जिनमे इन सेवाओ की आवश्यकता एव महत्व अपेक्षाकृत अधिक होता है किन्तु वित्तीय साधनो की अपर्याप्तता

इस आवश्यकता को पूरा होने से रोक देती है। स्थानीय सरकार के अधिकांश कार्य राष्ट्रीय नीतियों एवं स्थानीय सत्ता की अपेक्षा राष्ट्रीय लक्ष्यों के लिए सचालित किए जाते हैं। जब पुलिस एवं शिक्षा जैसी सेवाओं में कार्यकुशलता की आवश्यकता को अनुभव किया गया तो यह उचित समझा गया कि स्थानीय सत्ताओं के व्यय को राष्ट्रीय कोष के अनुदान द्वारा पूरा किया जाए। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में स्थानीय सरकार ने जो विकास किए उनकी पृष्ठभूमि में केन्द्रीय सरकार द्वारा दी जाने वाली वित्तीय सहायता को अधिक महत्व दिया जाने लगा। जब केन्द्रीय सरकार ने स्थानीय सरकार के वित्त में अपने योगदान की मात्रा बढ़ा दी तो स्वाभाविक रूप से स्थानीय सरकार की क्रियाओं में उसका नियन्त्रण भी बढ़ गया।

सरकार द्वारा दिया जाने वाला सहायता अनुदान किसी विशेष सेवा के लिए भी दिया जा सकता है और स्थानीय सत्ता के सामान्य राजस्व में योगदान के रूप में भी। जब इन अनुदानों को किसी विशेष सेवा के लिए दिया जाता है तो वह प्रायः उस सेवा में किए जाने वाले खर्चे से सम्बन्धित रहता है। इस सम्बन्ध में दो प्रकार के व्यवहार प्रचलित हैं। प्रथम यह कि इस अनुदान को व्यय के प्रतिशत के रूप में दिया जा सकता है। इसके लिए कोई ऐसा केन्द्रीय तरीका होना चाहिए जिसके आधार पर व्यय की परीक्षा की जा सके। अनुदान देने का दूसरा तरीका यह है कि सेवा की इकाई को ले लिया जाता है और उसके किसी एक कार्य के लिये केन्द्र सहायता देता है। दो स्थितियों में स्थानीय सत्ताओं के बीच अनेक विभिन्नताएं रह सकती हैं। इन अनुदानों का उद्देश्य मुख्य रूप से एक जैसा ही होता है। यदि स्थानीय सत्ताएं किसी विशेष प्रकार की सेवा के प्रति अपना झुकाव दिखाती हैं तो वे उसे इस प्रकार के अनुदान द्वारा आगे बढ़ाने के लिये प्रोत्साहित कर सकती हैं। जब कभी किसी विषय पर परिषद में विचार किया जाता है तो प्रायः इस तरह से विचार किया जाता है कि इस सेवा का पचास प्रतिशत खर्च अनुदान द्वारा प्राप्त हो जायेगा और शेष पचास प्रतिशत खर्च का भार स्थानीय कोष पर पड़ेगा। इससे स्थानीय सत्ताओं को नई सेवाएं प्रारम्भ करने में प्रोत्साहन मिलता है। इस प्रकार के अनुदानों का दूसरा उपयोग यह है कि स्थानीय सत्ताएं अपने कार्यों को सरलतापूर्वक सम्पन्न कर सकती हैं।

इन विशिष्टीकृत अनुदानों (Ear-marked grants) की एक मुख्य विशेषता यह है कि ये सभी स्थानीय सत्ताओं को बिना उनकी विशेष आवश्यकताओं का ध्यान रखे ही दिये जाते हैं। यदि केन्द्रीय सरकार यह निर्णय ले ले कि पुलिस का आधा खर्चा उसके द्वारा सहन किया जायेगा तो एक सम्पन्न स्थानीय सत्ता भी अपनी पुलिस सेवा पर किये गये खर्च का आधा भाग प्राप्त करेगी, यद्यपि उसे ऐसी सहायता की कोई आवश्यकता नहीं है। दूसरी ओर एक निर्धन स्थानीय सत्ता अपने व्यय का आधा भाग अनुदान के रूप में पाने के बाद भी खर्चा चलाने में मुश्किल अनुभव करेगी। विभिन्न प्रकार के वित्तीय स्रोतों की विभिन्नतापूर्ण आवश्यकताओं के आधार पर जो कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं उनको दूर करने के लिये अनुदान के दूसरे रूप का विकास किया गया। इस प्रकार का अनुदान किसी विशेष सेवा से

सम्बन्धित नहीं रहता किन्तु यह स्थानीय सत्ताओ के सामान्य कोष को बढ़ाने के लिए एक वित्तीय सहायता होती है। यह स्पष्ट है कि स्थानीय सत्ताओ के वित्तीय स्रोत अलग-अलग होते हैं और जब इस प्रकार का अनुदान देने की व्यवस्था की जाये तो केन्द्रीय सरकार को स्थानीय सत्ता के स्रोत मापने के लिये भी कार्य करना होगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि सरकारी अनुदान के अनेक रूप होते हैं।

किसी स्थानीय सेवा पर किये जाने वाले व्यय को मापने के लिये कई एक तरीकों को अपनाया जा सकता है, उदाहरण के लिये हम शिक्षा सेवा का ले सकते हैं। यह सेवा सबसे अधिक खर्चीली होती है। इसमें होने वाला खर्चा शिक्षित किये जाने वाले बच्चो पर बहुत कुछ निर्भर करता है किन्तु पूरी तरह से ऐसा नहीं है। यदि किसी गाव के स्कूल मे चालीस लड़के पढ़ते है, उसके खर्चे मे उस समय अधिक परिवर्तन नहीं होगा जब कि पढ़ने वाले बालकों की संख्या पचास कर दी जाये। गृह-निर्माण पर होने वाला खर्च भी बहुत कुछ बालको की संख्या पर निर्भर करता है क्योंकि परिवार का आकार घर के आकार को निश्चित करता है और इस प्रकार उसमें लगने वाले धन को भी। स्वास्थ्य सेवाओ मे खर्च होने वाला एक बहुत बड़ा भाग माताओ बालको एवं वृद्धो पर लगता है। इस प्रकार स्थानीय सत्ता के आवश्यक व्यय का मुख्य निर्धारक तत्व उसके परिवारों की बनावट होती है। यदि परिवारो मे बालको की संख्या अधिक है तो स्थानीय सत्ता को उस सत्ता की अपेक्षा अपनी सेवाओ पर अधिक खर्च करना होगा जिसमे बालको का अनुपात कम है। वृद्धो का अनुपात भी बहुत कुछ इसी प्रकार का अनुपात लाता है किन्तु इसकी सेवा निवृत्तियो की व्यवस्था द्वारा कम किया जा सकता है। बालकों की संख्या निर्धन परिवारो मे प्राय: अधिक होती है। इस प्रकार जिन बस्तियों मे अधिकतर गरीब लोग रहते है, वहा स्थानीय सत्ता की आय अपेक्षाकृत कम होती है किन्तु ऐसे क्षेत्रो मे शिक्षा सुविधाओ, चिकित्सालयों, प्रसूतिगृहो आदि की आवश्यकता अधिक होती है।

जैक्सन महोदय का यह मत पूर्णतः सही है कि एक क्षेत्र की धन उगाहने की क्षमता कम होती है, उसमे सेवाओ पर खर्च किए जाने वाले धन की आवश्यकता उतनी ही अधिक होती है। यदि इस प्रकृति को रोका न गया तो यह हो जाएगा कि धनवान क्षेत्र अधिक धनवान हो जाएगे और निर्धन क्षेत्र अधिक निर्धन। निर्धन क्षेत्रो की सेवाओ को देखते हुए आवश्यकता यह प्रतीत होती है कि स्थानीय करो को बढ़ाया जाए। यदि ऐसा किया गया तो लोग घर छोड़कर ऐसे प्रदेशो मे चले जाएगे जहा कर की मात्रा कम है यदि यह प्रक्रिया चलती रही तो निर्धन क्षेत्र उन सेवाओ को प्रदान करने मे अपने आपको अयोग्य महसूस करेगे जो कि अत्यन्त आवश्यक होती है। आज की परिवर्तित परिस्थितियों मे लोगो का दृष्टिकोण यह नहीं रहा है कि जिस प्रकार कुछ लोग अन्य की अपेक्षा अधिक धनवान होते है, उसी तरह कुछ क्षेत्र भी दूसरे क्षेत्रो की तुलना मे सम्पन्न बन जाते हैं और निर्धन क्षेत्रो की जनता से उन सेवाओ को प्राप्त करने की आशा नही की जा सकती जो कि धनवान क्षेत्रो द्वारा प्रदान की जाती हैं। यह विचार

आज पीछे रह चुका है तथा यह एक सामान्य मान्यता बन गई है कि आवश्यक सेवाएं सभी क्षेत्रो को प्रदान की जानी चाहिए। उदाहरण के लिए यह माना जाता है कि प्रत्येक बालक को अच्छी शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए चाहे उसके माता-पिता गरीब हो अथवा धनवान, चाहे वे शहर मे रहते हो अथवा गाव मे। यही बात अन्य आवश्यक सेवाओ के बारे मे भी लागू होती है।

केन्द्रीय सरकार द्वारा दिए जाने वाले अनुदान के लिए समय-समय पर विभिन्न तरीके अपनाए गए है। सेवा के अनुसार भी ये तरीके बदल जाते है, जैसे कि पुलिस अनुदान हमेशा ही स्थानीय सरकार के व्यय के प्रतिशत पर निर्भर रहा है। स्थानीय सरकार अधिनियम सन् १६२६ ने ब्लाक अनुदान (Block Grants) की व्यवस्था की जिसके अनुसार केन्द्रीय धन को स्थानीय सत्ताओ की आवश्यकता के अनुसार वितरित किया गया। वर्तमान समय मे इस बात पर अधिक जोर दिया जाता है कि यदि सन्तोष-जनक इकाइया बनाई जा सकें तो यह अधिक उपयुक्त रहेगा कि अनुदान को की परिभाषित इकाइयो के आधार पर वितरित किया जाय।

सन् १६२६ से पूर्व जो सहायता अनुदान दिया जाता था वह उस समय की परिस्थितियो से प्रभावित था। सर्वप्रथम सहायता अनुदान दिया गया तो यह कोई सुव्यवस्थित व्यवस्था के अनुसार नही था तथा इसको केन्द्रीय नियन्त्रण का एक साधन भी नही माना गया। सन् १८३५ तक यह मान्यता विकसित नही हो पाई थी कि केन्द्रीय एवं स्थानीय सत्ताएं सावयवी सम्बन्ध रखती हैं तथा स्थानीय एवं केन्द्रीय-दोनो ही सत्ताएं सामान्य उद्देश्यो के लिए हिस्सेदार है। इस प्रकार स्थानीय सत्ताओ का विकास बिना किसी व्यापक प्रतियोगिता के हुआ है। सन १८८८ के बाद स्थानीय सरकार मे सावयवी एव एकीकृत भावना का विकास होने लगा। बेन्थम, चाडविक एवं इनके अनेक मित्रो ने अपने कटु अनुभव द्वारा प्रभावित होकर यह विचार प्रकट किया कि स्थानीय सरकार, सरकार के महान यन्त्र का एक तत्व मात्र है। इस काल मे कुछ स्थानीय सेवाओं मे सुधार के लिए केन्द्रीय सहायता अनुदान का समर्थन किया गया। सन् १६१६ के पूर्व के सहायता अनुदान के इतिहास को मुख्य रूप से तीन भागो मे बाटा जा सकता है। इसका प्रथम युग सन् १८३५ से प्रारम्भ होकर सन १८४६ तक चलता है। इस प्रारम्भिक युग मे केन्द्रीय सरकार का अनुदान मुख्य रूप से कृषको के हित को साधना के लिए दिया जाता था। शहरी क्षेत्रो पर होने वाले खर्च की बढ़ी हुई मात्रा को बहुत कुछ देहाती जनता द्वारा दान किया जाता था। देहाती जनता का यह तर्क था कि केवल वास्तविक सम्पत्ति के मूल्य के आधार पर स्थानीय कर को तय करना एक प्रकार से अन्यायपूर्ण है। बदलते हुए समय के अनुसार सम्पति के रूप भी बदल जाते हैं। औद्योगीकरण एवं व्यवसाय का जब विकास हुआ तो शहरी क्षेत्रो की आमदनी बढी किन्तु देहाती जनता को अब भी अधिक कर देना होता था। कृषि का पतन और अन्यायपूर्ण स्थानीय कर व्यवस्था के फलस्वरूप केन्द्रीय सत्ता को स्थानीय व्यय मे हाथ बटाने के लिए प्रभावित किया गया।

इस युग में केन्द्रीय सरकार द्वारा दिए जाने वाले सहायता अनुदान पर वार्षिक मतदान होता था और यह परम्परा सन् १८८८ के गोशेन (Goschen) सुधारों तक चलती रही। सहायता अनुदान से सम्बन्धित पहल एवं नियन्त्रण केन्द्रीय सत्ता के हाथ में रहे। प्रति वर्ष सहायता अनुदान पर विचार होने के कारण संसदीय नियन्त्रण प्रभावशील तथा निरन्तर रूप से नहीं रह पाता था।

दूसरा काल सन् १८३६ से लेकर सन् १८८८ तक चलता है। इस काल में स्थानीय सरकार ने तीव्र गति से प्रगति की। प्रत्येक जगह पुलिस सत्ताओं की स्थापना कर दी गई। सन् १८६२ के बाद सड़कें पूरी तरह से स्थानीय सत्ताओं के नियन्त्रण में आ गयी। सन् १८४८ से जनस्वास्थ्य प्रशासन के बारे में व्यापक स्तर की नीतियां अपनाई गयी। सन् १८७१ में प्राथमिक शिक्षा प्रारम्भ की गई और सन् १८७६ में उसे मुफ्त प्रदान किया जाने लगा। इन सभी नए विकासों के लिए धन की आवश्यकता थी। कृषि हितों की यह शिकायत थी कि शहरों द्वारा देहाती इलाकों की अपेक्षा कम योगदान किया जाता है जब कि वे देहाती इलाकों में रहने वाले लोगों की अपेक्षा स्थानीय सेवाओं का अधिक लाभ उठाते हैं। कृषकों ने अपने हितों एवं दावों को रूढ़िवादी दल के माध्यम से सामने रखा। उनके प्रवक्ता थे डिजरैली और सर मैसे लोप्स (Sir Masses Lopes) सर जार्ज कार्नवेल लेविस (Sir George Cornewall) Lewis, ने यह बताया कि प्रत्येक सरकारी सेवा को राष्ट्रीय कोष से प्रबन्धित किया जाना चाहिए। यह एक सामान्य नियम है और यदि कोई अपवाद रूप में यह चाहे कि किसी विशेष सेवा का दायित्व स्थानीय कोष पर आए तो उसको यह सिद्ध करना होगा कि सामान्य नियम को किन कारणों से तोड़ा जाए, क्या ऐसा करना अधिक सुविधाजनक रहेगा अथवा ऐसी परम्परा पहले से चली आ रही है। कुछ सेवाएं ऐसी होती हैं जिनमें यदि केन्द्रीय कोष से सहायता दी जाए और उनका प्रशासन स्थानीय लोगों के हाथों में छोड़ दिया जाए तो स्थानीय सत्ताओं में अधिक धन मांगने के लिए एक प्रकार से प्रतियोगिता प्रारम्भ हो जाएगी जब धन केन्द्रीय सत्ता से आ रहा है तो स्थानीय सत्ता अपना खर्च कम करने में रुचि नहीं लेगी। मितव्ययता लाने में उसे कोई लाभ नजर नहीं आएगा। जब कर स्थानीय रूप से संग्रहीत होता है तो यदि बुद्धिहीन रूप से खर्च किया गया तो अधिक कर लगाने की जरूरत पड़ेगी और इसके जो गम्भीर परिणाम होंगे, वे शीघ्र ही स्थिति में परिवर्तन ला देंगे। लेविस तथा अन्य लोगों ने यह तर्क किया कि यदि केन्द्रीय सरकार सहायता देती है तो यह आवश्यक है कि केन्द्रीय निरीक्षण एवं स्थानीय अधिकारियों की नियुक्ति एवं विमुक्ति के सम्बन्ध में उसका निर्देशन बढ़ जाएगा। संसद बिना अपना नियन्त्रण रखे किसी धन का भुगतान करने की स्वीकृति नहीं दे सकती। यह आशंका की जाती है कि केन्द्रीय सत्ता द्वारा दिए जाने वाले योगदान के कारण नौकरशाही पनपेगी।

स्थानीय सरकार के विकास के साथ ही यह आवश्यकता महसूस की जाने लगी कि सरकारी अनुदान की व्यवस्था में परिवर्तन किया जाए।

कामन्स सभा में स्थानीय क्षेत्र एवं सत्ता के बारे में समय–समय पर वाद–विवाद हुए। स्थानीय सरकार को पुनर्गठित करने के प्रश्न पर विचार किया गया। सदन के दोनों ही दल प्रायः इस बात पर सहमत थे कि काउन्टीज में प्रजातन्त्रात्मक परिषदों की स्थापना की जाय। किन्तु सरकारी पक्ष हमेशा इस बात पर जोर देता था कि पहले क्षेत्रों के सम्बन्ध में निर्णय लिया जाय और उसके बाद अनुदान के सम्बन्ध में। प्रोफेसर फाइनर ने लिखा है कि उस समय स्थानीय सरकार क्षेत्रों की अव्यवस्था, सत्ताओं की अव्यवस्था एवं रेट्स (Rates) की अव्यवस्था थी।* यह मानना उचित भी था कि जब तक क्षेत्रों के सम्बन्ध में कोई निर्णय न लिया जाय, उस समय तक वित्तीय व्यवस्था में किसी प्रकार का सुधार करना महत्वहीन था। उस समय रेट्स (Rates) तथा सहायता–अनुदान के बारे में सदन का जो मत था, उसकी विशेषता यह थी कि व्यक्तिगत एवं वास्तविक सम्पत्ति को स्थानीय राजस्व का स्रोत बनाया जाय। दूसरे, स्थानीय सरकार के खर्चे को यथासम्भव कम किया जाय ताकि राष्ट्रीय वित्त जटिल न बने। राष्ट्रीय लेखों को मात्रिकीय रूप से अस्पष्ट न बनाया जाए। तीसरे, केन्द्रीयकरण को दूर किया जाय। चौथे, अनुदान के बुद्धिपूर्ण प्रबन्ध द्वारा स्थानीय प्रशासन में मितव्ययता लाई जाय। पाचवें, पेरिश को सरकार की इकाई के रूप में पुनर्गठित किया जाय। पुनर्गठन व्यवस्था में प्रत्येक क्षेत्र को शेष के साथ फिट बैठाया जाय। पेरिश को सबसे छोटी इकाई बनाया जाय। सन् १८८८ में गोशेन आदि विचारकों ने पुरानी वार्षिक अनुदान की परम्परा को बन्द करने पर जोर दिया। नवीन व्यवस्था के अनुसार काउन्टीज को केन्द्रीय सरकार एवं छोटी स्थानीय सत्ताओं के बीच रख दिया गया किन्तु उनको मितव्ययता एवं कार्यकुशलता के लिए नियन्त्रण या निरीक्षण करने का अधिकार नहीं दिया गया।

तीसरा युग सन् १८८८ से सन् १९२९ तक माना जाता है। इस काल का महत्व उन समस्याओं की जननी के रूप में है जो कि वर्तमान समय की मुख्य विशेषताएं हैं। इस युग में कई एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किए गए और उनके आधार पर तत्कालीन व्यवस्था में सुधार किए गए। बीसवीं शताब्दी के इन प्रारम्भिक वर्षों में रेलवे यातायात का विकास हुआ और मोटरकार बनने लगी। इसके परिणामस्वरूप धनवान लोगों के जिलों एवं निर्धनों के जिलों के बीच गहरी खाई बढ़ती गई। ऐसी स्थिति में यह आवश्यकता महसूस की जाने लगी कि गरीब क्षेत्रों को भी आवश्यक सेवाएं प्रदान करने की व्यवस्था की जाये।

सन् १९२९ में स्थानीय सरकार में सुधार करने की आवश्यकता बहुत बढ़ गई। बढ़ती हुई बेरोजगारी के कारण केन्द्रीय सरकार को स्थानीय कोष में योगदान करने की जरूरत अधिक हो गई। आवश्यकतापूर्ण क्षेत्र की समस्याएं जोर पकड़ने लगीं। ये पहले से ही गम्भीर थीं किन्तु अब ये

*"For local Govt was then a chaos of areas, a chaos of authority, and a chaos of rates"

—*Herman Finer*, op. cit., P 458.

असहनीय बन गई। प्रतिशत के आधार पर दिए जाने वाले अनुदानों से चाहे कोई भी लाभ क्यो न हो किन्तु इसकी सबसे बड़ी हानि यह थी कि इसने स्थानीय सत्ताओ को उनकी आवश्यकताओं के अनुपात मे योगदान नही किया। उद्योगो की वृद्धि के कारण छोटे क्षेत्रो के प्रति असन्तोष प्रकट किया जाने लगा। इन सब परिस्थितियो के परिणामस्वरूप सुधार की आवश्यकता महसूस की जाने लगी तथा इस बात पर जोर दिया जाने लगा कि सहायता वहीं दी जाए जहा कि सहायता देना जरूरी है। सन् १९२९ में स्थानीय सरकार अधिनियम पास करके स्थित व्यवस्था मे भारी परिवर्तन किया गया। इसने सहायता अनुदान पर पुनर्विचार करने के लिए प्रेरित किया। इस अधिनियम ने पुलिस अनुदान, शिक्षा अनुदान, गृह निर्माण अनुदान एवं सड़को से सम्बन्धित अनुदान को नही छुआ। सम्भवतः इसका कारण यह था कि इन क्षेत्रो मे व्यवस्था को सन्तोषजनक माना गया।

इस अधिनियम ने जिन सिद्धान्तो के आधार पर निर्णय लिया, उनमे प्रथम यह था कि स्थानीय सेवाओ के मूल्य के लिए कोषाध्यक्ष (Exchequer) द्वारा न्यायपूर्ण रूप से अनुदान दिया जाए। दूसरे, स्थानीय सत्ताएं अपने प्रशासन में पूर्ण वित्तीय अभिरुचि लें। तीसरे, अनुदान को क्षेत्रीय आवश्यकताओ के अनुसार रखा जाए। चौथे, अनुदान द्वारा स्थानीय प्रशासन एवं पहल को अधिक से अधिक स्वतन्त्रता प्रदान की जाए। पांचवें, अनुदान के साथ-साथ केन्द्रीय विभाग, स्थानीय सत्ताओ पर सामान्य नियन्त्रण एवं परामर्श का अधिकार रखे ताकि कार्य-सम्पन्नता के एक बुद्धिपूर्ण स्तर को बनाये रखा जा सके। सन् १९२९ के अधिनियम ने जिन अनुदानो की व्यवस्था की, वे ब्लाक अनुदान एवं फार्मूला अनुदान की संयुक्त व्यवस्था थी। स्थानीय सत्ताएं जब अनुदान प्राप्त करती थीं तो उनको उन सेवाओ के बारे में विशेष रूप से कुछ नही बताना होता था जो कि इस धन का उपयोग करेंगी। अनुदान की मात्रा को व्यय के प्रतिशत के अनुसार या मापक इकाई के अनुसार तय नहीं किया गया जाता था किन्तु ऐसे सिद्धान्तो के आधार पर तय किया जाता था जो कि स्थानीय आवश्यकताओ के प्रसार का दिग्दर्शन कर सकें।

इस प्रकार सन् १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने अनुदान की पूरी व्यवस्था को बदल दिया। पहले जो अनेक अनुदान प्रतिशत के आधार पर दिये जाते थे अथवा निर्धारित राजस्व के आधार पर दिए जाते थे उनको रोक दिया गया और ब्लाक अनुदान की व्यवस्था को प्रारम्भ किया गया। इसका उद्देश्य यह था कि स्थानीय सत्ताओ की आवश्यकताओ को पूरा किया जाय और कुछ सम्पत्तियों पर से रेट (Rate) हटाने के कारण उनको जो नुकसान हुआ है उसकी पूर्ति की जाए। यह ब्लाक-अनुदान काउन्टीज एवं काउन्टी बारोज की परिषदों को एक सूत्र (Formula) के आधार पर दिया जाता था। अनुदान की मात्रा को कई एक बातों पर विचार करने के बाद तय किया जाता था, जैसे क्षेत्र की जनसंख्या क्षेत्र में पन्द्रह वर्ष से कम उम्र के बच्चों की संख्या, क्षेत्र में जनसंख्या की व्यापकता, क्षेत्र का कुल रेट योग्य मूल्य तथा क्षेत्र मे बेरोजगारी का स्तर, आदि।

काउन्टी परिषद द्वारा जो अनुदान प्राप्त किया जाता था उसको काउन्टी परिषद एवं उसके क्षेत्र के काउन्टी जिलों की परिषदों में बाट दिया जाता था। जब काउन्टी के अनुदान को गैरकाउन्टी बारोज, शहरी जिलो एव देहाती जिलो मे बाटा जाता था तो ऐसा करते समय जनसख्या को आधार बनाया जाता था। जिला परिषदों द्वारा प्राप्त मदों को कैपीटेशन अनुदान (Capitation Grant) कहा जाता था क्योकि जनसख्या के प्रत्येक व्यक्ति को अनुदान की निश्चित मात्रा प्रदान की जाती थी। शहरी क्षेत्रों में दिया जाने वाला प्रति व्यक्ति अनुदान देहाती क्षेत्रो के प्रति व्यक्ति अनुदान से पाँच गुना होता था। इस अन्तर का मुख्य कारण यह था कि देहाती जिलों में प्रशासनिक सेवाओं का मूल्य कम होता था क्योकि वहां जनसख्या कम रहती थी। दूसरे, अनेक सेवाओं का खर्च भी उन्हें नही सम्भालना होता था। इस अधिनियम ने कृषि, भूमि एव भवनों को रेट देने से मुक्त कर दिया। औद्योगिक एव यातायात संस्थाओं को भी तीन–चौथाई रेट देने से मुक्त कर दिया गया।

सन १९४८ के अधिनियम के अनुदान व्यवस्था में और भी परिवर्तन किए। इसके द्वारा अस्पताल एव जन-सहयोग को स्थानीय सरकार से केन्द्रीय सरकार को हस्तान्तरित कर दिया गया। इन क्षेत्रों में स्थानीय सत्ताओं द्वारा एक बहुत बडी रकम खर्च की जाती थी। अतः सरकारी अनुदान के स्तर मे कुछ परिवर्तन किया जाना अत्यन्त आवश्यक बन गया। इसके अतिरिक्त स्थानीय सेवाओं के खर्च का भी मूल्य बढ गया। सन् १९२९ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने अनुदान के वितरण के लिए जो व्यवस्था की थी, वह असन्तोषजनक प्रतीत होने लगी। इसके अतिरिक्त सरकार निर्धनतम स्थानीय सत्ताओं को अधिक वित्तीय सहायता देने के लिए उत्सुक थी तथा उनको उनके क्षेत्रों म सेवाए विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। सन् १९४८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने कोषाध्यक्ष के सम्मानतापूर्ण अनुदान (Exchequer Equalisation Grants) की व्यवस्था की। यह अनुदान भी पूर्ववर्ती ब्लाक अनुदान की भांति जन-सख्या पर आधारित था किन्तु इसमें एक नए सूत्र को अपनाया गया ताकि निर्धन स्थानीय सत्ताओं को अधिक उदारतापूर्वक सहायता दी जा सके। ब्लाक अनुदान की तरह से यह अनुदान भी स्थानीय सरकार को उसके सामान्य खर्चे की दृष्टि से दिया जाता था, न कि किसी विशेष सेवा के लिए। विशेष सेवाओं के लिए जो सहायता दी जाती थी, उसको सन् १९४८ के अधिनियम ने बन्द नहीं किया। इस प्रकार का अनुदान गृह निर्माण, शिक्षा, पुलिस एवं सडकों के सम्बन्ध मे दिया जाता था।

सन् १९५८ मे स्थानीय सरकार अधिनियम पास हुआ। इसमें भी सरकारी अनुदान की व्यवस्था मे कुछ परिवर्तन किए गए। सन् १९५७ में एक सरकारी श्वेत पत्र [White-Paper] प्रकाशित हुआ जिसमें बताया गया कि तत्कालीन प्रतिशत अनुदान ने स्थानीय सत्ताओं को अपव्ययपूर्ण रूप से खर्च करने के लिए प्रोत्साहित किया था और इसके कारण केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण एवं प्रतिबन्ध का उत्तरदायित्व बढ़ गया। सन् १९५८ के अधिनियम ने काउन्टीज तथा काउन्टी बारोज की परिषदों को नए सामान्य

अनुदान प्रारम्भ किए जिन्हें अप्रेल माह से प्रारम्भ किया गया। इसके साथ ही कुछ अनुदानों को रोक दिया गया। इनमें कई सेवाओं से सम्बन्धित विशेष अनुदान थे; जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य एवं कल्याण-सेवाएं, शहर-नियोजन, अग्नि-सेवाएं, बाल सुरक्षा, सडक सुरक्षा, पुलिस यातायात, शारीरिक प्रशिक्षण एवं मनोरंजन आदि। इस अधिनियम ने गृह-निर्माण, सडक और पुलिस सेवाओं से सम्बन्धित अनुदान को प्रभावित नहीं किया। जब प्रत्येक स्थानीय सत्ता के लिए अनुदान की मात्रा को निर्णीत किया गया तो कई एक तत्वों को ध्यान में रखा गया; जैसे जनसंख्या का आकार एवं वितरण, पन्द्रह साल से कम उम्र वाले बच्चों की संख्या, पांच वर्ष से कम उम्र वाले बच्चों की संख्या, पैंसठ वर्ष से ऊपर की उम्र वाले लोगों की संख्या तथा स्कूलों में पढ़ने वाले बालकों की संख्या।

स्थानीय कर
[Local Taxation]

कर से सम्बन्धित समस्याएं प्रत्येक प्रकार की मुख्य समस्याएं होती हैं। सरकार के विभिन्न दायित्वों को पूरा करने के लिए जो सेवाएं सम्पन्न की जाती हैं, उनमें धन की आवश्यकता होती है और यह धन स्थानीय जनता से उगाया जा सकता है किन्तु धन को उगाहने का ऐसा कोई तरीका नहीं है जिसके प्रति विरोध प्रकट न किया जा सके। दूसरे शब्दों में पूर्णतः श्रेष्ठ कर एक शब्दों का विरोधाभासमात्र है। कर को अच्छा कहने का अर्थ केवल यही है कि उसको देने वाले व्यक्तियों को परेशानी महसूस न हो और उसे आसानी से संग्रहीत किया जा सके। कर अच्छे होने का अर्थ यह भी हो सकता है कि इससे कुछ सामाजिक नीतियों को क्रियान्वित करने में सुविधा रहती है। उदाहरण के लिए यातायात कर को लिया जा सकता है। यातायात कर राजस्व की वृद्धि के लिए लगाया जाता है किन्तु कई बार यह आयात को कम करने के लिए भी एक साधन का काम करता है ताकि देश के उद्योगों को खपत के लिए बाजार प्रदान किया जा सके। कई एक वस्तुओं की खपत कम करने के लिए भी उन पर कर लगाया जाता है, उदाहरण के लिए यदि अधिक शराब पीना एक सामाजिक बुराई है तो स्प्रिट पर कर लगाने से इस बुराई को रोका जा सकता है और यह कर एक अच्छा कर कहलाएगा किन्तु यह कर उन लोगों द्वारा बुरा समझा जाएगा जो कभी अधिक नहीं पीते। कहने का अर्थ यह है कि उपयोगी एवं आवश्यक चीजों पर लगाया हुआ कर प्रायः अच्छा नहीं माना जाता क्योंकि इससे अधिकांश लोगों को असुविधा होती है। दूसरी ओर सामाजिक बुराइयों को रोकने के उद्देश्य से लगाया गया कर यद्यपि कुछ लोगों की परेशानी का कारण बनता है किन्तु फिर भी इसे अच्छा समझा जाता है।

कर के सम्बन्ध में एक दूसरी कठिनाई यह उत्पन्न होती है कि इसे लगाते समय समानतापूर्ण व्यवहार किया जाए अथवा असमानतापूर्ण। दोनों व्यवस्थाओं की अपनी बुराइयां हैं। यदि सभी नागरिकों की समानता को आधार बना कर 'कर' का भार सभी व्यक्तियों पर एक जैसा डाला जाए तो एक गरीब व्यक्ति को भी उतना ही धन देना

पड़ेगा जितना एक धनवान एवं समर्थ व्यक्ति को। यह व्यवस्था और भी अधिक अन्यायपूर्ण है। यदि हम लोगों पर उनको देने की क्षमता के आधार पर कर लगाएं तो दूसरे प्रकार की कठिनाई उत्पन्न होती है, वह यह कि स्तर के निम्नतम बिन्दुओं पर हम कुछ भी कर न लगाने के लिए प्रेरित होंगे, किन्तु कुछ लोगों को कर देने के उत्तरदायित्व से मुक्त कर दिया गया तो वे अपने राजनैतिक उत्तरदायित्वों के प्रति सजग नहीं रह सकेंगे। यदि देने की योग्यता के आधार पर कर का निश्चय किया जाए तो मध्यम वर्ग एवं उच्च वर्ग पर भार और भी बढ़ जाएगा तथा इसका पर्याप्त विरोध किया जाएगा। करारोपण की इस उलझी हुई व्यवस्था में मानवीय शक्ति की एक बहुत बड़ी मात्रा इस संघर्ष में ही लग जाएगी कि कर अधिक से अधिक लिया जाए और कर कम से कम लिया जाए। यदि कर लगाते समय सामाजिक न्याय को ध्यान में रखा जाए तो जो व्यवस्था सामने आएगी, वह अत्यन्त जटिल होगी तथा प्रशासकीय दृष्टि से अत्यन्त अपव्ययपूर्ण। यदि कर की किसी व्यवस्था में करों की चोरी की सम्भावनाएं अधिक रहती हैं तो उस कर व्यवस्था को श्रेष्ठ नहीं समझा जा सकता; उदाहरण के लिए आय कर को लिया जा सकता है। यदि राजस्व सत्ताएं अपना पूरा स्टाफ न रखें तो वेतनभोगी लोग आयकर दे देंगे किन्तु किसान और व्यापारी लोग कर देन के उत्तरदायित्व से पूरी तरह बच निकलेंगे। अतः एक अच्छी कर-व्यवस्था को सरल तथा आसान बनाया जा सकता है ताकि वह अधिक जटिल एवं व्यापक सैद्धान्तिक नियमों के कारण अपूर्ण प्रशासन का कारण न बन जाए।

करारोपण के क्षेत्र में कुछ ऐसे सिद्धान्त होते हैं जिनको अपनाया जा सकता है किन्तु फिर भी बहुत कुछ निर्णय समझौतेपूर्ण प्रक्रिया द्वारा लिए जाते हैं। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें किसी प्रस्ताव के परिणामों के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। लोगों की प्रतिक्रिया क्या होगी इसका निश्चय करना अत्यन्त कठिन है। जो अर्थशास्त्री, जो हो चुका है तथा जो हो रहा है—उसका विश्लेषण करने में अत्यन्त कुशल होते हैं वे क्या होगा—यह दिखाने के लिए समान योग्यता प्रदर्शित नहीं करते। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि बदली हुई परिस्थितियों में लोग कैसा व्यवहार करेंगे, यह केवल अध्ययन के आधार पर नहीं जाना जा सकता।

स्थानीय करों के सम्बन्ध में कुछ बातें ध्यान में रखने योग्य और भी हैं। इनमें प्रथम यह है कि यह कर स्थानीय होना चाहिए। स्थानीय चीजें स्पष्ट रूप से जमीन तथा व्यक्ति होते हैं। व्यक्तियों पर स्थानीय निर्वाचकों या परिवारों के मुखियाओं के रूप में कर लगाए जा सकते हैं। प्रति व्यक्ति कर लगा कर राजस्व का बढ़ाना एक अत्यन्त लोकप्रिय तरीका है। इस प्रकार का कर गरीबी या अमीरी का ध्यान नहीं रखता है। भुगतान की योग्यता के अनुसार कर लगाने की बात को आयकर के सम्बन्ध में माना जाता है। इस सम्बन्ध में गम्भीर कठिनाई यह उत्पन्न हो जाती है कि व्यक्ति की आय को स्थानीय सरकार की इकाइयों से सम्बन्धित नहीं किया जा

सकता। कई एक मामलों मे हम यह नही कह सकते कि आय किस क्षेत्र से ली जा रही है। आमदनी किसी कम्पनी, किसी व्यापार, उसकी किसी शाखा या ऐसे स्रोतो से हो सकती है जिनके स्थानो का पता नही लग पाता। आय प्राप्त करने वाला व्यक्ति कार्य एक स्थान पर करता है किन्तु वह दूसरे स्थान पर रह सकता है। किसी व्यक्ति की चल सम्पत्ति पर जो कर लगाया जाता है उसके सम्बन्ध मे ये कठिनाइया उत्पन्न नही होती क्योकि इस सम्पत्ति को किसी विशेष स्थानीय सत्ता मे रखा जा सकता है। मोटर-गाडियो पर, कुत्तो पर या अन्य विशेष चीजो पर कर लगाने मे कोई विशेष तकनीकी कठिनाई नही होती किन्तु इन सम्पत्तियो का वार्षिक मूल्यांकन करने मे पर्याप्त कठिनाई होती है। निवास स्थान के बारे मे किसी प्रकार के शक की गुंजाइश नही रहती, इसलिए उस पर स्थानीय कर आसानी से लगाया जा सकता है। जिन वस्तुओ पर कर लगाया जाता है, उनके सम्बन्ध मे भी अनेक व्यावहारिक कठिनाईयां उत्पन्न हो जाती है।

स्थानीय सत्ता के क्षेत्रो के लिए चुगी और आबकारी कर का मूल्यांकन तथा संग्रह आसानी से नही किया जा सकता। चुगी प्रायः सीमाओं पर अथवा समुद्री बन्दरगाहो पर ली जाती है और आबकारी कर उन वस्तुओ के निर्माताओ से लिया जाता है। यह अनुपयुक्त समझा जाता है कि एक स्थानीय सत्ता ऐसी वस्तु पर कर लगा कर उसके धन को अपने पास रख ले जो कि उसके क्षेत्र मे निर्मित हुई है किन्तु उसे अन्य सत्ता के क्षेत्र मे बेचा जा रहा है। इसी तरह से एक सत्ता को अपने बन्दरगाह पर आने वाले उस सामान पर कर नही लगाने दिया जाएगा जो कि पूरे देश मे वितरित किया जाता है। ऐसी अनेक वस्तुए एवं क्रियाए हैं जो कि स्थानीय हैं और जिन पर बिना किसी तकनीकी कठिनाई के स्थानीय सत्ता के राजस्व के लिए कर लगाया जा सकता है। ग्रेट ब्रिटेन मे मोटर-गाडी के लाइसेन्स तथा कुछ अन्य परमिटो से होने वाली आय स्थानीय सत्ताओ को प्राप्त होती है। इनमे से कुछ लाइसेन्स तो केवल नियमन के लिए होते हैं और इनसे लिये जाने वाले धन की मात्रा केवल इतनी होती है कि जितना इनके प्रशासन मे खर्च आ जाता है किन्तु मोटर-गाडियो के लाइसेन्सो से एक बहुत बड़ा राजस्व प्राप्त होता है। यहा एक परेशानी यह उत्पन्न हो जाती है कि जिन स्रोतो से अधिक धन प्राप्त हो सकता था, वे केन्द्रीय सरकार ने पहले से ही अपने हाथ मे ले लिए हैं किन्तु इससे स्थानीय सत्ता के कर लगाने की शक्ति पर अधिक अड़चन नही आती। वह भी इन सेवाओ या चीजो पर अतिरिक्त कर लगा सकती है किन्तु इस रूप मे प्राप्त धन पर्याप्त नही होता। ऐसी स्थिति मे यह सुझाव दिया जाता है कि केन्द्रीय सरकार को स्थानीय सत्ताओ के खातिर कर के कुछ स्रोतो को छोड देना चाहिए। जब जमीन या भवन को स्थानीय कर का आधार बनाया जाता है तो ऐसी कोई कठिनाई उत्पन्न नही होती। स्थानीय सरकार की प्रायः सभी व्यवस्थाएं अपने राजस्व का अधिकांश भाग जमीन पर कर लगा कर प्राप्त करती हैं। ग्रेट ब्रिटेन में इस प्रकार के कर के लिए अत्यन्त विकसित रूप से रेट की व्यवस्था है। इसमे अनेक कठिनाइयां हैं और इसको एक आदर्श के रूप मे नहीं अपनाया जा सकता किन्तु उसके कुछ उपयोग भी हैं।

रेट की व्यवस्था [The Rating System]—रेट्स स्थानीय करों के रूप हैं जो कि स्थानीय सरकार के क्षेत्र में रहने वाले जमीन एवं भवनों के स्वामियों द्वारा प्रदान किए जाते हैं। ये कर उन सेवाओं के बदले में दिए जाते हैं जो कि क्षेत्र द्वारा प्रदान की जाती हैं। स्वामी द्वारा भुगतान की जाने वाली मात्रा जमीन के अनुमानित वार्षिक मूल्य पर (Rateable Value) कर जाता है। यह मूल्य उस मात्रा के बराबर होता है जो कि एक किराएदार द्वारा प्रतिवर्ष किराए के रूप में दिए जाने की आशा की जाती है। यह किराया उसके द्वारा तब दिया जाता है जब कि रेट्स, बीमा एवं मरम्मत तथा अन्य उन खर्चों का भार भी उसी के द्वारा वहन किया जाता है जो कि किराया लेने के लिए राज्य में सम्पत्ति को बनाए रखने के लिए जरूरी है। इस प्रकार यह भी एक घर का रेट योग्य मूल्य चालीस पौंड प्रति वर्ष है तो उक्त स्थिति में किराएदार सोलह शिलिंग प्रति सप्ताह कम करके किराया देगा।

रेटिंग व्यवस्था के इतिहास का प्रारम्भ मध्यकालीन पेरिशों के साथ प्रारम्भ होता है। उस समय प्रत्येक पेरिशवासी अपने साधनों के अनुसार स्थानीय चर्च की व्यवस्था के लिए योगदान करता था। सन् १५५५ के अधिनियम ने पेरिशवासियों का यह कर्तव्य बना दिया कि वे स्थानीय सड़कों के बनाने में उनकी सेवायें प्रदान करें। यदि पेरिशें अपना यह कार्य न कर पायें तो शान्ति का न्यायाधीश उन पर जुर्माना लगा सकता था। यह जुर्माना उतना ही होता था जितना कि उन सड़कों की मरम्मत में खर्च करना पड़े। सन् १६९१ के सड़क अधिनियम के अनुसार इस प्रकार दण्डित कोई भी पेरिशवासी यदि अपना दण्ड स्वयं देने में असमर्थ है तो वह इसे अपने साथियों से उगाह कर इकट्ठा कर सकता था। इस व्यवस्था ने सड़क रचना के लिए रेटिंग व्यवस्था (Rating System) की स्थापना की।

सन् १६०१ का निर्धन राहत अधिनियम यह माग करता था कि स्थानीय निवासी पेरिश के गरीबों की राहत के लिए अपना योगदान करें। अधिनियम द्वारा चर्च वार्डन तथा पेरिश के ओवरसीयर को प्रत्येक निवासी की अचल सम्पत्ति मूल्यांकन करने की एवं उसके आधार पर निर्धन राहत के व्यय के के लिए उस पर कर लगाने की शक्ति प्रदान की। प्रारम्भ में इस प्रकार संग्रहीत धन का उपयोग निर्धन राहत के लिए किया जाता था किन्तु बाद में औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप जब स्थानीय सत्ताओं के कार्य बढ़े तो इस धन का प्रयोग अन्य कार्यों के लिए भी किया जाने लगा और अतिरिक्त कर लगाये जाने लगे। अधिकांश नये कर सम्पत्ति के उसी मूल्यांकन पर निर्भर रहे जो कि निर्धन कानून के तहत किया गया था सैंकड़ों वर्ष पूर्व यह एक सामान्य धारणा थी कि व कभी किसी सरकारी कार्य से व्यक्तिगत सम्पत्ति का सुधार हो जाय तो उसे उस कार्य के लिए उसी अनुपात में योगदान करना चाहिए जिसमें उसे लाभ प्राप्त है। उन्नीसवीं शताब्दी तक विभिन्न के लिए अनेक प्रकार के रेट्स (Rates) की व्यवस्था कर दी गई। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में कई एक विधेयक संसद में प्रस्तुत किये गये ताकि एकरूप एवं सरल रेटिंग व्यवस्था को स्थापित किया जा सके।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि रेटिंग का इतिहास स्थानीय सरकार के इतिहास के साथ प्रारम्भ होता है। जेक्सन महोदय लिखते हैं कि रेट्स (Rates) के रूप मे जाना जाने वाला स्थानीय कर सदा ही स्थानीय सत्ताओ के साथ और मुख्य रूप से पेरिशो के साथ संयुक्त रहा है।* जब कभी पेरिश द्वारा कोई ऐसा खर्च किया जाता जो कि उसके निवासियो द्वारा चुकाया जाना चाहिए तो इसके लिए रेट लगा दी जाती थी। एक कार्य मे होने वाले कुल व्यय को सम्पत्ति के मूल्यांकन के आधार पर उसके अनुपात मे स्थानीय निवासियो मे बांट दिया जाता था। रेट्स वैसे स्थानीय कर होते है किन्तु कुछ विचारक करो एवं रेट्स मे अन्तर पाते हैं। उनका कहना है कि यदि आपको एक निश्चित मात्रा मे धन एकत्रित करना है और आप यह तय कर देते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति द्वारा इस मात्रा के लिए कितना धन दिया जायेगा तो जो कुछ भी लिया जा रहा है वह रेट्स है; किन्तु जब लोगो से सार्वजनिक व्यय का भुगतान करने के लिए धन की एक निश्चित मात्रा लेनी पड़े तो यह कर कहा जायेगा। यह कोई उल्लेखनीय अन्तर नही है। कोई भी सरकार ऐसा नहीं करती कि पहले वह कुछ धन एकत्रित कर ले और बाद मे वह यह सोचे कि इस धन का क्या किया जाये। केन्द्रीय सरकार मे अनेक ऐसे व्यय होते है जिनके लिए धन संग्रह करना ही होता है तथा करों को कुल वांछित मात्रा के अनुसार निश्चित कर दिया जाता है।

रेटिंग की प्रारम्भिक मान्यता एक स्थानीय कर के रूप मे ही थी जिसको कि व्यक्ति की सम्पत्ति की मात्रा के अनुसार तय किया जाता था। उसकी सारी सम्पत्ति का अर्थात् भूमि, भवन, घर की चीजें, पशु आदि का, मूल्यांकन कर लिया जाता था। बाद मे चल सम्पत्ति का मूल्यांकन करने मे कठिनाई का अनुभव किया गया और मूल्यांकन का एकमात्र आधार भूमि एवं भवन बन गया।

रेट के आधार पर जो स्थानीय सत्ता धन एकत्रित करती थी, वह यह तय करती थी कि सम्पत्ति के प्रत्येक स्वामी से कितना धन एकत्रित किया जायेगा और उसके बाद वह करदाता के सामने अपनी मांग रख देगी। इस प्रकार करदाता को काउन्टी की मांग प्राप्त होती, दूसरी देहाती जिले से, तीसरी पेरिश से, चौथी स्कूल बोर्ड से तथा इसी प्रकार अन्य दूसरी सत्ताओ से। जब स्थानीय सत्ताओ को पुनः प्रबन्धित किया गया तो विशेष उद्देश्य वाली सत्ताओ के स्थान पर सामान्य उद्देश्य वाली सत्ताओ को स्थापित किया गया। स्थानीय सत्ताओ के संगठन मे जब सूत्र व्यवस्था (Tiers System) को लागू किया गया तो काउन्टी, काउन्टी जिले तथा देहाती जिलो मे परिषदो के लिए अलग से रेट प्रदान करने की व्यवस्था की गई। करदाता को दो या तीन भुगतानो की परेशानियो से बचाने के लिए जिला परिषदो को रेट लेने

*"The form of local taxation known as rates has always been associated with local authorities and principally with parishes."

—*R. M. Jackson*, op. cit., P. 163.

वाली सत्ता बना दिया गया। इसका अर्थ यह था कि आवश्यक धन को एकत्रित करने का दायित्व इन्हीं पर डाल दिया गया। काउन्टी परिषद तथा पेरिश परिषदें अपनी मांगों की औपचारिक सूचना देहाती जिलों के पास भेज देती है तथा देहाती जिले अपनी मांगें करदाता के सामने रखते हैं तो वे इन मांगों को भी साथ ही मिला लेते हैं। धन संग्रह के बाद देहाती जिले अपने अनुपात को रख कर, बाकी का धन काउन्टी परिषद एवं प्रत्येक पेरिश को उनके अनुपात के आधार पर सौंप देते हैं।

स्थानीय रेटिंग व्यवस्था के आधारभूत सिद्धान्त मुख्य रूप से चार हैं-प्रथम यह कि एक व्यक्ति को रेट देने की योग्यता उसके द्वारा स्वामित्व की गई वास्तविक सम्पत्ति, भूमि, भवन आदि के किराये के मूल्य के आधार पर निर्धारित की जाती है। दूसरे, रेट का भुगतान करने का उत्तरदायित्व मुख्य रूप से वास्तविक सम्पत्ति के स्वामी पर आकर पड़ता है। तीसरे, विभिन्न स्थानीय सत्ताओं के दावे एक ही रेट में समूहीकृत कर दिये जाते हैं और करदाता से एक ही सामूहिक मांग रखी जाती है। चौथे मूल्यांकन के सिद्धान्तों एवं तरीकों में एकरूपता लाने के लिए मूल्यांकन का क्षेत्र बड़ा हो गया है।

रेट लगाने की प्रक्रिया उस क्षेत्र के प्रश्न के कारण जटिल बन जाती है जिसमें एक भुगतान को फैलाया जाना है। यह काउन्टीज के प्रसंग में अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि शिक्षा आदि कई एक खर्चीली सेवाओं का दायित्व काउन्टी परिषदों का ही होता है तथा इन सेवाओं का खर्च पूरी काउन्टी पर डाला जाना चाहिए। किन्तु यदि काउन्टी का एक जिला किसी सेवा का प्रबन्ध स्वयं ही करता है तो उनसे सम्बन्धित कर को वह काउन्टी को देने को बाध्य नहीं है। उदाहरण के लिए यदि एक गैर-काउन्टी बारो की स्वयं की पुलिस सत्ता है तो जब काउन्टी द्वारा पुलिस सेवा के लिए काउन्टी भर में कर लगाया जायेगा तो उन जिले को छोड़ दिया जायेगा। जो कर पूरे क्षेत्र पर लगाया जा सके, वह सामान्य कहलाता है और जिसे केवल एक क्षेत्र मात्र पर ही लगाया जाये, वह विशेष कहलाता है। क्षेत्र की यह समस्या प्रायः देहाती जिलों में उठती है। वहां यदि जल वितरण की सेवा अथवा नाली सफाई से सम्बन्धित सेवा जिले के एक भाग मात्र को प्रदान की जा रही है तो क्या उसमें सम्बन्धित कर केवल उसी भाग से लिया जाये अथवा पूरे जिले में ही लिया जावे। कुछ लोगों का कहना यह है कि जो सेवा पूरे क्षेत्र के लिए लाभ प्रदान नहीं करती है, उसके खर्च को केवल उस भाग से ही लिया जाना चाहिए जो कि लाभान्वित हो रहा है। दूसरी ओर यह भी कहा जाता है कि कर के भार को जितने अधिक लोगों में बांटा जायेगा वह उतना ही हल्का हो जायेगा। इङ्गलैण्ड में पहले यह व्यवस्था थी कि एक सेवा से सम्बन्धित खर्च के लिए कर केवल उसी भाग से लिया जाये जो कि लाभान्वित हो रहा है। किन्तु युद्ध के बाद व्यवहार बदल गया है तथा यह एक सामान्य व्यवहार बन गया है कि कर का भार पूरे जिले पर ही डाला जावे। यदि कर का निर्धारण करदाताओं की इच्छा से किया जाये तो ज्ञात होगा कि वे किसी भी सेवा को प्राप्त करने के लिए उत्सुक नहीं हैं। वे कर से बचने के लिए यह चाहेंगे कि

उनकी गलियो को भी साफ न किया जाये; किन्तु जब सफाई से सम्बन्धित व्यय को पूरे क्षेत्र पर डाला जायेगा तो जो लोग इस समय सफाई सेवाओ से लाभान्वित नही हो रहे हैं वे यह माग करेंगे कि उनको भी ये सेवायें प्रदान की जानी चाहिए क्योकि वे इसके लिए भुगतान कर रहे हैं।

रेट्स के मूल्यांकन से सम्बन्धित विभिन्न अधिनियम [Different Acts related to the Rating and Valuation]—रेट निर्धारित करने के सम्बन्ध मे ससद द्वारा समय समय पर अधिनियम पारित किये गये है। सन् १८४० मे एक अधिनियम पास हुआ और उसके बाद इस दृष्टि से कई अन्य महत्वपूर्ण कदम भी उठाए गए किन्तु इसमे से कोई भी सफल नही रहा तथा सन् १६२५ मे रेटिंग तथा मूल्याकन अधिनियम बनाया गया। इस अधिनियम का सम्बन्ध मुख्य रूप से रेट लगाने के यन्त्र मे परिवर्तन करना था। इसके प्रमुख लक्ष्यों मे प्रथम था उन तरीको को सरल करना जिनके द्वारा रेट्स का सरलीकरण किया जा सके और उन्हे सग्रहीत किया जा सके। दूसरे, देश भर मे मूल्याकन का एक जैसा तरीका स्थापित करना ताकि एक क्षेत्र मे सम्पत्ति पर वही कर लगाया जाए जो कि उतनी ही सम्पत्ति पर दूसरे क्षेत्र मे लगाया जाता है। तीसरे, रेटिंग करने वाले यन्त्र के मूल्याकन को प्रभावित करने वाले कानून को परिवर्तित करना। चौथे, आने के सुधारों के लिए मार्ग प्रस्तुत करना। इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निर्धनो के ओवरसीयर का प्राचीन कार्यालय समाप्त कर दिया गया जो कि निर्धनो मे सम्बन्धित रेट को निर्धारित करने और सग्रहीत करने के लिए उत्तरदायी था।

निर्धन रेट को समाप्त ही कर दिया गया। रेटिंग से सम्बन्धित सभी शक्तिया एव कर्तव्य काउन्टी बारोज, गैर काउन्टी बारोज, शहरी जिला एव देहाती जिलो को स्थानान्तरित कर दिए गया। इनको अब रेटिंग सत्ता कहा जाने लगा तथा उनके क्षेत्रो को रेटिंग जिला काउन्टी परिषदें, पेरिस परिषदें और पेरिश मीटिंग्स, रेटिंग सत्ताए नही है तथा इनको रेट लगाने की कोई शक्ति नही है वे अपने क्षेत्र मे रेटिंग सत्ताओ को निर्देश भेज देती थी जितना कि वे धन चाहती थी। इसका अर्थ यह हुआ कि काउन्टी परिषदें बारोज तथा शहरी जिला परिषदो को निर्देश भेजती हैं और पेरिश परिषदें तथा पेरिश मीटिंग देहाती जिला परिषदो को। इस प्रकार रेटिंग सत्ताए निर्देश देने वाली सत्ताओ के लिए एजेन्ट के रूप मे कार्य करती हैं। रेटिंग सत्ताओ को रेट का मूल्याकन करने तथा सग्रहीत करने के अतिरिक्त सम्पत्ति का मूल्याकन करने के लिए भी उत्तरदायी ठहराया गया ताकि रेट का सही मूल्याकन किया जा सके; किन्तु सन १६४८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने यह कार्य अन्तर्देशीय राजस्व मण्डल को स्थानान्तरित कर दिया।

सन् १६२६ के स्थानीय [illegible] अधिनियम के प्रावधानो के आधीन कृषि भूमि [illegible] भवनो को रेट प्रदान [illegible] मे पूरी तरह मुक्त कर दिया गया। पुन. रेटिंग करने का यह प्रावधान [illegible] को रेट्स का भुगतान करने के भार से मुक्त करने के लिए था। इसके द्वारा यह माना गया कि किसान एक विशेष स्थिति मे था। उसकी भूमि उनके [illegible] के साधन उत्पन्न करने का एक साधन है और यह अनुभव किया [illegible] कि यह न्यायपूर्ण नहीं है कि अपने

व्यापार के इतने महत्वपूर्ण तत्वो पर रेट प्रदान करे । इसी अधिनियम के द्वारा औद्योगिक एव माल का यातायात करने वाली सम्पत्तियो को तीन चौथाई कर प्रदान करने से मुक्त कर दिया गया । यह अनुभव किया गया कि औद्योगिक एव माल यातायात की वस्तुओ पर कर लगाना अन्यायपूर्ण है तथा उत्पादक इतनी सेवा प्राप्त नही कर पाते कि रेट की पूरी मात्रा का भुगतान कर सकें । रेट की व्यवस्था म परिवर्तन करने का एक अन्य कारण इस शिकायत को दूर करना भी था कि रेट्स व्यापारिक दुनिया पर प्रत्यक्ष कर है ।

सन् १९४८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने कोषाध्यक्ष की समान अनुदान व्यवस्था को प्रारम्भ किया जो कुछ स्थानीय सत्ताओ के लिए प्रदान किए जाते थे।एक सत्ता का रेट युक्त मूल्य जितना कम होता था, उसको इस प्रकार के अनुदान की उतनी ही अधिक मात्रा प्रदान की जाती थी । इस व्यवस्था मे यह खतरा था कि एक सत्ता अपनी स्थानीय सम्पत्ति का अनुमान लगाने मे दूसरी की अपेक्षा उदारता बरतेगी और इनके परिणामस्वरूप अधिक अनुदान प्राप्त करने का प्रयास करेगी । इस प्रवृति की पहले से ही कल्पना करके सम्पत्ति के मूल्याकन करने का कार्य स्थानीय सत्ताओ से अन्तर्देशीय राजस्व विभाग को स्थानान्तरित कर दिया गया । इस अधिनियम ने हाल ही मे राष्ट्रीयकृत किए उद्योगों के सम्बन्ध मे भी विशेष प्रावधान बनाए। इन उद्यमो के सम्बन्ध मे होटल तथा अन्य ऐसी ही जन सम्पत्तियो का प्रयोग किया जाना है जिन्हे प्रत्यक्ष रूप से मूल्याकित किया जा सकता है । उनके साथ साधारण व्यवहार किया गया और उनके वार्षिक मूल्य के आधार पर रेट निर्धारित की गई । बाकी सम्पत्तियो को रेटिंग से मुक्त रखा गया । कारखानो को रेट्स के स्थान पर वार्षिक भुगतान करना होता है।ये वार्षिक भुगतान इगलैण्ड तथा वेल्स स्थित सभी स्थानीय सत्ताओ के लाभ के लिए होते हैं तथा इनके क्षेत्र के रेट युक्त मूल्यो के अनुरूप होते हैं ।

रेटिंग तथा मूल्याकन अधिनियम सन् १९५३ के द्वारा सम्पत्ति के मूल्याकन मे एक नए आधार को प्रारम्भ किया गया । घरो का रेट युक्त मूल्य उनके किराए पर आधारित किया । अन्य सम्पत्तियों, जैसे होटलो, कार्यालयो, दुकानो, सिनामाओ को वर्तमान मूल्य पर आधारित किया गया । यह स्पष्ट था कि इन सम्पत्तियो द्वारा रेट के एक बहुत बड़े भाग का भार वहन किया जा रहा था । सन् १९५७ के अधिनियम ने इन सम्पत्तियों के स्वामियों को राहत प्रदान करने के लिए सम्पत्तियों के बीस प्रतिशत भाग को रेट मुक्त कर दिया ।

सन् १९५८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने औद्योगिक क्षेत्रों की रेट भुगतान करने की मात्रा को बढ़ा दिया तथा अब उनको ७५ प्रतिशत के स्थान पर केवल ५० प्रतिशत रेट मुक्त रखा गया ।

रेटिंग तथा मूल्याकन अधिनियम १९६१ को १ अप्रेल, १९६३ से प्रारम्भ किया गया । इसके मुख्य प्रावधानो मे प्रथम यह था कि निवास स्थानों का मूल्याकन सन् १९३९ के मूल्याकन की अपेक्षा वर्तमान के आधार पर किया गया । इस अधिनियम ने यह बताया कि बढ़ाए हुए रेट्स के कारण

कुछ क्षेत्रों की सम्पत्तियों के स्वामियों पर भार अधिक बढ़ जाएगा। ऐसी स्थिति में गृह-निर्माण एवं स्थानीय सरकार मन्त्री को यह शक्ति दी गई कि वह सन् १९६३ से सन् १९६८ तक के काल में प्रभावित क्षेत्रों की सम्पत्तियों के मूल्याकन को कम कर सके। दूसरे, औद्योगिक एवं माल भाड़े पर लगाए गए रेट की दर ५० प्रतिशत की अपेक्षा शत-प्रतिशत कर दी गई। इस प्रकार सन् १९२९ के अधिनियम ने रेट्स को मूल्याकित करने की जो व्यवस्था की थी उसको अब परिवर्तित कर दिया गया तथा बाद के व्यवस्थापनों द्वारा इसे बनाया रखा गया। तीसरे, वाणिज्य में संलग्न दुकानें एवं अन्य सम्पत्तियों का मूल्याकन शत-प्रतिशत रूप में किया गया और इस प्रकार सन् १९५७ के अधिनियम द्वारा जो २० प्रतिशत की छूट प्रदान की गई थी, उसको समाप्त कर दिया गया। चौथे, दान के आधार पर सचालित होने वाली संस्थाओं को रेट के भुगतान से ५० प्रतिशत मुक्त रखा गया और रेटिंग सत्ताओं को यह अधिकार दिया गया कि वे ऐसे संगठनों द्वारा भुगतान किए जाने वाले रेट्स को पूरी तरह या आशिक रूप से समाप्त कर सकें। पाचवें, सन् १८४३ के वैज्ञानिक एवं साहित्यिक समाज अधिनियम द्वारा जिन समाजों को रेट्स से मुक्त रखा गया था उनको अब ५० प्रतिशत रेट्स देना जरूरी बना दिया गया।

रेट्स का भुगतान करने के उत्तरदायी व्यक्ति
[The Responsible Individuals to Pay the Rates]

रेटिंग एक अत्यन्त जटिल विषय है किन्तु इसके सम्बन्ध में जिन मूल सिद्धान्तों को अपनाया जाता है, पर्याप्त स्पष्ट है। जब यह कहा जाता है कि रेट सम्पत्ति पर लगाई गई है तो यह कहना पूरी तरह से उचित नहीं होता; क्योंकि रेट व्यक्तियों पर लगाए जाते हैं किन्तु उस सम्पत्ति के अनुसार जो कि उनके अधिकार में है। प्रोफेसर फाइनर ने सही लिखा है कि रेट्स का सम्पत्ति द्वारा भुगतान किया जाता है। इस विचार के कारण स्थानीय रेटिंग के बारे में न्यायाधीशों का विचार पर्याप्त भ्रमित हो गया।* जिन व्यक्तियों द्वारा रेट्स के भुगतान का भार वहन किया जाता है, वे सदैव यह प्रयास करते हैं कि वे अपने भार को दूसरों पर डाल सकें।

कानून द्वारा यह व्यवस्था की गई है कि रेट्स का भुगतान करने का उत्तरदायित्व सामान्यतः निश्चित सम्पत्ति के स्वामी पर नहीं बल्कि उनके उपभोक्ता पर रहेगा। सामान्यतः कहने का अर्थ यह है कि इस नियम के कुछ अपवाद भी हैं किन्तु मुख्य सिद्धान्त यह है कि उपभोक्ता ही उत्तरदायी है। उपभोक्ता (Occupier) का एक विशेष अर्थ होता है। जब किसी सम्पत्ति पर एक व्यक्ति का अधिकार (Occupation) है तो इसका अर्थ कई एक संयुक्त स्थितियों से होता है जिसमें व्यक्ति का सम्पत्ति पर कानूनी

---

*"Discussion of the justice of "the local rating has been much confused owing to the idea that rates are paid by property."

—*Herman Finer*, Op. cit., P. 434.

स्वामित्व (Legal Possession) होता है, वास्तविक अधिकार (Actual Occupation) होना है तथा एक ऐसा सम्बन्ध होना है जो कि अधिक अस्थायी नहीं होता। एक अस्थायी निवासी का स्वामित्व ऐसा नहीं होना जिस पर रेट लगाया जा सके क्योंकि वह केवल उस कमरे का प्रयोग करने का अधिकार रखता है किन्तु उस पर कोई कानूनी स्वामित्व प्राप्त नहीं होता। एक किराएदार प्रायः सम्पत्ति का अधिकारी बन जाता है क्योंकि वह उस पर व्यापक स्वामित्व रखता है। वह एक प्रकार से सम्पत्ति का मालिक ही होता है क्योंकि असली स्वामी तो कभी सामने नहीं आता जब उस सम्पत्ति पर रेट लगाई जाएगी तो वह इस अधिकार के आधार पर लगाई जाएगी। यदि किसी बड़े भवन का स्वामी उसे कई भागों में विभाजित कर दे तो उनके प्रत्येक भाग पर रेट लगाई जा सकती है। इसके लिए यह देखना होगा कि स्वामित्व इतना अस्थायी तो नहीं है कि उस पर रेट न लगाई जा सके; उदाहरण के लिए यदि किसी भ्रमणकारी सर्कस के लिए कोई जमीन किराए पर दे दी जाए तथा उसे एक सप्ताह के लिए उस जमीन से सम्बन्धित पूरे अधिकार प्रदान कर दिए जाए तो भी हम यह नहीं कह सकते कि उस सर्कस पर रेट लगाई जाए। यह रेट तो उस व्यक्ति पर लगाई जाएगी जिसने सर्कस वालों को अपनी भूमि प्रदान की है। सर्कस को देने का तथ्य उस भूमि के मूल्यांकन का एक आधार बन जाएगा।

यद्यपि रेट देने का मुख्य उत्तरदायित्व अधिकृतकर्ता (Occupier) का ही होता है किन्तु फिर भी इसके कुछ सम्भव विकल्प होते हैं। यह सम्भव है कि रेट स्वामी (Owner पर लगाई जाये, चाहे वह उस सम्पत्ति का प्रयोग कर रहा है अथवा नहीं। यह भी सम्भव है कि रेट के उत्तरदायित्व को स्वामी तथा किरायेदार के बीच बांट दिया जाय यद्यपि ऐसा किया जाना बड़ा मुश्किल है। यह भी सम्भव है कि रेट का उत्तरदायित्व भवन में रहने वाले असली निवासी पर ही डाला जाए। जब रेटिंग व्यवस्था को प्रारम्भ में स्थापित किया गया था तो इसका भुगतान करने वालों के लिए निवासियों (Inhabitants) तथा पेरिशवासियों (Perishners) शब्दों का प्रयोग किया था। निवासी शब्द बहुत व्यापक एवं अनिश्चित है और इसमें उन लोगों का भी सम्मिलित किया जा सकता है जो कि कुछ समय एक स्थान पर रहते हैं और दूसरे समय दूसरे स्थान पर। यही कारण है कि प्रारम्भिक दिनों में न्यायालयों को इस समस्या पर पर्याप्त विचार करना पड़ा कि क्या रेट उन लोगों पर लगाई जाये जिनकी सम्पत्ति पेरिश में है किन्तु जो रहते उसके बाहर हैं।

सन् १५९७ के अधिनियम ने यह व्यवस्था की थी कि निर्धनों को राहत देने के लिए प्रत्येक निवासी एवं कथित पेरिश में भूमि पर अधिकार रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति पर रेट लगाने चाहिए किन्तु बाद के अधिनियमों ने निवासी (Inhabitants) शब्द को हटा दिया। इसका कारण यह बताया जाता है कि किसी विशेष पेरिश के ओवरसीयर यह पता नहीं लगा पाते थे कि पेरिश से बाहर रहने वाले एक निवासी की सम्पत्ति एवं आय क्या है इसलिए उन्होंने अपनी जांच-पड़ताल को केवल अपनी पेरिश में अधिकृत की गई वास्तविक भूमि एवं घरों तक ही सीमित रखा। इस प्रकार धीरे-

धीरे रेट्स का दायित्व केवल निश्चित सम्पत्ति के अधिकारी पर ही आ गया। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि सम्पत्तिगत स्वामी ही उसका अधिकारी होता है और इस प्रकार स्वामी एवं अधिकारी दोनों पद ऐसे प्रसंगों में समानार्थक बन जाते हैं; किन्तु ऐसा प्रायः बहुत कम होता है। वर्षों से इस बात का झगड़ा चला आ रहा है कि रेट्स का भुगतान करने का उत्तरदायित्व मुख्यतः किसका होना चाहिये तथा उसका जो अन्तिम परिणाम है, क्या वह न्यायपूर्ण है। इस प्रश्न पर विचार करने के लिए एक के बाद एक समिति नियुक्त की गई और एक के बाद एक सरकार ने इसे अपने विचार का विषय बनाया।

आर० एम० जैक्सन ने बताया है कि सम्पत्ति का अधिकार (Occupation) ऐसा होना चाहिए जो कि सामान्यतः उपयोगी कहा जा सके किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वह लाभदायक हो।* उन्होंने बताया है कि यदि मैं एक दुकान पर अधिकार रखता हूं और अपने व्यापार में मुझे निरन्तर हानि हो रही है तो भी मेरा अधिकार (Occupation) इस अर्थ में उपयोगी रहेगा कि मैं उस दुकान का प्रयोग तो कर रहा हूँ और इसलिए मुझे उससे कुछ उपयोग भी मिल रहा है। इस सिद्धान्त का मुख्य प्रयोग रिक्त सम्पत्ति के सम्बन्ध में किया जा सकता है। यदि किसी घर में फर्नीचर को डाल कर उसमें स्टोर का काम लिया जाता है तो निश्चय ही यह अधिकार उपयोगी माना जायगा। इसी प्रकार से एक ऐसे रिक्त भवन को भी उपयोगी कहा जा सकता है जो कि संकट काल में प्रयोग के लिए सुरक्षित रखा गया है। कोई भी सम्पत्ति केवल उसी हालत में रेट योग्य नहीं होती जब कि वह रिक्त है तथा उसका स्वामी उसे बेचने या किराये पर उठाने की फिराक में है, साथ ही वह उसका कोई उपयोग भी नहीं कर रहा है।

रेट्स के लिए सम्पत्ति का मूल्यांकन [Assessment of Property for Rates]—एक व्यक्ति द्वारा प्रदान किये जाने वाले रेट की मात्रा उसकी सम्पत्ति के रेट योग्य मूल्य पर निर्भर करती है। यदि निर्धारित रेट प्रदान न किये जा सकें तो रेटिंग सत्ता को यह अधिकार है कि वह सम्मन जारी करने के लिए न्यायालय को कहे। ऐसा होने पर भी यदि सम्बन्धित व्यक्ति उपस्थित न हो सके तो वह वारन्ट जारी करा सकता है। इस वारन्ट के द्वारा सत्ता को यह शक्ति प्राप्त हो जाती है कि वह सम्बन्धित व्यक्ति के माल की कुड़की कर ले तथा उसके साज-सामान को बेच कर अपनी रेट्स के धन की मात्रा को वसूल कर ले। यदि सब कुछ बेचने के बाद भी पूरा धन प्राप्त न हो सके तो दोषी व्यक्ति को जेल भेजा जा सकता है किन्तु ऐसा केवल तभी किया जायगा जब कि दोषी व्यक्ति ने जानबूझ कर ऐसा व्यवहार किया है। यदि रेटिंग सत्ता यह सोचे कि दोषी व्यक्ति अपनी गरीबी के कारण भुगतान न कर सका तो वह रेट के धन को आंशिक रूप से या पूरी तरह कम कर सकती है।

---

*"The occupation must be what is generally called 'beneficial', but that is a very misleading term because it does not mean that it must be profitable."
—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 167

सन् १९४८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने सम्पत्ति का मूल्याकन करने से सम्बधित शक्तिया अन्तर्देशीय राजस्व मण्डल के अधिकारियो को सौंप दी। ये अधिकारी मूल्यो की एक सूची तैयार करते हैं और एक सत्ता के क्षेत्र मे आने वाली प्रत्येक सम्पत्ति के रेट योग्य मूल्य को प्रदर्शित करते हैं। रेटिंग सत्ता से सम्बन्धित क्षेत्र की सूची का प्रारूप सत्ता को भेज दिया जाता है तथा इसे प्रकाशित करके सरकारी निरीक्षण के लिए सुलभ बना दिया जाता है। जिस भूमि को रेट योग्य ठहराया गया है उसके विरुद्ध आपत्तिया की जा सकती हैं। मूल्याकन अधिकारी इस प्रकार की आपत्तियो पर विचार करता है तथा रेटिंग सत्ता अथवा सम्पत्ति के अधिकारी द्वारा जो प्रस्ताव किये जाते हैं उन पर विचार करने के बाद तैयार सूची को बदलने का प्रयास करता है। मूल्याकन अधिकारी के निर्णय के विरुद्ध अपील भी की जा सकती है। इस प्रकार की अपीलो पर क्षेत्रीय मूल्याकन न्यायालयो (Local Valuation Courts) द्वारा विचार किया जाता है। इस न्यायालय मे क्षेत्रीय मूल्याकन पेनल के तीन सदस्य होते हैं।

रेट्स के लिए एक व्यक्ति द्वारा दिये जाने वाले योगदान पर प्रश्न नहीं किया जा सकता। मुख्य बात यह है कि मूल्याकन का तरीका एकरूप होना चाहिये। यदि प्रत्येक स्थानीय सत्ता अपने क्षेत्र के लिए पृथक मूल्याकनकर्ता रखे तो इसके विरुद्ध केवल कुछ ही आपत्तियां की जा सकती हैं किन्तु यदि एक स्थानीय सत्ता विभिन्न प्रकार की सम्पत्ति का मूल्याकन केवल अपने ही प्रकार से करे तथा ऐसा करते समय अपने पड़ौसियों से बात भी न करे तो यह व्यवहार अनेक आपत्तियों का प्रतीक बन जायेगा। इस रूप मे संचालित स्थानीय सरकार मे अनेक बुराइयां उत्पन्न हो जाती हैं तथा एक भी सद्गुण शेष नही रह पाता। जब १६वी शताब्दी मे निर्धन राहत को प्रारम्भ किया गया तो रेट्स को लगाने का कार्य ओवरसीयरो द्वारा किया जाता था। उस समय पन्द्रह हजार स्वतंत्र मूल्याकनकर्ता सत्तायें कार्य कर रही थीं। इनके बीच थोडी बहुत एकरूपता केवल कुछ कानूनो एव न्यायालयो के द्वारा स्थापित करने का प्रयास किया गया। १८३६ मे पारित अधिनियम ने भी पेरिशो के अन्तर्गत एकरूपता लाने का कार्य किया। इसने रेट योग्य मूल्य को परिभाषित कर दिया। १६वी शताब्दी के प्रारम्भ मे इस बात पर अत्यधिक जोर दिया जाने लगा कि पेरिशो मे मूल्याकन एकरूप होना चाहिये। इसे न्यायपूर्ण रूप मे सम्पन्न किया जाना चाहिये। सन् १८५२ मे काउन्टी रेट्स अधिनियम पास किया गया जिसके द्वारा न्यायाधीशो को वह आधार या माप-दण्ड निश्चित करने की शक्ति प्रदान कर दी गई जिसके आधार पर वे पेरिशों द्वारा काउन्टीज को दिये जाने वाले योगदान का निर्धारण कर सकें।

एकरूपता की स्थापना के लिए कुछ अन्य प्रबन्ध की आवश्यकता भी महसूस की जाने लगी और इसी कारण सन् १८६२ के कानून द्वारा इस ओर कुछ कदम उठाये गये। १८९९ में अधिक एकरूपता की सिफारिश की गई। स्थानीय करारोपण पर शाही आयोग ने यह प्रस्ताव किया कि प्रत्येक प्रशासकीय काउन्टी तथा काउन्टी बारो मे केवल एक ही मूल्याकनकर्ता सत्ता होनी चाहिए। यदि इन सत्ताओ के बीच समझौता हो जाए तो पूरी

भौगोलिक काउन्टी में भी एक ही मूल्याकन सत्ता कार्य कर सकती है। सन् १९१४ मे स्थानीय करो पर समिति ने और भी महत्वपूर्ण सिफारिशें की। समिति ने सुझाया कि सभी मूल्याकन सरकारी भू-मूल्याकन स्टाफ द्वारा किए जाने चाहिए।

जब सन् १९२५ का अधिनियम पारित किया गया तो इसने मूल्याकन के क्षेत्र मे भारी परिवर्तन कर दिये। इसने ओवरसीयरो एवं मूल्याकन समितियो के स्थान पर नये मूल्याकन क्षेत्र स्थापित किये। काउन्टी बारोज में बारो परिषद द्वारा मूल्याकन समिति नियुक्त की गई। इसके सदस्यो की सख्या उतनी ही होती थी जितनी परिषद तय करे। अधिनियम के अनुसार इस समिति के कम से कम एक तिहाई सदस्य ऐसे होते थे जो कि परिषद के सदस्य न हो। इस समिति के सदस्य पाच वर्ष तक अपने पद पर कार्य करते थे। मूल्याकन समितियाँ [Assessment Committees] का कार्य मूल्याकन-सूची का पर्यवेक्षण करना, उसे स्वीकार करना तथा आवश्यक समझे गये परिवर्तन करना था।

मूल्याकन के कार्य मे और भी अधिक एकरूपता लाने के लिए प्रत्येक काउन्टी-परिषद द्वारा काउन्टी मूल्याकन समिति की स्थापना की गई। इस समिति मे काउन्टी परिषद के सदस्य होते थे तथा काउन्टी के अन्तर्गत मूल्याकन क्षेत्रो का एक-एक प्रतिनिधि होता था। इस समिति का कार्य ऐसे कदम उठाना था जिनको यह मूल्याकन के व्यवहार एव सिद्धान्तो मे एकरूपता को प्रोत्साहित करने के लिए आवश्यक समझे तथा ?ट █ सम्बन्धित सत्ताओ की मूल्याकन के कार्य मे सहायता करना था।

इस कार्य मे एकरूपता की स्थापना के लिए एक महत्वपूर्ण प्रयास केन्द्रीय मूल्याकन समिति [Central Valuation Committee] का गठन करके किया गया। इसमे रेटिंग सत्ताओं के सदस्य, काउन्टी मूल्याकन समितियो के सदस्य, मूल्याकन समितियो के सदस्य तथा कुछ अन्य सदस्य होते थे। इस समिति को जो कर्त्तव्य सौंपे गये, उनमे प्रथम था रेटिंग तथा मूल्याकन अधिनियम के व्यवहार की देखभाल करना, दूसरे, मन्त्री को ऐसी सूचना देना तथा उसके सम्मुख ऐसा प्रतिनिधित्व करना जो कि उसकी दृष्टि मे एकरूपता को प्रोत्साहित करने के लिए तथा असमानताओ को मिटाने के लिए उपयोगी एव आवश्यक है। इन लक्ष्यो की सिद्धि के हेतु सम्मेलनो एव अन्य तरीको का सहारा लिया जा सकता था। यह निकाय केवल एक परामर्शदाता निकाय था। केन्द्रीय मूल्याकन समिति मे असल मे ३२ सदस्य होते थे। इनमे से २४ स्थानीय सत्ताओ की संस्थाओ एवं स्वास्थ्य मन्त्री द्वारा नियुक्त किये जाते थे। इस समिति द्वारा अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये गये। यह प्रतिनिधित्व की अनेक सीरीज तथा नियमित वार्षिक प्रतिवेदन जारी करती थी।

सम्पत्ति के मूल्याकन का मूलभूत सिद्धान्त यह था कि सम्पत्ति को उसके वार्षिक मूल्य के आधार पर आका जाये। यह मूल्य सम्पत्ति के यथास्थित रूप तथा उसी रूप मे उसके प्रयोग पर आधारित रहता है। यदि एक व्यक्ति ऐसे स्थान पर रहता है जहा दुकानों या कार्यालयों का महत्व अधिक

है तो यह तर्क दिया जा सकता है कि मुझे उस सम्पत्ति का प्रयोग निवास-स्थान के रूप मे नही करना चाहिए किन्तु दुकान या कार्यालय के रूप मे उसे बदल कर उसका अधिक से अधिक लाभ उठाना चाहिए। ऐसा करने पर भी जब कभी उस भवन का रेट के लिए मूल्याकन किया जाये तो यही देखा जायेगा कि निवास स्थान के रूप मे उस भवन का वार्षिक मूल्य क्या है। उसके लाभपूर्ण प्रयोग की बात का तथा उसके स्थान के महत्व को ध्यान मे नही रखा जायेगा।

एक भवन का वार्षिक मूल्य जानने के लिए यह देखना होगा कि यदि मकान मालिक द्वारा इसकी मरम्मत तथा बीमा का खर्च किया जाये और किरायेदार द्वारा किराये की रेट तथा कर दिये जायें तो इस भवन का वार्षिक किराया क्या हो सकता है। वह कल्पनात्मक किरायेदार कितना धन देगा, इस बात का पता लगाने के लिए कई एक तरीको को काम मे लाया जा सकता है। इनमे प्रथम यह है कि साधारण घरो, दुकानो कार्यालयो आदि के बारे मे हम यह आसानी से पता लगा सकते हैं कि यदि इनको किराये पर उठाया जाता तो कितना किराया प्राप्त हो सकता था। ऐसी सम्पत्तियो के बारे में हम बाजार की ज्ञात बातो के आधार पर अनुमान लगा सकते हैं। यहाँ हमारा सम्बन्ध भवन के वास्तविक किराये से कतई नही रहता है क्योकि यह बाजार मूल्य से कम भी हो सकता है और अधिक भी। दूसरे, जहा कहीं सम्पत्ति के वास्तविक मूल्य का अनुमान लगाने के लिए पर्याप्त बाजार न हो अर्थात् उदाहरणो को देख कर अन्दाजा लगाने की सुविधा न हो, वहा भूमि एवं उस पर बनाये गए भवन की रचना की लागत[Capital Value] को देख कर कुछ अनुमान लगाना होगा। पूंजीगत मूल्य जानने के बाद यह विचार करना होगा कि इतनी सम्पत्ति का न्यायपूर्ण प्रतिदान कितना होना चाहिए तथा सम्पत्ति का स्वामी उसे किराये पर देना चाहे तो वह कितना किराया प्राप्त करना चाहेगा। तीसरे, कुछ सम्पत्तियाँ ऐसी भी होती हैं जिनके बारे मे हम किरायेदार की कल्पना ही नही कर सकते। यह बात अनेक सार्वजनिक कम्पनियो एव सार्वजनिक उपयोगिताओ के बारे मे सच है। इन सभी मामलो मे व्यवहार यह रहता है कि प्राप्त किये गये लाभ की मात्रा पर विचार करने के बाद कोई निर्णय लिया जाये। एक बार एक ऐसे चिडिया घर का मूल्याकन करना था जिसमे कि जनता धन देकर प्रवेश पाती थी। इस मूल्याकन के समय भी इसी सिद्धान्त को अपनाया गया।

प्रारम्भ से ही कई एक सम्पत्तियो को रेट का भुगतान करने से मुक्त रखा गया है। क्राउन की सम्पत्ति, स्कूल एवं अन्य भवनो पर किसी प्रकार का रेट वसूल नही किया जाता। सम्पत्ति के कुछ ऐसे भी रूप हैं जो कि अपने मूल्याकन से कम अनुपात मे भुगतान करते हैं। इस प्रकार सम्पत्ति का कुल मूल्य [Net Value] तथा रेटयोग्य मूल्य [Ratable Value] दो अलग-अलग बातें हैं।

रेटिंग व्यवस्था की अनेक विशेषतायें हैं जो वैसे तो सरल हैं किन्तु आसानी से दिखाई नही देती हैं। इनमे से एक विशेषता यह है कि मूल्याकनो को एक दूसरे के सम्बन्ध मे अधिक सही होना चाहिए, उनका पूर्ण रूप से सही

होना जरूरी नहीं है। मूल्याकन करते समय सभी क्षेत्रों मे यथासम्भव एकरूपता बनाये रखनी चाहिए। जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है, काउन्टी मे मूल्याकन मे एकरूपता लाने के लिए एक विशेष समिति स्थापित की गई जो कि प्रत्येक काउन्टी जिले के अधिकारियो द्वारा किये गये मूल्याकनो को देखने का कार्य करती है। राष्ट्रीय समिति द्वारा सामान्य परामर्श दिया जाता है। विश्व-युद्ध के बाद स्थिति मे परिवर्तन आ गया। दो महत्वपूर्ण तत्वो ने मूल्याकन के पुराने तरीके को असंतोषजनक बना दिया। केन्द्रीय सरकार के अनुदानो की नवीन व्यवस्था की माग की गई तथा इसके लिए प्रत्येक क्षेत्र के वित्तीय स्रोतो का लेखा देखना जरूरी था। जब केन्द्रीय धन के वितरण का यह आधार बनाया गया तो यह जरूरी हो गया कि देश भर मे रेट्स के लिए सम्पत्ति के मूल्याकन का एक जैसा आधार ही काम मे लाया जाये। यह समझा गया कि मूल्याकन के कार्य को अनेक स्थानीय सत्ताओ के हाथो मे ही नही छोड़ा जा सकता। इसी विचार से प्रभावित हो कर १९४८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने मूल्याकन करने का कार्य स्थानीय सत्ता के हाथो से लेकर केन्द्रीय सरकार के अन्तर्देशीय राजस्व विभाग (Inland Revenue Deptt) को सौंप दिया। दूसरा महत्वपूर्ण तत्व यह था कि निवास स्थानो का मूल्याकन करने का कल्पनात्मक किरायेदार का पुराना तरीका अब अनुपयुक्त सिद्ध हुआ। यह तरीका उस समय तो उपयुक्त था जबकि घरो का किराया तय करने के लिए एक स्वतन्त्र बाजार था किन्तु बहुत वर्ष बीते ग्रेट ब्रिटेन मे अब यह नही रह गया है, वहा प्रथम विश्व-युद्ध के दौरान छोटे घरो का किराया उसी स्तर पर रखने का प्रयास किया गया जो कि १९१४ में था।

सन् १९२० मे तथा उसके बाद स्थानीय सत्ताओ ने एक बडी मात्रा मे आवास गृहो की रचना की। इन घरो को अलग अलग मात्रा मे सहायता प्रदान की गई। इस समय घरो की अनेक श्रेणिया हैं, इसलिए जब हम यह विचार करने लगते हैं कि एक घर विशेष का किराया हमारा कल्पनात्मक किरायेदार कितना दे सकेगा, तो हम भ्रम मे पड़ जाते हैं। यदि किसी क्षेत्र मे नियन्त्रित किराये वाले अधिकाश घर हो तो हमको यह देखना होगा कि असल मे लोग वहा क्या किराया दे रहे हैं और उसी को उचित किराया मानना पड़ेगा। यही स्थिति उस समय भी रहेगी जबकि एक ही प्रकार के अनेक परिषद-गृह हो। जैक्सन महोदय का यह कहना पूरी तरह से सही है कि इगलैंड मे वर्षों से माग व पूर्ति के आधार पर निश्चित किराये वाले मकान आसानी से मिल जाते हैं और इस प्रकार स्वतन्त्र बाजार पर आधारित कल्पनात्मक किरायेदार की जाच अब काम नहीं करती।* ऐसी स्थिति म कोई अन्य तरीका निकालने के लिये व्यवस्थापन किया गया। मूल्याकन का

*"It is so many years since houses have been available to let in England at rents fixed by supply and demand that the test of a hypothetical tenant, which supposes a free market, has become unworkable"

—*R. M. Jackson*, Op. cit, P. 172.

प्रथम आधार उस खर्च को बनाया गया जो कि प्रत्येक प्रकार के मकान की रचना में व्यय हुआ है। जब अन्तर्देशीय राजस्व विभाग ने इस आधार को अपनाने का प्रयास किया तो पाया कि वह वास्तव में उपयोगी नहीं था। अतः सन् १९५३ में एक दूसरा आधार अपनाया गया। इसके अनुसार एक घर का किराया उतना तय किया गया जो कि जून १९३९ के अन्त में उस बस्ती में प्रभावशील था। इस आधार को अपनाते समय यह देखना जरूरी था कि घर तथा बस्ती की परिस्थितियां मूल्यांकन करते समय भी ऐसी ही हों। कुल मिलाकर यह एक जटिल समस्या थी।

मूल्यांकन की व्यवस्था चाहे कैसी भी अपनायी जाये किन्तु अपील करने के लिये प्रावधान का होना जरूरी था। वर्तमान इंगलैंड का कानून स्थानीय मूल्यांकन न्यायालय की स्थापना करता है जिसमें एक वकील को सभापति बनाया जाता है तथा अन्य दो सदस्य उस क्षेत्र की सत्ताओं द्वारा बनायी गई पैनल के सामान्य (गैर-विशेषज्ञ) सदस्य होते हैं। इस न्यायालय के निर्णय अन्तिम नहीं होते; इनके विरुद्ध भी अपील की जा सकती है। यह अपील भूमि पचनिर्णय के लिये की जाती है जो कि उच्च स्तर का राष्ट्रीय पचनिर्णय होता है। यह मूल्यांकन अनेक विषयों में सम्बन्धित होता है।

रेट्स को वर्ष में दो बार सग्रहीत किया जाता है। बड़े घरों तथा व्यापारिक भवनों से सम्बन्धित रेट्स की माग अधिकृत कर्त्ता (Occupier) से की जाती है और वह प्रत्यक्ष रूप से रेटिंग सत्ता के लिये भुगतान करता है। सयुक्तीकरण (Compounding) की व्यवस्था भी हो सकती है जिसके अनुसार मकान मालिक अपने सभी किरायेदारों से किराये के साथ-साथ रेट्स की रकम भी वसूल कर लेता है और सबको मिलाकर एक साथ ही वह रेटिंग सत्ता को सौंप देता है। छोटी सम्पत्ति का स्वामी इस प्रकार से कार्य कर सकता है जबकि दूसरी सम्पत्तियों के सम्बन्ध में स्वामी तथा रेटिंग सत्ता के बीच समझौता हो सकता है। इस प्रकार मजदूर वर्ग के सभी मकानों के बारे में इसी प्रकार का प्रबन्ध कर दिया जाता है। इसका लाभ यह होता है कि किरायेदार रेट्स का भुगतान साप्ताहिक रूप से कर देता है और उसको अर्धवार्षिक भुगतान के लिये पैसा बचाने की आवश्यकता नहीं रह जाती। भूस्वामी जिस प्रकार अपना किराया इकट्ठा करता है, उसी प्रकार रेट्स भी एकत्रित कर लेता है। इस प्रकार किसी परेशानी या अतिरिक्त श्रम की आवश्यकता नहीं होती। भूस्वामी धन को रखने का तरीका जानता है तथा वह भविष्य के लिये प्रावधान बना सकता है और तभी वह अर्धवार्षिक रूप से रेट्स को सम्बन्धित सत्ता को सौंपने में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नहीं करता। इस प्रकार रेट का सग्रह सस्ता पड़ता है। इसकी एक हानि यह है कि जब लोग साप्ताहिक रूप से भुगतान करते हैं तो उनको ऐसा लगता है मानो वे इतना धन किराये में ही दे रहे हों। कई एक सत्तायें इसी कारण जानबूझ कर इस तरीके से काम नहीं लेतीं। वे उनके रेट्स का सग्रह सीधे किरायेदार से ही करती हैं ताकि लोगों को यह

अनुभव होता रहे कि वे जो सेवायें प्राप्त करते हैं उनके लिये उन्हें भुगतान भी करना होता है।

रेटिंग व्यवस्था के गुण-दोष [Merits and Demerits of the Rating System]—इस सम्बन्ध में पर्याप्त वाद-विवाद होता रहता है कि इगलंड की रेटिंग व्यवस्था स्थानीय उद्देश्यों के लिये धन संग्रह का एक उचित साधन है अथवा नहीं है। रेटिंग व्यवस्था प्रत्येक कर व्यवस्था की तरह न तो पूरी तरह से अच्छी है और न ही पूरी तरह से खराब ही। इसके लाभ भी हैं और हानियां भी।

वर्तमान रेटिंग व्यवस्था की प्रथम हानि यह बतायी जाती है कि यह दूसरे करो की तुलना मे अन्यायपूर्ण है, उदाहरण के लिये हम आय कर को ले सकते हैं। इस कर का योगदान भुगतान की योग्यता पर आधारित रहता है। व्यक्ति के योगदान मे उसको क्या लाभ मिलेगा इसका कोई लेखा नहीं रखा जाता किन्तु रेटिंग व्यवस्था के पीछे जो सिद्धांत कार्य करता है; वह इससे भिन्न प्रकार का है। यह सोचा गया था कि रेट एक प्रकार से ऐसा कर है जो कि व्यक्ति को प्राप्त की गई सेवाओं के बदले में देना होता है। जितनी सेवायें वह प्राप्त करेगा उतनी ही रेट्स का वह भुगतान करेगा। प्रारम्भ मे जब स्थानीय सत्ता द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवायें थोड़ी थी तो यह निश्चय करना सरल होता था कि एक व्यक्ति को कितना योगदान करना चाहिये। यह सोचना पूर्णतः उपयुक्त प्रतीत होता है कि एक व्यक्ति की भूमि का क्षेत्र जितना बड़ा होगा वह नाली, सड़क, पुल आदि से उतना ही अधिक लाभ उठायेगा। रेट्स के मूल्यांकन का यह आधार समस्याजनक बन जाता है। इसका कारण यह है कि किसी व्यक्ति का घर बड़ा होने का अर्थ यह नहीं होजाता कि वह एक समर्थ एवं अधिक धनवान व्यक्ति है। वर्तमान प्रवृत्ति के अनुसार लोग छोटे घरो में रहना तथा धन को किसी अन्य कार्य मे लगाना अच्छा मानते हैं। एक खर्चीली कार का मूल्य ही एक छोटे घर के मूल्य से अधिक हो सकता है। रेटिंग व्यवस्था उन लोगों को हतोत्साहित करती है जिनको अधिक बड़े स्थान की आवश्यकता है। जिन लोगो का परिवार बड़ा होता है उनका खर्च भी बड़ा होता है किन्तु आमदनी अपेक्षाकृत कम रहती है। इन्हें अपना मकान भी बड़ा रखना होता है और फलतः अधिक रेट्स का भुगतान करना होता है। इस स्थिति से स्पष्ट हो जाता है कि छोटे परिवार वाले समर्थ व्यक्ति रेट्स कम देंगे और बड़े परिवार वाले असमर्थ व्यक्ति को अधिक रेट्स प्रदान करने होंगे। इस अर्थ मे यह व्यवस्था अन्यायपूर्ण कही जाती है।

दूसरे, रेटिंग की इस व्यवस्था को निर्धन कानून के सबंध मे नहीं अपनाया जा सकता क्योंकि जो लोग इस सेवा का लाभ उठाते हैं वे भुगतान करने की सामर्थ्य ही नहीं रखते।

तीसरे, यह रेटिंग व्यवस्था अच्छे प्रकार के घरों के विकास को रोकती है। यदि कोई व्यक्ति अपने घर का विकास करना चाहे तो स्वाभाविक है कि उसके घर का मूल्यांकन अधिक हो जायेगा और उसको अधिक रेट्स का भुगतान करना होगा। ऐसी स्थिति में वह-यह सोचेगा कि मकान का विकास न

किया जाये तो ही ठीक है। यह उस राष्ट्रीय नीति के विपरीत है जिसके अनुसार घरो के स्तर का सुधार करना चाहिए।

चौथे, रेट्स का भुगतान बिना इस बात पर विचार किये करना होता है कि सम्पत्ति से लाभ भी हो रहा है अथवा नही। यह कोई आयकर नही है तथा यह उस स्थिति मे दिया जायेगा जबकि सम्पत्ति से हानि हो रही है।* इस रेटिंग व्यवस्था की अनुपयुक्तता का प्रमाण उस उदाहरण से प्राप्त होता है जबकि हम दो ऐसी दुकानों का उदाहरण देखते हैं जिनमे से एक तो छोटी है और दूसरी बडी। माना कि छोटी दुकान वाले को अधिक लाभ हो रहा है और बडी दुकान वाले को नुकसान हो रहा है तो भी बडी दुकान वाले को ही अपेक्षाकृत अधिक रेट का भुगतान करना होगा।

पाचवे, स्थानीय सरकार अधिनियम, १६२६ के आधीन कृषि भूमि को पूरी तरह से तथा औद्योगिक सम्पत्ति का तीन चौथाई रूप से रेट्स का भुगतान करने से मुक्त कर दिया गया। इसके पीछे तर्क यह दिया गया था कि भूमि एव औद्योगिक सस्थाओ को उन सेवाओ का बहुत कम लाभ प्राप्त हो पाता है जिनमे कि एक सत्ता को पर्याप्त धन लगाना होता है।

छठे, यह कहना भी अनुपयुक्त होगा कि रेट्स प्रदान की गई सेवाओ के अनुपात मे ली जाती है। यह इसलिए है क्योकि स्थानीय सरकार की सेवाओ का विस्तार हो जाने के कारण यह तय करना कठिन बन गया है कि किस व्यक्ति को किस सेवा का कितना लाभ प्राप्त हुआ है। कुछ सेवायें ऐसी होती हैं जिनके उपभोग की मात्रा को तय किया जा सकता है। उदाहरण के लिए यह पता लगाया जा सकता है कि पुस्तकालय से कितनी पुस्तकें निकलवायी गईं, बच्चो को कितना खाना दिया गया, कितना पानी काम मे लिया गया आदि। इनके सबध मे भुगतान दी गई सेवा के अनुसार प्राप्त किया जा सकता है किन्तु अन्य कुछ सेवायें ऐसी होती हैं जिनमे प्राप्त लाभ को मापा नही जा सकता। उदाहरण के लिए पुलिस द्वारा शान्ति बनाये रखने की सेवा से किसे, कितना लाभान्वित किया-यह तय नही किया जा सकता। यह कहा जाता है कि स्थानीय सरकार की सर्वाधिक खर्चीली सेवायें शिक्षा, सडक, पुल एव पुलिस आदि हैं। यह थोड़ा बहुत सत्य हो सकता है कि एक बडे मकान के लिए अधिक सड़क की जरूरत हो, उसकी देखभाल के लिए अधिक पुलिस सेवा की आवश्यकता हो; किन्तु इस विचार मे अधिक बल नही है क्योंकि एक व्यक्ति के मकान के आकार मे तथा उसके द्वारा प्राप्त सरकारी शिक्षा व्यवस्था के लाभ की मात्रा मे कोई आवश्यक सबध नही है।

सातवें, यह तर्क दिया जाता है कि जब एक व्यापारी पर उसके व्यापारिक भवनो के लिए रेट्स ली जाती हैं तो वह इनको अपने व्यापार व्यय का ही एक भाग बना लेता है तथा उनको मूल्य के साथ जोड देता है। इस प्रकार रेट्स के रूप मे लिया जाने वाला धन मूल रूप से उपभोक्ताओ से ग्रहण किया जायेगा जो कि पहले से ही रेट्स का भुगतान कर रहे हैं।

**R. M. Jackson*, Op. cit., 175.

वर्तमान रेटिंग व्यवस्था के कुछ गुण भी है। इसका सबसे बड़ा गुण यह है कि यह प्रभावशाली एवं सस्ती व्यवस्था है। अचल सम्पत्ति का मूल्य निर्धारण करना कठिन नहीं होता। घर आदि का मूल्य आसानी से निर्धारित किया जा सकता है। रेट्स को एकत्रित करने का तरीका सरल तथा कम खर्चीला है। रेट्स की मात्रा का निर्धारण इसे प्रदान करने वाले के कथन पर निर्भर नहीं करता अतः इसमे गलती रहने की सम्भावना कम रहती है। अन्य करो के बारे मे ऐसा नहीं है। कई व्यक्ति अपनी आमदनी के स्रोतो का वर्णन करते समय मुख्य स्रोतो को बताने से रह जाते हैं। इसके अतिरिक्त यह पता लगाना बड़ा कठिन है कि लोगो की अथवा कम्पनियो की आय क्या है। आय-कर का सचालन एक कुशल एवं बड़े स्टाफ की सहायता के बिना नहीं किया सकता। भूमि को या घर को छिपाया नहीं जा सकता। राजस्व विभाग के अधिकारी यह जानते हैं कि कौन सा भू-भाग किस व्यक्ति का है तथा उससे सबंधित कर कौन प्रदान कर रहा है। इगलैण्ड की व्यवस्था मे स्थानीय सरकार अधिकृतकर्त्ता (Occupier) से कर लेती है तथा केन्द्रीय सरकार स्वामी (Owner से। यदि कोई व्यक्ति स्वामी होने के साथ-साथ अधिकृतकर्त्ता भी है तो उसको दोनो ही प्रकार के कर देने होंगे। रेट्स की व्यवस्था में यह सम्भावना नहीं रहती कि कोई व्यक्ति कर की चोरी करेगा अथवा किसी बात को छिपाकर कम कर देने मे सफल हो जायेगा। रेट्स के द्वारा आय का एक निश्चित स्रोत प्रदान किया जाता है और यह आसानी से पता लगाया जा सकता है कि स्थानीय सत्ता को कितना राजस्व प्राप्त होगा।

इंगलैण्ड मे रेट्स व्यवस्था मे सुधार करने के लिए अनेक विकल्प सुझाये जाते है। यह कहा जाता है कि जिस व्यक्ति को हानि हो रही है उससे रेट न ली जाये और यदि ली जाय तो कम अनुपात मे। जो व्यक्ति अपनी सम्पत्ति का सुधार करना चाहता है उससे कर न लिया जाये। सपत्ति के सम्भावित मूल्य पर रेट लगाकर व्यक्ति को अपनी सम्पति का अधिक लाभ के लिए उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जावे। अधिकृत कर्त्ताओं की अपेक्षा स्वामियो पर ही क्यो न कर लगाया जाये—आदि—आदि अनेक आलोचनायें एवं सुझाव प्रस्तुत किये जाते हैं। इनमे से कुछ को आशिक या पूर्ण रूप से मानने पर निश्चय ही कुछ सुधार किये जा सकते हैं किन्तु इनके बारे मे विचारक एकमत नहीं हो पाये हैं। स्थानीय सरकार के क्षेत्र मे यह विचार प्रभावशील है कि पुनः रेटिंग किया जाना चाहिए तथा कृषि भूमि एवं उद्योगो की छूट को समाप्त कर देना चाहिए। यह व्यवस्था आर्थिक सकट एवं मन्दी के समय कृषि एवं उद्योगो की सहायता के लिए अपनायी गई थी किन्तु अब परिस्थितियां बदल चुकी हैं। यदि कृषि एवं उद्योगो को वित्तीय सहायता की आवश्यकता है तो उनको खुले रूप मे यह दी जानी चाहिए। रेटों के क्षेत्र मे उनको छूट देना उपयुक्त नहीं है किन्तु फिर भी यदि रेट्स मे दी गई छूट को कम किया जाता है तो कृषि एवं औद्योगिक हितो द्वारा इसका विरोध किया जायगा।

'कई बार एक बस्ती के वातावरण एवं विभिन्न सुविधाओं का मूल्याकन करने की बात भी कही जाती है। इस प्रश्न पर जाच समिति ने पर्याप्त

विस्तार के साथ विचार किया। इस समिति ने सन् १९५२ में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इस समिति का निष्कर्ष था कि इस प्रकार का प्रयास नहीं किया जाना चाहिए। यह कहा जाता है कि यदि मूल्यांकन की प्रक्रिया में कोई परिवर्तन किया जाय तो यह परिवर्तन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि सम्पत्तियों का मूल्यांकन उनके पूंजीगत मूल्य के आधार पर किया जाए। पूंजीगत मूल्य स्वतः ही वातावरण एवं अन्य सुविधाओं के मूल्य को तथा उसकी सामर्थ्य को अपने ध्यान में रख लेगा। जब रेटिंग व्यवस्था की आलोचना की जाती है तथा जिन आधारों पर की जाती है वे आधार ऐसे हैं कि उनको अपनाया नहीं जा सकता। इसमें किसी प्रकार का सुधार तभी हो सकता है जब कि कर की प्रकृति को बदल दिया जाए। इसी प्रकार से पतनोन्मुख विशेषता (Regressive Characteristic) भी उसकी एक निहित विशेषता है। यदि इसे सुधारना है तो पूर्ण रूप से दूसरे प्रकार का कर लगाना पड़ेगा। जहां तक अधिकार-कर्ताओं (Occupiers) की अपेक्षा स्वामियों (Owners) पर कर लगाने का प्रश्न है, इसके सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि स्वामी अपने ऊपर लगाए गए कर के भार को अधिकारकर्त्ता पर ही डाल देगा अर्थात् उसका किराया बढ़ा देगा। रेटिंग व्यवस्था के हानि-लाभों पर विचार करने के बाद यह कहा जा सकता है कि इसमें हानियों की अपेक्षा लाभ अधिक हैं इसीलिए यह अब तक बनी रही और मूलतः अपने वर्तमान रूप में ही बनी रहेगी।*

स्थानीय कर के अन्य रूप

[Others Forms of Local Taxes]

वर्तमान समय की प्रवृत्तियां कुछ इस प्रकार की हैं कि स्थानीय सत्ताओं के कार्य निरन्तर बढ़ते ही जा रहे हैं और इन कार्यों के साथ-साथ इनका खर्च भी बढ़ता जा रहा है। यह कहा जाता है कि निकट भविष्य में इस प्रवृत्ति के रुकने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, इसके विपरीत यह और अधिक बढ़ती चली जाएगी। ऐसी स्थिति में स्थानीय राजस्व के लिए अन्य व्यवस्था करना परमावश्यक बन जाता है। धन का मूल्य परिवर्तित होने के कारण भी स्थानीय सत्ताओं के व्यय में पर्याप्त वृद्धि हुई है। स्थानीय सत्ताओं के खर्च को चलाने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुदान दिया जाता है और इसके परिणामस्वरूप स्थानीय सत्ताएं केन्द्रीय सरकार पर अधिक निर्भर हो जाती हैं। स्थानीय नियन्त्रण को कम करने के लिए और उसके बढ़ते हुए उत्तरदायित्वों को सम्पन्न करने की सुविधा देने के लिए यह जरूरी बन जाता है कि स्थानीय करों के अन्य रूपों की तलाश की जाए। इस सम्बन्ध में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि ब्रिटिश स्थानीय सरकार में अन्य प्रकार के कर प्रचलित नहीं हैं और रेट्स ही एक मात्र स्थानीय राजस्व का स्रोत लगता है यदि स्थानीय सरकार के अत्यधिक व्यय का प्रबन्ध स्थानीय रूप में ही करना हो

*"Rating has survived and will continue in substantially its present form because on the whole its merits are greater than its de-merits."

—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 177.

तो इसके लिए रेट्स की मात्रा को बढ़ाना पड़ेगा। स्थानीय राजस्व को इस रूप में बढ़ाने के विरुद्ध विचारकों द्वारा कई एक तकनीकी समस्याएं उठाई जाती हैं तथा यह सुझाया जाता है कि स्थानीय राजस्व का संग्रह करने के लिए कोई नया तरीका ही ढूंढा जाए। ऐसा करना दो कारणों से महत्वपूर्ण माना जाता है। प्रथम इसलिए कि अतिरिक्त तरीकों के कारण रेट को पौंड से ऊंचा नहीं ले जाना पड़ेगा और दूसरे, स्थानीय कर का कुल स्तर ऊंचा होने से केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण स्थानीय सत्ताओं पर अत्यधिक न रहेगा। विश्व भर में स्थानीय सत्ताएं करों के अनेक रूपों का प्रयोग करती हैं किन्तु इंगलैण्ड को इसका एक अपवाद माना जाता है क्योंकि यहां केवल एक ही प्रकार का कर लगाया जाता है। फिर भी यह कहा जाता है कि यदि यहां स्थानीय करों के क्षेत्र को विस्तृत कर दिया जाए तो अनुपयुक्त न रहेगा।

आय के अन्य साधन ढूंढने की आवश्यकता, देश के प्रायः उन भागों को पड़ती है जो कि अपेक्षाकृत गरीब हैं आकर्षणहीन हैं और जिनकी सम्पत्ति के मूल्य नीचे होते हैं। इन क्षेत्रों के जो लोग अधिक धन देने की सामर्थ्य रखते हैं और अपेक्षाकृत सम्पन्न हैं तो वे या तो ऐसे क्षेत्र को छोड़ कर चले जाते हैं अथवा उसके प्रति किसी प्रकार का आकर्षण नहीं रखते। बाकी लोगों की भुगतान करने की सामर्थ्य बहुत नीची होती है और इस प्रकार स्थानीय सत्ता के राजस्व का उसकी आवश्यकताओं के साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहता। यहां एक बात और भी उल्लेखनीय है कि निर्धन क्षेत्रों में सम्पन्न क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक सेवाओं की आवश्यकता होती है जिन्हें वे नहीं प्रदान कर सकती। स्थानीय सत्ताओं में व्याप्त असमानता को दूर करने के लिए केन्द्रीय सरकार निर्धन सत्ताओं को अधिक अनुदान देती है किन्तु यह प्रयास सामयिक होता है और बाद में रेटिंग व्यवस्था को बदला जाना जरूरी बन जाता है। कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि यदि स्थानीय सत्ताएं अपने स्तर को बनाए रखना चाहती हैं तो वे केन्द्रीय सत्ताओं पर अधिक आश्रित बन जाएं। इसका अर्थ यह होगा कि स्थानीय सरकार की एक सेवाओं को केन्द्रीय सरकार के निकायों अथवा दूसरे संगठनों को सौंप देगी। स्थानीय सत्ताओं को आय के अन्य स्रोत ढूंढने ही होंगे क्योंकि इसका विकल्प अनेक हित में नहीं रहता किन्तु ऐसा करना भी कोई सरल काम नहीं है। इसका एक प्रत्यक्ष प्रमाण इस तथ्य से ही प्राप्त हो जाता है कि रेटिंग व्यवस्था दोषपूर्ण होते हुए भी चली आ रही है।

यह स्वाभाविक है कि स्थानीय जनता नए प्रकार के कर लगाने में रुचि नहीं लेगी। जिस देश में करों का स्तर पहले से ही बहुत ऊंचा हो तो वहां आगे कर लगाने के किसी भी प्रस्ताव का स्वागत नहीं किया जाएगा। ऐसी स्थिति में नए कर लगाना पूर्णतः अनुपयुक्त एवं असम्भव सा है किन्तु यह किया जा सकता है कि वर्तमान कर व्यवस्था में ही परिवर्तन करके समायोजन किया जाए। यह कहा जाता है कि यदि स्थानीय सत्ताएं वर्तमान की अपेक्षा करों द्वारा अधिक धन का संग्रह कर सकें तो उन्हें केन्द्रीय सरकार द्वारा दिए गए अनुदान की आवश्यकता नहीं रहेगी। इससे केन्द्रीय कोषाध्यक्ष का भार हल्का हो जाएगा, फलतः केन्द्रीय कर कम कर दिए ज

प्रक्रिया अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि केन्द्रीय सरकार अपने करों के किसी भी क्षेत्र को उस समय तक नही छोडना चाहती जब तक कि उसे धन की आवश्यकता मे मुक्ति प्रदान न कर दी जाए। इस स्थिति का उदाहरण देते हुए आर० एम० जैक्सन ने मनोरजन कर का उल्लेख किया है। वे बताते हैं कि एक व्यक्ति जो सिनेमा जाता है और टिकट खरीदता है, वह जानता है कि उसके टिकट का एक भाग केन्द्रीय सरकार को जाएगा। यदि कर का यह भाग केन्द्रीय सरकार को न जा कर स्थानीय सत्ता को चला जाए तो सिनेमा दर्शक की जेब पर कोई प्रभाव नही पड़ेगा किन्तु इससे कोषाध्यक्ष को करीब चार करोड पौंड प्रति वर्ष की हानि होगी। इतना धन वह स्थानीय सत्ताओ को दिए जाने वाले अनुदान को रोक कर बचा सकता है और इस तरह से उसे कोई हानि नही रहेगी; किन्तु मुश्किल यह है कि मनोरजन कर की भांति ऐसे कर बहुत कम हैं जिनको स्थानीय सत्ता के लिए हस्तान्तरित किया जा सके।

स्थानीय राजस्व की स्थिति को सुधारने के लिए एक अन्य महत्वपूर्ण सुझाव यह दिया जाता है कि स्थानीय आयकर को प्रारम्भ किया जाए। रेटिंग व्यवस्था को समाप्त नही किया जा सकता। इसकी परम्पराएं बहुत पुरानी हैं तथा इनको अच्छी तरह से जांचा जा सकता है। इनका उपयोगी स्थायी तथा व्यापक है। इसकी कठिनाइया गम्भीर होते हुए भी पुरानी हैं और स्वीकृत हो चुकी हैं। स्थानीय आयकर लगाने की शक्ति स्थानीय सत्ताओ को देने का कई विचारकों द्वारा समर्थन किया जाता है। इस कर की शक्ति काउन्टीज तथा काउन्टी बारोज को दी जानी चाहिए। स्थानीय आय-कर का सुझाव भी कई एक कठिनाइयों से पूर्ण है आयकर के संग्रह के लिए बड़े यन्त्र की आवश्यकता पडती है जो कि प्रायः किसी भी कर के सग्रह मे आवश्यक नहीं होता। ऐसा यन्त्र स्थानीय स्तर पर स्थापित करना मुश्किल रहेगा। इसलिए, स्थानीय आयकर को मूल्यांकित करने तथा सग्रहीत करने का कार्य, राष्ट्रीय व्यवस्था पर आधारित रहेगा। स्थानीय आयकर को व्यक्तिगत आमदनियो एव रोजनदारी प्राप्त करने वालों तथा वेतन भोगियो पर लगाने मे अधिक कठिनाई नही होती क्योंकि वे पहले से ही अपनी आय मे से कर को काटते हैं। वे स्थानीय सत्ता के लिए भी चाही गई मात्रा को भी कटा सकती है। यह कहा जाता है कि यदि एक व्यक्ति काउन्टी मे रहता है और वह कार्य किसी काउन्टी बारो मे करता है तो उसकी आय के कर को काउन्टी बारो द्वारा लिया जाएगा तथा काउन्टी उसके निवास स्थान पर लगाई गई रेट्स को ग्रहण करेगी।

स्थानीय आयकर का सग्रह किस प्रकार किया जाये, इसके सम्बन्ध मे अलग-अलग मत हैं। कुछ लोग कहते हैं कि केन्द्रीय सरकार को अपनी कर की दरें बढ़ा देनी चाहिये और अतिरिक्त राजस्व मे से धन स्थानीय सत्ताओ को वितरित कर देना चाहिये, किन्तु इस योजना के द्वारा अन्य प्रश्न उठ खड़े होते हैं; जैसे, केन्द्रीय सरकार यह किस प्रकार तय करेगी कि प्रत्येक स्थानीय सत्ता को कितना भाग दिया जाये। यदि इस व्यवस्था को रेट्स के स्थान पर रख दिया जाये तो स्थानीय सरकार का सारा धन केन्द्रीय सरकार

के हाथ में होकर आयेगा और इसके परिणामस्वरूप स्थानीय सत्ताओं पर केन्द्रीय नियन्त्रण वर्तमान से भी अधिक हो जायेगा। दूसरे लोगों का यह कहना है कि स्थानीय आयकर को सग्रही करने का केवल व्यावहारिक मार्ग यह है कि स्थानीय सत्ताएं अपने क्षेत्र के निवासियों की आय को इस कर का आधार बनाये। इस सुझाव का विरोध करने वाले यह कहते हैं कि स्थानीय कर के प्रशासन पर विचार करने के लिये अधिकारियों की एक बड़ी सेना की आवश्यकता थी, तथा बहुत कुछ उस कार्य को दुहराया जायेगा जो कि अन्तर्देशीय राजस्व विभाग का किया जाता है। यह भी कहा जाता है कि जब उन लोगों की आय पर नियन्त्रण करने के लिये पहले से ही केन्द्रीय आयकर स्थित है तो फिर स्थानीय आयकर को और क्यों थोपा जाये। स्थानीय आयकर क्योंकि किसी अन्य निकाय द्वारा लगाया जायेगा जिसमें केन्द्रीय सरकार के राजनैतिक दल का प्रभाव भी हो सकता है और ऐसी स्थिति में वह निकाय अपनी शक्तियों का प्रयोग सरकार के उद्देश्य के विरुद्ध भी कर सकता है। इस कर के विरुद्ध एक आपत्ति यह उठाई जाती है कि निर्धन क्षेत्र वासी सत्ताएं अपने निवासियों की आय से अधिक राजस्व एकत्रित नहीं कर सकतीं और उनकी प्रभावग्रस्त स्थिति वैसी को वैसी बनी रहेगी। आयकर को अवितरित कम्पनी लाभों के ऊपर लगाना मुश्किल होता है। आयकर के सम्बन्ध में निश्चित रूप से स्थानीय कुछ भी नहीं होता। एक बड़ा व्यापारिक उद्यम अपनी विभिन्न शाखाओं द्वारा धन कमाता है और देश के विभिन्न भागों में वह कार्य करता है। कम्पनियों के लाभों को जब तक वितरित नहीं किया जाता है, उस समय तक उन पर कैसे कर लगाया जाये, यह एक समस्या है।

आयकर की प्रकृति प्रगतिशील (Progressive) होती है और ऐसी स्थिति में यह सम्भावना व्यक्त की जाती है कि यह रेट्स की अवनतिशील विशेषता की प्रतिक्रिया करेगा।

आयकर के अतिरिक्त स्थानीय सरकार को कुछ अन्य कर सौंपने की भी बात कही जाती है। यह कहा जाता है कि जिन करों को वर्तमान में केन्द्रीय सरकार द्वारा लगाया जाता है, उनको स्थानीय सत्ताओं को हस्तान्तरित कर देना चाहिये। मनोरंजन कर को ऐसे कर के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। एक दूसरा कर जिसे स्थानीय सत्ताओं को हस्तान्तरित किया जा सकता है वह है मोटर-गाड़ियों पर लगाया जाने वाला कर और चालक की लाइसेन्स फीस। ये कर इस समय काउन्टी परिषदों तथा काउन्टी बारोज द्वारा सग्रहीत किये जाते हैं। ये सत्तायें कोषाध्यक्ष के नाम पर कार्य करती हैं। वे जितना भी धन इकट्ठा करती हैं उस सबको केन्द्रीय सत्ता को दे देती है तथा उन्होंने जो खर्चा किया है उसे वे बाद में वसूल करती हैं। चालक के लाइसेंस की फीस उस काउन्टी या काउन्टी बारो द्वारा ली जाती है जहां कि प्रार्थी रहता है तथा ऐसी व्यवस्था करने में कोई कठिनाई नहीं हो सकती कि जो सत्ता इस धन को इकट्ठा करे उसी को यह सौंप दिया जाये। मोटरगाड़ी का लाइसेंस प्रायः उसी काउन्टी या काउन्टी बारो से लिया जाता है जिसमें वह मोटर रखी जाती है। इसके कुछ अपवाद भी

हैं। उदाहरण के लिये अधिकांश व्यापारिक संस्थायें जो मोटर गाड़िया रखती हैं, उनके लाइसेंस वगैरह वे एक ही स्थान से बनवाती हैं अर्थात् जहां पर उनका मुख्य कार्यालय होता है।

मोटर-गाड़ियो से सम्बन्धित कर के सम्बन्ध मे एक कठिनाई है और वह यह कि यह कर परम्परागत रूप से सड़क कोष (Road fund) से सम्बद्ध है। मोटर गाड़ियो के प्रारम्भिक दिनों में यह कहा जाता था कि इन पर लगाया गया कर सड़को की रचना एव सुधार के काम मे ही लाया जाये। यह विचार वर्षों पहले ही ठुकरा दिया गया था किन्तु फिर भी मोटर-गाड़ियों से सम्बन्धित प्रत्येक व्यक्ति का यह मूल विचार रहता है कि मोटर-गाड़ियो पर लगाये गये सभी करो को केवल सड़को के ही काम मे लाया जाना चाहिये, अन्य किसी काम मे नहीं। केन्द्रीय सरकार भी मोटरों पर लगाये गये कर को एक साधारण कर समझती थी तथा उसे सड़को पर ही खर्च करने की ओर विशेष ध्यान नही देती थी। जिस प्रकार तम्बाकू तथा नशीली चीजों पर लगाया गया कर नशेबाजो पर ही खर्च किया जाना जरूरी नही था। उसी प्रकार मोटर-गाड़ी से सम्बन्धित कर को भी सड़को पर खर्च किया जाना जरूरी नही था। इतने पर भी यह निश्चित है कि यदि मोटर-गाड़ी कर को स्थानीय सत्ताओ को दिया गया तो इसका विरोध किया जायेगा क्योंकि इससे यह आशा पूरी तरह समाप्त हो जाती है कि सड़क कोष को एक दिन पुनः चालू किया जायेगा।

एक सुझाव यह भी दिया जाता है कि खेरूज की बिक्री पर स्थानीय कर लगा दिया जाये। यह व्यवस्था सयुक्त राज्य अमरीका मे व्यापक रूप से प्रचलित है। वर्तमान मे स्थानीय सत्ताओ के राजस्व के मुख्य स्रोत रेट्स तथा सरकारी अनुदान हैं।

कर्जे
(Loans)

स्थानीय सरकार द्वारा किये जाने वाले कई एक कार्यों मे बहुत अधिक धन की आवश्यकता होती है। इस धन का प्रबन्ध स्थानीय राजस्व द्वारा नही किया जा सकता अतः उसके लिये कर्ज लेकर व्यवस्था की जाती है। एक सामान्य मान्यता यह भी है कि जिन कार्यों का लाभ करदाताओ की भावी सततियो को प्राप्त होने वाला है अर्थात् वह कार्य स्थायी प्रकृति का है तो उसके लिये व्यवस्था कर्ज द्वारा धन लेकर की जानी चाहिये ताकि खर्च को कई वर्ष मे चुकाया जा सके और भावी सतति भी अपने लाभ का अशदान दे सके। एक नियम के अनुसार स्थानीय सत्तायें कर्ज के रूप मे जो भी धन प्राप्त करती हैं उसे वे एक निश्चित समय के बाद वापिस कर देती हैं। कोई भी कर्जा अस्सी वर्ष से अधिक तक नही चलना चाहिये। स्थानीय सत्ता इसके लिये ब्याज देती है। यह नियम सदैव ही अपनाया जाता है चाहे किये गये खर्च से राजस्व उत्पन्न हो अथवा न हो। यह कर्जा व्यापारिक कम्पनी की उस पूंजी से भिन्न है जिसमे कर्ज द्वारा धन लिया जाता है किन्तु उसे उस समय तक नहीं चुकाना होता जब तक कि कम्पनी व्यापार कर रही है।

स्थानीय सत्ताओं की साख प्रायः अच्छी होती है अतः उनको व्यापारिक उद्यमों की अपेक्षा अधिक सस्ते ब्याज पर धन प्राप्त हो जाता है, किन्तु कर्ज को वापिस देने के उनके उत्तरदायित्व का अर्थ होता है कि उनके द्वारा किया जाने वाला भुगतान व्यक्तिगत उद्यम से ज्यादा हुआ जिसे केवल ब्याज ही देना होता है। उदाहरण के लिए हम जल वितरण की सेवा को ले सकते हैं। एक व्यक्तिगत उद्यम जब कर्ज लेकर इस सेवा का सचालन करेगा तो वह इसे उस स्थानीय सत्ता की अपेक्षा अधिक सस्ते दामों पर उपलब्ध करा सकेगा जो स्वयं भी इसे कर्ज लेकर चलाती है। इसका कारण यह है कि व्यक्तिगत उद्यम को अपने कर्जदाता को केवल ब्याज की छोटी रकम ही देनी होगी जब कि स्थानीय सत्ता ब्याज के साथ-साथ रकम का भी एक भाग वापिस करेगी। अतः स्वाभाविक है कि उसके द्वारा प्रदत्त सेवा का मूल्य अधिक होगा। इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप जब स्थानीय सत्ता अपना पूरा कर्जा चुका देती है तो जनता को वह सेवा कम दामों में ही प्राप्त हो जाती है, केवल उतने में ही जितना कि उसके प्रबन्ध में खर्च किया गया है।

धन उधार लेने की शक्ति अन्य शक्तियों की भांति व्यवस्थापन द्वारा प्रदान की जाती है। यह शक्ति इतनी महत्वपूर्ण होती है कि इसको देते समय यह प्रावधान रख दिया जाता है कि जब भी कभी इसका प्रयोग किया जाये तो पहले केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति प्राप्त कर ली जावे। इस स्वीकृति का प्रावधान दो लक्ष्यों की साधना के लिए रखा गया। प्रथम यह कि इस प्रकार से स्थानीय सत्ता की सामान्य स्थिति की पुनरीक्षा की जा सके तथा यह देखा जा सके कि यह अपने साधनों का प्रयोग भली प्रकार से कर रही है अथवा नहीं। एक बार धन उधार लेने के बाद सत्ता उस धन का उपयोग करती है। यदि वह ऐसा न करे तो इसके गम्भीर परिणाम हो सकते हैं। यह न केवल उस सत्ता के लिए ही वरन सामान्य रूप से स्थानीय सरकार के लिए ही संकटपूर्ण रहेगा। स्थानीय सत्ताओं की आज साख बनी हुई है, इसका कारण यह है कि इनके द्वारा सदैव ही इनके दायित्वों का पालन किया गया है। यदि एक ने भी गलत उदाहरण पेश कर दिया तो भय है कि सभी सत्ताओं के सम्मान को धक्का लगेगा और कलंक लग जायेगा। केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रस्तावित कर्जों की छानबीन का एक अन्य उपयोग यह है कि केन्द्रीय सत्ता पूंजीगत कार्य की मात्रा पर नियन्त्रण रखने में समर्थ हो जाती है। वर्तमान समय में केन्द्रीय सरकार की इतनी शक्ति एवं सामर्थ्य नहीं है कि सारे कार्यों को वह स्वयं ही सम्पन्न कर सके। अतः वह वाछनीय कार्यों का दायित्व स्थानीय सत्ताओं पर छोड़ देती है किन्तु स्वयं उनकी क्रियाओं पर नियन्त्रण रखती है ताकि यह देख सके कि सरकार की सामान्य नीति के अनुसार प्राथमिकता दी जा रही है अथवा नहीं। यदि केन्द्रीय सरकार यह अनुभव करे कि किसी विशेष स्थानीय सत्ता द्वारा बहुत अधिक विकास-कार्य सम्पन्न कर दिया गया है तो वह इसे कम करने के लिए एक सरल साधन अपना सकती है कि प्रस्तावित कर्ज की स्वीकृति प्रदान न करे। कुछ ऐसी परिस्थितियां भी आ जाती हैं जब कि केन्द्र सरकार स्थानीय सरकारों को पूंजीगत व्यय के लिए प्रोत्साहित करती है। यह कहा जाता है कि जब कभी यह

आवश्यक समझा जाये कि सामान की माग को बढ़ाया जाय अथवा रोजगार की स्थिति को अच्छा किया जाये तो स्थानीय संस्थाओं को अधिक कार्य सौंप दिये जाते हैं और ऐसा करने पर उनको कर्ज लेने की शक्ति भी दे दी जाती है।

स्थानीय सत्ता जब कर्ज लेती है तो वह किसी भी ऐसे तरीके को अपना सकती है जो कि किसी भी अन्य उद्यम द्वारा अपनाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसको कुछ विशेष सुविधाएं भी प्रदान की जाती हैं। बैंक ओवरड्राफ्ट, गिरवी (Mortgages), बाण्ड्स आदि द्वारा कर्ज लिया जाता है। बैंक ओवरड्राफ्ट का प्रयोग बहुत कम किया जाता है। इसे प्रायः अस्थायी उद्देश्य के लिए काम मे लाया जाता है। बाण्ड तथा गिरवी की व्यवस्था द्वारा कर्ज लेने की प्रक्रिया सरल होती है। इस व्यवस्था मे बाहरी दलाल रखने की आवश्यकता नहीं होती तथा खर्च को भी कम से कम रखा जा सकता है। जब कभी स्थानीय परिषद को कर्ज लेना होता है तो वह इसके लिए समाचार पत्रो मे विज्ञापन देती है कि उसे इन शर्तों पर कर्ज लेना है। स्थानीय सत्ता की सम्पत्ति एवं रेट्स द्वारा प्राप्त राजस्व एक प्रकार से उसकी जमानत होती है। प्रार्थना-पत्र परिषद के कार्यालय में दिये जाते हैं। यह कर्ज एक निश्चित काल के लिए और प्रायः सात वर्ष के लिए होता है। इस पर दिया जाने वाला ब्याज भी निश्चित होता है।

स्थानीय-सत्तायें जिन तरीकों से कर्ज ले सकती हैं उनमे सबसे महत्वपूर्ण तरीका जनकार्य कर्जा आयुक्तों (Public Works Loans Commissioners) से कर्ज लेना है। इन आयुक्तो को संसद के अधिनियम द्वारा स्थापित किया गया है। राजकोष (Treasury) द्वारा उनको कुछ धन सौंप दिया जाता है। इसमें से वे स्थानीय एवं सार्वजनिक सत्ताओं को कर्जा दे सकते हैं। जिस सत्ता को कर्ज लेने की आवश्यकता होती है वह आयुक्तो को प्रार्थना-पत्र भेजती है। आयुक्त इस बात पर विचार करते हैं कि उनको प्रार्थना-पत्र का समर्थन करना चाहिये अथवा नहीं। आयुक्त सामान्य रूप से कर्ज की अनुमति दे देते हैं अथवा अनिच्छा दिखाते हैं—यह बात सरकार की आर्थिक नीति पर निर्भर करेगी। कर्ज पर लिया जाने वाला ब्याज पहले ही सरकार तय कर देती है। जब आयुक्तों द्वारा ऋण देना स्वीकार कर लिया जाये तो सरकार यह निर्णय करती है कि यह कितने समय तक के लिए दिया जाना चाहिए। उसके बाद स्थानीय सत्ता को यह बता दिया जाता है कि प्रति वर्ष उसे ब्याज के रूप मे तथा मूलधन लौटाने के लिए कितनी रकम देनी होगी। स्थानीय सत्ता प्रायः इस व्यवस्था में सुविधा का अनुभव करती है। आयुक्तों के निकाय का अपना महत्व एवं उपयोगिता है।

यह कर्ज के अन्य स्रोतों को ब्याज के रूप मे अनुचित धन कमाने से रोकती है। योरोप के देशों मे यह व्यवस्था न होने के कारण वहां की नगरपालिका संस्थाओं को धन उधार लेने में भारी कठिनाई का अनुभव होता है। आर० एम० जेक्सन का यह कहना सच है कि छोटे कस्बे खुले बाजार मे नहीं जा सकते और उनको बैंको, बीमा कम्पनियों तथा अन्य व्यावसायिक धन-

दाताओं की दया पर निर्भर रहना होता है और ऐसे कस्बों को प्रायः अधिक ब्याज देना पड़ता है।*

कई बार ऐसा होता है कि *बीमा कम्पनियाँ स्थानीय सरकारों* को इस शर्त पर ऋण देती हैं कि किसी निश्चित स्थान को उनका कार्यालय बनाने के लिए दे दिया जाये। इंगलैन्ड में यदि कोई संस्था स्थानीय सत्ताओं से ऋण की अधिक दर प्राप्त करना चाहे अथवा कोई अनुपयुक्त शर्त को मन्जूर कराना चाहे तो वह सीधी आयुक्तों के पास जा कर ऋण की माग कर सकती है। आयुक्तों के ब्याज की दर सभी को ज्ञात रहती है। आयुक्तों की व्यवस्था का स्पष्ट अर्थ यह है कि राजकोष के पास इतना धन रहता है कि वह स्थानीय सत्ताओं के कर्ज के हेतु आयुक्तों को दे सके।

स्थानीय सत्ता द्वारा जब आयुक्तों से कर्ज लिया जाता है तो यह समझौता किया जाता है कि वे इतने वर्षों तक इतना धन प्रति वर्ष देती रहेंगी। अनेक तकनीकी कठिनाइयों एवं सुविधाओं का अध्ययन करने के बाद बड़ी स्थानीय सत्तायें खुले बाजार से धन लेना पसन्द करती हैं जब कि छोटी स्थानीय सत्ताओं को आयुक्तों के पास जाने में सुविधा महसूस होती है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के वर्षों में आयुक्तों द्वारा यह नीति अपनायी गई थी कि वे प्रायः कर्ज दे ही देते थे। सरकार भी कम ब्याज लेने में रुचि रखती थी ताकि स्थानीय सत्ताओं के पूंजीगत कार्यों को बढ़ाया जा सके। सन् १९५५ में कोषाध्यक्ष द्वारा यह नीति बदल दी गई। उसने पूंजीगत व्यय को पूर्णतः कम करने की ओर कदम उठाए। आयुक्तों के कार्य एकदम धीमे पड़ गये। पहले वे प्रायः कर्जा दे दिया करते थे किन्तु अब की नीतियों के अनुसार वे स्थानीय सत्ता को केवल तभी धन देते थे जब कि उसे सख्त जरूरत हो और वह किसी और साधन से धन प्राप्त करने में असमर्थ हो। इसके अतिरिक्त ब्याज की दरें भी बढ़ा दी गईं। इसके परिणामस्वरूप बड़ी स्थानीय सत्ताओं ने खुले बाजार से धन लेना प्रारम्भ किया *जबकि छोटी स्थानीय सत्तायें गिरवी द्वारा धन उधार लेने लगीं।* इस व्यवस्था के आधीन स्थानीय सत्ताओं का पूंजीगत कार्यों पर व्यय कम हो गया।

प्रत्येक स्थानीय सत्ता विभिन्न लेखों पर थोड़ा बहुत धन रखती है। पेन्शन कोष की भांति इसके पास कुछ एक कोष रहते हैं। इस व्यवस्था द्वारा उसे प्रति वर्ष कर्जा नहीं लेना होता तथा वह अपने व्यय में सन्तुलन स्थापित कर लेती है। प्रत्येक बजट में भावी व्यय के लिए बचत करने का प्रावधान भी रखा जाता है। ऐसा नहीं किया जाये तो जिस वर्ष धन की आवश्यकता होगी उस वर्ष स्थानीय सत्ता को अधिक धन कर्ज के रूप में लेना होगा। अतः यह उचित समझा जाता है कि इसका पहले से ही प्रबन्ध कर लिया जाये। उदा-

*"A smaller town can not go to the open market and it is at the mercy of banks, insurance companies and other money-lenders and often such towns have had to pay a high rate of interests."

—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 186

हरण के लिए यदि एक स्थानीय सत्ता कर्ज लेकर एक मोटर-गाड़ी खरीदती है तथा दस वर्षों में वह उस कर्ज को चुका पाती है तो तब तक ली हुई मोटर-गाडी पुरानी हो चुकेगी तथा उसके स्थान पर नई लेना जरूरी हो जायेगा। नई मोटर गाडी लेने के लिए पुनः कर्ज लिया जाये और उसे दस साल तक चुकाया जाये। इस प्रकार वह स्थानीय सत्ता निरन्तर रूप से कर्जदार ही बनी रहेगी तथा लगातार ब्याज चुकाने मे धन व्यय करती रहेगी। इस स्थिति से बचने के लिए एक उपाय यह बताया जाता है कि स्थानीय सता प्रति वर्ष अपने विशेष कोष मे पर्याप्त धन रखे और जब कभी मोटर गाडी नई बदलने की आवश्यकता हो तो उस कोष के धन का प्रयोग कर लिया जाये। इस धन पर उसे ब्याज भी नही देना पड़ेगा।

जब स्थानीय सत्ता के पास एक विशेष कोष होगा तो उसको भी वह तभी खर्च करेगी जबकि उसे धन की आवश्यकता है। वह इस धन को चाहे तो किसी कार्य मे लगा भी सकती है तथा इस पर ब्याज भी ले सकती है। स्थानीय परिषद जब अपने विशेष कोष के धन को किसी कार्य मे लगायेगी तो पहले इस बात की पूरी जाच पडताल कर लेगी कि उसका धन वहा सुरक्षित भी रहेगा अथवा नही और ऐसी स्थिति में उसको उसकी अपेक्षा कम ब्याज प्राप्त होगा जितना कि उसे स्वय को उधार लिये गये धन पर देना होता है। यह सुझाव दिया जाता है कि उपयुक्त एवं सुविधाजनक व्यवस्था यह रहेगी कि स्थानीय सत्ता अपने विशेष कोष के धन को पूंजीगत व्यय मे लगा दे और उस पर के ब्याज को विशेष कोष मे जमा करे। यह आन्तरिक (Internal borrowing) बाहय कर्जदारी की तुलना में श्रेष्ठ रहती है।

स्थानीय सत्ता एक ऐसा विशेष कोष भी रख सकती है जिसका एक मात्र लक्ष्य पूंजीगत व्यय की व्यवस्था करना ही हो। स्थानीय सत्ता के बजट में प्रति वर्ष इस प्रकार के कर्ज के ब्याज तथा मूलधन को चुकाने का प्रावधान रहता है। यह धन स्थानीय सत्ता के उस विशेष कोष मे ही चला जाता है जिससे लिया गया था। जहा तक स्थानीय सत्ता द्वारा कर्ज लेने की शक्ति का प्रश्न है, उसमें अत्यधिक नियत्रण नही किया जाना चाहिए किन्तु इसका अर्थ यह नही है कि उनको पूरी तरह से स्वतन्त्र छोड दिया जाये क्योंकि ऐसा करना अन्य स्थानीय सत्ताओ के हित मे न रहेगा। प्रत्येक स्थानीय सत्ता अपने पडौस की स्थानीय सत्ता मे रुचि रखती है तथा उसे उसकी सीमाओं में ही रखना चाहती है। जिस सत्ता के नागरिक जागरूक होते हैं वे स्वय इस बात की निगरानी रखते हैं कि उनकी सत्ता उतना धन न ले जितना कि वह चुका न सकें किन्तु प्रत्येक स्थानीय सत्ता इतनी योग्य नही होती। यदि वह अपनी सामर्थ्य से बाहर कर्ज लेने का प्रयास करे तो केन्द्रीय सरकार द्वारा उस पर सीमा लगाई जा सकती है।

व्यापारिक सेवायें एवं आमदनी के अन्य स्रोत

[Trading Services and Other Sources of Income]

स्थानीय सत्तायें अपने द्वारा प्रदान की गई सेवाओ के बदले तथा किराये के रूप में भी धन प्राप्त कर सकती हैं। इन सत्ताओ की विभिन्न सेवाओं को व्यापारिक सेवा एवं गैर-व्यापारिक सेवाओ के रूप मे वर्गीकृत

किया जा सकता है। व्यावहारिक रूप से उस सेवा को व्यापारिक सेवा कहा जाता है जिसको व्यक्तिगत उद्यम द्वारा भी संचालित किया जा सके। उदाहरण के लिए यात्री यातायात सेवा को ले सकते हैं। यह सेवा व्यापारिक रूप से संचालित की जाती है। दूसरे प्रकार की सेवाओं से कूड़ा-करकट को हटाने के कार्य को लिया जा सकता है। कोई भी व्यक्तिगत उद्यम प्राय: इस कार्य को नहीं करना चाहेगा। स्थानीय सत्तायें भी इन सेवाओं को व्यापारिक रूप से संचालित नहीं करती।

व्यापारिक सेवायें (Trading Services) वे होती हैं जिनके संचालन के लिए करों के माध्यम से धन संग्रह किया जाता है। प्रारम्भ में मान्यता यह थी कि सरकार द्वारा किये जाने वाले व्यय का धन उस आय से लिया जाये जो कि सरकारी सम्पत्ति से प्राप्त होती है। पहले राष्ट्रीय राजस्व में तथा राजा की व्यक्तिगत सम्पत्ति में कोई भेद नहीं समझा जाता था। उस समय यदि किसी उच्च अधिकारी को कुछ धन देना हो तो उसे एक भू-भाग प्रदान कर दिया जाता था तथा उससे प्राप्त होने वाली आमदनी का प्रयोग करने की उसे छूट रहती थी। जब सामाजिक परिस्थितियां बदली तो स्थानीय सत्तायें अनेक सेवाओं का संचालन करने लगी। इन सेवाओं से ही नगरपालिका वाणिज्य का विकास हुआ। वैसे नगरपालिका वाणिज्य से स्थानीय सत्ताओं को जो धन प्राप्त होता है वह न के बराबर है। नगरपालिका वाणिज्य (M inicip il Trading) उन सेवाओं को कहा जाता है जिनके प्रयोग के लिए स्थानीय सत्तायें प्रयोगकर्त्ता से प्रत्यक्ष रूप में धन वसूल करती हैं। गैस वितरण सेवा को इसके उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। गैस वितरण के क्षेत्र में पहल करने का श्रेय मैनचेस्टर को दिया जा सकता है। गैस उत्पादन का विकास गलियों में प्रकाश करने के लिए किया गया था किन्तु बाद में यह इतना उपयोगी सिद्ध हुआ कि अधिकांश लोग घरों के लिए इसकी मांग करने लगे। फलत: इस क्षेत्र में उल्लेखनीय तकनीकी विकास किया गया और अब कई एक स्थानीय सत्तायें एक बड़ी व्यापारिक सेवा का संचालन कर रही हैं। जल-वितरण की सेवा भी कुछ इसी प्रकृति की सेवा है।

स्थानीय सत्ताओं की इन व्यावसायिक सेवाओं के विकास में समाजवादी आन्दोलनों ने महत्वपूर्ण रूप से भाग लिया। फेबियन समाजवादी विचारकों का मत था कि नगरपालिका क्रियाओं के माध्यम से समाजवाद की स्थापना की जा सकती है। इसी मत से प्रभावित होकर उन्होंने नगरपालिका की दूकानों, धोबीखानों, फैक्ट्रियों आदि का समर्थन किया। नगरपालिका के व्यापार की सफलता को प्रदर्शित करने के एक उदाहरण के रूप में उन्होंने यात्री यातायात को लिया। अनेक कस्बों को ट्राम चलाने की शक्ति प्राप्त हो गई और उन्होंने इस शक्ति का प्रयोग बड़ी सफलता के साथ किया। वे वित्तीय दृष्टि से पर्याप्त सफल रहीं। कई एक स्थानीय सत्ताओं ने धीरे-धीरे विद्युत एवं गैस के वितरण का कार्य भी सम्भाल लिया।

पिछले कुछ वर्षों से नगरपालिका सेवाओं के क्षेत्र में भारी परिवर्तन आया। कुछ सेवाओं की प्रकृति में तकनीकी रूप से परिवर्तन आ गया। ट्राम

को अब कम कर दिया गया तथा मोटर बसो द्वारा किया जाने वाला सड़क यातायात केवल शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित न रहा वरन् यह देहाती इलाकों मे फैल गया। गैस तथा विद्युत की खपत बहुत बढ़ जाने के कारण इन दोनों ही सेवाओं का राष्ट्रीयकरण करना पड़ा। अब स्थानीय सत्ताओं को इन दोनों ही सेवाओं के बारे में कुछ भी नही करना होता।

जब ग्रेट ब्रिटेन का औद्योगीकरण हो गया तो वहां क्रियाओं के राष्ट्र-व्यापी क्षेत्र तथा बड़ी इकाइयों की ओर अधिक ध्यान दिया जाने लगा। व्यक्ति द्वारा उपयुक्त प्रत्येक चीज का उत्पादन स्थानीय स्तर पर करना न तो उपयोगी रह गया और न सम्भव ही। यदि किसी सेवा को स्थानीय स्तर पर चलाया भी जाये तो वह राष्ट्रीय स्तर की सेवा के मुकाबले प्रतियोगिता में नही टिक सकती।

नगरपालिका व्यापार द्वारा लाभ कैसे किया जाये अथवा न किया जाये, इसके बारे मे भी आजकल विचार बहुत कुछ बदल गये हैं। प्राचीन मान्यता के अनुसार यदि ऐसी सेवाओं से लाभ प्राप्त किया जा सके तो अवश्य ही करना चाहिए। इस प्रकार जो लाभ कमाया जाये, वह सत्ता के सामान्य कोष मे जाये ताकि करो की मात्रा को कम किया जा सके। इस सम्बन्ध मे वर्तमान विचार यह है कि इन सेवाओं को इस प्रकार सचालित किया जाये कि वे अपना खर्चा स्वयं ही निकाल सकें अर्थात न तो फायदा ही प्राप्त किया जाये और न नुकसान ही। इसके लिए यह तर्क दिया जाता है कि एक नगर-पालिका उद्यम को न तो कर का रूप धारण कर लेना चाहिए और न ही स्थानीय सरकार को सहायता देने का ही। उदाहरण के लिए शहर की बस सेवा को लिया जा सकता है। यदि शहर की बस सेवा लाभ प्राप्त करती है तो इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि यात्रियों से जो लिया जाना चाहिए उससे अधिक लिया जा रहा है। इससे करो मे कमी की जायेगी अर्थात यात्रियों ने एक प्रकार से स्थानीय सत्ता को कर प्रदान किया जो कि गलत था; क्योंकि कोई भी कर कुछ चुने हुए लोगों पर ही न लग कर सामान्य जनता पर लगना चाहिए था। दूसरी ओर यदि शहर की बस सेवा हानि के साथ चलती है तो सत्ता को रेट्स से प्राप्त धन मे से प्रबन्ध करना होगा। इसका अर्थ हुआ कि यात्रियों को जो सेवा प्राप्त हो रही है उसका धन सारे स्थानीय करदाताओं की जेब से आ रहा है। ये दोनों ही स्थितियां गलत हैं। निष्कर्ष यह है कि सेवा को अपना खर्चा स्वयं ही चलाना चाहिए। ऐसा हो सकता है कि मरम्मत या बदलाव के लिए एक विशेष कोष भी बना दिया जाये। इन सेवाओं से इतना अतिरिक्त धन नही कमाना चाहिए कि स्थानीय करो को राहत प्रदान की जा सके। यही सिद्धान्त राष्ट्रीयकृत उद्योगो मे भी अपनाया गया है।

वर्तमान समय मे जब कभी नगरपालिका सेवाओं के प्रसार का सुझाव रखा जाता है तो कई लोग जिनके हितो पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है, इसका विरोध करते हैं। युद्ध के दौरान संकट काल की स्थिति मे नगर-पालिका ने जो रेस्तरां प्रारम्भ किये उनमे से कई एक को तो अब बन्द कर दिया गया है। अनुभव ने यह बताया है कि नगरपालिका का रेस्तरां व्यक्ति-गत उद्यमों के साथ प्रतियोगिता करता हुआ अधिक दिन नही चल सकता जब

तक कि सरकारी कोष द्वारा उसको सहायता न दी जाये। यह प्राय असम्भव सा है कि नगरपालिकाओं को कोई ऐसी नई सेवा मिल सके जो कि लाभदायक हो और स्थानीय निवासियों के लिए उपयोगी भी हो।

यदि स्थानीय सरकार द्वारा स्वामित्व की गई स्थानीय सत्ताओं एवं व्यक्तिगत उद्यमों के बीच तुलना का प्रयास किया जाये तो हमें पर्याप्त कठिनाई का सामना करना होगा। दोनों के तरीकों एवं मूल्यों के बीच पर्याप्त अन्तर रहता है, । उदाहरण के लिए हम जंगलात को ले सकते हैं। जो जंगलात व्यक्तिगत कार्य-कर्ताओं के हाथ मे हैं वे उनके सम्बन्ध मे नीतियां अपनाते समय एवं योजनाओं को क्रियान्वित करते समय दीर्घकालीन लाभ पर विचार नहीं करते। यही कारण है कि कई एक जंगल समाप्त हो गये क्योंकि उनके भावी विकास को ध्यान मे रख कर नये पौधे लगाने की ओर कोई ध्यान नही दिया गया। इसके विपरीत स्थानीय सत्ता द्वारा वह सब कार्य किया जाता है जो कि किया जाना चाहिए तथा जिसके आधार पर भविष्य को सुरक्षित बनाया जाना चाहिए। यदि हम तत्कालीन हानि-लाभ की दृष्टि से विचार करें तो पायेंगे कि व्यक्तिगत प्रबन्धक अधिक सफल रहता है किन्तु जब हम दीर्घकालीन नीति की दृष्टि से सोचते है तो लगता है कि स्थानीय सत्ता का व्यवहार मितव्ययतापूर्ण था।

वस्तु स्थिति को देखकर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि नगरपालिका सेवायें कुल मिलाकर अधिक लाभदायक नही होती। यहाँ तहाँ कुछ उद्यम ऐसे हो सकते हैं जो अच्छी आय प्रदान कर सकें किन्तु फिर भी व्यावसायिक सेवाओं का राजस्व इतना नही होता कि स्थानीय सत्ता केवल इसी की आय पर अवलम्बित रह सके। स्थानीय सत्ता का मूल खर्च तो स्थानीय करो पर ही आधारित रहता है। केन्द्रीय सरकार से प्राप्त होने वाला अनुदान भी इस दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है।

अनुभव के आधार पर यह बताया जाता है कि स्थानीय सरकार को प्रत्यक्ष रूप से किसी सेवा मे कुछ भी व्यय नही करना चाहिए। यदि एक उद्योग के अनुकूल वातावरण तैयार करने मे धन खर्च किया गया तो इसके परिणामस्वरूप जिले की कर देने की सामर्थ्य बढ़ जायेगी तथा करों के द्वारा आवश्यक धन आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। अतः यह सुझाव दिया जाता है कि उद्योग, कृषि एवं व्यापार का वातावरण सुधारने के लिए सचार व्यवस्था जल-वितरण एवं अन्य ऐसी ही सेवाओं पर विशेष ध्यान दिया जाये। यह कहा जाता है कि यदि रेलवेज की तथा सड़कों की व्यवस्था को सुधार दिया जाये तो अपेक्षाकृत अधिक मूंगफलियां पैदा हो सकेंगी। सम्भवतः उससे भी अधिक पैदा होगी जितनी कि उनके उत्पादन वृद्धि की की योजना को अपनाने पर होती।

नगरपालिका व्यवसाय के लाभ [The Advantages of Municipal Trading]—नगरपालिका द्वारा सम्पन्न की जाने वाली व्यापारिक सेवाओं के क्षेत्र का प्रसार करने की माग करने वाले विचारक इनके अनेक लाभ गिनाते है। उनका कहना है कि ये जनस्वास्थ्य एवं सुविधा की दृष्टि से उपयोगी रहती हैं, उदाहरण के लिए स्थानीय सत्ताओं द्वारा जल के वितरण

को लिया जा सकता है। यह सेवा इतनी मूल प्रकृति की होती है कि इसके उपयोग एवं सार्वजनिक महत्व को भुलाया नहीं जा सकता। दूसरे, एक अन्य तर्क यह दिया जाता है कि कई एक सेवाओं की प्रकृति ऐसी होती है जिनको व्यक्तिगत व्यवसायी सम्पन्न नहीं करना चाहते। सम्भवतः इसका कारण यह है कि इन सेवाओं से प्राप्त होने वाला लाभ सतोषजनक नहीं होता। यदि स्थानीय सत्ता इन सेवाओं का संचालन न करे तो सामान्य जनता इनका उपभोग करने से वंचित रह जायेगी। ऐसी सेवा के उदाहरण के रूप में यात्री यातायात सेवा को लिया जा सकता है। तीसरे, नगरपालिका उद्यम कम दामों पर अच्छी सेवा प्रदान कर पाता है। ऐसा इस कारण सम्भव बनता है क्योंकि ये उद्यम अधिक लाभ कमाने की फिक्र में नहीं रहते। चौथे, नगरपालिका सेवाओं द्वारा जो लाभ प्राप्त किया जाता है वह पूरे समाज के काम में आता है। इसके विपरीत उसे कुछ सीमित भागीदारों की जेब में ही नहीं रख दिया जाता। पाचवें, जब आर्थिक सकट अथवा मन्दी का समय होता है उस समय भी मूल सेवायें प्रदान की जाती हैं। छठे, लोक प्रशासन में प्रायोगिक क्रियाओं को निरुत्स हित नहीं किया जाता और यही कारण है कि व्यक्तिगत प्रशासन की अपेक्षा लोक प्रशासन को इन सेवाओं के सम्बन्ध में कुशल माना जाता है। सातवें, केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण ने इन सत्ताओं को वित्तीय स्थायित्व प्रदान किया है।

नगरपालिका व्यवसाय की हानियां [Disadvantages of Municipal Trading]—नगरपालिका उद्यम द्वारा सचालित की जाने वाली सेवायें सदैव ही उपयोगी एवं लाभदायक ही नहीं होती। इनके भी प्रत्येक मानवीय क्रिया की भांति अच्छे व बुरे दोनों ही पक्ष हैं। कुछ विचारकों का कहना है कि इन क्रियाओं में बाद वाला पक्ष अधिक प्रबल रहता है और इसलिए इनको कम से कम प्रयुक्त किया जाना चाहिए। ये विचारक अपने पक्ष के समर्थन में कई एक तर्क प्रस्तुत करते हैं। उनका प्रथम तर्क यह है कि जब स्थानीय सत्तायें अपने मौलिक कार्य क्षेत्र से बाहर के विषयों पर ध्यान देने लगती हैं तो उनकी कार्यकुशलता का स्तर गिर जाता है। दूसरे, प्रशासन में भ्रष्टाचार की सम्भावनायें बढ जाती हैं। तीसरे, क्योंकि इन सेवाओं को भागीदारों के लाभ के लिए सचालित नहीं किया जाता अतः ये लाभदायक कम तथा खर्चीली अधिक होती हैं। चौथे, यह हो सकता है कि मितव्ययता की दृष्टि से एक सेवा के क्षेत्र को व्यापक बनाना जरूरी हो जाये किन्तु स्थानीय सत्ता या तो ऐसा होने न देगी और यदि हुआ भी तो वह प्रभावहीन बन जायेगी क्योंकि उसका अधिकार क्षेत्र एक निश्चित सीमा प्रदेश ही हो सकता है। पाचवें, जब एक स्थानीय सत्ता व्यापारिक सेवायें सम्पन्न करने के लिए ही बहुत अधिक कर्जा ले डालती है तो वह अधिक उपयोगी सेवाओं के लिए कर्ज नहीं ले सकेगी।

गैर व्यावसायिक सेवायें [Non-Trading Services]—यह एक तथ्य है कि स्थानीय सत्ताओं की सेवाओं में कोई भी ऐसी नहीं होती जिसे बिना किसी रूप में धन प्राप्त किये ही सम्पन्न किया जाता हो। कीमत, फीस अथवा किराया, किसी भी रूप में इन सेवाओं के बदले धन लिया जाता है।

इस धन की मात्रा कम भी हो सकती है और अधिक भी। सार्वजनिक पुस्तकालय से जो लोग पुस्तकें निकलवाते हैं, उनको कुछ धन जमा कराना होता है। यद्यपि यह केवल नाम मात्र का होता है। अजायबघरों में प्रवेश निःशुल्क होता है किन्तु वहां भी निर्देशक पुस्तिकायें एवं चित्रित पोस्टकार्ड बेचे जाते हैं। शिक्षा सेवा सबसे अधिक खर्चीली सेवा होती है किन्तु महत्वपूर्ण होने के कारण इसके बदले जो धन प्राप्त किया जाता है उसकी मात्रा बहुत कम होती है। जिस सेवा से अधिक धन प्राप्त किया जाता है, वह अपेक्षाकृत उतनी ही कम महत्वपूर्ण होती है।

गृह-निर्माण के लिए स्थानीय सरकार द्वारा जो धन प्राप्त किया जाता है वह अपेक्षाकृत अधिक होता है। गृह-निर्माण को एक स्थानीय सत्ता का सेवा बनाने का कारण यह था कि व्यक्तिगत उद्यमों द्वारा इस कार्य को सम्पन्न नहीं किया जा सका। प्रारम्भ में जब गृह-निर्माण को एक सेवा बनाया गया तो उसमें लगने वाले मूल्य का प्रबन्ध किराये में सरकारी सहायता से तथा रेट्स से होने वाले योगदान से किया गया। फिर भी गृह-निर्माण को एक व्यावसायिक सेवा कहा जा सकता, यह सेवा रेट्स के कोष की सेवा है। गृह पर जो रेट्स या किराये की दर लगाई जाती है वह पर्याप्त ऊंची होती है। इसके परिणामस्वरूप यह स्रोत स्थानीय सत्ताओं की अतिशय आमदनी का स्त्रोत बन जाता है।

स्थानीय सत्ताओं का बजट

[The Budget of Local Authorities]

सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली सभी सेवाओं में वित्त आवश्यक रूप से लगाना होता है। यह धन जहाँ से आता है तथा इस पर जिसका अधिकार होता है वही वास्तविक शक्ति सम्पन्न समझा जाता है। स्थानीय सत्ताओं को जब तक वित्तीय स्वतन्त्रता नहीं सौंपी जाती, उस समय तक उनसे वह कार्य सम्पन्न करने की आशा नहीं की जा सकती जो कि उनको करने चाहिए। किन्तु यहाँ यह भी ध्यान में रखने योग्य है कि स्थानीय सत्ताओं को उनके क्षेत्र में पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान नहीं की जा सकती। इसका कारण यह है कि स्थानीय सत्तायें 'पूर्ण' का एक भाग मात्र होती हैं उनका अपना आप में कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता। उनको सम्प्रभुता प्राप्त नहीं होती। वित्तीय क्षेत्र में केन्द्रीय एवं स्थानीय सत्ताओं के बीच सम्बन्ध रखना परम आवश्यक समझा जाता है, इसका कारण यह है कि दोनों की आय का स्रोत आम जनता है। साधारण नागरिक की जेबों में ही दोनों ही स्तर पर धन आता है। यदि दोनों को असम्बद्ध रूप में व्यवहार करने दिया जाय तो अनेक व्यावहारिक कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती हैं। उदाहरणार्थ आयकर को लिया जा सकता है। केन्द्रीय सरकार नागरिकों की आय पर कर लगाती है। यदि स्थानीय सत्तायें भी असीमित रूप से नागरिकों की आय पर कर लगा सकें तो इसका परिणाम यह भी हो सकता है कि नागरिकों को अपनी पूरी आय कर के रूप में ही देनी पड़ जाये। ऐसी स्थिति में इस बात का निर्णय करना जरूरी हो जाता है कि स्थानीय सत्ताओं को कितनी स्वतन्त्रता प्रदान की जाये।

इसका एक तरीका यह है कि स्थानीय सत्ता को एक सीमित मद में धन प्रति वर्ष रखने की स्वतन्त्रता दी जाये तथा उससे अधिक धन रखने की उसे अनुमति न दी जाये। इसके लिए ऐसा भी किया जा सकता है कि केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ताओं को एक निश्चित मात्रा में धन प्रदान करे अथवा *स्थानीय सत्ताओं को स्थानीय कर के माध्यम से धन एकत्रित करने की अनुमति* दी जाये। ऐसा करते समय अधिक से अधिक एकत्रित किये जाने वाले धन की सीमा निर्धारित कर दी जाती है। इस स्थिति की तुलना गृह-कार्य के लिए सौंपे जाने वाले एक निश्चित धन से भी की जा सकती है। इस बात की पूरी जानकारी रखी जाती है कि जो धन निर्धारित किया जाये वह अधिक से अधिक लाभ के लिए प्रदान किया जाना चाहिए। यहाँ यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि वित्तीय प्रावधान चाहे कितना भी सजगतापूर्ण क्यों न किया जाये किन्तु हर इच्छित कार्य को अच्छी प्रकार सम्पन्न करने के लिए प्रावधान नहीं किया जा सकता। प्रबन्ध की विशेषता यह होती है कि वह लक्ष्यों का चयन करने में पर्याप्त बुद्धि से काम लेता है तथा उन लक्ष्यों को क्रियान्वित करने में मितव्ययता का व्यवहार करता है। आर्थिक साधनों पर जो सीमा लगा दी जाती है उसके परिणामस्वरूप दुर्भाग्यपूर्ण फल भी उत्पन्न हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में यह परम आवश्यक हो जाता है कि आय तथा व्यय का व्यय का बजट पूर्णतः सोच विचार कर बनाया जाये।

स्थानीय सरकार को केन्द्रीय सरकार द्वारा जो सहायता प्रदान की जाती है उसकी एक सीमा होती है और उस सीमा से आगे वह धन प्रदान करने में प्रायः असमर्थ रहती है। अतः यह जरूरी हो जाता है कि स्थानीय सत्ता अपनी आय का अधिकांश भाग स्थानीय कर द्वारा संग्रहीत करे। जहाँ तक बजट का सम्बन्ध है, यह प्रति वर्ष बनाया जाता है तथा इसका मुख्य उद्देश्य करों द्वारा प्राप्त किये जाने वाले धन तथा व्यय का निर्धारण करना होता है। लोक जीवन के व्यवहार में ऐसा होता है कि पहले हम इस बात का निर्णय करते हैं कि हमको क्या खर्च करना है तथा उसके बाद यह देखते हैं कि यह खर्च कहाँ से किया जायेगा। उसके लिये आवश्यक आय का प्रबन्ध कहाँ से किया जायेगा। यह प्रक्रिया पूर्णतः स्वाभाविक है क्योंकि जब तक यह पता न हो कि खर्च क्या करना है उस समय तक यह नहीं जाना जा सकता कि कर द्वारा कितना धन एकत्रित किया जाये; किन्तु इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि एक उत्तरदायी निकाय ऐसी नीति को मान्यता नहीं देगा जिसमें एक बहुत बड़े धन की आवश्यकता हो तथा जिसे एकत्रित भी न किया जा सके। बजट के द्वारा प्रतियोगी मांगों के बीच एवं आय तथा व्यय के बीच सन्तुलन स्थापित किया जाता है।

इंगलैण्ड में कानून द्वारा यह निर्धारित कर दिया गया है कि काउन्टी परिषद वार्षिक बजट बनाये तथा एक वित्तीय समिति का गठन करे। ये दोनों ही बातें स्थानीय सरकार के उचित कार्य-संचालन के लिए इतनी जरूरी हैं कि ये प्रायः सभी स्थानीय सत्ताओं के व्यवहार की सामान्य बात बन गई हैं।

स्थानीय सत्ता की प्रत्येक समिति पहले बजट के अनुमानो पर विचार करती है। उसके बाद ये अनुमान वित्तीय समिति के पास जाते हैं। यह समिति इन सभी अनुमानो पर विचार करती है। वित्तीय समिति चाहे तो किसी भी समिति को कुछ प्रस्तावों पर पुनर्विचार के लिए भी कह सकती है। वित्तीय समिति द्वारा उसका प्रतिवेदन परिषद के सामने रखा जाता है, उसके बाद प्रपत्र तैयार किये जाते है। जिन विभिन्न समितियो के द्वारा बजट के अनुमान पास किये जाते हैं वे इन पर अपना अधिक समय नही लगाती। मूल रूप से जिन विषयो पर वाद-विवाद किया जाता है वे प्राय: ऐसे होते हैं जिनमे अधिक व्यय की बात कही गई हो। यदि समिति का सभापति तथा विभाग का मुख्य अधिकारी बजट के अनुमानों से सहमत हो जाये तो अन्य सदस्य उन पर प्राय: आपत्ति नही करते तथा एक लम्बे वाद-विवाद की आवश्यकता नही होती।

सभी अनुमानो को वित्तीय समिति के पास भेजा जाता है, वहा पर कोषाध्यक्ष तथा उनका स्टाफ उनका सर्वेक्षण करता है, साथ ही वित्तीय समिति के सम्मुख अपनी राय जाहिर करता है। वित्तीय समिति का कार्य अत्यन्त जटिल प्रकृति का होता है क्योकि इसी को यह निर्णय करना होता है कि क्या प्रस्तावित व्यय अनिवार्य हैं? यह निर्णय वह व्यय की नीति के साथ सामजस्य स्थापित करके करती है। इसकी जटिलता एक अन्य कारण पर भी अवलम्बित करती है और वह कारण यह है कि विभागीकरण की समस्या उत्पन्न हो जाती है जिससे ब्रिटिश प्रशासन बडी जल्दी ही प्रभावित हो जाता है। प्रत्येक विभागीय अध्यक्ष यह चाहता है कि उसकी ही क्रियाओ का प्रसार किया जाये। प्रत्येक समिति अपनी ही सेवाओं के बारे में सोचने लगती है। प्रत्येक समिति अपने ही अनुकूल वातावरण बनाने की धुन मे रहती है। एक समिति अन्य समिति से उतना ही भेद रख सकती है जितना एक स्थानीय सत्ता अन्य स्थानीय सत्ता से रखती है। जब एक समिति अन्य समिति के साथ किसी प्रकार का सम्बन्ध रखती है तो उसकी खराब प्रवृत्तिया उभर उठती हैं। वित्तीय समिति विभिन्न विभागो एवं समितियो के विरोधी दावो तथा मांगो के बीच सामजस्य पैदा करने का प्रयास करती है। यह समिति परिषद की सम्पूर्ण क्रियाओ से सम्बन्ध रखती है जब कि अन्य सभी समितिया एक या अधिक अलग-अलग सेवाओ से सम्बन्ध रखती हैं। वित्तीय समिति विषयो पर सामान्य दृष्टिकोण से विचार करती है किन्तु वित्तीय समिति के सदस्य अन्य समितियो के भी सदस्य होते हैं। वित्तीय समितियो के सेवीवर्ग के बारे मे एकरूप व्यवहार नही होता। कुछ परिषदें अपने सभी सदस्यों को वित्तीय समितियो मे नियुक्त कर देती हैं। पूरी परिषद अनेक विषयों पर गहराई के साथ विचार नही कर सकती इसलिए अनेक विषयों पर परीक्षण करने एवं प्रतिवेदन करने के लिए परिषद द्वारा कई एक समितिया नियुक्त की जाती हैं। इसका अर्थ हुआ कि वित्तीय समिति को नियुक्त तो कर दिया गया किन्तु उसे यह नाम नही दिया गया तथा उसकी रचना की समस्या को भी नहीं सुलझाया जा सका। दूसरी कुछ सत्ताओं मे वरिष्ठ अधिकारियो को वित्तीय समिति मे नामजद कर दिया जाता है।

प्रायः व्ययकारी समितियों के सदस्यों को वित्तीय समिति का सदस्य बनाया जाता है तथा इसके पक्ष में यह तर्क दिया जाता है कि वे अपनी समितियों की आवश्यकताओं को अधिक अच्छी तरह से स्पष्ट कर सकते हैं। यह बात बहुत कुछ सही भी है किन्तु इसके साथ ही यह भी सही है कि इस प्रकार से संगठित समिति के सदस्य एक दूसरे के बढ़े हुए व्यय का समर्थन करें। उनमें से कोई भी अन्य सदस्य के व्यय में कटौती करने के लिए तैयार नहीं होगा क्योंकि ऐसा करने पर उसे यह खतरा नहीं रहता है कि वह भी ऐसे ही आक्रमण का निशाना बन सकता है। यह खतरा इतना गम्भीर है कि इस प्रकार के संगठन से प्राप्त लाभ महत्वहीन सा बन जाता है। यह कहा जाता है कि विभिन्न व्ययकारी विभागों की आवश्यकताओं की पर्याप्त जानकारी के लिए यह भी व्यवस्था की जा सकती है कि इन समितियों के सभापतियों को उस समय आमन्त्रित कर लिया जावे जबकि अनुमान पर विचार किया जा रहा है। वित्तीय समिति का कौन सा प्रकार ठीक प्रकार से कार्य कर रहा है, इसके बारे में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। फिर भी यह तो स्पष्ट है कि कहीं भी यह निष्पक्ष न्यायाधीशों की भांति कार्य नहीं करती।

ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है जबकि वित्तीय समिति स्पष्ट रूप से यह विचार रखती है कि प्रस्तावित व्यय का योग स्थानीय करों की संख्या एवं मात्रा को बढ़ा देगा किन्तु ऐसा होने पर भी वह ऐसा कोई विषय नहीं देख पाती जिस पर होने वाले व्यय की मात्रा को कम किया जा सके। ऐसी हालत में यह समिति विभिन्न व्ययकारी समितियों से अनुमानों की पुनरीक्षा करने को कह सकती है ताकि एक निश्चित प्रतिशत तक इसमें कमी की जा सके। मितव्ययता लाने का एक आम तरीका यह भी है कि कुछ कार्यों को छोड़ ही दिया जाये। वित्तीय समिति पूंजीगत व्यय की धन व्यवस्था करने का कार्य भी करती है।

जब वित्तीय समिति द्वारा अनुमानों को स्वीकार करके कुल व्यय का निर्धारण कर दिया गया है तो उस व्यय का प्रबन्ध करने के लिए परिषद कर लगाती है। इस व्यवस्था का प्रावधान करके प्रति वर्ष आय एवं व्यय के बीच सन्तुलन स्थापित करने का प्रयास किया जाता है। ऐसा नहीं हो सकता कि परिषद यह निर्णय कर ले कि ये दिन सम्पन्नता के दिन हैं अतः आवश्यकता से अधिक धन का कर के रूप में संग्रह कर लिया जाये तथा उस धन का उस समय प्रयोग किया जावे जबकि कठिन समय उपस्थित हो जाये। इसी प्रकार वह यह निर्णय भी नहीं ले सकती कि इस समय स्थिति कठिन चल रही है अतः कर की मात्रा को कम कर दिया जाये। हानि का बजट तैयार कर लिया जाये तथा इस कमी को उस वर्ष पूरा कर लिया जाये जब स्थिति अच्छी हो जाये। स्थानीय सत्ता के हाथ में जो कार्य है उसे सम्पन्न करने के लिए उसके पास उचित धन का होना अत्यन्त आवश्यक है। नियमानुसार स्थानीय सत्ता को न तो हानि वाला [Deficit] बजट बनाना चाहिए और न ही अतिशय [Surplus] वाला हो; किन्तु परिस्थितिवश ऐसा बनाना जरूरी भी हो जावे, उसको सन्तुलित करना होगा। यदि कभी हानि वाला

बजट बनाना जरूरी हो तो स्थानीय सत्ता को अपने कार्य सम्पादित करने के लिए पर्याप्त धन उधार लेना होगा। आने वाले वर्ष के बजट में इस कर्ज को चुकाने का भी प्रावधान रखना होगा। वैसे वास्तविक व्यवहार में अनेक कारणों से हानि का बजट एक असामान्य चीज बन जाता है।

किसी भी स्थानीय सत्ता के लिए यह प्रायः अत्यन्त कठिन हो जाता है कि वह प्रति वर्ष उन सभी कार्यों को सम्पन्न कर सके जिनको करने का उसने संकल्प किया है किन्तु वह इन सेवाओं को सम्पन्न नहीं कर पाती तो इनके लिए किसी प्रकार का कर क्यों दिया जायेगा। जो सेवा सम्पन्न नहीं की जाती, उसके कर्मचारियों को भी वेतन देने का प्रश्न नहीं उठता। स्टाफ के सदस्य हटा दिये जाते हैं तथा नवीन नियुक्तियां न होने तक रिक्त स्थान बने ही रहते हैं। इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप वेतन के रूप में बहुत कम खर्च किया जाता है। बजट प्रति वर्ष आय और व्यय के बीच काम चलाऊ सन्तुलन स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान करता है। यह कुल मिला कर वित्तीय प्रस्ताव होता है जिसमें लगाये जाने वाले रेट्स का भी वृत्तान्त रहता है। इसे समिति की सिफारिश के रूप में परिषद के सामने रखा जाता है। वित्तीय समिति का सभापति इन प्रस्तावों को प्रस्तुत करते समय सामान्य वित्तीय नीति की एक पुनरीक्षा प्रस्तुत करता है।

आन्तरिक वित्तीय नियंत्रण
[Internal Financial Control]

आन्तरिक वित्तीय नियन्त्रण का प्रयोग परिषद, वित्तीय समिति एवं उसके अधिकारियों द्वारा किया जाता है जबकि बाह्य नियन्त्रण को एक बाहरी अभिकरण 'आडिट' द्वारा लागू किया जाता है। आन्तरिक वित्तीय नियन्त्रण के पीछे कार्य करने वाले मुख्य रूप से दो सिद्धान्त हैं। प्रथम यह कि प्रत्येक व्यय पर परिषद की स्वीकृति प्राप्त होना जरूरी है। परिषद के कार्यों पर जो भी धन खर्च किया जाये उसके लिए परिषद के किसी प्रस्ताव की शक्ति अवश्य प्राप्त होनी चाहिए। दूसरा सिद्धान्त यह है कि परिषद के लिए जो भी भुगतान किये जायें वे कोषाध्यक्ष के द्वारा किये जाने चाहिए और परिषद द्वारा जो भुगतान किये जायें वे भी कोषाध्यक्ष द्वारा ही किये जाने चाहिये। कोषाध्यक्ष वैधानिक शक्ति सम्पन्न एक कानूनी अधिकारी होता है जिसे भुगतान प्राप्त करने एवं देने की शक्तियां रहती हैं। वह भुगतान करते समय उसकी पूरी छानबीन करता है तथा मुख्य रूप से दो बातों पर ध्यान देता है कि यह परिषद द्वारा स्वीकृत है अथवा नहीं। यह कानून के अनुसार है अथवा नहीं। यदि उसे यह ज्ञात हो कि भुगतान गैर-कानूनी है तो वह उसे न करेगा। कुल मिला कर कोषाध्यक्ष की स्थिति अत्यन्त कठिन बन जाती है। वह परिषद का अधिकारी होता है तथा उसका कार्य है परिषद के निर्देशों का पालन करना। यदि वह परिषद के व्यवहार को अस्वीकार कर दे तो परिषद उसको हटा भी सकती है। इतने पर भी यदि कोषाध्यक्ष यह देखता है कि कोई भुगतान गैर-कानूनी है तो वह उसे स्वीकार करने से मना कर सकता है। ऐसी स्थिति में यह भी सम्भव है कि परिषद को यह गलत सूचना दे दी जाये कि कोषाध्यक्ष उसकी सत्ता के विरुद्ध अन्यायपूर्ण रूप से अपनी शक्तियों

का प्रयोग कर रहा है। कोषाध्यक्ष भी अन्य अधिकारियों की भांति तथा अन्य साधारण नागरिकों की भांति कानून को तोडने की शक्ति नही रखता। कानून के मामलो मे कोषाध्यक्ष क्लर्क के परामर्श को मान कर अपने मार्ग को सुरक्षित बना लेता है। क्लर्क परिषद का भी कानूनी परामर्शदाता होता है। यदि कोषाध्यक्ष एव क्लर्क के मतो के बीच कोई अन्तर हो तो परिषद की राय को मान्यता देने की प्रथा है।

यह जरूरी नही है कि कोषाध्यक्ष स्थानीय सत्ता का मुख्य वित्तीय अधिकारी हो। अतीतकाल मे अधिकाश स्थानीय सत्तायें स्थानीय बैंक मैनेजर को अपना कोषाध्यक्ष नियुक्त कर देती थी। यह मैनेजर दिये जाने वाले तथा लिए जाने वाले भुगतानो की वैधानिकता को देखता था। परिषद मे एक वित्तीय अधिकारी होता था जो परिषद को वित्तीय विषयो पर परामर्श देने की शक्ति रखता था एव वित्तीय विभाग को सचालित करता था। बाद मे इन दोनो कार्यों को मिला दिया गया। वर्तमानकाल मे कोषाध्यक्ष इन दोनो ही कार्यों को सम्पन्न करता है। आन्तरिक वित्तीय नियन्त्रण के मुख्य रूप से तीन पहलू माने जाते है। प्रथम, नये व्यय को स्वीकार करने की प्रक्रिया; दूसरे, बजट का प्रभाव और तीसरे, समझौतो, भुगतानो एव स्वीकृतियो का प्रबन्ध करना।

(i) नये व्यय की स्वीकृति—प्रत्येक वर्ष विभिन्न सेवाओ से सम्बन्धित अनेक ऐसे प्रोजेक्ट आते हैं जिनको कि विभिन्न समितियो मे विचारा जा सकता है, साथ ही अनेक प्रस्तावो को प्रत्येक परिषद की बैठक मे विचार का विषय बनाया जाता है। इन प्रोजेक्टो एव नवीन योजनाओं के प्रस्तावो मे स्वाभाविक है कि कुछ धन खर्च होता है। यदि यह खर्च वर्तमान वित्तीय वर्ष मे किया जाये तो बजट से भिन्न व्यवहार को अपनाना होगा; किन्तु प्रोजेक्ट ऐसा भी हो सकता है जिसमे वर्तमान वर्ष मे कोई भी व्यय करने की आवश्यकता न हो। सुदूर भविष्य मे ऐसे ही प्रोजेक्ट्स परिषद के व्यय पर प्रभावशील असर रखते हैं। प्रत्येक चीज अपने आप मे अत्यन्त आवश्यक हो सकती है और ऐसा होने पर भी विशेषत. व्ययकारी नहीं हो किन्तु सबका कुल मिलाकर पडने वाला असर उल्लेखनीय हो सकता है। यही कारण है कि ऐसे विषयो में व्यय प्रति वर्ष बढता ही चला जाता है। यह विशेष रूप से उस समय होता है जबकि इन कार्यों की सख्या भी प्रति वर्ष बढती चली जाये। स्टाफ को बढाना एक ऐसा ही कार्य है। स्टाफ को एक बार बढा देने के बाद यह बडा कठिन होता है कि व्यय को कम किया जा सके। सामान्य जनता यह मानती है कि वार्षिक बजट पास करते समय मितव्ययता बरती जानी चाहिए किन्तु कानूनी दृष्टि से यह एक भ्रम-मात्र है। बजट परिषद मे पहुचता है उससे पूर्व ही अनेक मदो का व्यय निश्चित कर लिया जाता है। स्थानीय सत्ता से सम्बन्धित किसी भी नये व्यय की सूचना परिषद को दी जाना जरूरी है जो कि उस पर पर्याप्त विचार करती है, उसे स्वीकार करती है तथा क्या हो रहा है इस बात से अपने आपको पूरी तरह परिचित रखती है।

(ii) बजट का प्रभाव—बजट के मुख्य रूप से दो भाग होते हैं। इसके प्रथम भाग मे किया जाने वाला व्यय होता है तथा दूसरे भाग मे वह धन होता है जिसे कर के रूप मे इकट्ठा किया जाना है। रेट्स इकट्ठा करने के लिए जो निर्णय लिया जाता है वह निर्धारित समय तक ही प्रभावशील रहता है। यह समय परिषद की रेट लगाने की शक्ति एवं रेट देने वाले की उपयुक्तता आदि पर निर्भर करता है किन्तु व्यय पक्ष की ओर ऐसी कोई बाध्यता नही होती। परिषद द्वारा स्वयं के निर्देशन के लिए योजनायें बनायी जाती हैं तथा इन योजनाओ पर खर्च करने के लिए बजट मे धन की मात्रा निश्चित की जाती है। इस मात्रा को मानने के लिए वह बाध्य नही होती। यदि वह आवश्यक समझे तो अपनी किसी बैठक में सड़क पर किये जाने वाले व्यय को आधा कर सकती है तथा उस सारे धन को पुस्तकालय की पुस्तकें खरीदने मे खर्च कर सकती है।

वैधानिक रूप से ऐसा करने मे परिषद को किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव नही होता किन्तु अमल मे जब वह व्यवहार करने लगती है तो इस प्रकार के परिवर्तनो के लिए बहुत कम स्थान रहता है। यदि परिषद ने कुछ समझौते कर लिए हैं तो इन समझौतो को वह केवल इस कारण रद्द नही कर सकती कि उसने अपना विचार बदल लिया है। कोई भी बड़ा परिवर्तन उस समय तक नही किया जा सकता जब तक कि उसके लिए पृष्ठभूमि तैयार न कर ली जाये। ऐसे परिवर्तन जब भी कभी होते हैं उनका विरोध किया जाता है। बजट के कई एक प्रस्तावो का सम्बन्ध केन्द्रीय अनुदानो से होता है। यदि ये प्रस्ताव माने न जायें तो अनुदान भी समाप्त कर दिया जायेगा। जब यह कहा जाता है कि परिषद प्रस्तावित बजट के प्रस्तावो को मानने के लिए बाध्य नहीं है तो उसका मूल लक्ष्य एक यही होता है कि परिषद को ही वित्तीय कार्यों के लिए पूर्ण रूप से उत्तरदायी बनाया जाये। इंगलैण्ड की स्थानीय सत्ता समय-समय पर अपने बजट मे परिवर्तन करने पर विचार करती है।

बजट के व्ययकारी भाग मे कुछ मदो को रख देने से ही धन खर्च करने का कानूनी अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। इस प्रकार के व्यय की शक्ति प्रदान करने के लिए परिषद को विशेष प्रस्ताव पास करना होता है। उन विभिन्न विषयो के बीच भी अन्तर रखना होता है जिनके लिए धन प्रदान किया गया है। प्रायः सभी मदो पर व्ययकारी समितियो द्वारा विस्तार के साथ विचार कर लिया जाता है। इसके बाद वित्तीय समिति इनका अच्छी प्रकार से मन्थन कर लेती है। बाद मे इन पर विचार करने के लिए अधिक कुछ शेष नही रह जाता, केवल परिषद की स्वीकृति की जरूरत होती है। कुछ ऐसी मदें भी हो सकती हैं जिन पर विस्तार से विचार न किया गया हो। उदाहरण के लिए बालकों से सम्बन्धित समिति बाल-रक्षा के लिए एक मकान किराये पर लेने के लिए धन का प्रावधान करती है। वह गोल रूप में एक मद को निर्धारित कर देती है तथा इस॰ परिणामस्वरूप यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि असल मे कितना धन व्यय किया जायेगा। ऐसे मामलो मे परिषद सिद्धान्त रूप मे स्वीकार कर लेती है किन्तु धन को व्यय करने की शक्ति नहीं देती। जहाँ कहीं एक विशेष भवन एक निश्चित किराये पर लेना हो, वहाँ इसके लिए अलग

से प्रस्ताव किया जाता है। यह प्रस्ताव वित्तीय समिति द्वारा विचारा जाता है तथा स्वीकृति के लिए इसे परिषद के पास भेजा जाता है। परम्परा के अनुसार बजट में इस प्रकार की मदों को इंगित कर दिया जाता है। परिषद इन मदों के अतिरिक्त अन्य के सम्बन्ध में प्रस्ताव पास कर लेती है।

एक वित्तीय वर्ष में कई बार यह आवश्यकता उठ सकती है कि बजट के प्रस्तावों से भिन्न मार्ग अपनाया जाय। किन्तु जब कभी ऐसा किया जाता है तो उसे विचारार्थ पहले परिषद के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है। इसी प्रकार जब बजट द्वारा व्यय की शक्ति दिये बिना ही एक मद रख दी जाती है तो उसके विस्तार के पर भी परिषद की स्वीकृति लेना जरूरी होता है। किसी भी समिति को यह अधिकार नहीं होता कि वह बजट द्वारा स्वीकृत किसी कार्य को सम्पन्न न करके बचत कर ले अथवा किसी अन्य कार्य पर धन खर्च कर दे। यदि कभी भी वह ऐसा करना चाहे तो उसे परिषद को प्रतिवेदन करना होगा तथा उसकी स्वीकृति प्राप्त करनी होगी। यह कहा जाता है कि जब योजनाओं में परिवर्तन किया जाये तो ऐसा करने के लिए अतिरिक्त धन की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। कार्य करते समय इस सिद्धान्त को ध्यान में रखना चाहिए कि धन को परिषद की स्वीकृति के बिना खर्च न किया जा सके। यदि कोई समिति उन मदों पर धन खर्च करना चाहे जिनको अनुमानों में समाहित नहीं किया गया है तो वह इसके लिए अनुपूरक अनुमान भेज सकती है। यह अनुपूरक अनुमान भी उसी प्रकार विचार एवं स्वीकृति के विषय होते जिस प्रकार अनुमान हुआ करते हैं। अनुपूरक अनुमान पहले वित्तीय समिति को ही भेजे जाते हैं। यह प्रावधान अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि यह खतरा रहता है कि अधिक धन खर्च करने के प्रस्ताव को परिषद बिना उनके परिणामों पर भली प्रकार से विचार किये ही स्वीकार कर ले।

अनुपूरक अनुमानों को स्वीकार करने के मार्ग में एक सबसे बड़ी बाधा यह उत्पन्न हो जाती है कि उनके स्वीकार करने के लिए पर्याप्त धन ही न हो। अतः वित्तीय समिति का एक कार्य यह भी होना चाहिए कि वह आय तथा व्यय पर निरन्तर देख-रेख रखे और यदि कभी अतिरिक्त व्यय का प्रश्न उठे तो वह परिषद की वित्तीय स्थिति को बता सके। कुछ अनुपूरक अनुमान परिषद को प्रायः कोई विकल्प ही नहीं सौंपते। मूल्य बढ़ने के कारण, वेतन बढ़ने के कारण तथा नवीन व्यवस्थापन द्वारा नई सेवायें बढ़ जाने के कारण जो परिणाम होते हैं वे प्रायः ऐसे हैं जिनको मौलिक अनुमान बनाते समय नहीं देखा जा सकता किन्तु फिर भी परिषद को उनके व्यय का भार वहन करना होता है। अन्य अनेक कारणों से भी अतिरिक्त अनुपूरक अनुमान जरूरी हो सकते हैं।

(iii) समझौते एवं भुगतान—जब परिषद द्वारा व्यय को स्वीकार कर लिया जाता है, उसके बाद भी एक व्यापक क्षेत्र बच रहता है जिसमें नियन्त्रण की आवश्यकता रहती है। व्यय की स्वीकृति का अर्थ निकट से जानने के बाद ही उसके पूरे अर्थ को समझा जा सकता है; किन्तु विभिन्न प्रशासनिक मामलों में परिषद कितनी दूर तक जा सकती है, यह बात विषय के

स्तर एवं परिषद की क्रियाओं के स्तर पर निर्भर करती है। जब परिषद पर अधिक कार्य भार नहीं होता तो वह एक भवन को निर्मित करने से सम्बन्धित ठेके पर अपनी विचारपूर्ण स्वीकृति प्रदान कर सकती है, किन्तु वह समिति को हस्तांतरित करके भी एक संस्था के भोजन की प्रतिदिन की आवश्यकताओं के मूल्य, मात्रा एवं प्रकार का निर्णय नहीं कर सकती। परिषद केवल इतना कर सकती है कि ये ठेके किस प्रकार किये जायेंगे तथा बिलों को किस प्रकार चैक किया जायेगा।

ठेके करने के ढंग की देख-रेख करना अत्यन्त आवश्यक माना जाता है क्योंकि यदि ऐसा न किया जाये तो भ्रष्टाचार एवं बेईमानी के पनपने की पूरी-पूरी आशंका रहती है। कई एक ठेकेदार तो परिषद के अधिकारियों या पार्षदों की सहायता से ठेका लेने में सफल हो जाते हैं और इसके लिए उनको धन देते हैं। इस प्रकार किये गये ठेकों में जनता का धन अपेक्षाकृत अधिक लिया जाता है और श्रम एवं सामान घटिया दर्जे का प्रयुक्त किया जाता है। इस प्रकार के भ्रष्टाचार को रोकने के लिए दो प्रकार से प्रयास किये गये। प्रथम तो उन पार्षदों एवं अधिकारियों को अयोग्य ठहराने का प्रावधान रखा गया जो इस प्रकार के ठेके करने में सहायक रहे हैं। साथ ही इस प्रकार किये गये ठेकों को भी अवैध करार देने की बात कही गई। भ्रष्टाचार को रोकने के लिए एक दूसरा प्रयास यह किया गया कि ठेके करने की एक ऐसी प्रक्रिया स्थापित की जाये कि बेईमानी पूर्ण व्यवहार के लिए अवकाश ही न रहे।

स्थानीय सरकार के वित्त पर नियन्त्रण
[Control of Local Government Finance]

स्थानीय सत्तायें राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष से सहायता अनुदान के रूप में धन प्राप्त करती है तथा स्थानीय रेट्स के रूप में सार्वजनिक धन एकत्रित करती हैं। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक है कि उनके व्यय को कई प्रकार से नियन्त्रित किया जाये। प्रथम, साधारण कानून द्वारा यह व्यवस्था कर दी जाती है कि अनुचित अथवा अनधिकार व्यय न किया जा सके। स्थानीय सत्ताओं के धन को सार्वजनिक उद्देश्य के लिए प्राप्त एक दान का धन समझा जाता है तथा एक स्थानीय सत्ता या इसके व्यक्तिगत सदस्य तथा अधिकारी जब गैर-कानूनी रूप से इसका प्रयोग करते हैं तो इनके विरुद्ध कार्यवाही न्यायालय में की जायेगी। दूसरे, ऐसे कानूनी प्रावधान बना दिये गये हैं जिनके अनुसार स्थानीय सत्ताओं को व्यवस्थित रूप से लेखे रखने होते हैं। प्रत्येक शहरी जिला परिषद को एक सामान्य रेट कोष रखना होता है। वह इसका लेखा रखती है जिसमें कि सभी प्राप्तियों को रखा जाता है और जिसमें से सभी अदायगियों को लिया जाता है। देहाती जिले भी सामान्य रेट कोष रखते हैं किन्तु उनको लेखों के दो सेट रखने होते हैं—सामान्य खर्च के लिए सामान्य जिला लेखा और विशेष खर्च के लिए विशेष जिला लेखा देहाती पेरिशों के वित्तीय विचारों को सीमित करने वाले नियम निर्धारित कर दिये गये हैं। बारों परिषदों को भी अपना सामान्य रेट कोष बनाना होता है तथा इसका लेखा भी रखना होता है। बारों का कोषाध्यक्ष सभी प्राप्तियाँ इसमें रखता

है और वह सारे भुगतान भी इसी में से करता है। परिषद के आदेश के आधीन जो भुगतान किये जाते हैं उनकी न्यायोचितता पर स्थानीय सरकार के किसी भी निर्वाचक द्वारा प्रश्न किया जा सकता है। इस प्रकार के आदेश से प्रभावित व्यक्ति चाहे तो उच्च न्यायालय में अपील कर सकता है।

काउन्टी परिषदें जब व्यय करती हैं तो उन पर अधिक कड़ा नियमन रहता है। इनको एक वित्तीय समिति नियुक्त करनी होती है जिसके द्वारा यह अनुमान प्राप्त करती है, ये वार्षिक बजट बनाती हैं, ये एक काउन्टी कोष की रचना करती है जो कि काउन्टी के कोषाध्यक्ष के नियन्त्रण में रहता है। देहाती जिला परिषदों की तरह इनको सामान्य एवं विशेष लेखे रखने होते हैं। व्यवहार में प्रत्येक आकार की स्थानीय सत्ता अच्छे व्यापारिक प्रशासन की दृष्टि से बजट के नियन्त्रण, लेखा एवं वित्तीय कारण की स्वस्थ व्यवस्था रखती है। इसके द्वारा प्रगति एवं कार्य कुशलता का उच्च स्तर प्रदर्शित किया जाता है। स्थानीय सरकार पर वित्तीय नियंत्रण रखने के जो विभिन्न साधन हैं उनमें ऑडिट एक अत्यन्त महत्वपूर्ण साधन है।

आडिट
[The Audit]

स्थानीय सत्ताओं एवं उसके अधिकारियों के लेखों का आडिट करके उनके व्यय पर नियन्त्रण एवं प्रतिबन्ध लगाया जाता है। प्रारम्भ में आडिट केवल निर्धन कानून लेखों का ही हुआ था एवं आडिटर्स की नियुक्ति १८६८ में संरक्षक मण्डलों (Board of Guardians) द्वारा की जाती थी। उनकी नियुक्ति का कार्य बाद में केन्द्रीय स्वास्थ्य सत्ता को सौंप दिया गया। जिला आडीटर नागरिक सेवक होते हैं, इनको स्वास्थ्य मंत्री द्वारा नियुक्त किया जाता है तथा इन्हें काउन्टी के प्रस्तावित जिलों के सम्बन्ध में उत्तरदायी ठहरा दिया जाता है वे मन्त्री के ऐजेन्ट नहीं होते किन्तु उनका स्वतन्त्र अस्तित्व होता है तथा कानून द्वारा निर्धारित कार्यों को सम्पन्न करने के लिए वे उत्तरदायी होते हैं। जिला आडिट प्रत्येक काउन्टी परिषद, राजधानी बारो परिषद, शहरी जिला परिषद, देहाती जिला परिषद तथा प्रत्येक पेरिश परिषद विहीन पेरिश मीटिंग से सम्बन्ध रखता है। अन्य अनेक लेखों को भी आडिट किया जाता है। बारो परिषदों के लेखों को जिला आडीटरों द्वारा आडिट नहीं किया जाता। इनका आडिट तीन बारो आडीटर्स के द्वारा किया जाता है जिनमें दो को स्थानीय सरकार के निर्वाचकों द्वारा निर्वाचित किया जाता है तथा एक को मेयर द्वारा नामजद किया जाता है। यदि बारो परिषद निर्वाचित आडीटर न रखना चाहे तो वह दो प्रकार के बाह्य आडिटों में से किसी भी एक को छांट सकती है अर्थात् जिला आडिट अथवा व्यावसायिक आडीटरों की नियुक्ति की व्यवस्था बाहरी आडिट के साथ-साथ स्थानीय सरकार के मुख्य वित्तीय अधिकारियों द्वारा सभी विभागों की वित्तीय क्रियाओं पर प्रायः निरन्तर रूप से आन्तरिक आडिट रखा जाता है। जिला आडीटर स्थानीय सत्ताओं के लेखों का वार्षिक रूप से आडिट करते हैं। इनका यह कर्तव्य माना जाता है कि किसी भी ऐसे व्यय के मद को अस्वीकृत कर दें जो कि कानून के विपरीत हों। दूसरे, जिस व्यय को अस्वीकार कर दिया

जाये उसको अधिकृत बनाने वाले व्यक्तियों या व्यक्ति से उस व्यय को वसूल करना। सम्बन्धित व्यक्ति स्थानीय सत्ता के सदस्य भी हो सकते हैं जो कि प्रस्ताव द्वारा इस प्रकार के व्यय को अधिकृत बना दें। ग्राडीटर द्वारा जिस व्यक्ति का नाम लिया जाये, वह गैर-कानूनी रूप से खर्च किये गये धन के लिए स्थानीय सत्ता के कोष में रकम जमा करायेगा। तीसरे, ग्राडीटर द्वारा इस प्रकार लिए जाने वाले धन की रकम निर्धारित व प्रमाणित की जायेगी। चौथे, वह ग्राडिट के निष्कर्ष रूप में लेखों के ग्रपने मत को प्रमाणित करेगा। जिला ग्राडीटर के सम्मुख प्रस्तुत किये जाने वाले किसी भी व्यय पर स्थानीय सरकार का कोई भी निर्वाचक ग्रापत्ति कर सकता है। परिषद के जिस सदस्य से पैसा वसूल (Surcharge) किया जाता है उसे कार्यालय के लिए कुछ समय तक ग्रयोग्य ठहरा दिया जाता है।

स्थायी ग्रादेशों द्वारा व्यय का नियन्त्रण
[Control of Expenditure by Standing Order]

स्थानीय सरकार ग्रपनी समितियों के कार्य का सचालन स्थायी ग्रादेशों के माध्यम से करती है। सन् १६३४ में स्वास्थ्य मन्त्री ने पूर्व ग्रनुभव के ग्राधार पर नमूने के लिए स्थायी ग्रादेश जारी किये स्थानीय सत्तायें केवल ठेकों के बारे में ही स्थायी ग्रादेश जारी कर सकती हैं। प्रायः सभी स्थानीय सत्ताग्रों को इनकी ग्रावश्यकता पड़ती है ग्रतः इन्होंने नमूने के तौर पर स्थायी ग्रादेशों की रचना कर ली है। इसके माध्यम से प्रक्रिया को एकरूप बनाने में सहायता मिलती है। ठेकों के मामले में जो स्थायी ग्रादेश दिये जाते हैं, वे स्थायी सत्ता को निम्नतम दर वाले टेन्डर के ग्रतिरिक्त टेन्डर स्वीकार करने से रोकते हैं। यदि कभी ऐसा करना जरूरी भी हो तो इसके लिए उचित व्यावसायिक परामर्श लिया जायेगा। ग्रन्य स्थायी ग्रादेशों में से कुछ पूंजीगत लेखे तथा साधारण सामयिक व्यय के भुगतान के तरीके को नियमित करते हैं। इनके द्वारा यह भी निर्धारित किया जाता है कि स्थानीय सत्ताग्रों के जो सदस्य सत्ता के सम्मुख ग्राने वाले जिस विषय में स्वार्थ रखते हों वे उसकी प्रक्रियाग्रों में भाग न लें। इस प्रकार स्थायी ग्रादेश स्थानीय सत्ताग्रों के ग्रनुचित व्यय के विरुद्ध एक ग्रन्य सुरक्षा की व्यवस्था करते हैं।

इस प्रकार वित्तीय क्षेत्र में स्थानीय सरकार की क्रियाग्रों को नियन्त्रित करने के लिए विभिन्न तरीके ग्रपनाये जाते हैं। यदि हम ग्रेट ब्रिटेन की स्थानीय सरकार के वित्त पर एक समग्र दृष्टिकोण से विचार करें तो पायेंगे कि यहां के प्रशासन की कुशलता, ईमानदारी एवं न्यायोचितता किसी भी देश की तुलना में कम नहीं है।

८

समिति व्यवस्था

[THE COMMITTEE SYSTEM]

समिति को व्यक्तियो का एक ऐसा निकाय कहा जा सकता है जो कि विशेष कार्यों को सम्पन्न करने के लिए परिषद द्वारा नियुक्त की जाती है। इस प्रकार से नियुक्त समितियां परिषद के कार्यों के किसी एक भाग का सचालन करती हैं तथा उस कार्य पर परिषद की स्वीकृति प्राप्त कर लेती है। समितियो की स्थापना करना कई एक कारणो से आवश्यक बन जाता है। स्थानीय सत्ता के पास करने के लिए भारी कार्य होता है तथा इस सबको वह अपने बड़े आकार के कारण सुविधापूर्वक कर सकने मे असमर्थ रहती है। वह इस कार्य को कुशलता के साथ भी नही कर सकती। परिषद की कार्यवाही मे अनेक अनौपचारिकतायें बरती जाती हैं जिनके कारण वह किसी विषय पर विस्तार के साथ विचार कर सकने मे असमर्थ नही हो पाती। इसके परिणाम-स्वरूप समिति व्यवस्था को प्रारम्भ किया गया है। इस व्यवस्था के आधीन परिषद की शक्तियो एव कर्त्तव्यो का व्यवहार समिति द्वारा किया जाता है। समिति व्यवस्था इगलैण्ड के स्थानीय प्रशासन की एक मुख्य विशेषता समभी जाती है। इन दोनो का विकास बहुत कुछ साथ-साथ ही हुआ है। समिति व्यवस्था का विकास इस कारण किया गया है क्योकि छोटे-छोटे अनेक कार्य परिषद के दायित्व बन गये हैं। पहले जो कई कार्य एडहॉक (Adhoc) निकायो द्वारा किये जाते थे उनको अब स्थानीय सत्ताओ द्वारा ले लिया गया है। स्थानीय सत्ताओ द्वारा जो सेवायें अभी ली गई है, उनका सचालन पृथक विभागो द्वारा एवं उन्ही अधिकारियो के माध्यम से किया जाता है जो उनको पहले सचालित करते थे।

समिति व्यवस्था के लाभ

[Advantages of Committee System]

समिति व्यवस्था केवल आवश्यकता की ही जननी नही है वरन् इसके अनेक लाभ भी हैं। प्रथम, परिषद को अपने द्वारा सम्पन्न की जाने वाली सेवाओ के बारे मे विस्तार के साथ सोचना होता है तथा ऐसा करते हुए वह

भी दायित्वों का ... नहीं कर सकती तथा केवल समितियों तक अपने आपको मर्यादित कर लेती है। समिति व्यवस्था उसे इस परिस्थिति के विरुद्ध सहारा देती है। दूसरे, परिषद का कोई भी नया सदस्य उस समिति के कार्यों से परिचित नहीं होता जिसका वह सदस्य बनाया गया है। परिषद के कार्यों के केवल एक भाग मात्र से ही सम्बन्ध रखने के कारण वह शीघ्र ही एक समिति के कार्यों का परिचय पा जाता है। यह ऐसी परिस्थिति में अत्यन्त महत्वपूर्ण है जब कि समस्त स्थानीय सरकार की सेवायें अधिक से अधिक तकनीकी होती जा रही हैं। इसके लिए या तो सवैतनिक अधिकारियों का ही रखा जाये अथवा निर्वाचित सदस्यों में तकनीकी ज्ञान का विकास किया जाये। तीसरे, समिति व्यवस्था अत्यन्त लोचशील होती है इसको परिस्थिति के अनुसार ढाला जा सकता है। यदि नई सेवाओं का संचालन करना है अथवा स्थापित सेवाओं का कोई भाग इतना बढ़ गया है कि उसके लिए अलग से विचार करने की आवश्यकता है तो नई समितियाँ स्थापित की जा सकती हैं। जब एक समिति की आवश्यकता नहीं रहती तो उसको समाप्त किया जा सकता है। जब कभी एक विभाग को दूसरे के साथ मिला दिया जाये अथवा सेवा को स्थानीय सत्ता के अन्य निकाय को सौंप दिया जाये तो समिति की जरूरत ही नहीं रह जाती और ऐसा होने पर आसानी से समिति को समाप्त किया जा सकता है। चौथे, समिति की बैठकों में किया जाने वाला वाद-विवाद पर्याप्त तकनीकी होता है तथा एक बार जब समिति द्वारा तकनीकी निर्णय ले लिये जाते हैं तो परिषद अपना समय नीति से सम्बन्धित मामलों पर विचार करने में लगा सकती है। पाँचवें, एक समिति में पूरी परिषद की अपेक्षा केवल कुछ लोग ही बैठते हैं। अपनी छोटी संख्या के कारण समिति अपना कार्य आसानी से कर सकती है। स्थानीय सरकार की प्रकृति ही कुछ ऐसी है कि कार्यों पर विस्तार के साथ विचार किया जाना जरूरी होता है। समिति एक ऐसा निकाय होती है जो कि संतोषजनक रूप से छोटी-छोटी बातों पर भी विचार कर सकती है। छठे, समिति की बैठकें व्यक्तिगत रूप से होती हैं जबकि परिषद की बैठकें सामान्य जनता के लिए भी खुली हो सकती हैं। समिति में कार्य का संचालन अपेक्षाकृत अधिक अनौपचारिक रूप से किया जा सकता है। परिषद का व्यवहार वाद-विवाद के अनेक नियमों से तथा स्थायी आदेशों से मर्यादित रहता है। समिति का सदस्य जो भी उसके दिमाग में आये वह अपने साथी सदस्यों से कहने के लिए स्वतन्त्र होता है, किन्तु परिषद की बैठक में दिया जाने वाला भाषण ऐसा ही होता है मानो जनता के सामने दिया गया हो। ऐसी स्थिति में परिषद का सदस्य कई बार अपनी वास्तविक इच्छाओं को प्रकट नहीं करना चाहता। वह वही बात कहता है जो उसे प्रेस के सामने कहनी चाहिए तथा जिसके लिए वह जनता की प्रक्रिया सहने को तैयार हो।

समिति व्यवस्था की हानियाँ
[Disadvantages of the Committee System]

समिति व्यवस्था उपयोगी है, आवश्यक है तथा लाभदायक है किन्तु यह सब होने पर भी वह आलोचनाओं से परे नहीं है। आलोचकों द्वारा

समिति व्यवस्था की कई प्रकार से आलोचनायें की जाती है। इसकी प्रथम आलोचना यह है कि परिषद के सदस्यो के पास एक सीमित समय होता है और वह केवल कुछ ही समितियो मे कार्य कर पाती है। जिन समितियो मे वे कार्य करते हैं, उनके सम्बन्ध मे उनका ज्ञान व्यापक एव तकनीकी हो जाता है किन्तु वे शेष कार्यों के बारे मे प्राय. अनभिज्ञ रहते हैं। दूसरे, परिषद यह प्रयास करती है कि वे अधिक से अधिक समितियो मे कार्य कर सकें जहा कही भी वे ऐसा करने लगते हैं तो उनकी कार्यकुशलता समाप्त हो जाती है। पार्षद प्राय उन समितियो मे कार्य करना चाहते हैं जो जनता मे अधिक लोकप्रिय होती हैं, उदाहरण के लिए शिक्षा समिति। अन्य कम महत्वपूर्ण समितियो मे कार्य करने के प्रति अधिकाश सदस्य प्रायः अपना उत्साह प्रकट नही करते उदाहरणार्थ पुस्तकालय समिति। इस प्रकार की कम महत्वपूर्ण समितिया इस प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप और भी अधिक महत्वहीन बनती चली जाती हैं। तीसरे, समिति व्यवस्था स्थानीय सत्ता के कार्य को बाट देती है तथा प्रत्येक समिति अपने आपको एक स्वतन्त्र निकाय समझने लगती है। यह स्थिति उस समय और भी खराब हो जाती है जब परिषद समितियो को पर्याप्त सत्ता सौंप देती है तथा एक तकनीकी विशेषज्ञ को विभाग का अध्यक्ष बना दिया जाता है। विशेषज्ञो की यह प्रकृति होती है कि वे दूसरे कार्यों को ग्रहण करने मे बहुत कम रुचि लेते हैं तथा जहा पारस्परिक सहयोग की आवश्यकता होती है वहा सघर्षपूर्ण स्थिति पैदा हो जाती है। चौथे समितियो की बैठको से जनता को अलग रखा जाता है। इस व्यवहार के कारण जनता से सम्बन्धित विषयों को भी जनता से गुप्त रखने का प्रयास किया जाता है। इस व्यवस्था का दुरुपयोग भी किया जा सकता है। जिन विषयो पर परिषद मे सार्वजनिक रूप से विचार किया जाना चाहिए था उनको निर्वाचको से छिपा कर रखा जाता है।

समितियों के प्रकार
[Kinds of Committees]

स्थानीय स्तर पर जिन शक्तियो का प्रयोग किया जाता है उन समितियों को कई भागों मे विभाजित किया जाता है। इनमे से कुछ प्रमुख निम्न प्रकार हैं—

१ स्थायी समितियां [Standing Committees]—स्थायी समितिया उनको कहा जाता हैं, जिनको स्थानीय सत्ता द्वारा अनिश्चित काल के लिए या प्रत्येक वार्षिक बैठक मे नगरपालिका के प्रशासकीय वर्ष की अवधि मे करने के लिए नियुक्त करते हैं। परिषद् प्रत्येक वर्ष किसी भी विशेष सेवा मे सम्पन्न करने के लिए इस प्रकार की समितियो की नियुक्ति करती है। स्थायी समिति को भी कार्य की प्रकृति के आधार पर प्रायः दो भागो मे विभाजित किया जाता है। प्रथम हैं सेवा समितिया, (Service Committees)। ये समितिया वे होती हैं जो कि परिषद् के कार्यों मे से ही किसी एक को सम्भाल लेती हैं; किसी विशेष सेवा के प्रबन्ध का भार अपने ऊपर ले लेती हैं। दूसरी समितिया विभागीय समितिया (Departmental Committees) कहलाती

हैं। इन समितियों के कार्यों की प्रकृति उनसे भिन्न होती हैं या विभागों द्वारा सचालित किए जाते हैं।

२. विशेष समितियां [Special Committees]—विशेष समिति का परिषद् द्वारा किसी विशेष कार्य के लिए नियुक्त किया जाता है तथा इस समिति का कार्यकाल उतना ही होता है जब तक कि वह कार्य समाप्त नहीं हो जाता। इस प्रकार यह एक अस्थायी समिति है। कभी-कभी वह कार्य जिसके लिए इस प्रकार की समिति की स्थापना की जाती है, इतना अधिक बढ़ जाता है कि यह एक प्रकार से स्थायी समिति ही बन जाती है। इस प्रकार की समिति के उदाहरण के रूप में हम उस समिति को रख सकते हैं जो किसी नयी समस्या, एक प्रस्तावित नई सेवा या किसी खास प्रशासकीय प्रश्न के सम्बन्ध में छानबीन करती है। परिषद् में जब समय-समय पर विशेष कार्य उत्पन्न होते हैं तो नियमत रूप से उनके लिए विशेष समितियां नियुक्त कर दी जाती हैं। इस प्रकार की समितियों का एक अन्य उदाहरण कुछ स्थानीय सत्ताओं द्वारा नियुक्त वे समितियां हैं जिनका लक्ष्य मेयर को चुनना होता है। मेयर का चुनाव एक ऐसा कार्य है जिसमें लोगों के व्यक्तित्व के बारे में आवश्यक रूप से विवेचना का प्रश्न आता है। यह विवेचना यदि एक समिति के माध्यम से आन्तरिक विवेचना तथा समझौते की प्रक्रिया से की जाय तो अधिक अच्छा रहे। परिषद् की खुली बैठक में ऐसे विषयों पर विचार करने से अनेक जटिलतायें पैदा हो जाती हैं किन्तु जब समिति अपनी अनौपचारिक बैठक में इस सम्बन्ध में निर्णय ले लेती है तो कार्य अधिक सुगमतापूर्वक सम्पन्न हो जाता है। कहीं-कहीं यह अभ्यास है कि मेयर का चुनाव प्रति वर्ष अलग-अलग दलों से किया जाये। ऐसे स्थानों पर भी मेयर के चुनाव के लिए एक समिति (Mayoralty Committee) नियुक्त की जा सकती है। जब परिषद् मेयर का वेतन निश्चित करना चाहती है तो इसके लिए वह तत्सम्बन्धी समिति से परामर्श लेती है, स्थानीय परिस्थितियों पर विचार करती है तथा मेयर बनने वाले व्यक्ति से भी सम्पर्क स्थापित करती है।

३. संविधि द्वारा निर्मित समितियां [Statutory Committees]—कानून के अनुसार कुछ समितियों की स्थापना करना जरूरी होता है। ऐसी समितियों की स्थापना के लिए स्थानीय सत्ता बाध्य होती है। प्रमुख स्थानीय सेवाओं का सचालन इस प्रकार की समितियों द्वारा किया जाता है। एक स्थानीय सत्ता में कितने प्रकार की समितियां रहेंगी? यह बात इस तथ्य पर निर्भर करती है कि वह स्थानीय सत्ता किस प्रकार की है। मुख्य-मुख्य परिषदें प्रायः वित्तीय समिति की स्थापना करती है। काउन्टी परिषदों को इस प्रकार की कई एक समितियों की स्थापना करनी होती है। उदाहरण के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, वास्त, वित्त एवं कल्याण से सम्बन्धित समितियां। जिस कार्य के लिए इस प्रकार की समिति को नियुक्त कर दिया जाता है उससे सम्बन्धित सभी विषय इस प्रकार की समिति को विचारार्थ प्रस्तुत किये जाते हैं। इस प्रकार की समिति से सम्बन्धित किसी भी विषय पर परिषद् उस समय तक निर्णय नहीं लेती जब तक वह समिति की सिफारिश एवं

प्रतिवेदन प्राप्त न कर ले। संकट काल में इस नियम का अपवाद भी हो सकता है। इस प्रकार की सभी समितियां स्थायी समितियां होती हैं किन्तु सभी स्थायी समितियां इस प्रकार की समितियां नहीं होतीं।

इस प्रकार की समितियों की रचना एवं गठन के सम्बन्ध में विशेष प्रावधान रखे जा सकते हैं। एक वित्तीय समिति में परिषद् के ही सदस्य होते हैं वहां सहवृत सदस्यों (Co-opted members) के लिए कोई स्थान नहीं रहता। शिक्षा समिति में अनुभवी तथा ऐसे व्यक्ति होने चाहिए जो क्षेत्र की शैक्षणिक परिस्थितियों से सम्बन्ध रखते हों तथा परिचित हों। इस समिति की रचना की मुख्य बात यह है कि इसका प्रबन्ध शिक्षा मंत्रालय द्वारा स्वीकृत किया जाता है। राष्ट्रीय सहायता अधिनियम के अधीन गठित की जाने वाली समिति में पुरुषों की भांति स्त्रियां भी हो सकती हैं। इस प्रकार की समितियों की बनावट के सम्बन्ध में एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह देखनी होती है कि सहवृत सदस्यों की नियुक्ति के लिए प्रावधान रखा गया है अथवा नहीं। वर्तमान के कुछ अंग्रेजी अधिनियम यह व्यवस्था कर देते हैं कि समिति के कम से कम आधे सदस्यों को परिषद् से ही लिया जाये। इस प्रकार सहवृत सदस्य अधिक नियुक्त करने का अवसर प्राप्त हो जाता है।

४ अनुमति द्वारा निर्मित समितियां [Permissive Committees]—सविधि द्वारा निर्मित समितियों का क्षेत्र अधिक व्यापक नहीं है। इनकी तुलना में उन समितियों का क्षेत्र अधिक व्यापक है जिनकी स्थापना स्थानीय सत्ता द्वारा इसलिए की जाती है कि उनको ऐसा करने की अनुमति प्राप्त है। उन समितियों का गठन करते समय सत्ता को यह स्वतन्त्रता रहती है कि समिति के विशेष कार्य-क्षेत्र के अनुसार जिस प्रकार की समिति का संगठन वे चाहें कायम कर लें। कई बार यह सुझाव दिया जाता है कि यह अधिक उपयुक्त होगा यदि कानून द्वारा निर्मित समितियों के लिए सभी निर्देश उठा दिये जाते या उनको एकत्रित करके एक सरल निर्देश का रूप दे दिया जाता। जिन कानूनों के द्वारा स्थानीय सत्ता की स्थापना की जाती है वे कानून उनको इस प्रकार की समितियां नियुक्त करने की तथा ऐसी शक्ति को हस्तांतरित करने की सत्ता प्रदान कर देते हैं। इस प्रकार की समितियों की रचना से सम्बन्धित कानून समय-समय पर पास किए गये हैं। अतः वे एक या दो स्थानीय प्रकार की सत्ताओं के बारे में विचार करते हैं। सभी प्रकार की स्थानीय सत्ताओं के बारे में एक साथ नहीं। विभिन्न प्रकार की स्थानीय सत्ताओं को समिति नियुक्त करने की जो शक्ति दी जाती है वह अलग-अलग होती है। स्थानीय सरकार अधिनियम, १९३३ के अनुसार सभी पूर्व व्यवस्थापनों को महत्वहीन बना दिया गया और स्थानीय सत्ताओं को यह शक्ति दी गई कि अपने कार्य का सचालन करने के लिए वे जो भी आवश्यक समझें समिति नियुक्त कर लें।

५. साधारण समितियां [Ordinary Committees]—एक सामान्य नियम के अनुसार परिषद उतनी समितियां बना सकती हैं जितनी वह आवश्यक समझे। इन समितियों में पूरी तरह से परिषद के सदस्य हो सकते हैं अथवा सहवृत सदस्य; किन्तु सामान्य रूप से समिति के कम से कम दो-

तिहाई सदस्य परिषद-सदस्य होते हैं। विभिन्न स्थानीय सत्ताओं मे जो समितिया नियुक्त की जाती हैं उनकी सख्या तथा नाम के बीच कोई एकरूपता प्राप्त नहीं होती। इस प्रकार हम यह देखते हैं कि जब कभी एक सत्ता की कानूनी शक्तियो एव कर्त्तव्यो मे कोई परिवर्तन किया जाता है तो एक परिषद को इसे सामान्य उद्देश्य समिति (General Purposes Committee) को भेजती है जबकि दूसरी परिषदो मे इसे कानूनी समिति या ससदीय समिति के पास भेजा जाता है। समिति व्यवस्था की कुछ सामान्य विशेषताएं भी होती हैं जो कि उचित रूप से सगठित प्राय सभी सत्ताओं मे प्राप्त होती हैं। सभी समितियो मे कुछ धन की आवश्यकता होती है, उसे प्रत्येक कार्य के लिए सवैतनिक स्टाफ रखना पडता है तथा भवनो एव अन्य स्थापना सम्बन्धी कार्यों को सम्पन्न करना होता है।

समितियों को उत्तरदायित्व सौंपना

[Allocation of Responsibility to Committees]

जब स्थानीय परिषद द्वारा अपनी समितियो को सत्ता सौपी जाती है तो इसके लिए वह दो प्रकार के तरीके अपना सकती है। प्रथम, प्रत्येक सेवा के लिए जिसके लिए कि सत्ता उत्तरदायी है, एक समिति नियुक्त कर दी जाती है। यह तरीका अपने आप मे बहुत पुराना है। जब स्थानीय सत्ताओं का प्रारम्भ किया गया था उसी समय से इस प्रकार की समितिया प्रचलित हैं और वर्तमान मे भी ये अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। जब एक स्थानीय सत्ता समितियो के गठन के इस तरीके को काम मे लेती है तो वह स्वास्थ्य, शिक्षा, जल वितरण एव अपने द्वारा सम्पन्न होने वाली सभी सेवाओं के लिए एक-एक स्थायी समिति नियुक्त कर देती है। *प्रायः सभी सविधि द्वारा निर्मित समितिया एक* विशेष सेवा से सम्बन्ध रखती है। दूसरे, परिषद के कर्त्तव्यो को कार्य के प्रकार के अनुसार भी विभाजित किया जा सकता है। इस व्यवस्था के अनुसार वित्त, कानूनी व्यापार, सचिवालय-कार्य, समिति चिकित्सा सम्बन्धी कार्य, इन्जीनियरिंग-कार्य, आदि के लिए एक-एक समिति नियुक्त की जायगी। सभी काउन्टी परिषदें एवं राजधानी बारो परिषद कानून के अनुसार एक वित्तीय समिति रखती हैं। इस समिति को छोड कर सभी सविधि द्वारा निर्मित समितिया एक प्रदत्त सेवा का नियन्त्रण करती हैं। अन्य प्रकार की सत्ताओं मे वित्तीय समिति अनुमति द्वारा निर्मित समिति होती है तथा अधिकाश परिषदें इस प्रकार की समिति का गठन करती हैं। कार्य के प्रकार पर आधारित अन्य समितिया जिनको प्रायः अधिकाश परिषदो द्वारा नियुक्त किया जाता है वे है स्टाफ समितिया (Staff Committees) और कार्य समितिया (Works Committees)।

यह कहा जाता है कि जब स्थानीय सत्ता समितियों के गठन का निर्णय करे तो *उसे मुख्य रूप से तीन बातों पर विचार करना चाहिए।* प्रथम, परिषद के सभी कार्यों को इस प्रकार विभाजित करना चाहिए कि हर कोई यह जान सके कि *कौन सी समिति कौन सा कार्य सम्पन्न करती है।* इसी विधि के द्वारा यह निश्चित हो पाता है कि सभी विषयों पर विचार किया जाता है और सभी सम्बन्धित तत्वों को ध्यान में रखा गया है। ६

ऐसी अनेक समस्याएं रहती हैं जो कि वर्तमान समितियों के अधिकार क्षेत्र से बाहर होती हैं। इन पर विचार करने के लिए एक सामान्य उद्देश्य समिति का गठन किया जा सकता है। दूसरे, जन समितियों के कार्यों को समूहीकृत किया जाय तो सत्ता की क्रियाओं के सुपरिचित सम्भागों को ध्यान में रखना चाहिए तथा इसे उन लोगों की स्वेच्छा पर नहीं छोड़ देना चाहिए जो कार्य निर्धारित करते समय परिषद में कार्य कर रहे हों। जन-स्वास्थ्य एवं गृह-निर्माण जैसी कुछ सेवाएं होती हैं जिन पर विचार करने के लिए पृथक समितियों की आवश्यकता होती है। समितियों की रचना छोटी एवं कम महत्वपूर्ण सेवाओं के लिए भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। इनको समितियों में इस प्रकार संयुक्त किया जाता है ताकि उचित समन्वय बना रहे। तीसरे, यह कहा जाता है कि समितियों की संख्या जितनी कम होगी उतना ही अच्छा है। इसका अर्थ यह नहीं कि समितियों की संख्या इतनी कम हो जाये कि उनका कार्य-भार अधिक बढ़ जाए तथा उनको लम्बे समय तक बैठकें करनी पड़ें; किन्तु जब समितियां अधिक होती हैं तो खतरा यह हो जाता है कि सत्ता का एकीकरण समाप्त हो जाता है। प्रत्येक समिति अपने आपको परिषद की एक छोटी इकाई मानने की अपेक्षा एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व मानने लग जाती है।

एक पारषद सम्पूर्ण स्थानीय सत्ता के हितों को ध्यान में रखे बिना केवल अपनी ही समिति के लक्ष्यों को पूरा करना चाहेगा। वर्तमान समय में यह प्रवृत्ति अधिक जोर पर है कि कई समितियों का गठन किया जाना चाहिए। अधिक समितियों को प्रजातन्त्र का प्रतीक माना जाता है। पृथक कार्य के लिए पृथक समिति की रचना करके उस कार्य में लोगों का उत्साह एवं दृढ़ इच्छा भी जाग्रत की जा सकती है। इसका परिणाम अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी। अधिक समितियां होने से सामञ्जस्य की समस्या तो रहती ही है साथ ही यह मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी खराब समझी जाती है। प्रत्येक समिति में एक अलग विचारधारा विकसित करने की प्रवृत्ति प्रमुख हो जाती है। यह प्रवृत्ति अपने आप में लाभदायक भी सिद्ध हो सकती है किन्तु इसका एक महत्वपूर्ण पहलू है कि यह एक गलत प्रकार की स्वतन्त्रता की भावना को जन्म देती है जो कि आसानी से दूसरी समितियों के साथ संघर्ष पैदा कर देती है।

समितियों की रचना
[The Composition of Committees]

किसी समिति की रचना किस प्रकार की जाएगी, उसके सदस्य किस प्रकार नियुक्त होंगे तथा उसका आकार क्या होगा, आदि बातों का निर्णय स्थानीय सत्ताओं द्वारा लिया जाता है। सामान्य रूप से यह माना जाता है कि छोटी समितियां सर्वश्रेष्ठ ढंग से काम करती हैं किन्तु कभी-कभी छोटी समितियां प्राप्त करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। विशेष रूप से काउंटी क्षेत्र में जहां कि सामान्य भावना यह रहती है कि काउन्टी के प्रत्येक जिले का प्रत्येक समिति में प्रतिनिधित्व होना चाहिए। अधिक घने शहरी क्षेत्रों में यह भावना नहीं पाई जाती। छोटे तथा पुराने बारोज़ में यह सोचा जाता है कि

समितियों का गठन करते समय प्रत्येक वार्ड से एक–एक सदस्य लिया जाए किन्तु बड़े शहरों में यह सिद्धान्त काम में नहीं लिया जाता। शहरी क्षेत्रों में राजनैतिक दल व्यवस्था स्थानीय सत्ता में भली प्रकार समाविष्ट हो जाती है। एक समिति की बनावट पर राजनैतिक दृष्टि से विचार किया जाता है तथा एक समिति के सदस्य को इस प्रकार नियुक्त किया जाता है कि समिति का राजनैतिक सम्भाग सम्पूर्ण परिषद के राजनैतिक सम्भाग को प्रदर्शित करता है। जहा समितियों की सदस्यता राजनैतिक आधार पर निर्धारित होती है वहा प्रवर समिति की सिफारिशों को कार्यात्मक रूप दिया जाता है। स्थायी समितियों के सभापति का चुनाव करते समय दलों को महत्ता काम कर जाती है। कहीं–कहीं पर प्रमुख दल सभापतित्व के सभी स्थानों को ले लेता है।

समिति की रचना से सम्बन्धित एक अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इसमे कितने परिषद के सदस्य हों तथा कितने सहवृत सदस्य हों। जब कभी एक सेवा के सगठन पर विचार किया जाता है तो ऐसे अवसरों पर एक समिति के सविधान को प्रायः निश्चित कर लिया जाता है और जब कभी आवश्यक समझा जाए तो इसमें सशोधन कर लिया जाता है। अनेक सविधि द्वारा निर्मित समितियों का आकार एवं रचना ससद के अधिनियम द्वारा निर्धारित की जाती है। कई बार यह प्रावधान किया जाता है कि समिति के सदस्य परिषद के सदस्य न हो किन्तु वे अनिर्वाचित सदस्य हो तथा उनको समिति की सेवाओं के सम्बन्ध में विशेष ज्ञान एवं अनुभव के कारण समिति का सदस्य बना दिया जाए। कई बार एक समिति के आकार एवं बनावट से सम्बन्धित नियमों को सेवाओं के प्रशासन के लिए सत्ता द्वारा निर्मित एवं मन्त्री द्वारा स्वीकृत योजनाओं में सन्निहित कर लिया जाता है।

जिन सदस्यों को किसी निकाय में उसके स्थित सदस्यों के मतदान द्वारा चुना जाता है उनको सहवृत सदस्य (Coopted Members) कहते हैं। सन् १९३३ से पूर्व अनेक सविधि द्वारा निर्मित समितियों में बहुत से सहवृत सदस्य होते थे। इनको सम्बन्धित ससदीय अधिनियम द्वारा निर्धारित तरीके से चुना जाता था। सन् १९३३ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने एक सामान्य प्रावधान रखा जिसके अनुसार सभी स्थानीय सत्ताएं वित्तीय समिति को छोड कर सभी समितियों के लिए ऐसे सदस्यों को सहवृत कर सकती हैं जो कि परिषद के सदस्य नहीं हैं। इस प्रकार से नियुक्त व्यक्तियों को सहवृत सदस्य कहा जाता है। ये पारषद के रूप में कार्य करने के योग्य होने चाहिए। किसी भी समिति के एक–तिहाई से अधिक सदस्यों को सहवृत नहीं किया जा सकता। इस प्रकार प्रत्येक समिति के कम से कम दो–तिहाई सदस्य परिषद सदस्य होते हैं और इस प्रकार स्थानीय सत्ता नियन्त्रण रख पाती है। एक काउन्टी परिषद अपनी समितियों में ऐसे सदस्यों को सहवृत कर सकती है जो उस काउन्टी के कस्बों एव देहातों जिलों के पारषद हैं। स्वेच्छापूर्ण सगठनों से भी सहवृत सदस्यों को लिया जा सकता है। कभी-कभी यह तर्क किया जाता है कि अनिर्वाचित सदस्यों को स्थानीय सरकार की समितियों में बैठने की अनुमति देना अप्रजातान्त्रिक है। इसके उत्तर में यह कहा जा सकता है कि

प्रजातन्त्र यह मान कर नही चलता कि सार्वजनिक जीवन मे प्रत्येक व्यक्ति निर्वाचित ही होगा। इस दृष्टि से केवल यही पर्याप्त है कि निर्वाचित तत्व को प्रधानता दी जाए। स्थानीय सरकार के कार्य मे ऐसे व्यक्तियो को साथ लेने के अनेक अवसर आते हैं जो कि परिषद के सदस्य नही हैं। इन अवसरो को कई दृष्टियो से न्यायोचित बताया जाता है। प्रथम, चुनाव की प्रक्रिया निश्चित रूप से यह प्रदर्शित नही करती कि स्थानीय मत के प्रत्येक पहलू का प्रतिनिधित्व किया गया है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि चुनाव प्राय: समहो द्वारा नियन्त्रण रहते हैं जिनमे वे सभी लोग सम्मिलित नही होते जो कि स्थानीय सरकार के कार्य मे भाग लेना चाहते हैं। ऐसे अनेक लोग होते हैं जो स्थानीय सरकार के कार्यो को महत्वपूर्ण रूप से सम्पन्न कर सकते हैं किन्तु जो अपने आपको राजनैतिक दलो मे नही मिलाना चाहते तथा स्वतन्त्र उम्मीदवार के रूप मे चुनाव प्रचार एव मत प्राप्त करने के चक्कर मे नही पड़ना चाहते।

दूसरे, यह हो सकता है कि प्रतिनिधित्व पूर्ण रूप से प्राप्त हो जाए अर्थात् परिषद मे स्थानीय मत के सभी रूपो को स्थान मिल जाए किन्तु ऐसा होने पर भी यह सम्भव है कि सदस्यो के पास बुद्धिपूर्ण निर्णय लेने के लिए आवश्यक ज्ञान एव विशेषज्ञता न हो। यह विशेष रूप से उस समय होता है जब कि राजनैतिक दल व्यवस्था सुस्थापित होती है और सदस्यो का निर्वाचन दलीय स्तर के आधार पर होता है न कि उनकी बुद्धि एव ज्ञान के आधार पर। तीसरे, पारषद प्राय: सार्वजनिक भावना से प्रभावित लोग होते हैं जो कि अनेक स्थानीय क्रियाओ मे भाग लेते हैं जिनका सम्बन्ध परिषद से नही होता। यदि परिषद के सदस्य अपना सारा समय स्थानीय सरकार के कार्यों मे लगा दें तो भी वे विशेषज्ञ नही बन सकते। विशेषज्ञता के अभाव मे वे बैठको मे भाग लेना नही चाहेंगे। ऐसी स्थिति मे उन लोगो को समितियो मे रखना उपयुक्त रहेगा जो कि अपनी रुचि एव विशेषज्ञता पूर्ण ज्ञान के कारण समितियो मे उपस्थित होने के लिए प्रोत्साहित होगे। चौथे, अपनी सहवृत की शक्ति का प्रयोग करके एक स्थानीय सत्ता अपनी समितियो मे ऐसे लोगो की शक्ति एव विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान का लाभ उठा सकती है जिनका परामर्श उस समय बहुत महगा पड़े जब कि सत्ता इसके लिए वेतन देने के लिए तैयार हो।

सहवृत्ति का सिद्धान्त लाभदायक होने के साथ-साथ कुछ दोष भी रखता है। कई स्थानो पर इस सिद्धान्त का प्रयोग नही किया जाता। पारषदो मे यह भावना मुख्य रहती है कि वे ऐसे व्यक्ति को सहवृत सदस्य बनाना चाहते हैं जो उनका साथी है तथा जो चुनाव मे हार चुका है। इस प्रकार मतदान के समय जनता द्वारा अभिव्यक्त इच्छा का उल्लघन किया जाता है। परिषद के सदस्य प्राय: ये नही देखते कि व्यक्ति समिति के कार्यों से सम्बन्धित ज्ञान एव रुचि रखता है कि नही और वे अपने मित्रो या स्थित पारषदो की पत्नियों को सहवृत बना देते हैं। सहवृत्ति के सिद्धान्त का एक अन्य खतरा यह बताया जाता है कि इसके द्वारा ऐसे व्यक्तियो को शक्ति सौंप दी जाती है जो कि मतदाताओ के प्रति प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी नही होते। यह कहा

जाता है कि परिषद के पास इतना समय नहीं होता कि वह अपनी समितियों के कार्यों को निकट से देख सके या अशोधित कर सके। इसके परिणाम स्वरूप एक समिति के दो या तीन सदस्य अपने विशेषीकृत ज्ञान के कारण समिति को प्रभावित करने में समक्ष हो जाते हैं।

एक बार जब समिति स्थापित कर दी जाती है और वह कार्य करने लगती है तो उसकी रचना में सुधार भी किया जा सकता है। समिति के संविधान में किसी प्रकार का सुधार करने की शक्ति स्वयं समिति के पास ही रहती है। इस सम्बन्ध में लिया गया कोई भी निर्णय एक सिफारिश के रूप में होगा, इसे परिषद के सम्मुख विचारार्थ प्रस्तुत किया जाएगा और परिषद इसके लिए प्रस्ताव पास करेगी।

समितियों का अधिकार क्षेत्र (Terms of Reference of the Committees)—एक समिति को क्या कार्य करने के लिए उत्तरदायी ठहराया जाएगा यह बात उस प्रस्ताव में निहित रहती है जिसके द्वारा परिषद समिति को स्थापित करती है। इस प्रस्ताव के शब्दों का अत्यन्त महत्व होता है और उनको ध्यान से देखा जाना जरूरी है तभी परिषद के कार्यों का सचालन आसानी से किया जा सकेगा जबकि यह जानना सरल हो कि किस कार्य को किस समिति द्वारा सम्पन्न किया जाता है। समिति की शक्तियों के प्रसार के सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं होना चाहिए। यह स्पष्ट रूप से उल्लेख कर देना चाहिए कि समिति का मुख्य कार्य परिषद को परामर्श देना मात्र है अथवा यह परिषद की ओर से हस्तान्तरित शक्तियों का प्रयोग करेगी।

समिति के सदस्यों का चयन (Selection of the Committee Members)—कुछ समितियों का निर्वाचन प्रति वर्ष किया जाता है जहां परिषद के सदस्य एक निश्चित अनुपात में प्रति वर्ष सेवा निवृत्त होते हैं और नए सदस्यों को निर्वाचित किया जाता है वहां यह जरूरी बन जाता है कि समितियों को प्रति वर्ष नए सिरे से नियुक्त किया जाय। जिन सत्ताओं में परिषद के सदस्य तीन वर्ष तक अपने पद पर रहते हैं वहां यह सम्भव होता है कि समिति के सदस्यों को आम चुनाव के समय नियुक्त कर दिया जाय और तीन वर्ष तक उनको पद पर रहने दिया जाए। वैसे वार्षिक निर्वाचन के अपने कुछ लाभ हैं क्योंकि प्रतिवर्ष नई समस्याएं उत्पन्न होती हैं और उनके अनुसार परिवर्तन किया जाना भी जरूरी हो जाता है। अतः यह परिवर्तन थोड़ा वहन करने की अपेक्षा प्रति वर्ष पूरी तरह से ही किया जाए तो अधिक अच्छा रहेगा। परिषद एक व्यक्ति को एक वर्ष के लिए नियुक्त करती है। उस काल में वह सदस्य आवश्यक रूप से परिषद का सदस्य नहीं रहता। परिषद द्वारा यह भी प्रस्ताव पास किया जा सकता है कि समिति के एक सदस्य को परिषद की सदस्यता से वंचित रख दिया जाए तथा उसके स्थान पर अन्य सदस्य को नियुक्त कर दिया जाए।

समिति में कार्य करने के लिए सदस्यों का चुनाव करते समय कई तत्वों को ध्यान में रख कर चलना होता है। सदस्यों की प्राथमिकताओं को देख कर चलना अधिक उपयुक्त रहता है। इसके लिए उचित तरीका यह है कि परिषद के सभी सदस्यों को समितियों की एक सूची प्रदान कर दी

जाए और उनसे उनकी प्राथमिकता का पता लगाया जाए कि वे किस समिति मे सेवा करना चाहते है। एक सदस्य को एक से अधिक समितियो का सदस्य भी बनाया जा सकता है। एक सदस्य प्राय तीन या चार समितियो का सदस्य रहता है किन्तु सदस्य को जितनी अधिक समितियो का सदस्य बनाया जाता है उतना ही समिति व्यवस्था को नुकसान रहता है। समिति का सदस्य अपने विस्तृत कार्य को एक या दो मुख्य क्षेत्रों मे केन्द्रित करके अपने विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान का विकास करता है तथा परिषद के कार्य के विशेष पहलुओ मे रुचि को बढाता है।

समिति के सदस्यो की नियुक्तिया परिषद के प्रस्ताव द्वारा की जाती हैं जिसम यह बता दिया जाता है कि कौन सदस्य किस समिति मे कार्य करेगा। परिषद के अन्य सभी कार्यों की भाति समिति की सदस्यता तय करने मे भी पूरी तैयारी की जरूरत होती है। यह एक प्रकार से एक जटिल समस्या का समाधान करने के समान है। कुछ टुकडो को उचित रूप से संयुक्त कर दिया जाता है और तब यह ज्ञात होता है कि इससे कोई अन्य भाग विस्थापित हो जाएगा। जब इस भाग को समायोजित किया जाता है तो अन्य भाग को भी समायोजित करने की आवश्यकता उत्पन्न हो जाती है। जब कभी परिषद मे किसी राजनैतिक दल का प्रभाव होता है तो समितियो की सदस्यता का निर्णय भी राजनैतिक दलो द्वारा किया जाता है किन्तु जहां राजनैतिक दल शक्तिशाली नही होते वहा दो तरीके अपनाए जाते हैं।

प्रथम तरीका यह है कि परिषद के सदस्य एक व्यक्तिगत बैठक बुलाते हैं जिसे तकनीकी रूप से सत्ता की बैठक नही कहा जा सकता। वे यह विचार करते हैं कि किस प्रकार समितियो का गठन किया जाए और इसके लिए वे एक सूची बनाते हैं ऐसा वे या तो एक समझौते के द्वारा कर लेते हैं अथवा मतदान द्वारा ऐसा करते हैं। बाद मे यह भी निर्धारित कर दिया जाता है कि कुछ व्यक्ति नामो का प्रस्ताव करेंगे और कुछ उनका समर्थन करेंगे। जब इस सूची को परिषद के सम्मुख रखा जाता है तो कोई एक सदस्य नामो को प्रस्तावित करता है और पारषदो का बहुमत उस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है जिसे उसने अपनी व्यक्तिगत बैठक मे पहले ही स्वीकार कर लिया है। समिति के सदस्यो की नियुक्ति का एक दूसरा तरीका चयन समिति द्वारा नियुक्ति है। यह समिति परिषद की प्रतिनिधि होनी चाहिए। इसमें नेता लोग तथा प्रभावशाली सदस्य होते हैं। यह समिति प्रत्येक समिति के लिए नामों की एक सूची बनाती है और इसे परिषद के सदस्यो के पास सुझाव के रूप मे भेजती है। जिस परिषद मे चयन समिति होती है वह इस बात पर जोर देती है कि परिषद मे आने से पूर्व समितियो की सभी नियुक्तियो को चयन समिति द्वारा विचार लिया जाना चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि कोई परिषद का सदस्य किसी व्यक्ति का नाम जोडने या घटाने के सम्बन्ध मे संशोधन प्रस्तुत करे तो परिषद इस पर तब तक निर्णय नही लेगी जब तक कि विषय को चयन समिति के पास नही भेज दिया जाए।

समितियो के सम्बन्ध में और विशेष रूप से चयन समिति के सम्बन्ध मे एक मुख्य कठिनाई यह रहती है कि ये वास्तविक की अपेक्षा सैद्धान्तिक

अधिक होती है। परिषद के कार्यों का संचालन निर्विवाद रूप से किया जाता है। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक है कि समितियाँ उस समय तक बनी रहें जब तक कोई नई समिति नियुक्त न की जाए। कानून के अनुसार एक परिषद के समाप्त होने के बाद जब दूसरी परिषद निर्वाचित की जाती है तो बीच में कोई अवकाश नहीं रहता। जिस प्रकार एक नई परिषद चुनाव के तुरन्त बाद नहीं मिल पाती, उसी प्रकार इस सम्बन्ध में भी कोई प्रावधान होना चाहिए कि कुछ दिन तक पूर्व परिषद द्वारा नियुक्त समितियाँ कार्य करती रहें। इसके विरुद्ध यह कहा जाता है कि चुनाव द्वारा परिषद का रूप ही बदल दिया जाता है और ऐसी स्थिति में ये समितियाँ गैर प्रतिनिधि हो सकती हैं। ऐसा होना कम से कम चयन समिति के लिए अभाग्यपूर्ण रहेगा। इससे कुछ कठिनाई भी उत्पन्न हो जाती है। जब एक समिति को यह मालूम हो जाता है कि चुनाव परिणामों के कारण शीघ्र ही उसकी सदस्यता में परिवर्तन होने वाले हैं तो वह अपने कार्य को पहले की भांति ही रखेगी। सहवृत सदस्य सामान्यतः किसी अन्य सत्ता या स्वैच्छापूर्ण निकायों के प्रतिनिधि होते हैं। ऐसी स्थिति में परिषद का कलर्क सत्ता से या निकाय से उन व्यक्तियों का नाम पूछता है जो सहवृत होना चाहते हैं। इन व्यक्तियों को नियुक्त करने के लिए नहीं कहा जा सकता क्योंकि यह शक्ति परिषद में निहित होती है। जिस सदस्य को नामांकित किया जाता है उसे परिषद प्रायः नियुक्त ही कर लेती है। यदि वह व्यक्ति पूर्णतः अनुपयुक्त ही हो तो बात दूसरी है। कभी-कभी तीन या चार नामों की प्रार्थना की जाती है ताकि परिषद को चयन का अवसर मिल सके।

वित्तीय समितियों की सदस्यता के बारे में कुछ कहना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। व्यावहारिक रूप से कुछ छोटी सत्ताओं को छोड़कर प्रायः सभी सत्ताएं वित्तीय समिति नियुक्त करती हैं। परिषद के वित्तीय कार्यों पर नियन्त्रण करने के लिए किस प्रकार की समिति अधिक उपयुक्त रहेगी, इस सम्बन्ध में अलग-अलग मत हैं कुछ लोगों का कहना है कि यदि वित्तीय समिति में अन्य सभी समितियों के सभापति रख दिए जाएं तो कार्य सरल हो जायगा। जब विभिन्न समितियों के सभापति वित्तीय समिति की बैठक में उपस्थित होते हैं तो वे अपनी समितियों के दृष्टिकोण को स्पष्ट एवं अभिव्यक्त कर सकते हैं। अन्य लोगों का कहना है कि वित्तीय समिति में सदस्यों का चुनाव वित्तीय मामलों में उनकी विशेष योग्यता एवं रुचि के आधार पर किया जाना चाहिए। यह भी तर्क दिया जाता है कि यदि समिति के सदस्य अन्य समितियों के सभापति नहीं रहें तो वे अधिक स्वतन्त्रतापूर्वक विचार कर सकते हैं। यदि अन्य समितियों के सभापतियों को वित्तीय समिति का सदस्य बनाया गया तो वे प्राप्त कोष को आपस में बाँटने के लिए मोलेबाजी करेंगे और बचत की अपेक्षा व्यय करने पर केन्द्रित हो जाएंगे।

समितियों के सभापति

[*The Chairmen of Committees*]

स्थानीय सत्ताओं की समितियों का सभापति एक विशेष स्थिति प्राप्त होता है। वह बैठकों को नियन्त्रित करने के अलावा अन्य रूप से भी महत्व-

पूर्ण होता है। समिति के सभापति एवं समिति द्वारा किए जाने वाले कार्यों से सम्बन्धित अधिकारी के बीच विशेष रूप से घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। जब कभी ऐसे तत्कालीन विषय उत्पन्न हो जाते हैं जबकि समिति की दूसरी बैठक में विचार करने से पूर्व ही निर्णय लिया जाना जरूरी हो तो इन दोनो के बीच विशेष रूप से घनिष्ठ सम्बन्ध बढ जाते है। ऐसी परिस्थितियो में अधिकारी का कार्य निर्णय लेने का होता है और परिषद उस निर्णय को मानती है। निर्णय लेते समय अधिकारी समिति के सभापति से विचार करता है और सभापति उसे परामर्श एवं निर्देशन देता है। परामर्श देते समय सभापति यह ध्यान रखता है कि उसकी समिति उससे क्या करने की आशा करती है। उसे यह जानना चाहिए कि समिति के सदस्य किस प्रकार सोचते हैं। समिति का सभापति उसका एक मान्य सदस्य होता है। वह सभापति तभी बन पाता है जब कि उसने समिति में एक लम्बे समय तक कार्य किया है या वह समिति के कार्य का कुछ विशेष ज्ञान रखता है या वह अपनी स्थानीय राजनैतिक सस्थ का एक प्रमुख व्यक्ति है। सभी परिस्थितियों में वह एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है और समिति का नेतृत्व एवं निर्देशन करने की स्थिति में होता है।

परिषद समिति के सभापति को नियुक्त कर सकती है क्योंकि समिति को परिषद द्वारा बनाया जाता है और वही इस बात का निर्णय लेती है कि समिति का क्या रूप होगा। इतने पर भी परिषद स्वयं सभापति की नियुक्ति नही करती वरन् वह प्रत्येक समिति पर ही छोड देती है कि वह अपने सभापति की नियुक्ति करे। यदि किसी समिति में उप-सभापति की आवश्यकता हो तो वह भी इसी रूप में नियुक्त किया जाएगा जिस प्रकार सभापति को नियुक्त किया जाता है। समिति के सभापति की नियुक्ति प्राय: प्रतिवर्ष की जाती है। यद्यपि एक ही व्यक्ति को कई बार नियुक्त किया जा सकता है। समिति की प्रथम बैठक का सभापतित्व परिषद के सभापति द्वारा अथवा किसी वरिष्ठ सदस्य द्वारा किया जा सकता है अथवा सभापति की कुर्सी को खाली छोडा जा सकता है ऐसी स्थिति में क्लर्क नामजदगी आमन्त्रित करेगा तथा नियुक्ति के लिए एक उचित मोशन रखेगा। जहा कहीं परिषद दलीय आधार पर सचालित होती है वहा सभापति का चयन दल की व्यक्तिगत बैठक में किया जा सकता है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं है जिस दल का परिषद में बहुमत है वह आवश्यक रूप से सभी समितियो में अपने दल का सभापति और उप-सभापति रखना चाहेगी। कुछ परिषदें राजनैतिक दिमाग वाली भी होती हैं जो कि अपनी समितियो पर राजनीतिक को हावी नही होने देती। जहा कहीं ये बातें दलीय यन्त्र द्वारा निश्चित नही की जाती वहा प्रभावशाली सदस्य ही इस बात पर विचार करते हैं कि किस व्यक्ति के नाम को आगे रखा जाए। अधिकांश स्थानीय सत्ताएं वर्षों तक सभापति को उसके पद पर बनाए रखती हैं। इसके लिए शर्त यह है कि वह व्यक्ति परिषद का सदस्य बना रहे और अन्य सदस्यो का विश्वास-पात्र बना रहे। किसी समिति के सभी कार्यों को सीखने में समय लगता है इसलिए यह अत्यन्त उपयोगी रहेगा कि एक अनुभवी व्यक्ति को लगातार सभापति पद पर बनाए रखा जा सके। इसके

कुछ दुष्परिणाम भी हैं। सभापति के विशेष उत्तरदायित्व होते है और उनका निर्वाह करते हुए व्यक्ति जिन बातों को सीख पाता है उनको साधारण सदस्य नही सीख सकता। ऐसी स्थिति मे एक सदस्य को प्रशिक्षित करने का सर्वश्रेष्ठ मार्ग यही है कि उसको समिति का सभापति बना दिया जाए। जब एक समिति के सभापति को प्रति वर्ष बदल लिया जाता है तो इसके परिणाम-स्वरूप यह सच है कि समिति का सभापति कम योग्य एवं कुशल रहेगा किन्तु इससे समिति के सभी सदस्य अधिक उत्तरदायी बन जाएंगे।

समितियों के सभापति परिषद के निर्वाचित प्रतिनिधियों मे महत्वपूर्ण तत्व होते हैं। वे समिति द्वारा संचालित की जाने वाली सेवा के साथ एकाकार हो जाते हैं तथा समिति के संचालन का मार्ग प्रशस्त करते है।

समितियों की बैठकें
[The Meetings of Committees]

परिषद तथा उसकी समितियों की सभी बैठकों के लिए एक कार्य-क्रम होता है। समिति की बैठकें प्रायः उसके कार्य की मात्रा से निर्धारित की जाती हैं किन्तु फिर भी कार्यक्रम कुछ सीमाएं लगा देता है। समितियों के कार्य का मुख्य लक्ष्य परिषद को प्रतिवेदन प्रस्तुत करना होता है। कई एक समितियां सीधे परिषद को प्रतिवेदन प्रस्तुत नही करती वरन् वे अपने विचार-विमर्श के निष्कर्ष अन्य समिति के सामने रखती हैं। इस प्रकार कई एक समितियां मिल कर किसी निष्कर्ष पर पहुंचती हैं। ऐसी स्थिति मे यह जरूरी होता है कि इन समितियों का कार्य-क्रम पहले से ही निश्चित कर दिया जाए ताकि कार्यों में देरी न हो और भ्रम पैदा न हो। पूरे वर्ष के कार्यक्रमों को एक डायरी के रूप मे छपाया जा सकता है।

समितियां अपनी बैठकें गुप्त रूप से करती हैं अर्थात् प्रेस अथवा जनता उसमें नहीं बैठते। कमरे का प्रबन्ध भी इस दृष्टि से महत्व रखता है। सदस्य गोल मेज के रूप मे बैठते हैं और वाद-विवाद में अनौपचारिकता बरती जाती है। समिति के सभापति के एक ओर क्लर्क बैठता है और दूसरी ओर सम्बन्धित विभाग का अध्यक्ष। यदि कोई अन्य विभाग भी कार्यों में रुचि ले रहा हो तो उसके उचित प्रतिनिधि भी बैठक मे भाग ले सकते हैं। यदि समिति को अपना कार्य उचित रूप से संचालित करना है तो उसे पर्याप्त सचिवालयी सहायता प्राप्त होनी चाहिए। इसका एक एजेन्डा उचित रूप मे तैयार किया जाना चाहिए और उसके साथ सभी आवश्यक कागजात लगाए जाने चाहिए। अधिकांश विषय वस्तु सम्बन्धित विभाग से प्राप्त होगी और यह सुविधाजनक प्रतीत होता है कि विभाग के अध्यक्ष को समिति का क्लर्क बना दिया जाए। कानून के अनुसार ऐसी कोई बाधा नहीं है कि स्वास्थ्य के मेडिकल अधिकारी को स्वास्थ्य समिति का क्लर्क न बनाया जा सके या शिक्षा संचालक को शिक्षा समिति का, किन्तु व्यवहार मे एक समिति का सचिवालय सम्बन्धी कार्य अन्य विभागों के कार्यों से भी सम्बन्धित रहता है और सम्पूर्ण परिषद से भी उसका सम्बन्ध रहता है। परिषद का क्लर्क परिषद के सभी कार्यों में समन्वय स्थापित करने के लिए उत्तरदायी होता है

यदि उसका विभाग समितियो के लिए सचिवालय के रूप मे कार्य करे तो समितियो के बीच तथा विभिन्न विभागो के अधिकारियो के बीच कार्य अच्छी प्रकार से संचालित हो सकेगा ।

परिषद का क्लर्क कितनी समितियो मे उपस्थित रहेगा तथा उसके सचिवालय सम्बन्धी कार्य को करेगा, यह बात सत्ता के आकार पर निर्भर करती है। समिति का क्लर्क आवश्यक परिपत्रो को एकत्रित करता है, उनको व्यवस्थित रूप मे रखता है और उन्हें सदस्यों के पास भेजता है। बैठक के समय वह समस्त कागजी कार्यवाही करने के लिए उत्तरदायी है। वह प्रक्रिया के विषय मे तथा व्यवहार के सामान्य सचालन के बारे मे समिति को परामर्श देता है। वह सदस्यों की उपस्थिति को लिखता है तथा समिति की प्रक्रियाओ एव निर्णयो का अभिलेख रखता है। बैठक के बाद वह समिति के उन निर्देशनो को सचालित करता है जो सचिवालय सम्बन्धी कार्य की सीमा मे आते है। वह आवश्यक कागजो को तथा समिति के निर्णयो को उन उचित कार्यालयो एव विभागो को भेजता है जिनसे उनका सम्बन्ध है। एक अच्छे कार्यालय का सगठन इसलिए जरूरी समझा जाता है ताकि वह विषयो को विभिन्न विभागो के बीच मे खो जाने से बचा सके और सूचना एवं प्रतिवेदन को वापिस समिति मे मगवाने का प्रयत्न कर सके ताकि समिति का क्लर्क आगे की बैठक के लिए कार्यक्रम बना सके। इसे वह कार्य अपने हाथ मे नहीं लेना चाहिए जो कि अन्य विभागो के अधिकार क्षेत्र मे आता है। उसे विभागीय स्टाफ के पर्यवेक्षक के रूप मे कार्य नही करना चाहिए फिर भी उसे समिति के कार्य से उत्पन्न सभी विषयो की देख-रेख करनी चाहिये। यदि अधिकारियो के बीच कोई मतभेद हो तो उसकी सूचना फौरन दी जानी चाहिए। सदस्यो को ऐसे कागज प्राप्त नही करने चाहिये जिनमे विरोध-पूर्ण प्रतिवेदन दिये गये है या उनके अधिकारियो द्वारा बैठको मे विरोधी परामर्श दिया गया है। समिति के क्लर्क को यदि किसी विषय मे कोई सन्देह हो तो उसे चाहिये कि वह परिषद के क्लर्क के सम्मुख उसे रख दे।

समिति का एक अच्छा क्लर्क वह माना जाता है जो अधिकारियो तथा सदस्यो के बीच के सम्बन्ध को अच्छी तरह से समझता है। उसके पास स्थायी आदेशो तथा परिषद के व्यवहार के सम्बन्ध मे विशेषज्ञता पूर्ण ज्ञान होना चाहिए, इसके अतिरिक्त समिति द्वारा संचालित किए जाने वाले कार्य की प्रकृति से भी वह परिचित होना चाहिए। विभिन्न कागजो को उसे केवल यह देखने के लिए नही पढना चाहिए कि वे व्यवस्था के अनुसार हैं या नही किन्तु यह भी देखना चाहिए कि उसमे किन-किन बातो का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है तथा वाद-विवाद मे कौन सी बात आकर्षण का विषय रही। समितिया प्रायः अपने सभी निर्णय स्वय नही लेती। क्लर्क को हमेशा यह ध्यान रखना चाहिये कि वह निर्णयो का अभिलेख रखने के लिए वहा है, न कि उनका आविष्कार करने के लिए। यदि समिति किसी निर्णय पर नहीं पहुची है या उसे स्पष्ट रूप से ज्ञात नही हो सका है कि वह निर्णय क्या है तो वह स्थिति को स्पष्ट करने के लिए सभापति को कह सकता है। कुछ विषयों मे उसे कुशलतापूर्वक यह देखना चाहिए कि समिति के सम्मुख एक

संक्षिप्त रूप में प्रस्ताव रखा जा सके जिसे सभापति आसानी से पढ़ सके और उसे समझने में कोई कठिनाई न हो।

संयुक्त समितियां
[Joint Committees]

स्थानीय सत्ताएं एक दूसरे के साथ मिल कर एक संयुक्त समिति बनाने को राजी हो सकती हैं; इसमें सम्बन्धित परिषद के प्रतिनिधि रहेंगे। इस प्रकार की संयुक्त समितियों को गठित करने का मुख्य लक्ष्य इस प्रकार की सेवाएं प्रदान करना है जिनमें भारी खर्च करना होता है तथा कोई भी एक सत्ता पूरी तरह से उसे सम्पन्न नहीं कर सकती। छोटी सत्ताएं सार्वजनिक यातायात की सेवाओं के लिए अथवा विकसित तकनीकी के लिए कोई भी कदम उठाने में उस समय तक असमर्थ रहती हैं जब तक कि वे एक साथ मिल कर कार्य न करें। ये सेवाएं किसी भी एक निर्णायक सत्ता द्वारा प्रशासित की जा सकती हैं तथा पड़ोसी सत्ताओं द्वारा इनके लिए इतना ही योगदान दिया जायेगा जितना कि वे इन सेवाओं का लाभ उठायेंगी। जब कभी एक संविधि द्वारा निर्मित समिति के कार्यों को सम्पन्न करने के लिए संयुक्त समिति का गठन किया जाता है तो इसके लिए उन विशेष प्रावधानों की आवश्यकता होती है जो संविधि द्वारा निर्मित समिति की स्थापना के लिए आवश्यक सुप्रा करते हैं। संयुक्त समितियों का प्रचलन स्थानीय स्तर पर इतना अधिक नहीं है। ये असल में वहीं प्रयुक्त की जाती हैं जहां आवश्यक होती हैं।

समितियों को हस्तांतरित शक्तियां
[The Delegated Powers of Committees]

समितियों के लिए शक्ति का हस्तांतरण अर्थात परिषद के नाम पर इसे कार्य करने का अवसर प्रदान करना स्वयं परिषद की स्वेच्छा पर ही निर्भर करता है। एक स्थानीय परिषद द्वारा अपनी समितियों को कितनी सत्ता हस्तांतरित की जाती है इसके सम्बन्ध में कोई एक जैसा व्यवहार नहीं है। परिषद को यह अधिकार है कि वह अपनी किसी भी शक्ति को समिति के लिए हस्तांतरित कर सके। यह जरूरी नहीं है कि जिस समिति को हस्तांतरण किया जा रहा है वह आवश्यक रूप से संविधि द्वारा निर्मित समिति ही हो। परिषद अपनी रेट लगाने की शक्ति एवं धन उधार लेने की शक्ति को हस्तांतरित नहीं कर सकती। कानून के अनुसार काउन्टी परिषद वर्ष भर में केवल चार बार ही मिलती है जबकि इसका मिलना जरूरी होता है। काउन्टी परिषद अपनी हस्तांतरण की शक्ति का प्रयोग व्यापक रूप से करती है। समितियों को नीति सम्बन्धित प्रश्नों पर निर्णय लेने की शक्ति भी हस्तांतरित कर दी जाती है। यह सामयिक रूप से अपनी प्रक्रिया से सम्बन्धित प्रतिवेदन परिषद को देती रहती है।

उपसमितियां
[Sub-Commitees]

स्थायी समितियां प्रायः सामयिक या स्थायी रूप से ही उपसमितियों की रचना कर लेती हैं। यदि कोई समिति यह चाहती है कि प्रत्यायोजन में

उसे प्राप्त शक्तियो का प्रयोग उसकी उपसमिति द्वारा किया जाये तो इसके लिए यह जरूरी है कि शक्तिया स्वय परिषद द्वारा ही उपसमिति को सौंप दी जायें। ऐसा इसलिए किया जाता है ताकि इस सम्बन्ध मे किसी प्रकार की कानूनी कठिनाई पैदा न हो। वैसे समितिया उपसमितियो की रचना करने की स्वतत्र शक्ति रखती हैं। उनके ऊपर परिषद का आदेश या निर्देश तो रहता ही है। इसे एक अत्यन्त महत्वपूर्ण नियम माना जाता है कि शक्ति को उस समय तक हस्तातरित नही किया जाये जब तक विशेष वैधानिक मान्यता उसके पीछे न हो। परिषद द्वारा जब किसी समिति को शक्तिया हस्तातरित की जाती है तो इसका यह अर्थ कदापि नही होता कि वह समिति इन प्राप्त शक्तियो को किसी ओर को हस्तातरित कर दे।

यह कहा जाता है कि उपसमितिया कायम रखने की प्रथा पर कुछ निगरानी रखी जानी चाहिए। कुछ समितियो मे यह प्रवृत्ति पाई जाती है कि वे छोटी-छोटी कठिनाई उत्पन्न होने पर भी उपसमितिया नियुक्त कर देती हैं। दूसरी ओर कई एक समितिया आवश्यकता होने पर भी उपसमितिया नियुक्त नही करती। ये दोनो ही प्रवृत्तिया उचित निर्देशन के बाद रोकी जा सकती हैं। उप-समितियो के सदस्य ऐसे होते है जो कि अपने कार्यों मे पूरी समिति की अपेक्षा अधिक रुचि लेते है, कुशलता के साथ करते हैं तथा कम समय मे ही सम्पन्न करने का प्रयास करते हैं। साधारणतया यह समझा जाता है कि यदि नित्य प्रति के कार्यों को सम्पन्न करने के लिए उपसमितियो की नियुक्ति कर दी जाये तो अधिक अच्छा रहे। कोई भी उपसमिति यदि पूरे वर्ष के लिए स्थायी रूप से नियुक्त कर दी जाये तो अधिक उपयुक्त रहेगी। स्थायी वार्षिक उपसमिति की रचना कई एक दृष्टिकोणो से सर्वोत्तम मानी जाती है। नित्य प्रति के कार्यों के अतिरिक्त कुछ विशेष समस्याये भी समय-समय उत्पन्न होती रहती हैं जिन पर विचार करने के लिए उपसमितियो की नियुक्ति करना उचित समझा जाता है। ये उपसमितिया स्थायी नही होनी चाहिए। विशेष समस्या का समाधान होते ही इनकी स्थापना का महत्व जाता रहता है। प्रमुख समिति द्वारा प्राय: ऐसे विषयो को उपसमिति मे विचारार्थ भेजा जाता है जो कि विशेष ज्ञान की अपेक्षा स्थिरता एव अधिक विचार की आवश्यकता रखते हैं। उपसमिति उन पर नियमितता एव शीघ्रता से विचार कर सकती है। उनके निर्णयो की अवहेलना प्राय: कम ही की जा सकती है। बड़ी योजनाओ तथा नीति-सम्बन्धी विषयो पर प्रमुख समिति ही भली प्रकार विचार कर सकती है।

उपसमिति का सचिवालय सम्बन्धी कार्य सम्बन्धित विभाग के एक अधिकारी द्वारा सम्पन्न किया जाता है। उपसमिति प्रमुख समिति को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है। इनके कार्यों मे उचित समन्वय भी आसानी से स्थापित किया जा सकता है। एक प्रमुख समिति मे उपसमितियो तथा उप-उप-समितियो की बनावट रह सकती है ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि परिषद मे उपसमितियो की रचना रहती है। इसी प्रकार शिक्षा समिति मे प्राथमिक, माध्यमिक एव प्राप्त व्यक्तियों की शिक्षा के लिए अनेक उपसमितिया गठित की जाती हैं। एक ऐसा कार्यक्रम होना चाहिए जिसके अनुसार पूर्ण

शिक्षा समिति को उसकी सभी उपसमितियों के प्रतिवेदन प्राप्त हो सके तथा यह समिति अन्य समितियों से विचार-विमर्श करने के बाद कोई निर्णय लेती है। इस प्रकार परिषद के सम्मुख प्रस्तुत करने से पूर्व विषय को प्रायः सम्बन्धित समितियों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

परिषद एवं समितियां
[Council and Committees]

स्थानीय सत्ता के अनेक कार्य एवं उत्तरदायित्व होते हैं अतः उसको अनेक समितियों एवं उपसमितियों के माध्यम से कार्य करना होता है। इन निकायों की रचना आंशिक रूप से निर्वाचित सदस्यों द्वारा की जाती है और आंशिक रूप से परिषद के बाहर वाले सदस्यों से। परिषद को इन छोटे निकायों के कार्यों के बीच समन्वय भी स्थापित करना होता है। साथ ही यह भी देखना होता है कि किसी समिति या उपसमिति द्वारा ऐसी नीति न अपनाई जाये जो परिषद की मूल नीति से भिन्न हो। उनके कार्य परिषद की सामान्य नीति में उपयुक्त बैठने वाले होने चाहिए।

समन्वय प्राप्त करने के लिए परिषद अनेक प्रकार के तरीके अपना सकती है। यह हस्तांतरित किये जाने वाले कार्यों को अच्छी प्रकार से पारिभाषित कर सकती है ताकि समिति को अपने कार्यों के बारे में किसी प्रकार का संदेह न रहे। यह भी स्पष्ट होना चाहिए कि जब कोई ऐसा विषय उपस्थित हो जाये जिससे एक से अधिक समितियों का सम्बन्ध हो तो क्या कदम उठाना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि स्नान समिति (Baths Committee) यह प्रस्ताव रखे कि स्कूल से बच्चों के जो दल स्कूल के घंटों में तरणताल को देखने आते हैं उनसे लिए जाने वाले पैसे बढ़ा दिए जायें तो यह स्पष्ट है कि इस प्रस्ताव से शिक्षा समिति भी प्रभावित होगी क्योंकि वही बढ़ी हुई दरों को देने के लिए उत्तरदायी होगी।

कुछ परिषदें परिषद की सेवाओं को सम्पन्न करने के लिए एक सामान्य उद्देश्य समिति (General Purpose Committee) नियुक्त करती हैं। यह समिति ऐसे विषयों पर भी विचार कर सकती है जिसका सम्बन्ध एक से अधिक समितियों से हो। यह समिति सम्बन्धित समितियों के दृष्टिकोण के बीच समन्वय स्थापित करती है। इस सामान्य उद्देश्य वाली समिति एवं अन्य समितियों के बीच समन्वय स्थापित करने के लिए कुछ परिषदें अन्य सभी समितियों के सभापतियों को इस नीति निर्मायक निकाय में नियुक्त कर सकती हैं।

समितियों को अपने कार्य का संचालन करने में पर्याप्त धन का उपयोग करना होता है। केवल कुछ ही समितियां ऐसी होती हैं जो अपने कार्यों को सम्पन्न करने के लिए धन का उपयोग नहीं करतीं। समिति को कोई रेट लगाने या कर संग्रह करने की शक्ति नहीं होती अतः परिषद् का समितियों पर पूरा वित्तीय नियंत्रण रहता है। काउन्टी परिषद् तथा राजधानी बारो परिषद् को एक वित्तीय समिति की स्थापना करनी होती है। अन्य स्थानीय सत्ताएं इस समिति की स्थापना करने के लिए बाध्य नहीं हैं वरन् वास्तविक व्यवहार में प्रायः वे सभी वित्तीय समिति का संगठन करती हैं। प्रत्येक समिति

आय तथा व्यय का वर्ष भर का अनुमान तय करती है। जहां आवश्यक समझती है वहा इनमे कमी करती हैं तथा परिषद के सम्मुख अपनी सिफारिश प्रस्तुत करती है। परिषद का यह वित्तीय नियत्रण समितियो के कार्यों पर देख-रेख करने मे तथा उन पर नियन्त्रण रखने मे अत्यन्त प्रभावशाली होता है।

स्टाफ समिति
[Staff Committee]

स्टाफ समितियों को स्थानीय सरकार के क्षेत्र मे एक महत्वपूर्ण नवीन विकास माना जाता है। ये समितिया सविधि द्वारा निर्मित (Statutory) नही होती वरन् इनको स्वेच्छा से (Permissive) कायम किया जाता है। हैडो विभागीय समिति (Hadow Departmental Committee) ने अपने १९३४ के प्रस्तुत प्रतिवेदन मे यह कहा था कि ऐसी समितिया स्थापित की जानी चाहिए जो कि स्थानीय पदाधिकारियो की भर्ती, प्रशिक्षण एव योग्यता आदि के बारे मे विचार कर सकें। सन् १९३४ के पूर्व भी बडी-बडी स्थानीय सत्तायें इस प्रकार की समितिया नियुक्त करने लगी थी। इस प्रकार की समिति की स्थापना के प्राय. वे सभी कारण थे जो कि वित्तीय समिति की स्थापना के कारण थे। जब परिषद के कार्यों का क्षेत्र बढा तो यह भी स्वाभाविक था कि स्थानीय सत्ता के कर्मचारियो की सख्या एव प्रकार भी अनेक हो जाते। इन सभी कर्मचारियो की स्थिति एव समस्याओ पर परिषद द्वारा पर्याप्त रूप से विचार नही किया जा सकता। प्रशासन को कुशल रूप से सचालित करने के लिए यह परम आवश्यक समझा जाता है कि कर्मचारियो के प्रबन्ध मे तथा अधिकारियो के कार्यों की विभिन्न शाखाओ में श्रेणी का निर्धारण करते समय पर्याप्त सावधानी बरती जाये। इस कार्य को यदि सूक्ष्म परीक्षण के बाद सम्पन्न किया जाना है तो यह जरूरी है कि इस कार्य के लिए एक अलग से समिति स्थापित की जाये।

वर्तमान स्टाफ समितिया यद्यपि कर्मचारियो से सम्बधित विभिन्न समस्याओ पर विचार करती है किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नही है कि उनकी नियुक्ति योग्यता, प्रशिक्षण आदि पर इस समिति का ही एकाधिकार हो जायगा। कुछ परिषदो का विचार है कि इस प्रकार का केन्द्रीकरण न तो आवश्यक है और न उपयोगी ही। स्टाफ समिति को मुख्य रूप से जिन कार्यों के लिए उत्तरदायी रखा गया वे हैं—वेतन, सेवा की शर्तें तथा श्रेणी विभाजन आदि के सबध मे साधारण योजना को लागू करना, स्थायी समिति की सिफारिश के अनुसार प्रत्येक विभाग की स्थापना की स्वीकृति देना, स्थायी समिति की श्रेणी के पुनर्विभाजन तथा नये पदो के सम्बन्ध मे प्रस्ताव पर विचार करना आदि। जब स्थायी समिति के हाथो मे नियुक्ति का काम सौप दिया जाता है तथा पदोन्नति एव श्रेणी के पुनर्विभाजन की सिफारिश वह करती है तो इनका सूक्ष्म परीक्षण स्टाफ समिति द्वारा किया जाता है।

कार्यों के इस विभाजन के विरुद्ध यह कहा जाता है कि जहा इस प्रकार कार्यों का विभाजन होता है वहा सतोषजनक परिणाम प्राप्त होने की गुजायश बहुत कम रह जाती है। कार्यों के बीच विभाजन रेखा भी

स्पष्ट रूप से नहीं सोची जा सकती क्योंकि कर्मचारियों की स्थिति एवं सेवा की शर्तें निरन्तर बदलती रहती हैं। यदि कार्यों का विभाजन भी उपयुक्त एवं स्थायी रूप से कर दिया जाये तो भी विचारों एवं विवरण को समिति से दूसरी समिति तक भेजे जाने में पर्याप्त समय लग जायेगा और यह प्रक्रिया अधिक सुविधाजनक भी नहीं रहेगी। कई लेखकों का विचार है कि कर्मचारियों के वेतन, भत्ते, सेवा की शर्तें, बहाली, प्रशिक्षण आदि से सबंधित बातों को यदि स्टाफ समिति के हाथों में सौंप दिया जाये तो अत्यन्त महत्वपूर्ण रहेगा तथा उपयोगी भी। वित्तीय समिति में अन्य समितियों के सभापतियों के उपस्थित होने की जो बात कही जाती है वह स्टाफ समिति के प्रसग में और भी अधिक उपयोगी रहेगी। स्थायी समितियों के सभापतियों को विभाग के कर्मचारियों के बारे में अधिक जानकारी रहती है। इस समिति में सतुलन स्थापित रखने के लिए कुछ तटस्थ सदस्यों को रखा जाना अत्यन्त आवश्यक है किन्तु इस बात का ध्यान रहे कि सदस्यों की सख्या बहुत अधिक न हो जाये।

कार्य समिति

[The Works Committee]

कार्य समिति की स्थापना एक अत्यन्त विवादपूर्ण विषय है। इस समिति का सम्बन्ध उन सेवाओं से होता है जिनको विभाग द्वारा मजदूरों या ठेकों के माध्यम से सम्पन्न किया जाता है। ये विभाग प्रत्यक्ष रूप से जनता की सेवा करते हैं। ये अन्य विभागों को केवल मत्रणा मात्र ही नहीं देते वरन् स्थायी समितियों के आदेश के अनुसार अपने उत्तरदायित्व को निभाते हैं। इस प्रकार कार्यों का अभियन्ता स्वास्थ्य समिति से निर्देश प्राप्त करेगा जब कि उसे भूगर्भ मलवाहिनी से सबधित कार्य को सम्पन्न करना हो। इसी प्रकार यदि उसके कार्य का सम्बध सड़कों से है तो वह सड़क समिति का परामर्श एवं निर्देश प्राप्त करेगा। स्थायी समितियों से यह आशा की जाती है कि वे इन कार्यों में भाग लेंगी तथा इस प्रकार वे अपने प्रशासकीय लक्ष्यों की प्राप्ति करेंगी। ऐसी परिस्थितियों में यह प्रश्न किया जाता है कि कार्य समिति को क्यों स्थापित किया जाये। उसे स्थापित करके हम किसी लक्ष्य को पूरा करना चाहते हैं। कार्य समिति के समर्थकों का कहना है कि कार्य समिति कार्यों को सचालित करेगी, ठेकों का प्रबन्ध करेगी तथा ठेके के काम में उत्पन्न प्रश्नों पर विचार करेगी। इन सब कार्यों को एक समिति ही अच्छी प्रकार से सम्पन्न कर सकती है क्योंकि यह विभिन्न क्षेत्रों में प्राप्त अनुभव में एक पारस्परिक सम्बन्ध कायम करके इन प्रश्नों के सम्बन्ध में पूर्ण अनुभव से काम ले सकते हैं।

सभापति, सदस्यों एवं अधिकारियों के बीच सम्बन्ध

[The relationship of Chairman, Members and Officials]

समिति के सगठन में उसके सभापति का स्थान मुख्य रूप से महत्वपूर्ण होता है। वह बैठकों की अध्यक्षता करता है और इस रूप में उसे परम्परागत रूप से, न्यायपूर्वक एवं निष्पक्षता के साथ कार्य सम्पन्न करने चाहिए। यदि वह किसी विशेष नीति में रुचि लेता हो तो वह और उसके

सदस्य इस प्रकार की नीति अपना सकते हैं कि उसे स्वीकार कर लिया जाये। जब एक समिति का सभापति अन्य समितियों के साथ सम्बन्ध रखता है अथवा परिषद से कोई बात करता है तो वह केवल उस समिति का ही प्रवक्ता नहीं होता वरन् उन सेवाओं के अधिकारियों का भी होता है जिनके साथ समिति का सम्बन्ध है। इस प्रकार प्रत्येक समिति में सम्बन्धों के तीन रूप हमारे सामने आते हैं —प्रथम है सभापति एवं अधिकारियों के बीच, दूसरा है सभापति एवं सदस्यों के बीच और तीसरा है सदस्यों एवं अधिकारियों के बीच।

समिति का सभापति अधिकारियों एवं समिति के बीच एक जोड़ने वाली कड़ी होता है। वह यह देखता है कि ये दोनों एक दूसरे को भली प्रकार समझ सकें। प्रत्येक बैठक से पूर्व सभापति को कुछ समय मुख्य अधिकारियों के साथ व्यतीत करना चाहिए। एजेन्डा को भली प्रकार पढ़ कर यह देखना चाहिए कि वह उसे समझ पाता है अथवा नहीं तथा प्रत्येक विषय पर लिये जाने वाले निर्णय के सम्बन्ध में वह स्पष्ट है अथवा नहीं। अधिकारियों को चाहिए कि वे एजेन्डा के पूरक के रूप में सभी आवश्यक लेख सभापति कोप्रस्तुत करें। इसका रूप सभापति की आदतों के अनुसार निर्धारित होगा। कुछ सभापति कठिन प्रश्नों पर मौलिक स्पष्टीकरण को प्रमुखता देते हैं जब कि अन्य लिखित को प्राथमिकता देते हैं।

स्थानीय सरकार की सफलता बहुत कुछ उसके अधिकारियों एवं सदस्यों के अच्छे सम्बन्ध पर निर्भर करती है। समिति के सदस्य यह आसानी से जान सकते हैं कि अधिकारियों के पास विशेषीकृत ज्ञान एवं अनुभव होता है। ऐसी स्थिति में समिति का बहुत कुछ कार्य इनके ही द्वारा सम्पन्न किया जाएगा। यह बहुत कठिन बात है कि सदस्य यह देख सकें कि अधिकारियों का मुख्य कार्य क्या है अथवा अधिकारी यह देख सकें कि निर्वाचित सदस्यों का महत्व क्या है। कुछ सदस्य मूर्ख तथा अज्ञानी होते हैं तथा वे उत्तरदायी अधिकारियों के कार्यों में हस्तक्षेप करते हैं। फिर भी अधिकारी को यह मान कर चलना चाहिए कि सारा संसार कुशल एवं सुसूचित लोगों से ही पूर्ण नहीं है और यद्यपि ग्राहक उपयुक्त नहीं है किन्तु फिर भी बाजार तो ग्राहकों पर ही निर्भर करता है। निर्वाचित सदस्य यदि योग्य नहीं हैं तो भी वे ही स्थानीय सरकार का मूल होते हैं। जब अधिकारी अधिक गहराई से सोचता है तो उसे ज्ञात होता है कि यदि उसकी विशेषज्ञता एवं साधारण सदस्य की विशेष योग्यताओं को मिला दिया जाये तो यह प्रशासकीय दृष्टि से उपयोगी रहता है।

एक व्यवसायिक प्रशासक अपने व्यवसाय से सम्बन्धित कुछ विशेषताओं का विकास कर सकता है। वह सामान्य लोगों की आदतों से हो ऊपर उठता है। वह जितना ऊपर उठता है उतना ही उसके श्वास लेने की हवा कम होती चली जाती है। वह चीजों को एकरूप देखना चाहता है तथा सदैव ही उचित कानूनों को लागू करना चाहता है। इस व्यवहार द्वारा वह पक्षपातपूर्ण व्यवहार की आलोचनाओं से ऊपर उठ जाता है किन्तु पूर्ण व्यवस्था की तलाश में वह कई एक समस्याएं भी पैदा कर देता है। परेशानी उस समय

उत्पन्न होती है जब कि साधारण सदस्य यह पाता है कि प्रशासकीय भवन आराम एवं सुविधा से युक्त उसके विचारों के अनुरूप नहीं है।

निर्वाचित सदस्यों के अन्य दो गुण होते हैं। एक उम्मीदवार बन जाने तथा चुनाव लड़ने मात्र से भी पर्याप्त शिक्षा प्राप्त होती है। एक सदस्य के रूप में वह अपने निर्वाचन क्षेत्र के लोगों के सम्पर्क में रहता है। वह यह जानता है कि साधारण लोग क्या चाहते है तथा क्या नहीं चाहते है तथा उनकी सहनशीलता की क्या सीमायें हैं। इस सम्बन्ध में आर० एम० जैक्सन महोदय का यह कहना उपयुक्त ही प्रतीत होता है कि यदि अधिकारियों एवं सदस्यों को एक साथ मिल कर अच्छी प्रकार कार्य करना है तथा प्रत्येक से उसका श्रेष्ठ कार्य प्राप्त करना है तो पारस्परिक सम्मान एवं अच्छे आचरण रहने चाहिए। समिति का सभापति इस स्थिति को प्राप्त करने की दिशा में बहुत कुछ कर सकता है।

समिति की बैठकों की प्रक्रिया औपचारिक नहीं होनी चाहिए। यद्यपि सदस्यों के व्यवहार पर थोड़ा नियन्त्रण अवश्य होना चाहिए। उनको अपने भाषणों में उपयुक्त तथा अपने व्यवहार में व्यवस्थित रहना चाहिए। समिति के सदस्य बोलते समय प्रायः बैठे ही रहते हैं। सभापति यह देखता है कि अधिकारियों को बोलने का पूरा अवसर प्राप्त हो सके। उसे पहले से ही यह ज्ञात कर लेना चाहिए कि अधिकारी बोलना चाहता है अथवा बैठक के दौरान उसे अनुमति दी जा सकती है अथवा नहीं। सदस्यों एवं अधिकारियों के बीच कभी-कभी मनमुटाव भी पैदा हो जाते हैं। ये प्रायः सदस्य की गलती से होते है। उनको स्टाफ पर नियन्त्रण की शक्ति दी जाती है किन्तु उन्हें यह भी समझना चाहिए कि यदि वे किसी से अच्छा काम लेना चाहते हैं तो उसके साथ अच्छा व्यवहार करें। कई एक सदस्यों के साथ कठिनाई यह होती है कि वे अपने आपको अनिश्चित समझते है तथा यह अनुभव करते हैं कि अधिकारियों द्वारा अपेक्षाकृत उनके ज्ञान के अभाव का लाभ उठाया जा रहा है। इस प्रकार के सदस्य आत्मस्वाभिमानी तथा गर्वीले होते है तथा अपनी स्वतन्त्रता दिखाने में सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। यदि एक समिति का सभापति अनुभवी है तो वह कई एक समस्याओं को आसानी से दूर कर सकेगा। इसके लिए वह परिषद के क्लर्क या सभापति का भी सहयोग प्राप्त कर सकता है।

इस सम्बन्ध में मुख्य समस्या यही होती है कि सदस्य गण अधिकारियों की स्थिति को किस प्रकार समझें। कुछ सदस्य यह मानकर चलते हैं कि अधिकारी परिषद के सेवक होते हैं तथा उनके साथ एक सेवक जैसा ही व्यवहार किया जाना चाहिए। यह दृष्टिकोण वकीलों का दृष्टिकोण है तथा गलत है। यदि सही दृष्टि से देखा जाये तो मुख्य अधिकारी व्यावसायिक

---

*"If officials and members are to work well together each getting the west out of each other, there must be mutual respect, and good manners. Committee chairmen can do a great deal to secure that state of affairs."
—*R. M. Jackson*, Op. cit., P. 76.

व्यक्ति होते हैं। इनके व्यावसायिक व्यवहार की एक आचरण सहिता होती है। सदस्यो को उनकी सलाह मानना उसी प्रकार जरूरी नही है जिस प्रकार कि वे अपने डाक्टर, वकील या अन्य व्यावसायिक व्यक्ति की सलाह मानने के लिए वाध्य नही होते। अधिकारी-गण को यदि अवसर प्रदान किया गया तो वे सहायता दे सकते हैं। अधिकारी परिषद के सेवक होते है न कि व्यक्तिगत सदस्यो। के इन अधिकारियो को आदेश दिये जा सकते हैं, उनके कार्यों की जाच की जा सकती है तथा उन पर अनुशासन रखा जा सकता है; किन्तु यह सब परिषद द्वारा अधिकृत उचित प्रक्रिया द्वारा ही सम्पन्न किया जा सकता है। समिति के सभापति को अधिकारियो की रक्षा करनी चाहिए क्योकि परिषद की बहस मे उनको बोलने का अधिकार नही होता। दूसरे, सभापति को अच्छे व्यक्तिगत सम्बन्धो की रचना के लिए सदैव ही प्रयत्नशील रहना चाहिए। इसके लिए कुशलता, सहानुभूति एव दृढ़ नेतृत्व की आवश्यकता रहती है।

9

समस्याएँ एवं भावी सम्भावना

[PROBLEMS AND FUTURE PROSPECTS]

इङ्गलैण्ड की स्थानीय सरकार की बनावट, अधिकार क्षेत्र, कार्य, आदि का अध्ययन करने के बाद यह आवश्यक हो जाता है कि हम इन विभिन्न विषयो में स्थानीय सत्ताओ द्वारा वहन की जाने वाली विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करें और इन समस्याओ की भूमिकाओ मे उसके भावी विकास की रूपरेखा निश्चित करे। वस्तु-स्थिति को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इङ्गलैण्ड की स्थानीय सरकार के प्रति आशावादी एव निराशावादी दोनो ही दृष्टिकोण अपनाये जा सकते हैं। फ्रैंक जेसप (Frank Jessup) के कथनानुसार स्थानीय सरकार अपने विकास मे एक आलोचनापूर्ण सोपान तक पहुच चुकी है जहा पर यह या तो व्यापक एव मानवीय तत्व बन सकती है पर इस रूप मे उस मार्ग की ओर सामूहिक नियमन के नये रूपो का उद्‌भव करेगी जिधर कि हम जा रहे हैं अथवा यह जल्दी ही समाप्त हो जायगी।* इन दोनो ही मार्गों मे से प्रथम मार्ग वाछित है किन्तु फिर भी यह कठिन है जब कि दूसरा मार्ग अवाछित होते हुए भी स्वाभाविक सा लगता है। यद्यपि स्थानीय सरकार की समस्याओ के बारे मे सामान्य रूप से कुछ भी कहना खतरे से खाली नही है क्योकि अनेक रूप होने के कारण इसके सम्बन्ध मे कोई सामान्यीकरण नही किया जा सकता। जो बात एक स्थान एवं एक समय के लिए सच है वह बात दूसरे स्थानो, दूसरे समयो के लिए आवश्यक रूप से सच नही हो सकती।

---

*"I believe that Local Government has reached a critical stage in its development, either it will become a vital and humanising element tempering the new forms of collective regulation towards which we are grouping our way, or it will soon disappear altogether."

—*Frank Jessup*, Problems of Local Government in England and Wales, Cambridge University Press, 1949, in Preface.

इंगलैण्ड की स्थानीय सरकार के सम्मुख विकास के इन क्षणों में एक खतरा पैदा हुआ है। इस खतरे के मुख्यतः दो रूप हैं—प्रथम यह कि स्थानीय सरकार अपने वर्तमान रूप में उन सामाजिक सुधारों को लाने में असमर्थ रहेगा जो कि इसे सौंपे गये हैं तथा जिन्हें प्राप्त करने के लिए पूरा देश प्रयत्नशील है। इनके परिणामस्वरूप सुधार की आशाएं मन्द पड जाती हैं अथवा समाप्त हो जाती हैं। दूसरे वर्तमान समय में सर्वाधिकारवादी राज्य की ओर जो समय का बहाव चला जा रहा है उसमें स्थानीय सरकार भी मिल सकती है और अन्तिम रूप में समाप्त हो सकती है। जिस प्रकार स्थानीय सरकार के मार्ग में ये दो खतरे हैं इसी प्रकार इसके सामने दो महत्वपूर्ण आशाएं भी हैं। प्रथम यह कि स्थानीय सरकार के द्वारा सामाजिक सुधार के कार्यक्रमों को कागजों से निकाल कर व्यवहार में क्रियान्वित किया जा सकता है। दूसरे उचित रूप से विकसित हो कर यह व्यक्तिवाद एवं समष्टिवाद के बीच का मार्ग प्रशस्त कर सकती है। छोटे समाज के राजनैतिक संगठन व्यक्ति के महत्व को नहीं भुला देते और उसे समूह के साथ पूर्णतः एकाकार नहीं कर देते और ऐसी स्थिति में वे स्वतन्त्रता एवं समानता के बीच सामञ्जस्य स्थापित करने का सफलतापूर्ण प्रयास करते हैं।

इंगलैण्ड की स्थानीय सरकार के पिछले सौ वर्षों का इतिहास देखने पर यह ज्ञात हो जाता है कि इसकी प्राप्तियां महत्वपूर्ण हैं। जन स्वास्थ्य, गृह-निर्माण, शिक्षा, पुलिस, आदि दर्जनों ही सेवाओं के क्षेत्रों में इसने जो विकास किये हैं उनको देखते हुए इसका महत्व भुलाया नहीं जा सकता। इतना होने पर भी इसका वर्तमान कार्य भी ऐसा है जिसे देख कर बहुत कम लोग सन्तोष की भावना व्यक्त कर पाते हैं। कई बार इसे गलत कारणों से आलोचित किया जाता है। आलोचना करने वाले प्रायः गलियों में चलने वाले और रेट देने वाले लोग होते हैं वे इसे रेट बढ़ जाने के लिए अथवा ऐसे कार्यों के लिए आलोचना का पात्र बनाते हैं जिनके लिए असल में स्थानीय सरकार उत्तरदायी नहीं है। जनता का ध्यान स्थानीय सरकार की ऊपरी कमियों की ओर जाता है और स्थानीय सरकार आजकल असल में जिन समस्याओं का सामना कर रही है उनकी ओर उसका ध्यान बहुत कम जाता है। स्थानीय सरकार द्वारा उठाई जाने वाली मुख्य समस्याओं को संक्षेप में दो प्रकार की माना जा सकता है। प्रथम, स्थानीय सरकार के यन्त्र का सञ्चालन करने के लिए निर्वाचित प्रतिनिधियों एवं अधिकारियों के रूप में पर्याप्त संख्या में उपयुक्त व्यक्तियों की तलाश और दूसरे, पर्याप्त वित्तीय स्रोतों की उपलब्धता। ये दोनों ही मूल समस्यायें हैं। इनके अतिरिक्त कुछ कम मौलिक समस्याएं भी होंगी हैं जो कि अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण नहीं होंगी। यदि स्थानीय सरकार की सेवाओं के क्षेत्र को न भी बढ़ाया जाए तो भी इसकी ये दो मौलिक समस्याएं हैं वे कई एक गम्भीर कठिनाइयां उत्पन्न करती हैं। यदि स्थानीय सरकार का कार्य क्षेत्र बढ़ाना हो तो सरकार को उन दोनों ही क्षेत्रों में शक्तिशाली बनाना होगा। यदि यह नहीं किया गया तो इनके सामाजिक सेवाएं विकसित होने के स्थान पर स्वयं स्थानीय सरकार व्यवस्था का नाश समाप्त हो जाएगी। सामाजिक सेवाओं का प्रशासन केन्द्रीय सरकार के हाथ में आ जाएगा और

स्थानीय सरकार केवल अपने ऐतिहासिक अस्तित्व की एक शक्तिहीन तस्वीर मात्र रह जायेगा।

स्थानीय सरकार की कीमत पर केन्द्रीयकरण की ओर प्रवृत्ति वर्तमान समय की एक विशेषता बन गई है। युद्ध से पूर्व राज्य व्यक्ति के जीवन में बहुत कम हस्तक्षेप करता था किन्तु युद्ध के बाद की परिस्थितियों ने उसके कार्यों में प्रसार ला दिया है। जब कभी इस केन्द्रीयकरण से पूर्ण प्रवृत्ति के प्रति प्रश्न किये जाते हैं तो इसे आत्मसन्तोषी अकल्पनाशील और साहस-विहीन व्यक्ति के प्रति क्रियावादी प्रवृत्तियों का प्रतीक माना जाता है। यह सच है कि इस प्रवृत्ति का विरोध करने वाले लोग प्रायः व हैं जो कि इसके कारण भाग्यहीन बन चुके है अथवा वैसे ही भाग्य के सताये हुए हैं। किन्तु दूसरी ओर जो लोग केन्द्रीयकरण के विरोध को बुरा बताते हैं वे सौभाग्यशाली हैं, वे कभी भी गन्दी बस्तियों में नहीं रहे, उनको रहने के स्थान का कभी अभाव नहीं हुआ वे कभी स्थायी रूप से भूखे नहीं रहे, उन्हें बेरोजगारी के प्रभाव का पता नहीं है, वे खतरनाक कार्य में रहने वाली असुरक्षा से परिचित नहीं हैं, वे शैक्षणिक अवसरों के अभाव में उत्पन्न होने वाली निराशा से परिचित नहीं हैं, उन्हें कभी यह अनुभव नहीं हुआ कि उनके बीमार बच्चे अथवा पत्नि उचित मेडीकल सहायता के अभाव में तड़फ रहे हैं। ये सभी परिस्थितियां कभी भी उनके अनुभव का विषय नहीं बनी और इसी कारण वे उन लोगों के प्रति कोई सहानुभूति नहीं रखते जिनके लिए ये समस्याएं प्रतिदिन के जीवन का एक भाग हैं। जिन लोगों पर उनका भाग्य हंसता है वे आसानी से उस खतरे को देख सकते हैं जो कि व्यक्ति के कल्याण के लिए राज्य के बढ़ते हुए हस्तक्षेप में उत्पन्न होता है।

यह कहा जाता है कि यदि एक ओर राज्य सर्वाधिकार और दूसरी ओर व्यापक बेरोजगारी, गन्दे घर, भूख तथा बीमारी में से चयन करना हो तो और ऐसी स्थिति में समाज के सुरक्षित स्तर वाले सम्पन्न लोग यदि अपने साथियों की वजह से सर्वाधिकारवादी वस्तुगत लाभों की अपेक्षा राज्य की हस्तक्षेप विहीनता से उत्पन्न आत्मिक स्वतन्त्रता को प्राथमिकता देते हैं तो वे या तो मनुष्य से अधिक हैं अथवा जानवरों से भी गए बीते हैं। एक तथ्य है कि व्यक्ति जिस प्रकार की सामाजिक सुरक्षा चाहते हैं वह उन क्षेत्रों को व्यापक करने पर ही प्राप्त हो सकेगी जिन पर कि व्यक्ति सामान्य कदम उठा सकें। राज्य एक ऐसा यन्त्र है जिसके माध्यम से बड़े विषयों में व्यक्ति सामान्य कार्य कर सकते हैं किन्तु राज्य के कार्यों में प्रसार के परिणाम-स्वरूप कई खतरे उत्पन्न हो जाते हैं। कभी-कभी इन खतरों के बारे में कई कारणों से अतिशयोक्ति भी कर दी जाती है किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि उनका अस्तित्व ही नहीं होता। राज्य का कार्य क्षेत्र बढ़ जाने से दूसरी सामाजिक एवं राजनैतिक संस्थाओं का कार्य क्षेत्र सीमित हो जाता है। चर्च, विश्वविद्यालय, व्यावसायिक संगठन आदि सभी शक्तिहीन अथवा पराश्रित बन जाते हैं। वर्तमान केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप राज्य को अनेक क्षेत्र में बिना किसी प्रतियोगी के रख दिया गया है। यह एकाधिकार कितना खतरनाक है यह एक वाद-विवाद का विषय है।

केन्द्रीयकरण के खतरों से आतंकित लोग जब इससे बचने के लिए उपाय सुझाने लगते हैं तो उनका कहना होता है कि केन्द्रीय सरकार के प्रशासकीय दायित्वों को स्थानीय सरकार को सौंप दिया जाए। इस सुझाव के प्रति दो प्रकार की आलोचनाएं प्रस्तुत की जाती हैं। ये दोनों ही आलोचनाएं स्थानीय सरकार को अकार्यकुशल मान कर चलती हैं। प्रथम आपत्ति करने वाले वे लोग हैं जिनका यह विश्वास है कि केवल शक्तिशाली केन्द्रीकृत सरकार ही सुधारों को लाने में आवश्यक गति प्रदान कर सकती है और वही इन सुधारों को कार्य रूप देने में निर्णयात्मक कदम उठा सकती है। इन लोगों का कहना है कि वे सन्तोषजनक परिस्थितियां जिनमें कि लोग रह सकें तथा अपनी जीविका कमा सकें, सरकार की प्रकृति एवं साधनों से सम्बन्धित किसी भी अच्छी विचारधारा से अधिक महत्वपूर्ण है। सन्तोषजनक परिस्थितियों को प्राप्त करने का केवल मार्ग यही है कि विशेषज्ञों का समूह उद्देश्यपूर्ण रूप से लगातार कार्य करता रहे। यद्यपि यह प्रजातन्त्रात्मक परिषद के प्रति उत्तरदायी रहेगा किन्तु इसे सार्वजनिक भलाई के लिए कुछ भी कर सकने की व्यापक शक्तियां होंगी। यह सिद्धान्त स्पष्ट रूप से इन शब्दों में प्रायः बहुत कम सामने आता है किन्तु यह सामाजिक प्रगति से सम्बन्धित आजकल के प्रायः सभी विचारों में निहित है। इस विचार को अप्रजातान्त्रिक कह कर अस्वीकार करना सरल अधिक है किन्तु लाभदायक कम।

यह सच है कि एक भूखा एवं गृह विहीन व्यक्ति सरकार की किसी भी ऐसी व्यवस्था को स्वीकार कर लेगा जो कि उसे भोजन और रहने का स्थान प्रदान कर सके। वह ऐसी प्रजातन्त्रात्मक सरकार के पीछे नहीं पड़ेगा जो उसकी समस्याओं को सुलझाने में असमर्थ रही हो। एक दूसरी आपत्ति प्रायः इस प्रकार की जाती है कि जब हम उन व्यापक शक्तियों के वितरण में स्थानीय सरकार का अधिक से अधिक प्रयोग करने का तर्क देते हैं जो कि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य ही राज्य सरकार के विषय हैं तो हमारा यह तर्क पूर्वकल्पित भूमि पर आधारित है और इस प्रकार के आधारों पर निश्चय ही एक आकर्षक सिद्धान्त बनाया जा सकता है। किन्तु जब हम स्थानीय सत्ताओं के वर्तमान वास्तविक कार्य का अध्ययन करते हैं तो हमारा यह सिद्धान्त खण्ड-खण्ड हो जाता है। दुर्भाग्य से यह सच है कि स्थानीय सरकार वर्तमान में जिस प्रकार कार्य कर रही है वह अनेक अपूर्णताओं से युक्त है। इस आपत्ति के विरुद्ध यह कहा जा सकता है कि मनुष्य द्वारा रचित सरकार का कोई भी यन्त्र पूर्णता को प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए वर्तमान व्यवस्था को केवल इसलिए घातक और खतरनाक बताना उचित नहीं रहेगा कि उसने कुछ गलतियां की हैं। स्थानीय सरकार को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है वे कई प्रकार की होती हैं। इनमें से कुछ का सम्बन्ध सरकारी कार्यों के वितरण से है, कुछ का स्थानीय वित्त से कुछ का स्थानीय सरकार की बनावट से और कुछ का स्थानीय सरकार के अन्य पहलुओं से है। इन समस्याओं का वर्णन निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है।

सरकारी कार्यों का वितरण

[The distribution of Government Functions]

जब व्यक्ति सामान्य क्रियाओं के लिए एक समूह की रचना करते हैं

तो उन समूह का आकार, क्षेत्र एवं संविधान उसके लक्ष्य के आधार पर ही निश्चित किये जाते हैं। सदियों तक यह माना जाता रहा है कि कुछ उद्देश्य जैसे विदेशी आक्रमण के विरुद्ध रक्षा, सशस्त्र सेना की रचना तथा मुद्रा विनियमन आदि को छोटी इकाइयों को नहीं सौंपा जा सकता। ये तो राष्ट्रीय स्तर की संस्था द्वारा ही सम्पन्न किये जा सकते हैं। इस प्रकृति के अनेक कार्यों को राष्ट्रीय स्तर की संस्था से नीचे की संस्था द्वारा सम्पन्न नहीं किया जा सकता क्योंकि उनमें सभी राज्यों अथवा इकाइयों के सहयोगपूर्ण कार्य की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए अणुशक्ति के नियन्त्रण को लिया जा सकता है। ये कार्य राष्ट्रीय स्तर पर भी सम्पन्न नहीं हो सकते। इनके लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास किया जाना जरूरी हो जाता है। यदि कोई लक्ष्य ऐसा है जिसे प्राप्त करने में केवल कुछ लोग ही रुचि ले रहे हैं तो इसका अर्थ आवश्यक रूप से यह कभी नहीं होता कि उनकी साधना के लिए छोटा संगठन तैयार किया जायेगा। यह एक अत्यन्त ही स्पष्ट सिद्धान्त है कि सरकार की प्रक्रिया एवं इकाई को सम्पन्न किये जाने वाले कार्य पर आधारित होना चाहिए किन्तु समस्या तब उत्पन्न हो जाती है जबकि इस सिद्धान्त का प्राय: उल्लंघन किया जाता है। इंगलैण्ड में सामाजिक सेवाओं को मुख्य रूप से चार वर्गों में विभाजित किया जाता है। इस विभाजन का आधार उनको सम्पन्न किये जाने का तरीका है। प्रथम वर्ग में वे सेवायें आती हैं जिनका उत्तरदायित्व पूरी तरह से केन्द्रीय सरकार पर ही आता है, उदाहरण के लिए बेरोजगारी सहायता एवं वृद्धावस्था की पेन्शन आदि।

प्रदान की जाने वाली सेवा की प्रकृति एवं प्रसार को विस्तार के साथ संसद के अधिनियम द्वारा अथवा विभागीय नियमन द्वारा निर्धारित किया जाता है। इन सेवा का संचालन या तो स्वयं सरकारी विभाग करता है अथवा सामयिक रूप से निर्मित एवं मंत्री के प्रति उत्तरदायी एक निकाय द्वारा किया जाता है। सेवा का प्रशासन करने वाला संगठन कितना केन्द्रीयकृत होगा, यह बात उस सेवा की प्रकृति पर ही निर्भर करती है। दूसरे वर्ग में वे सेवायें आती हैं जिनको केन्द्रीय सरकार द्वारा नियोजित किया जाता है किन्तु जनता द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में निर्वाचित स्थानीय सरकार द्वारा प्रशासित किया जाता है। उदाहरण के लिए पुलिस या शिक्षा सेवाओं का नाम लिया जा सकता है। इन सेवाओं के व्यवस्थापन एवं नियोजन सम्बन्धी कार्य, संसद तथा सरकारी विभागों द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं तथा स्थानीय प्रशासन केन्द्रीय पर्यवेक्षण के अधीन स्थानीय निर्वाचित निकायों को सौंप दिया जाता है। यह समझौतेपूर्ण व्यवस्थाएं प्राय: उन सेवाओं के बारे में पूर्णत: संतोषजनक सिद्ध होती हैं जिनको राष्ट्रीय रूप में नियोजित तथा संगठित किया जाना चाहिए किन्तु जिनके प्रशासन में अर्थात् वास्तविक क्रियान्वयन में कुछ स्वेच्छा की आवश्यकता होती है तथा केवल नियमों का पालन करना पर्याप्त नहीं समझा जाता।

तीसरे वर्ग की सेवाओं का नियोजन एवं प्रशासन दोनों ही कार्य स्थानीय सरकार द्वारा किये जाते हैं। अजायबघर एवं व्यावसायिक उद्यमें

को इस श्रेणी की सेवाओं में लिया जा सकता है। स्थानीय स्तर पर उनके नियोजन का अर्थ यह नहीं है कि स्थानीय सत्ता को उनके विषय में कार्य करने की पूरी स्वतन्त्रता रहती है क्योंकि इन सेवाओं को जब कभी सम्पन्न किया जाता है तो केन्द्रीय सरकार द्वारा निर्धारित सामान्य प्रक्रिया को अपनाना होता है। इन सेवाओं के सम्बन्ध में केन्द्रीय पर्यवेक्षण बहुत कम रहता है तथा सत्ता द्वारा व्यापक स्वेच्छा का प्रयोग किया जाता है। वही मूलतः यह निर्णय लेती है कि सेवा को किस रूप में प्रदान किया जाना चाहिए।

चौथे वर्ग में उन सामाजिक सेवाओं को लिया जाता है जिनको स्वेच्छापूर्ण संगठनों (Voluntary organisation) द्वारा सम्पन्न किया जाता है। यह सर्वविदित है कि सामाजिक सेवाओं के अनेक क्षेत्रों में स्वेच्छापूर्ण अभिकरण ही प्रथम प्रवर्तक रहे हैं। कुछ सेवाओं का संचालन आज भी उनके द्वारा प्रत्यक्ष रहकर ही किया जा रहा है किन्तु अन्य क्षेत्रों में केन्द्रीय अथवा स्थानीय सरकार ने उत्तरदायित्व सम्भाल लिया है। इनका स्वरूप कभी-कभी तो स्वेच्छापूर्ण संगठनों जैसा ही होता है किन्तु कभी-कभी पर्याप्त भिन्न होता है। सामाजिक सेवाओं में सदैव ही परिवर्तन करने की आवश्यकता रहती है। उनमें परिस्थितियों के अनुसार प्रयोग किये जाते रहते हैं। इन स्थितियों में स्वेच्छापूर्ण संगठनों का अस्तित्व इस बात का द्योतक है कि ये संगठन बदली हुई सामाजिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों के अनुरूप अपने कार्यों को बदलने की इच्छा रखते हैं।

सरकारी क्रियाओं के रूप में नियोजन एवं प्रशासन दो स्पष्ट श्रेणियां हैं, जिनको कि आसानी से पृथक-पृथक किया जा सकता है। यद्यपि इन दोनों के बीच निश्चित सीमा को परिभाषित करना बड़ा कठिन है। केन्द्रीय नियोजन सदैव ही स्थानीय प्रशासन के साथ अनुरूपता रखता है। सन् १६४४ के अधिनियम द्वारा यह व्यवस्था की गई थी कि स्थानीय शिक्षा की सत्ता को प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा के विकास के लिए विकास योजना प्रस्तुत की जानी चाहिए। जब शिक्षा मन्त्री उसे संशोधन के साथ या उसके बिना ही स्वीकार करले तो स्थानीय सत्ता को उसे कर्त्तव्य मान कर पूरा करना चाहिए। यह एक उदाहरण है जो कि स्थानीय प्रशासन को नियोजन के साथ एकरूप करने का प्रयास करता है तथा राष्ट्रीय मापदण्ड के साथ इसका कोई संघर्ष नहीं रहता। वर्तमान प्रवृत्तियां के अनुसार केन्द्रीय सरकार न केवल नियोजन में ही वरन् सामाजिक सेवाओं के वास्तविक प्रशासन में भी अधिक से अधिक भाग लेना चाहती है। स्थानीय सरकार की इकाइयां बड़ी होती जा रही हैं। केन्द्रीय एवं स्थानीय दोनों ही सत्ताएं उन उत्तरदायित्वों को सम्भालने की ओर प्रवृत्त होती जा रही हैं जो कि पहले स्वेच्छापूर्ण संगठनों को सौंप दिये जाते थे। सड़कों से सम्बन्धित प्रशासन का इतिहास इन प्रवृत्तियों का स्पष्ट उदाहरण है।

कुछ सेवाओं की प्रकृति ही ऐसी होती है जिनमें राष्ट्रीय एकरूप नीति अपनाना अनिवार्य सा बन जाता है। यदि वृद्धावस्था की पेन्शन को प्रत्येक कस्बे में अलग अलग प्रकार से रखा जाये तो अन्याय होने की सम्भावना रहती है। कुछ लोग 'अवसरों की समानता' के तर्क से बहुत कम प्रशा-

वित होते हैं, उनका यह कहना होना है कि विभिन्न काउन्टीज मे अलग-अलग उम्र के बच्चो के लिए स्कूल खोले जाने चाहिए। जब कुछ सामाजिक सेवाओं मे एक निम्नतर स्तर रखने की आवश्यकता होती है तो ऐसा करने के लिए राष्ट्रीय हस्तक्षेप जरूरी बन जाता है। एक क्षेत्र के स्वास्थ्य का प्रश्न केवल उस क्षेत्र की सीमाओ तक ही मर्यादित नही रहता, वरन् यह आस-पास के क्षेत्रो की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओ के साथ भी एकाकार हो जाता है। इसी प्रकार एक क्षेत्र का शैक्षणिक स्तर दूसरे क्षेत्र के शैक्षणिक स्तर पर भी पर्याप्त रूप से प्रभाव डालता है। एक स्थानीय सरकार का क्षेत्र बड़ा होना चाहिए अथवा छोटा यह एक विवाद पूर्ण प्रश्न है। असल में दोनो ही स्थितियो का अपना-अपना लाभ है। स्थानीय सत्ताओं का आकार उनके द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले कार्यो के आधार पर तय किया जाना चाहिए। दो विरोधी प्रवृत्तियो के बीच सतुलन स्थापित किया जाना अत्यन्त आवश्यक होता है। बड़ी इकाइयों को अधिक तकनीकी कार्यकुशलता के कारण और छोटी इकाइयो को जनता के साथ उनके निकट सम्पर्क के कारण पसन्द किया जाता है। इन दोनो प्रवृत्तियो का सतुलित रूप ही उपयुक्त रहेगा।

दो प्रकार की सामाजिक सेवाओ के प्रशासन मे लोचशीलता विशेष रूप मे उपयोगी मानी जाती है। प्रथम वे ऐसी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए सम्पन्न की जाती हैं जो कि देश के एक भाग से दूसरे भाग के बीच पर्याप्त भिन्नता रहती हैं तथा दूसरी वे कि प्रभाव की दृष्टि से वातावरण मूलक न हो कर व्यक्तिगत होती हैं। एक प्रसिद्ध कहावत के अनुसार जूता पहनने वाला ही यह भली प्रकार जानता है कि वह कहा चुभ रहा है। इसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि जो सेवायें स्थानीय परिस्थितियो के अनुसार स्वीकृत की जाती हैं उनके बारे मे स्थानीय जनता ही यह अच्छी प्रकार से जान सकती है। आवश्यकतायें क्या हैं? उनका समाधान किस प्रकार किया जा सकता है? यह धारणा सदैव ही सत्य सिद्ध नही होती क्योंकि अनेक बार बाहर का पर्यवेक्षक अधिक शीघ्र ही आवश्यकताओ का पता लगा लेता है तथा आवश्यक उपाय भी सुझा देता है। स्थानीय लोग प्राय: इतनी जल्दी यह सब नही कर पाते। बाहर के व्यक्ति द्वारा सुझाये गये उपाय आवश्यक रूप से श्रेष्ठ सरकार की साधना नही करते क्योकि श्रेष्ठ सरकार असल मे एक ऐसी चीज है जो केवल कुशल सरकार से भिन्न होती है। अच्छी सरकार प्रायः वह होती है जो कि लोगो की बुद्धि के साथ-साथ उनकी भावनाओ को भी प्रवृत्त कर देती है। फिर भी इसमें कोई शक नही है कि स्थानीय लोग अपनी विशेष आवश्यकताओ का निर्णय अधिक अच्छी प्रकार कर सकते हैं। अत: जिन सेवाओ मे स्थानीय आवश्यकताओ के अनुसार भिन्नतायें अभिव्यक्त होने की आवश्यकता हो उनको स्थानीय रूप से केवल प्रशासित ही नही किया जाना चाहिए किन्तु जहा तक सामान्य कल्याण अनुमति दे सकें, उनको स्थानीय रूप से ही सगठित एवं नियोजित किया जाना चाहिए।

स्थानीय सत्ताओ द्वारा सपन्न की जाने योग्य सेवाओ के एक अन्य समूह मे वे सेवायें आती हैं जिनका स्थान भिन्न आवश्यकताओ के अनुरूप ही नही

वरन् भिन्न व्यक्तियों के अनुसार भी समायोजन करना होता है। असल में इन सेवाओं की प्रकृति ही स्थानीय प्रशासन को आवश्यक बनाती है। स्थानीय एजेन्ट के कई रूप हो सकते हैं, जैसे—नागरिक सेवक, निर्वाचित सदस्य अथवा किसी स्वैच्छिक पूर्ण संगठन का अधिकारी। यह कहा जाता है कि जहां सेवाओं में केवल तकनीकी की कुशलता से कुछ अधिक की आवश्यकता हो या विनियमों को केवल यांत्रिक ढंग से लागू करने से अधिक की जरूरत हो, वहां व्यक्तिगत स्थितियों का समाधान करने के लिए विवेक प्रावधानों की स्थापना एवं स्वेच्छापूर्ण व्यवहार की आवश्यकता हो वहां सेवाओं को नागरिक सेवा के माध्यम से सम्पन्न करने की अपेक्षा स्थानीय सरकार के माध्यम से सम्पन्न करना अधिक उपयुक्त रहता। इसका अर्थ यह नहीं कि स्थानीय सत्ताओं के सदस्य नागरिक सेवकों की अपेक्षा अधिकारी अधिक जागरूक तथा मानवीय होते हैं किन्तु इसका मुख्य कारण यह है कि नागरिक सेवा प्रायः प्रशासन में उन तरीकों को अपनाती है जो कि सामान्य दृष्टिकोण अपनाते हैं तथा नियमों के एकरूप व्यवहार पर निर्भर करते हैं।

स्थानीय सरकार सेवा के राष्ट्रीय पहलू से बहुत कम सम्बन्ध रखती है; अतः वह एक समस्या के सम्बन्ध में विशेष दृष्टिकोण अपनाती है और उसको समाधान करने में सफल हो जाती है। यदि हम इनके पूर्ण अभिनय पर विचार करें तो नागरिक सेवा का तरीका न्यायविहीन कानून का तथा स्थानीय सरकार का तरीका कानून द्वारा अविनिर्धारित न्याय के प्रशासन का प्रतीत होता है। स्थानीय सत्ता द्वारा प्रशासित की जाने वाली जिन सेवाओं में स्वेच्छा की आवश्यकता पड़ती है उन पर पर्याप्त नियंत्रण रखे जाने की व्यवस्था भी की जानी चाहिए। यह नियंत्रण उस जनता का होगा जो कि स्थानीय प्रशासन के संचालन के व्यय का भार वहन करती है। यह कहा जाता है कि स्थानीय सरकार अनुकूलता बनाम एकरूपता एवं निश्चितता और अधिकारियों की स्वेच्छा बनाम लोकप्रिय नियंत्रण जैसे विरोधाभासों के लिए उपयुक्त प्रावधान करती है।* कार्यों के वितरण के ये सभी सामान्य सिद्धान्त अत्यन्त स्पष्ट हैं किन्तु इंगलैण्ड में विभिन्न केन्द्रीय एवं स्थानीय सरकार के विभिन्न अभिकरणों के बीच में संगठनात्मक एवं प्रशासकीय कार्यों के वितरण पर इनका बहुत कम प्रभाव है। वर्तमान व्यवस्था में कार्यों का जो वितरण किया गया है वह उलझनों के बाद तथा प्रायः अचेतन रूप में ही किया गया है। यह समय-समय पर लिए गये आकस्मिक निर्णयों का परिणाम है। उदाहरण के लिए माप और तोल का निरीक्षण (Inspection of weights and measures) एक ऐसी सेवा है जिसमें निष्पक्ष, अवैयक्तिक एवं एकरूप प्रशासन की आवश्यकता है किन्तु फिर भी इसे स्थानीय सरकार के हाथ में छोड़ दिया गया। दूसरी ओर अस्पतालों का प्रशासन एक ऐसी सेवा है जिसमें

* "Local Government offers a more promising resolution of the dilemmas of adoptability versus uniformity and certainty, and of official discretion versus popular control"

—Ibid, P. 25.

यथा सम्भव घनिष्टता एव व्यक्तिगतता को होना ग्रावश्यक है उसे केन्द्रीय सरकार को सौप-दिया गया है।

सामान्य सिद्धान्तो को गिना देना अत्यन्त सरल कार्य है किन्तु उनको, विशेष सामाजिक सेवाग्रो में लागू करना उतना ही कठिन है। यह कठिनाई उस समय ग्रौर भी अधिक बढ जाती है जब कि दो सिद्धान्त दो भिन्न दिशाग्रो की ग्रोर खीचते है। ग्रस्पताल सेवा को उदाहरण रूप मे प्रस्तुत किया जा सकता है। यह एक ऐसी सेवा है जिसको घनिष्टता एव व्यक्तिगतता के लिए स्थानीय स्तर पर प्रशासित किया जाना चाहिए किन्तु इस सेवा की विभिन्नता एव क्षेत्र के कारण इसको जनसख्या की बडी ईकाई पर प्रशासित करना जरूरी होता है।

वित्त सम्बंधी समस्यायें
[The Financial Problems]

स्थानीय सरकार का राजस्व ग्रनेक प्रकार की समस्यायें उत्पन्न करता है क्योकि यह इसके स्रोत अपर्याप्त हैं, इसकी प्रक्रिया दोषपूर्ण है, इसमे भूल की सम्भावना ग्रधिक रहती है तथा यह व्यावहारिक दृष्टि से उतना उपयोगी नही है। वास्तविक सम्पत्ति पर लिए जाने वाले रेट के चार्ज को स्वामी नही वरन् वह व्यक्ति देता है जिसने कि उस पर ग्रधिकार किया हुग्रा है। यह चार्ज स्थानीय सरकार के राजस्व का एक परम्परागत स्रोत है। इस स्रोत मे ग्रनेक निहित दोष होने के कारण ही इसको ग्रन्य प्रकार के स्रोतों से ग्रनुपूरित किया जाता है। इसी प्रक्रिया द्वारा ग्रभी तक स्थानीय सरकार का प्रशासन सचालित किया जाता रहा है किन्तु स्थानीय सरकार के कुल राजस्व पर पूरी तरह से विचार नही किया गया है ताकि बीसवी शताब्दी की ग्रावश्यकताग्रो को ध्यान मे रखते हुए इसमे परिवर्तन किये जा सकें। एक प्रभावशील तथा व्यापक स्थानीय सरकार के लिए ग्रधिक सतोषजनक वित्तीय व्यवस्था परम ग्रावश्यक है।

सत्रहवी शताब्दी मे स्थानीय सरकार के उत्तरदायित्व थोडे से थे। इनका निर्वाह करने के लिए भूमि एव चल सम्पत्ति पर लगाये रेट्स से प्राप्त राजस्व पर्याप्त होता था। सरकार के कार्य सामाजिक उपलब्धियो के प्रावधान से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित होने की ग्रपेक्षा नियमनकारी ग्रधिक थे। स्थानीय सरकार द्वारा सम्पन्न की जाने वाली सेवाग्रो मे वास्तविक सम्पत्ति के स्वामियो तथा ग्रधिकारकर्त्ताग्रों के हितो को ही मुख्य रूप से ध्यान मे रखा जाता था। १९वी शताब्दी मे सामाजिक सेवाग्रो का द्रुतगति से विकास हुग्रा जिसके परिणाम स्वरूप स्थानीय वित्त पर भारी वजन पड गया। इस शताब्दी के पूर्वार्ध में ही केन्द्रीय सरकार ने स्थानीय सरकार को सहायता देना प्रारम्भ कर दिया। शिक्षा के लिए २०००० पौण्ड का प्रथम ग्रनुदान सन् १८३३ में किया गया था किन्तु यह ग्रसल मे कुछ धार्मिक सस्थाग्रों के लिए ग्रनुदान था न कि स्थानीय सरकार को। प्रारम्भ मे सहायता ग्रनुदान का एक सीमित लक्ष्य था यह स्थानीय सत्ताग्रो को क्रियान्वित करने के लिए प्रोत्साहित करता था जो कि कम लोक प्रिय थी। सहायता ग्रनुदान की मात्रा भी धीरे धीरे बढती चली गई। पहले यह कुल व्यय का १/३ भाग थी किन्तु

८० वर्ष के बाद ही यह २/५ भाग हो गई। १६वीं शताब्दी के अन्तिम दिनों में केन्द्रीय सरकार को यह महसूस होने लगा कि वह सहायता अनुदान की मात्रा बढ़ा कर भी स्थानीय सरकार पर अपना नियन्त्रण रख सकेगी यह संदेह शील है। सन् १६२६ के अधिनियम ने सहायता अनुदान की एक ऐसी व्यवस्था का प्रारम्भ किया जो कि विशेष सेवाओं के लिए नहीं वरन् क्षेत्र में स्थानीय सरकार के सामान्य व्यय के लिए दी जाती थी।

यदि स्वास्थ्य मन्त्रालय यह अनुभव करे कि स्थानीय सत्ता अपने कर्त्तव्यों का पालन करने में असमर्थ रही है तो वह उसके सहायता अनुदान को रोक भी सकता था। इस अधिनियम के दो परिणाम हुए। इसने स्थानीय सरकार के विरुद्ध उद्योगों की सहायता की और इसने स्थानीय वित्तीय स्वतन्त्रता को कमजोर कर दिया। १६४८ के स्थानीय सरकार अधिनियम ने केन्द्रीय सरकार की सहायता के नये आधार का आकलन किया किन्तु इसने भी स्वास्थ्य मन्त्री को यह शक्ति प्रदान की कि यदि स्थानीय सत्ता कार्य कुशलता का एक निश्चित स्तर प्राप्त न कर सके तो उसके सहायता अनुदान को रोक दिया जाये। मन्त्री को अपना प्रतिवेदन संसद के सम्मुख रखना होता था और अनुदान में कमी केवल तभी की जा सकती थी जब कि कामन्स सभा एक प्रस्ताव द्वारा प्रतिवेदन को स्वीकार कर ले। इस अधिनियम ने केन्द्रीय सरकार को और अधिक सशक्त बना दिया। केन्द्रीय सरकार स्थानीय सत्ता को चाहे जैसे प्रभावित कर सकती थी तथा स्थानीय सत्ता की स्थिति केवल एक अनुचर की सी रह गई। सन् १६२६ के अधिनियम ने सरकारी अनुदान को समानता के आधार पर आकलित करने का प्रथम बार गम्भीर रूप से प्रयास किया। पहले अनुदान स्थानीय सत्ता के कुल व्यय का एक प्रतिशत मात्र होती थी। इस व्यवस्था का एक स्पष्ट लाभ यह था कि यह सरल थी। इसके द्वारा प्रगतिशील सत्ता का पक्ष लिया जाता था क्योंकि वह जितना अधिक खर्च करती थी उतनी ही अधिक उसको सहायता प्राप्त हो जाती थी। एक निश्चित अनुपात में धन को एकत्रित करने का दायित्व स्वयं सत्ता पर छोड़ दिया जाता था। सत्ता अपने हित के कारण ही मितव्ययतापूर्ण व्यवहार करने का प्रयास करती थी। केन्द्रीय सरकार को सेवा की गहरी छानबीन नहीं करनी होती थी। कुछ सेवाओं में अब भी प्रतिशतपूर्ण अनुदान की व्यवस्था जारी है। यह व्यवस्था स्थानीय सत्ताओं की आवश्यकता का कम ध्यान रखती है तथा उसके साधनों को सहायता का आधार बना कर चलती है।

सहायता अनुदान स्थानीय सरकार के संचालनार्थ अत्यन्त आवश्यक तत्व माना जाता है। सिडनी वेब (*Sidney Webb*) के कथनानुसार चार कारणों से सहायता अनुदान अपरिहार्य बन जाता है। प्रथम भार की असमानताओं को समानता के स्तर पर लाने के लिए, दूसरे, राष्ट्रीय सरकार के आवश्यक पर्यवेक्षण एवं नियन्त्रण के लिये। तीसरे, समाज के हित में अधिक वांछित व्यय को प्रोत्साहन देने के लिए और चौथे, संसद द्वारा प्रस्तावित राष्ट्रीय कम से कम स्तर को प्राप्त करने के लिए। सहायता अनुदान की व्यवस्था होने पर भी स्थानीय रेट्स से प्राप्त राजस्व स्थानीय सरकार के व्यय

के १/३ भाग से भी अधिक भाग की पूर्ति करता है। ऐसी स्थिति में स्थानीय सरकार केन्द्रीय सरकार का एक ऐजेन्ट मात्र बन कर नहीं रह जाती।

रेट व्यस्था से प्राप्त राजस्व की अपर्याप्तता इस व्यवस्था की आलोचना का मुख्य भाग है। रेट्स को समाज के केवल एक वर्ग पर ही लगाया जाता है। केवल वास्तविक सम्पत्ति के अधिकार कर्त्ता ही इसे देने के लिए उत्तरदायी होते है। अन्य प्रत्यक्षकारो से भिन्न रेट्स करदाता के साधनो से सम्बध नही रखती। एक बडे परिवार वाला गरीब व्यक्ति जिसने की सदस्यो की अधिक सख्या के कारण बडा मकान लिया हुआ है उस धनवान व्यक्ति की अपेक्षा अधिक रेट्स देगा जो कि एक छोटे घर मे रह रहा है। एक जैसे आकार के परिवारो मे भी रेट्स का भार गरीबो पर ही अधिक पडता है क्योकि वे ही अपनी आय का अधिकतर भाग रेट्स के रूप मे प्रदान करते हैं। रेट्स का भुगतान प्राप्त किये जाने वाले लाभ से भी सबध नही रखता। जो क्षेत्र कम सम्पन्न होते है वहा पर रेट्स का अनुपात अधिक होता है। ये क्षेत्र सम्पन्न निवासियो को अपनी ओर आकर्षित नही कर पाते। इस प्रकार गरीब लोग अपने भाग्य को परिवर्तित करने का अवसर ही नही रखते। गरीबी से गरीबी जन्म लेती है।

रेट्स व्यवस्था की आलोचनाओ मे सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह है कि मूल्याकन मे असमानता बरती जाती है। यदि एक ही जिले की एक जैसी सम्पत्तियो को अलग-अलग मात्राओ मे मूल्यांकित किया जाये तो स्पष्ट है कि अन्याय किया गया है। इस अन्याय का एक स्पष्ट प्रमाण यह है कि कोषाध्यक्ष द्वारा मिलने वाले सहायता अनुदान की मात्रा का निश्चय एक सत्ता की रेट योग्य सामर्थ्य के आधार पर किया जाता है। जो सत्ता अधिक रेट लगा सकती है उसको सहायता भी अधिक प्राप्त हो जाती है और जिसका राजस्व पहले ही कम है वह सहायता भी कम ही प्राप्त करेगा। सन् १९४८ के अधिनियम ने रेट योग्य मूल्यो को आकने के लिए कुछ तरीको का वर्णन किया था किन्तु यह अधिक सतोषजनक न रहा। यह विषय अत्यन्त तकनीकी है अतः इस पर विचार करने के लिए एक अलग वादविवाद की आवश्यकता है जो गहन होने के साथ-साथ विस्तृत भी होगा। निवास स्थान पर लगाई गई रेट्स की कई एक समस्याएँ होती है किन्तु वे समस्यायें अन्य प्रकार की सम्पत्ति पर विचार करते समय और भी अधिक हो जाती हैं। यह बहुत कठिन होता है कि किसी व्यक्ति को एक सडक से क्या लाभ हो रहा है या एक नहर से वह क्या फायदा उठा रहा है इसका मूल्याकन किया जा सके। ऐसे करते समय स्वेच्छा पूर्ण तरीके से ही काम करना होता है।

रेटिंग व्यवस्था के अतिरिक्त कुछ स्थानीय सत्तायें व्यवसायिक सेवाओ से भी राजस्व प्राप्त करती है। वैसे गैस, विद्युत एव अन्य कुछ सेवाओ का राष्ट्रीयकरण हो जाने से स्थानीय सत्ता के राजस्व का यह स्रोत कुछ मद्धम पड गया है। वर्तमान समय मे मुख्यत- इस समस्या पर विचार विमर्श किया जाता है कि इन सेवाओ की सख्या को बढाया जाये अथवा नहीं। यदि इन सेवाओ के द्वारा राजस्व को बढा कर रेट्स की मात्रा मे कमी की जाती है तो इसका अर्थ होगा कि व्यवसायिक सेवाओ के लाभ का फायदा सभी करदाताओं

को प्राप्त हो सकेगा अथवा इन सेवाओ का उपयोग इस प्रकार भी किया जा सकता है कि केवल उपभोक्ता ही इनसे लाभान्वित हो सके।

कभी-कभी यह सुझाया जाता है कि स्थानीय सरकार के राजस्व का उचित स्रोत स्थानीय आय-कर होगा। यह कर कई विचारकों द्वारा समर्थन का विषय बना है। इसका सबसे बडा लाभ यह है कि यह साधनों के साथ समायोजित हो जाता है। स्थानीय आयकर के प्रति की जाने वाली आपत्तियां भी स्पष्ट हैं। यह राष्ट्रीय वित्तीय नीति के साथ भी संघर्षपूर्ण सम्बन्ध रखती है। इसको एकत्रित करना महगा पडता है। जब राष्ट्रीय एव स्थानीय आयकर को मिला दिया जाता है तो करदाता पर भार अधिक बढ जाता है। उसकी आय का एक बहुत बडा भाग कर के रूप मे उससे ले लिया जाता है।

स्वास्थ्य मंत्रालय ने एक समिति का गठन किया जो स्थानीय राजस्व की समस्या पर विचार कर सके। इस समिति ने पर्याप्त विचार-विमर्श करने के बाद यह सुझाव दिया कि स्थान (Site) के मूल्य का भी कर लिया जाना चाहिए। इस सम्बंध मे एक समस्या यह उठ खडी होती है कि स्थान कर को विकास के लिए करो के साथ किस प्रकार समायोजित किया जायेगा। स्थानीय सरकार के राजस्व के सभी स्रोतो पर विचार करने के बाद यह कहा जा सकता है कि इसमे उत्पन्न समस्याओ के बारे मे कोई एक सुझाव प्रस्तुत नही किया जा सकता। जो भी सुझाव प्रस्तुत किया जायेगा वह नया दृष्टिकोण अपनाये बिना अनुपयुक्त रहेगा। एक परम्परागत विचार के अनुसार रेट्स से प्राप्त राजस्व स्थानीय सरकार को जायेगा और आय कर से प्राप्त या अप्रत्यक्ष करो से प्राप्त राजस्व केन्द्रीय सरकार को जायेगा। यह मान्यता इस तथ्य को भुला देती है कि सरकार का एव उसके राजस्व का पारस्परिक सम्बन्ध नामपूर्ण स्वामित्व का नही है वरन् यह एक प्रकार से राजस्व की सरक्षक (Trustee) होती है। नागरिक अपनी आय का एक भाग सामूहिक रूप से सरकार के प्रबन्ध के अधीन रखने को राजी हो जाते हैं। ऐसी स्थिति मे इस बात के लिए कोई कारण नजर नही आता कि आयकर से प्राप्त आय को स्थानीय सत्ता को क्यो ये सौंपा जाये तथा रेट्स से प्राप्त आय को केन्द्रीय सरकार के प्रबन्ध के अधीन क्यो न रखा जाये। जब स्थानीय सत्तायें केन्द्रीय पूल के राजस्व पर निर्भर करती हैं तो स्थानीय पहल एवं रुचि घातक रूप से प्रभावित होता है। जो सेवायें अनिवार्य नहीं है मूल्य को तथा अनिवार्य सेवाओ मे भी निश्चित दर से अधिक स्तर को प्राप्ति के मूल्य को स्थानीय सत्ताओ द्वारा प्रदान करना चाहिए। इस प्रकार स्थानीय जनता स्थानीय सेवाओं के प्रशासन से आवश्यक एवं प्रत्यक्ष रुचि लेगी। आवश्यक अनुपूरक आय को प्राप्त करने के लिए रेट्स व्यवस्था का संशोधन किया जा सकता है। ऐसा संशोधन करते समय प्रदान करने की योग्यता एवं प्राप्त लाभों के अनुपात को ध्यान मे रखा जायेगा तथा इस प्रक्रिया से स्थानीय भार को वहन करने के प्रयास को न्यायपूर्ण भी माना जा सकेगा।

इस सुझाव की कई आधारों पर आलोचना की जाती है। कहा जाता है कि कुछ क्षेत्र अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक धनवान होते हैं तथा वे अधिक श्रेष्ठ सेवाओं के भार को भी वहन कर सकते हैं। यदि अन्य क्षेत्रों जैसी ही सेवाओं का वे सचालन करेंगे तो उन पर कम खर्च आयेगा। दूसरी ओर अपेक्षाकृत निर्धन क्षेत्र सेवाओं का सचालन करते समय वित्तीय भार से दब जायेंगे। इस असमानता को दूर करने के लिए एक उपाय है कि सामाजिक सेवाओं से सम्बन्धित सभी चार्ज राष्ट्रीय कोष से लिए जायें, किन्तु यदि स्थानीय सत्ताओं से उनका वित्तीय उत्तरदायित्व छीन लिया जाय तो इसके कारण अन्य प्रकार का उत्तरदायित्व भी उन पर नहीं रह पायेगा। परिणामस्वरूप स्थानीय सरकार का भी लोप हो जायेगा। पूर्ण सामाजिक न्याय प्राप्त करने के लिए असमानता को पूरी तरह दूर करना होगा तथा स्थानीय पहल एव स्वेच्छा पर भी समाप्त प्राय हो जायेगी। इस विरोधाभास को दूर करने का कोई तरीका नहीं है। कुछ विचारक यह मानते है कि यदि सामाजिक न्याय की प्राप्ति के लिए स्थानीय सरकार को भी बलिदान करना पड़े तो कोई हर्ज नहीं है। दूसरी ओर अन्य विचारक न्याय की अन्य परिभाषा देते हैं। उनके कथनानुसार व्यक्ति को अपने भाग्य का निर्धारण करने की शक्ति प्राप्त हो जाये, वह स्वय ही अपनी विजय को प्राप्त कर सके तथा गलती करने के लिए भी वह स्वतत्र हो तो उसे और किस न्याय की जरूरत पड़ेगी।

जिन स्थानीय सेवाओं की केन्द्रीय पूल द्वारा वित्तीय व्यवस्था की जाती है वे राष्ट्रीय महत्व की होती हैं। इनके सचालन में केन्द्रीय सरकार रुचि लेती है तथा इनकी सुव्यवस्था के लिए वह स्थानीय सरकार के कार्यों पर नजर रखती है। वह वित्तीय दबावों का प्रयोग कर सकती है अर्थात केन्द्रीय कोषाध्यक्ष को भुगतान करने से मना कर सकती है। फ्रैंक जेसप का यह कहना सच है कि स्थानीय सरकार के वित्त की समस्या अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गई है। रेट व्यवस्था वर्तमान आवश्यकताओं को देखते हुए अपर्याप्त है तथा कार्य रूप में अन्यायपूर्ण है। राज्य की सहायता पर बढ़ती हुई निर्भरता की प्रवृत्ति के साथ ही स्थानीय स्वायत्तता की बढ़ती हुई कटौती की प्रवृत्ति भी बढ़ती जा रही है।* कोष की शक्ति जब ससद के हाथों में आ गई तो वह राज्य के कार्यों पर नियंत्रण करने लगी। इस प्रकार जब केन्द्रीय सरकार आर्थिक शक्तियों को अपने हाथ में केन्द्रीयकृत कर लेगी तो यह स्वाभाविक है कि स्थानीय स्वायत्तता धीरे-धीरे कम होती चली जायेगी।

*"The problem of Local Government finance has become crucial. The rates system is inadequate to modern needs and inequitable in its incidence, the trend towards greater dependence upon state subventions is accompained by a trend towards the curtailment of local autonomy.

—Ibid, P. 64.

स्थानीय सरकार की बनावट

[The Structure of Local Government]

स्थानीय सरकार का पूरा-पूरा उपयोग करने से सम्बंधित कोई भी तर्क उस समय तक अधिक उपयोगी नहीं रहेगा जब तक कि वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप स्थानीय सरकार की एक नई प्रभावशील व्यवस्था का प्रारम्भ किया जाये। स्थानीय सत्ता की इकाइयों की समस्या भी इस दृष्टि से अत्यन्त महत्त्व रखती है। स्थानीय सरकार की वर्तमान बनावट को बहुत कुछ असंतोषजनक माना जाता है। इसका विकास जिस अव्यवस्थित रूप में हुआ है उसमें ऐसा होना स्वाभाविक ही था। पेरिश तथा काउन्टीज दो ऐसी इकाइयाँ हैं जिनकी सीमायें थोड़ी ही परिवर्तित हुई हैं। इनका जन्म हजारों वर्ष पूर्व हुआ था। अपनी स्थापना के समय दोनों में से एक भी निकाय प्रतिनिधि स्थानीय सरकार के संचालन के लिए संगठित नहीं किया गया था। एक मुख्य रूप से धार्मिक इकाई थी जब कि अन्य न्यायिक एवं सैनिक। शहरी एवं देहाती जिले १६वीं शताब्दी के अन्तिम दिनों की उपज हैं। इसका सम्बन्ध स्थानीय सरकार की आवश्यकताओं से था। सन् १८३० से निरन्तर स्थानीय सरकार के कार्यों में वृद्धि होती चली गई। संसद ने अपने व्यवस्थापन द्वारा जब भी स्थानीय सरकार के कार्यों को बढ़ाया तो उसका लक्ष्य केवल अच्छी सरकार की स्थापना ही नहीं था। इसी प्रकार सीमाओं का परिवर्तन करते समय जनसंख्या सम्बंधी परिवर्तनों को ध्यान में नहीं रखा गया। यही कारण है कि *ब्रिटन (Brighton) तथा (Hove)* जैसे कस्बे यद्यपि एक ही साथ एक बड़ी शहरी इकाई में विकसित हुए हैं, किन्तु ये स्थानीय सरकार की अलग अलग इकाइयाँ हैं।

स्थानीय सरकार की बनावट के सम्बन्ध में समय-समय विचार किया जाता रहा है तथा अनेक सुझाव प्रस्तुत किये जाते रहे हैं। प्रत्येक नये कार्यक्रम का सुझाव देने वाले लोग प्रायः उसी प्रकार की सत्ता को एक आदर्श रूप मानते थे जिससे कि उनका स्वयं का सम्बन्ध था। सबसे अच्छा तरीका तो यह है कि पहले उस कार्य पर विचार किया जाये जिसे कि किया जाना है। उसके बाद उसके तरीके पर जिसके आधार पर उसे किया जाना है और उसके बाद यह देखना चाहिए कि क्या प्रशासकीय सुविधा एवं सरलता की दृष्टि से सर्व श्रेष्ठ सैद्धान्तिक तरीके में तथा बुद्धिपूर्ण व्यवहारिक तरीके में किसी प्रकार का समझौता किया जाना चाहिए। दृष्टिकोण का यह तरीका विभिन्न स्थानीय सत्ता की परिषदों को सुझाया जा सकता है। सुधार की समस्या पर उनका दृष्टिकोण उनके विभिन्न अनुभवों एवं इतिहासों से प्रभावित होना स्वाभाविक है।

स्थानीय सत्तायें कार्य एवं आकार की दृष्टि से पर्याप्त भिन्नतायें रखती हैं। कुछ स्थानीय सत्तायें एक विशेष लक्ष्य के लिए संगठित की जाती हैं जब कि अन्य सत्तायें अनेक लक्ष्यों की साधना के लिए संगठित की जाती हैं। आकार की दृष्टि से भी विभिन्न काउन्टीज के बीच पर्याप्त असमानतायें वर्तमान रहती हैं। फिर भी सभी काउन्टीज को अधिनियम द्वारा एक जैसी शक्तियां प्रदान की जाती हैं तथा एक समान कर्त्तव्यों का दायित्व सौंपा जाता

है। काउन्टी बारोज के बारे मे भी यह सच है। जब विभिन्न प्रकार की स्थानीय सत्ताओं के बीच कार्यों का वितरण किया जाता है तो यह सिद्धान्त अपनाया जाता है कि बस सभी आकार एवं साधनो की दृष्टि से एकरूप है। काउन्टी तथा काउन्टी बारोज का आकार बड़ा होता है अतः इसको मुख्य सेवाओं से सम्बन्ध रखना चाहिए। गैर-काउन्टी बारोज तथा शहरी एवं देहाती जिले छोटे होते है अतः इनको छोटी सेवाओं तक ही सीमित रखना चाहिए। यह सिद्धान्त तथ्यो के अनुरूप नही है।

सर्वोद्देशीय सत्ता [All Purpose Authority]—सर्वोद्देशीय सत्ता के पक्ष मे अनेक तर्क दिये जा सकते हैं। इंगलैण्ड में केवल काउन्टी बारोज ही इस प्रकार की सत्ता के उदाहरण कहे जा सकते हैं। अतः काउन्टी बारोज के लाभ इस प्रकार की सत्ता के लाभ बन जाते हैं। ऐसा होना पूर्णतः उचित नही है वरन् कभी-कभी तो इससे भ्रम भी पैदा होने का भय रहता है। सर्वोद्देशीय सत्ता के लाभ ये बताये जाते हैं—इससे स्थानीय सरकार की सेवाओं में एकरूपता स्थापित हो जाती है। जब अनेक सत्ताएं होती हैं तो उनके कार्यक्षेत्र के बीच संघर्ष भी उत्पन्न हो सकता है किन्तु सर्वोद्देशीय सत्ता मे यह खतरा नही रहता। यह असम्बद्ध क्रियाओं के विरुद्ध स्थानीय सरकार की एकहरी मान्यता को प्रोत्साहन देता है। सर्वोद्देशीय स्थानीय सत्ता में साधारण नागरिक यह अच्छी तरह समझता है कि वह कहां है तथा उसकी क्या स्थिति है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि उसको अपने कार्यों की साधना के लिए केवल एक ही सत्ता की ओर देखना होता है। इससे वह भ्रम मे पड़ने से भी बच जाता है। जब एक स्थानीय क्षेत्र मे कई सत्तायें बनादी जाती हैं तो उनके निर्वाचनो मे खड़े होने वाले उम्मीदवारों की संख्या बहुत कम रहती है। इन सदस्यो का स्तर भी अधिक ऊंचा नही रहता। सर्वोद्देशीय सत्ता रहने पर जब एक ही स्थानीय सत्ता रहती है तो चुनाव की प्रक्रिया भी अत्यन्त सरल हो जाती है। इन लाभो मे से कई तो ऐसे हैं जो कि व्यवहार मे नही वरन् केवल सिद्धान्त मे ही स्थित रहते हैं।

कई बार एक बड़ी सत्ता के कार्यों की जटिलता, प्रसार एवं प्रकार समितियों को सत्ता का हस्तांतरण अनिवार्य बना देती है तथा इससे इतना अधिक विभागीकरण स्थित हो जाता है कि एकरूप नीति को अपनाना कठिन हो जाता है। यदि वह अपनायी भी गई तो उसे लगातार क्रियान्वित करते रहना कठिन हो जायेगा। जब कभी बड़ी नीति के बारे मे महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित होते हैं तो सर्वोद्देशीय सत्ता मे हितो के गम्भीर संघर्ष को आसानी से मिटाया जा सकता है किन्तु जब कभी प्रशासकीय विभिन्नतायें उपस्थित होती हैं तो वे प्रायः बड़ी नीति से सम्बन्धित प्रश्नो पर नही वरन् छोटे एवं कम महत्व के विषयो पर उपस्थित होती हैं। इनको पहले से नहीं देखा जा सकता तथा स्थानीय सरकार की शक्तियो को एक ही सत्ता के हाथो मे केन्द्रित कर देने से भी इनको दूर नहीं किया जा सकता। असल मे इस प्रकार के मतभेदो एवं विभिन्नताओं को स्थानीय सरकार के यन्त्र मे सुधार करके दूर नही किया जा सकता। इसके लिए उन अधिकारियों के बीच बुद्धिपूर्ण सहयोग स्थापित करना होगा जिनके कार्यों के बीच संघर्ष

उत्पन्न होने की सम्भावना है। इनके बीच सहयोग स्वाभाविक रूप से स्थापित नही किया जा सकता क्योंकि ये अधिकारी विभिन्न सत्ताओं की सेवा मे रहते हैं। यह भी कहा जाता है कि सर्वोद्देशीय सत्ता के अधीन साधारण नागरिक की स्थिति का सुधारना सदेहजनक है क्योकि यहा अनेक सत्तायें तो नही होती किन्तु अनेक विभाग होते हैं और इन विभागों मे उसके भ्रमित हो जाने की सम्भावना पूरी तरह बनी रहती है।

सर्वोद्देशीय स्थानीय सत्ता के विरुद्ध एक मुख्य तर्क यह दिया जाता है कि स्थानीय सरकार द्वारा सम्पन्न की जाने वाली सेवायें अनेक प्रकार की होती हैं। उन सभी को एक ही सत्ता द्वारा नियन्त्रित किया जाना अनावश्यक ही नही हानिकारक भी है। ये सेवायें इतनी भिन्न-रूपी होती हैं कि एक क्षेत्र के लिए जो सेवायें उपयोगी तथा आवश्यक हैं वे दूसरे क्षेत्र के लिए अनावश्यक बन जाती है। कुछ सेवाओं को छोटे क्षेत्र या कम जनसख्या वाले समूह द्वारा अच्छी प्रकार सम्पन्न किया जा सकता है जब कि अन्य के लिए व्यापक क्षेत्र एव बडी जनसख्या वाले समूह की आवश्यकता होती है। सर्वोद्देशीय सत्ता का यह अन्तर्निहित दोष काउन्टी बारोज पर लागू नही होता क्योंकि इसका क्षेत्र इतना छोटा होता है कि पारस्परिक सम्बन्ध को कायम किया जा सकता है किन्तु इसकी जनसख्या पर्याप्त बडी होती है, इसलिए यह अधिकाश सेवाओं को सम्पन्न कर सकता है।

एडहाक सत्ता [Adhoc Authority]—सर्वोद्देशीय सत्ता की ठीक विरुद्ध प्रकृति वाली एडहॉक सत्ता होती है। यह सत्ता केवल एक ही विशेष उद्देश्य की साधना के लिए स्थापित की जाती है तथा उस लक्ष्य के अनुरूप ही इसको ढाला जाता है। बाहरी विचार-विमर्श द्वारा इसको बदलने की आवश्यकता नही रहती। इस प्रकार की इकाई को सगठित करने के लिए उस विशेष सेवा की आवश्यकताओं को ही ध्यान मे रखा जाता है अन्य किसी बात को नहीं। जब इस प्रकार की सत्ता के लिए होने वाले निर्वाचनों में व्यक्ति उम्मीदवार बनते है तो वे इस सत्ता द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले कार्यों मे विशेष रुचि रखने के कारण तथा उससे सम्बन्धित ज्ञान रखने के कारण ही ऐसा करते हैं। दूसरी ओर सर्वोद्देशीय सत्ता के सदस्यों को सभी व्यवसायों का जानकार (Jacks of all trades) होना चाहिए। वर्तमान समय में शुद्ध रूप से एडहॉक सत्ता की रचना करना लोकप्रिय नहीं है।

एडहॉक सत्ताओं के आलोचकगण इनको विप्लवयुक्त एवं अकार्यकुशल स्थानीय सत्ता का प्रतीक बताते हैं। १६वीं शताब्दी के मध्यकाल मे इन्हीं कारणों से इनका बहिष्कार किया गया था। यद्यपि उस समय की अकार्यकुशलता पूरी तरह से स्थानीय सरकार के दोषपूर्ण ढन्त्र पर ही आधारित नही थी किन्तु फिर भी यह सच है कि एडहॉक सत्ताओं की व्यवस्था को सचालित किया जाना कठिन होता है। प्रत्येक कार्य के लिए अलग से स्थानीय सत्ता की स्थापना करना कठिन तथा उलझनपूर्ण रहेगा। अनुभव यह भी बताता है कि सभी स्थानीय सत्ताओं मे रखे जाने के लिए उचित एवं योग्य स्वय सेवक भी नही मिल पायेंगे। निर्वाचन व्यवस्था इतनी जटिल हो जायेगी कि साधारण मतदाता एक प्रकार से भूलभुलैया मे पड़ जाता है। यह

सच है कि सभी चुनावों को एक ही साथ कराया जा सकेगा किन्तु इस व्यवस्था मे जो कठिनाइया उत्पन्न होगी उनके कारण इसे अपनाने का साहस कोई भी नही कर पाता।

सर्वोद्देशीय सत्ता एवं एडहॉक सत्ता दोनो ही अतिशय के दो किनारे हैं। दोनो ही किनारे के अपने दोष हैं। वर्तमान व्यवस्था को कोई भी सतोष-जनक नही बताता किन्तु इसे सुधारा किस प्रकार जाये, इस सम्बन्ध मे कई सुझाव समय-समय पर रखे जाते रहे हैं। सन १९४५ का श्वेत पत्र, सीमा आयोग का प्रतिवेदन आदि को अधिकारी पक्ष के सुझाव कह सकते हैं। राजनैतिक दलो या स्थानीय सरकार से सम्बन्धित सस्थाओ द्वारा भी समय-समय पर ये प्रस्ताव रखे गये हैं। गैर-अधिकारी प्रस्तावो मे से जो प्रकाशित हो चुके हैं वे नगर निगमो की सस्थाओ, मजदूर-दल तथा स्थानीय सरकार के अधिकारियो की राष्ट्रीय सस्था द्वारा रखे गये हैं।

नगर निगमो के सघो का एक शक्तिशाली वर्ग यह चाहता है कि स्थानीय सरकार को सर्वोद्देशीय सत्ताओ के आधार पर सगठित किया जाना चाहिए। इसका क्षेत्र आवश्यक रूप से बडा होगा क्योकि कुछ लक्ष्यो की साधना के लिए सत्ता का क्षेत्र बडा होना जरूरी हो जाता है। सर्वोद्देशीय सत्ता का कम से कम आकार पहले ही निर्धारित कर दिया जाता है। मजदूर दल की योजना द्वि-सूत्री योजना थी। इसमे प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित क्षेत्रीय एव क्षेत्र परिषदे (Regional and Area Councils) रखी गई। यह योजना शहरो मे स्थानीय सरकार के वर्तमान सगठन से पूर्णतः भिन्न थी क्योकि इस समय कार्यो को काउन्टी परिषद तथा बारो या शहरी जिला परिषदो द्वारा सम्पन्न किया जाता है।

इस सम्बन्ध मे सन् १९४५ मे प्रकाशित श्वेत-पत्र ने अपने सुझाव प्रस्तुत किये। इसमे कहा गया था कि कम से कम वर्तमान मे बनावट के रूप को परिवर्तित करना अनावश्यक है तथा अवांछित भी। विश्व-युद्ध के बाद जो पुनर्निर्माण के कार्य आवश्यक थे उनको सम्पन्न करने के लिए स्थानीय सरकार मे किये गये क्रान्तिकारी सुधार एक बाधा सिद्ध होगे। श्वेत-पत्र मे यह स्वीकार किया गया कि कुछ सेवाओ के सचालन के लिए काउन्टी या काउन्टी बारो से भी बडे क्षेत्रो की आवश्यकता होती है। श्वेत-पत्र ने सुझाया कि इन सेवाओ पर विचार करने के लिए सयुक्त मण्डल या सयुक्त समितियां गठित की जानी चाहिए। इसके लिए पर्याप्त परम्परायें भी विद्यमान हैं। यह माना गया कि कई एक सत्तायें अपने कार्यो को सम्पन्न करने मे अत्यन्त छोटी हैं। अतः स्थानीय सरकार की वर्तमान सीमाओ को बदला जाना चाहिए।

सीमा परिवर्तन का कार्य अत्यन्त धीमी गति से न हो इसलिए यह उपयोगी रहेगा कि एक स्थायी सीमा आयोग स्थापित कर दिया जाये। इसे किसी भी स्थानीय सत्ता के स्तर एव सीमाओ मे परिवर्तन करने का अधिकार हो तथा कुछ मामलो मे यह ससद की स्वीकृति प्राप्त करले। ससद द्वारा इन सिद्धान्तो को स्वीकार कर लिया गया तथा सन् १९४५ के स्थानीय सरकार

अधिनियम में इनको अभिव्यक्ति प्रदान की गई। अधिनियम ने एक आयोग की रचना की जिसमे कि पांच सदस्य होते हैं। इस आयोग को स्थानीय सत्ताओ की सीमायें एवं स्तर बदलने की शक्ति दी गई ताकि स्थानीय सरकार की सभी सत्ताओ को व्यक्तिगत रूप से एवं सामूहिक रूप से प्रभावशील तथा सुविधाजनक बनाया जा सके। आयोग किसी भी स्थानीय सत्ता पर पृथक अकेले रूप मे विचार नही करता था वरन् यह भी देखता था कि यदि इसकी सीमाओ में परिवर्तन किया गया तो उसका अन्य सत्ताओं पर क्या प्रभाव पड़ेगा। इन सत्ताओ को समस्यायें प्रायः परस्पर सम्बद्ध होती हैं तथा एक की क्रियाओ का प्रभाव दूसरे पर अवश्य पडता है। काउन्टीज तथा काउन्टी बारोज से सम्बन्धित आदेशो को ससद के सामने रखना होता था किन्तु अन्य सो मामलो मे आयोग का निर्णय अन्तिम रहता था। लन्दन क्षेत्र को आयोग की दृष्टि से अलग रखा गया क्योंकि यह कई एक विशेष समस्यायें प्रस्तुत करता है तथा इस पर अलग से विचार किया जाना जरूरी हो जाता है।

सीमा आयोग (Boundary Commission) ने अपना प्रथम प्रतिवेदन अप्रेल १६४७ मे प्रसारित किया। इसमें बनावट सम्बन्धी सुधारो पर कुछ रोचक आलोचनायें की गई थी। काउन्टी बारोज की समस्याओ पर विशेष ध्यान दिया गया। काउन्टी बारोज की सीमाओ मे परिवर्तन करने के लिए जो सामान्य सुझाव दिये गये थे उनको तीन शीर्षको मे विभाजित किया जा सकता है। प्रथम, अतीत की नीति के अनुरूप काउन्टी बारोज मे सीमित रूप से प्रसार कर दिया जाये। दूसरे, काउन्टी के कुछ भागो मे काउन्टी बारोज का ठोस खण्ड बना कर काउन्टी बारोज का अधिक प्रसार कर दिया जाये। तीसरे, नये काउन्टी क्षेत्रो की रचना जिसमें कि सभी वर्तमान काउन्टी बारोज अपना काउन्टी बारो का स्तर छोड़ देंगे

इन सुझावो मे से दूसरे नम्बर का सुझाव एक वर्ग के दृष्टिकोण के अनुरूप था। नगरनिगमों का सघ इसी रूप मे सोच रहा था तथा तीसरा सुझाव कुछ-कुछ मजदूर दल के अनुरूप था। आयोग का दूसरा प्रतिवेदन अप्रेल, १६४८ में प्रकाशित हुआ था। इसने श्वेत-पत्र की इस मूल धारणा की ही आलोचना की कि वर्तमान काल स्थानीय सरकार की रचना मे सुधार करने का काल नही है। इस प्रतिवेदन मे कहा गया कि आयोग ने दो वर्ष के अपने जीवन काल में एक भी ऐसा आदेश प्रसारित नही किया जो कि स्थानीय सरकार की वर्तमान सीमाओ मे कुछ परिवर्तन करता हो। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि सीमाओं एवं कार्यों के बारे मे अलग-अलग विचार करना मूर्खतापूर्ण है। सीमा आयोग का कार्य क्षेत्र केवल सीमाओ तक ही मर्यादित था वह कार्यो के सम्बन्ध मे विचार नही कर सकता था। अतः व्यवस्थापिका से इस आयोग का अधिकार क्षेत्र बढ़ाने के लिए कहा गया।

आयोग के द्वितीय प्रतिवेदन ने स्थानीय सरकार को कमजोरियो का विश्लेषण किया। आयोग की मुख्य-मुख्य सिफारिशें निम्न प्रकार थी।

१. स्थानीय सरकार की इकाइयां तीन प्रकार की होनी चाहिए— काउन्टीज, काउन्टी बारोज तथा काउन्टी जिले (सभी गैर-काउन्टी बारोज, शहरी जिले एवं देहाती जिले) इसी श्रेणी म आजाते हैं।

२. इंगलैण्ड तथा वेल्स को नयी काउन्टीज में विभाजित कर दिया जाना चाहिये। उनमें से अधिकांश को दो सूत्रीय व्यवस्था के अनुसार प्रशासित करना चाहिए किन्तु कुछ एक सूत्र की सत्तायें भी हो सकती हैं।

३. काउन्टी बारोज (सामान्यतः ६०,००० से २००,००० तक की जनसंख्या वाले) को अधिकांश उद्देशीय सत्तायें होना चाहिए। इनको काउन्टी प्रशासन का ही एक भाग होना चाहिए जब कि ये कुछ विशेष सेवाओं का संचालन करें। उदाहरण के लिए पुलिस या अग्निरक्षा सेवायें, शहर नियोजन आदि। इसके अतिरिक्त पशुओं की बीमारी, स्वीकृत स्कूल आदि मामलों में, जिनमें से कोई भी शहर की सरकार के लिए महत्व नहीं रखता, फिर भी उन्हें काउन्टी के एक भाग के रूप में ही कार्य करना चाहिए।

यद्यपि इस आयोग ने यथासम्भव एक राय स्थापित करने का प्रयास किया तथा इसको कुछ सिफारिशों में समझौते की लगन भी प्राप्त होनी है किन्तु प्रतिवेदन को वादविवाद के लिए प्रोत्साहन देना ही था। उदाहरण के लिए काउन्टी परिषदों को प्रस्तावित अधिकांश उद्देशीय काउन्टी बारोज में तथा बहुउद्देशीय काउन्टी बारोज में कोई अन्तर नजर नहीं आया।

सीमा आयोग ने सन् १९६७ के अपने प्रतिवेदन में यह बताया कि जो बात एक काउन्टी या काउन्टी बारो के लिए सच है वह आवश्यक रूप से अन्य के लिए सच नहीं होगी। अतः जब स्थानीय परिस्थितियां इस बात की मांग करें तो उनको अपने मूल सिद्धान्तों को छोड़ देना चाहिए। आयोग ने यह भी सुझाया था कि कम साधन स्रोतों वाले कुछ काउन्टी जिलों को अपने कुछ कार्य काउन्टी को सौंप देने चाहिए जबकि शक्तिशाली काउन्टी जिलों को कुछ शक्तियां काउन्टी से हस्तांतरण के रूप में प्राप्त करनी चाहिए।

इस प्रकार आयोग ने यह माना कि कार्यों पर स्थानीय सरकार की बनावट के एक अविभाज्य भाग के रूप में विचार करना चाहिए। दूसरे, एक ही श्रेणी में आने वाली सभी सत्तायें आवश्यक रूप से एक जैसी शक्तियों का उपभोग नहीं करेंगी। इतने पर भी लगता था कि आयोग के दृष्टिकोण उसके पुराने अधिकार क्षेत्र के रंग में रंगे हुए थे। यदि आयोग सीमा एवं स्तर (Status) की अपेक्षा, कार्यों से ही विचार करना प्रारम्भ करता तो उनकी सिफारिशों का रूप ही दूसरा होता।

लन्दन अपने आप में एक भिन्न ही समस्या है। लन्दन के एक स्वतन्त्र नगर के रूप में रहने से समस्यायें और भी उत्पन्न हो जाती हैं। लन्दन काउन्टी परिषद तथा राजधानी बारो परिषदों के बीच शक्तियों के उचित वितरण की समस्या तथा उनके बीच उचित सम्बन्ध की समस्यायें अत्यन्त गम्भीर हैं। लंदन महान की भी अनेक समस्यायें हैं क्योंकि इसमें इकाइयां शामिल हैं। इतने निवासियों के लिए स्थानीय सरकार पद का प्रयोग करना शब्द का गलत प्रयोग है किन्तु कुछ सामाजिक सेवाओं के नियोजन के लिए लन्दन महान (Great London) को स्थानीय इकाई माना जाता है। एक सम्भव सरकारी रचना मुख्य रूप से लन्दन महान के लिए एक क्षेत्रीय सत्ता (Regional Authority) होगी। समस्त क्षेत्र (Region) को चार या पांच क्षेत्रों में बांट दिया जायेगा जो कि एक प्रकार से काउन्टीज के अनुरूप होंगे। काउन्टीज

को आगे भी बारोज में उपविभाजित कर दिया जायेगा और अन्त मे बारोज को भी वार्डों मे बाँट दिया जायेगा। ये वार्ड केवल चुनाव की दृष्टि से ही नही वरन् स्थानीय सरकार को इकाइयों के रूप मे भी महत्वपूर्ण होंगे। क्षेत्रीय स्तर (Regional level) की लन्दन सरकार केन्द्रीय सरकार पर अपरिहार्य रूप से प्रभाव रखती है। यह राष्ट्रीय दृष्टि से भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी कि स्थानीय दृष्टि से।

इस सम्बन्ध मे मूल बात यह है कि अब भी कभी स्थानीय सरकार की इकाइयो पर विचार किया जाये, इन पर व्यावहारिक रूप से विचार किया जाना प्रारम्भ किया जाना चाहिए न कि पूर्व अनुभव की मान्यताओं या धारणाओं से।

स्थानीय सरकार में राजनीति
[Politics in Local Government]

स्थानीय सरकार की प्रकृति राष्ट्रीय एव राज्य सरकार की प्रकृति से पूरी तरह भिन्न होती है। यहा हम उन सिद्धान्तो एव व्यवहारो को अपना भी सकते हैं और नही भी अपना सकते जो कि राष्ट्रीय राजनीति के अविभाज्य अग माने जाते हैं। इस प्रकार के प्रश्नो पर विचारको में पर्याप्त मत-भेद है। दलीय राजनीति का स्थानीय सरकार मे महत्व है अथवा नहीं है, इसे यहां आकर सक्रिय रूप से योगदान करना चाहिए अथवा नही, यह भी एक उलझा हुआ प्रश्न है। इसके पक्ष एव विपक्ष मे कई प्रकार के तर्क समय-समय पर प्रदान किये जाते रहे हैं। एक दृष्टिकोण के अनुसार स्थानीय सरकार बिना राजनीति के भी बहुत अच्छी प्रकार कार्य करती रही है अतः राजनीति को इसमें प्रविष्ट करके क्यो नई-नई समस्यायें उत्पन्न की जायें। इसके अतिरिक्त स्थानीय सरकार द्वारा जो अनेक सेवायें प्रदान की जाती हैं उन सेवाओं का दलीय आधार पर सम्पन्न करना कठिन बन जायेगा। स्थानीय सरकार वास्तविक समस्याओं के लिए व्यावहारिक सुझाव ढूंढती रहती है। दलीय राजनीति इन प्रश्नो को सुलझाने की अपेक्षा अधिक जटिल बना देगी। एक दूसरे दृष्टिकोण के अनुसार जिन प्रश्नो पर स्थानीय सरकार द्वारा विचार किया जाता है वे प्रश्न ऐसे होते हैं जिन पर कि राजनैतिक दलो का दृष्टिकोण अलग-अलग होता है। यह अत्यन्त बेईमानीपूर्ण माना जायेगा कि इस तथ्य को छिपाया जाये। स्थानीय परिषदो मे राजनीति का प्रवेश नही है यह कहने का अर्थ केवल यह होता है कि इसकी राजनीति रूढ़िवादी होती है। इसके अतिरिक्त जब राजनीति का स्थानीय क्षेत्र मे प्रवेश हो जाता है तो स्थानीय सरकार के कार्यो मे जनता की रूचि आवश्यक रूप से बढ़ जाती है।

कई एक विचारक यह मानते हैं कि इन दोनो ही दृष्टिकोणो मे से बाद वाला सत्य के अधिकतम निकट है। राजनीति को स्थानीय सरकार के क्षेत्र मे अवश्य आना चाहिए। इन विचारको के मतानुसार यह पूछना गलत है कि राजनीति का स्थानीय राजनीति मे प्रवेश है अथवा नही किन्तु पूछना इस तरह चाहिए कि दलीय राजनीति का स्थानीय सरकार मे क्या कार्य है। ग्रेट ब्रिटेन को स्थानीय सरकार मे भारत से भिन्न वहा के राजनैतिक दल खुलकर भाग लेते हैं। दलों के स्थानीय सगठन भी हैं। इन सगठनो द्वारा दलीय अनु-

लेती है। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि राजनैतिक दलों को व्यवस्थापन की रूप रचना में मुख्य भाग लेने की छूट दे दी जाती है किन्तु इस सम्बन्ध में सामान्य समझौता रहता है कि वे न्यायपालिका के क्षेत्र से बाहर ही रहेंगे। इस प्रकार सैद्धान्तिक रूप से प्रशासन का एक भाग राजनैतिक दलों के लिए खुला हुआ है किन्तु दूसरा भाग ऐसा नहीं है। अनुभव द्वारा इस सैद्धान्तिक निष्कर्ष का समर्थन किया जाता है। स्थानीय सरकार का मुख्य सम्बन्ध प्रशासन से रहता है। यह विशेष स्थितियों पर प्रदत्त सामान्य सिद्धान्तों को लागू करती है। ऐसी स्थिति में केन्द्रीय एवं स्थानीय दोनों ही स्तरों पर राजनैतिक दलों को एक जैसा स्थान प्रदान करना गलत होगा। स्थानीय सरकार मूर्त समस्याओं के लिए प्रायः ऐसा समाधान तलाश करती है जो कि सामान्य ज्ञान (Common Sense) पर आधारित हो। अलग-अलग दलों के विचारक भी जब सामान्य बुद्धि से सोचने लगते हैं तो उनके निष्कर्ष बहुत कुछ एक जैसे ही रहते हैं। स्थानीय स्वामिभक्ति दलीय बन्धनों को भी काट देती है। सभी दलों के सदस्य सामान्य हितों को प्रोत्साहन देने के लिए एक हो जाते हैं।

स्थानीय एवं केन्द्रीय सरकार के बीच केवल कार्यों की प्रकृति का ही भेद नहीं है वरन संसद एवं स्थानीय सत्ता के यन्त्र की बनावट भी पर्याप्त अन्तर रखती है। मेयर अथवा परिषद का सभापति प्रधानमन्त्री जैसी ही स्थिति में होता है। समिति के सभापति ताउन के मन्त्री से समानता रखते हैं। अन्तर यह है कि मन्त्री अपने विभाग के निर्णयों एवं कार्यों के लिए स्वयं ही उत्तरदायी होता है जबकि स्थानीय सरकार में यह उत्तरदायित्व समिति के कन्धों पर होता है। स्थानीय सरकार में केबिनेट जैसी कोई चीज नहीं होती। बड़ी स्थानीय सत्ताओं में से कुछ में समन्वयकारी समिति (Coordinating Committee) की रचना की जाती है। वैसे केबिनेट जैसे किसी निकाय का स्थानीय सरकार में कोई कार्य नहीं रहता। केबिनेट का कार्य है व्यवस्थापन का निर्देशन देना तथा नीति से सम्बन्धित विषयों में मार्ग दर्शन करना। यह विभागों के चालू प्रशासकीय कार्यों से कम सम्बन्ध रखती है, किन्तु स्थानीय सत्ता का मुख्य सम्बन्ध प्रशासन से रहता है। यह व्यवस्थापिका एवं अर्थ-व्यवस्थापन की क्रियाओं को सुलझाने से सम्बन्ध नहीं रखती।

स्थानीय सरकार में विरोधी दल एवं सत्ताधारी दल के भेदों की भी आवश्यकता नहीं रहती। स्थानीय स्तर पर ऐसी कोई परम्परा नहीं है कि यदि स्थानीय सत्ता की समिति द्वारा रखा गया कोई प्रस्ताव परिषद में पास न हो सके तो उसे त्यागपत्र दे देना चाहिए। इसी प्रकार संसद को भंग करने तथा मतदाताओं की राय जानने जैसी प्रक्रियायें भी यहाँ नहीं हैं। कठोर दलीय अनुशासन संसदीय सरकार का आवश्यक भाग होता है किन्तु यह स्थानीय सत्ता के कार्यों में कोई भाग नहीं रखता। स्थानीय स्तर पर सदस्यों को पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है केवल यही बन्धन होता है कि वे सरकारी यन्त्र के संचालन के लिए खतरा न बन जायें।

स्थानीय स्तर पर यदि कहीं सरकार एवं विरोधी दल जैसा वर्गीकरण भी कर दिया जाये तो वहाँ उनका कार्य संचालन बड़े रोचक ढंग से किया जाता है परिषद की बैठक होने के पहले ही प्रत्येक दल व्यक्तिगत रूप से अपनी

बैठक करता है तथा उसमें यह निर्णय लेता है कि परिषद में विचारार्थ रखे जाने वाले विषयों पर दल को क्या नीति अपनानी चाहिए। दल का सदस्य इस निर्णय को स्वीकार करता है। परिषद के सदस्यगण वैसे भी व्यक्तिगत बैठकें करते रहते हैं जहां कि वे परिषद के कार्यों के बारे में विचार-विमर्श करते हैं। इस व्यवस्था के अपने कुछ वास्तविक या सम्भावित दोष भी हैं। व्यक्तिगत रूप से पहले ही निर्णय ले लिया जाता है और दूसरे पक्ष के प्रभाव में परिषद के वाद-विवाद भी मात्र औपचारिकता रह जाते हैं। सदस्य पहले ही अपना एक निश्चित दृष्टिकोण बना कर परिषद में आते हैं। वे अपने विरोधी पक्ष की बातों को सुनने में कोई रुचि नहीं लेते। आवश्यक सूचना प्रदान करने के लिए अधिकारीगण भी उपस्थित नहीं रहते। यह तरीका रूप की दृष्टि से भी कभी-कभी अप्रजातान्त्रात्मक मान लिया जाता है क्योंकि बहुमत वाला दल भी परिषद की कुल संख्या में अल्पमत ही होता है और उसकी राय का क्रियान्वयन प्रजातन्त्रात्मक नहीं कहा जा सकता। बहुमत की राय क्षेत्र की जनता के बहुमत की राय नहीं होती। स्थानीय सरकार में दलीय राजनीति के आ जाने से जो अनेक दोष पैदा हो जाते हैं वे इसके स्वाभाविक दोष नहीं हैं वरन् उसके दुरुपयोग के दोष हैं।

दलीय राजनीति द्वारा उचित योगदान किया जा सकता है। अपने श्रेष्ठ रूप में दल मूल्यवान होते हैं तथा वे जनता के राजनैतिक प्रशिक्षण के लिए महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। जो भी साधन जनता को स्थानीय सरकार से उसके कर्तव्यों एवं अधिकारों से परिचित करायें उनको प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि राजनैतिक दल प्रायः स्थानीय रुचि को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण रूप से भाग लेते हैं। वे धीरे-धीरे मतदाताओं की संख्या बढ़ाते हैं। फ्रैंक जेसप (Frank Jessup) के शब्दों में यह कहा जा सकता है कि दलीय राजनीति संसदीय कार्यों की अपेक्षा स्थानीय सरकार में अधिक सुधरे हुए रूप में भाग लेती है। बिना दल व्यवस्था के संसद कार्य नहीं कर सकती किन्तु स्थानीय सरकार कर सकती है।* स्थानीय सरकार में दलीय राजनीति का योगदान सन्तुलित रूप में होना चाहिए। जब दलीय राजनीति पर बहुत जोर दिया जाता है तो ऐसा लगता है कि मानो दल ही प्रधान हो गया तथा उसी के भाग्य की रचना स्थानीय राजनीति का लक्ष्य बन गया और अच्छी सरकार का ध्येय गौण बन गया। इसी प्रकार यदि राजनैतिक दलों को कोई भी स्थान प्रदान करने से मना कर दिया जाये तो यह एक प्रकार से तथ्यों को अस्वीकार करना समझा जायेगा। राजनैतिक दलों से स्थानीय स्तर पर जो कार्य करने की आशा की जाती है उनको संक्षेप में परिभाषित नहीं किया जा सकता।

---

* "Party politics, therefore, have a more modest part to play in local government than in the affairs of parliament. Without the party system Parliament could not work; Local Government can."

—Ibid, P. 98

स्थानीय सरकार के अधिकारी एवं सदस्य
[Officials and Members of Local Government]

स्थानीय सरकार को जो विभिन्न उत्तरदायित्व सौंपे गये हैं तथा इससे जो आशायें की जाती हैं उनको उस समय तक पूरा नही किया जा सकता जब तक कि इनको सचालित करने वाले लोग उचित आदर्शों से प्रेरित न हो तथा आवश्यक तकनीकी योग्यता न रखते हो। केवल यही पर्याप्त नही होता कि योग्य एव अच्छे सदस्यो को निर्वाचित कर लिया जाये अथवा अधिकारियो की नियुक्ति कर दी जाये। उनके कार्य क्षेत्रो को भी स्पष्ट रूप मे परिसिमित कर दिया जाना चाहिए ताकि अतिराव एव गलत निर्देशन को रोका जा सके। परम्परागत रूप से निर्वाचित सदस्यो का यह कार्य होता है कि वे नीतिया निश्चित करे जब कि वैतनिक अधिकारी इन नीतियो को क्रियान्वित करने का कार्य करेंगे। ये अधिकारी छोटे मोटे नीति सम्बन्धी प्रश्नो को भी तय कर सकते थे। अधिकारी एव सदस्यो के कार्यों का यह आसान वर्गीकरण आज के तथ्यों को देखते हुए सही नही प्रतीत होता।

वर्तमान प्रवृत्तियो की आलोचना करते हुए कई बार यह कहा जाता है कि सदस्यो के निर्णय लेने की शक्ति को कम महत्व के प्रश्नो पर ही सीमित कर दिया गया है। उदाहरण के लिए कार्य के घटे तय करना आदि किन्तु नीति से सबधित महत्वपूर्ण प्रश्नो को अधिकारियो के हाथो मे छोड दिया गया है केवल वे ही उनको तय करने का विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान रखते हैं। यह दृष्टिकोण सही दिखते हुए भी गलत है। इसका मूल आधार यह है कि इसे अपनाते समय नीति की पहल (initiation) तथा निर्णय (decision) के बीच भेद नही किया गया है। यह सच है कि स्थानीय सरकार द्वारा सचालित सामाजिक सेवाओ का प्रसार ज्यो-ज्यो बढता जा रहा है त्यो-त्यो विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान की आवश्यकता भी बढती जा रही है। जिन कार्यों के बारे मे गैर विशेषज्ञ लोग भी अपना मत आसानी से प्रकट कर सकते हैं उनके सम्बन्ध मे भी नीति की पहल प्राय: स्थानीय सरकार के अधिकारी वर्ग द्वारा ही की जाती है। उदाहरण के लिए शहर नियोजन का कार्य नियोजन के के तकनीशियनो का कार्य होना चाहिए। यह हो सकता है कि 'योजना बनाई जानी चाहिए,' यह विचार उनके द्वारा प्रतिपादित न किया गया हो। वर्तमान काल मे यह प्रवृत्ति बढती जा रही है कि अधिक महत्व के विषयो पर विचारो की पहल गैर-विशेषज्ञ द्वारा कम से कम की जाय तथा किसी अधिकारी या सरकारी विभाग द्वारा अधिक से अधिक की जाये। विचार चाहे किसी के द्वारा प्रारम्भ किया गया हो किन्तु एक प्रशासकीय प्रस्ताव के रूप मे उसके विकास का कार्य अधिकारी द्वारा ही किया जायेगा। इस स्तर पर यह नीति की रचना नहीं कहा जायेगा वरन् यह एक प्रशासकीय प्रस्ताव मात्र ही कहा जायेगा।

निर्वाचित सदस्यो के अनेक कार्य होते हैं। उनका एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य यह है कि प्रस्तावों को नीति के रूप मे परिवर्तित किया जाये। प्रस्तावो की स्वीकृति सशोधन एव अस्वीकृति जो भी सदस्यो के सामने रखी जाती है वह उनकी इच्छा पर निर्भर है कि उसे माने या न माने। इसका

निर्णय वे स्वय ही करेंगे। प्रस्तावों म क्या महत्वपूर्ण है, किसकी अवहेलना की गई है तथा किसे स्वीकार किया जाना चाहिए। इस प्रकार यद्यपि विशेषज्ञों द्वारा महत्वपूर्ण कार्य किया जाता है किन्तु अन्तिम निर्णय लेने की शक्ति उनके हाथ में नही रहती। अधिकारीगण सत्य के केवल एक ही पक्ष को देख पाते है। उनका दृष्टिकोण इतना पक्षपातपूर्ण बन चुका होता है कि पूर्ण सत्य को देखने मे वे असमर्थ प्राय रहते है जबकि साधारण व्यक्ति अथवा गैर-विशेषज्ञ ऐसा कर सकता है।

विशेषज्ञ एव गैर-विशेषज्ञ, अधिकारी एव गैर अधिकारी के बीच स्थित सम्बध मे इससे कोई खास अन्तर नही आता कि कुछ स्थानीय सत्ताओ की समितियो मे बाहर से ऐसे भी लोगों को ले लिया जाता है जो कि उन समितियो के कार्यों मे विशेष ज्ञान रखते हैं। ये सदस्य कई बार समिति को मूल्यवान रूप में सहायता करते हैं। सहवृति के सिद्धान्त को अधिक साहसपूर्ण एव कल्पनात्मक कार्यों के लिए उपयोग मे लाया जा सकता है। यह देखने मे अप्रजातन्त्रात्मक लगता है किन्तु यदि हम मेजिनी की प्रजातन्त्र की परिभाषा को ध्यान मे रखें तो कोई आपत्ति नही रहेगी। मेजिनी का कहना था कि प्रजातन्त्र बुद्धिमान एव सर्वश्रेष्ठ नेतृत्व के आधीन सभी के माध्यम से सभी की प्रगति है। सहवृत सदस्यो के रहने पर भी निर्वाचित सदस्यो को महत्वपूर्ण कार्य करना होता है। उनको स्थानीय सरकार के कार्यों मे सामान्य रुचि लेनी होती है। वे कार्य के एक क्षेत्र मे ही विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान रखने की अपेक्षा सभी विषयो मे सामान्य ज्ञान रखते हैं। सदस्यो का एक दूसरा कार्य यह है कि वे प्र केक्षणकर्त्ता या दर्शक के रूप मे कार्य करते हैं। इनको अधिकारियो द्वारा साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक या वार्षिक प्रतिवेदन दिये जाते है जिनमे वे अपने कार्यों का लेखा-जोखा प्रदान करते हैं। अधिकारियो को यह ज्ञात रहता है कि उनके कार्य, अकार्य आदि का लेखा रहता है तथा इनको चुनौती दी जा सकती है, इनकी आलोचना की जा सकती है। इस ज्ञान के कारण वे स्वेच्छा पूर्ण, बेईमानी पूर्ण एव अवहेलना पूर्ण रवैया नही अपना सकते। आलोचना करने के कार्य को सम्पन्न करते समय बहुत सावधानी बरतने की आवश्यकता होती है क्योकि इसे यदि अनुत्तरदायित्वपूर्ण रूप से किया गया तो इसके परिणामस्वरूप पहल की शक्ति समाप्त हो जायगी।

दूसरी ओर यदि इसे व्यवहृत नही किया गया तो डर है कि नौकरशाही प्रवृत्तिया विकसित हो जायेंगी। सदस्यों का तीसरा कार्य अपने चुनाव क्षेत्र के लोगों से लगातार सम्पर्क बनाये रखना है। परिषद के निर्वाचित सदस्य क्षेत्र के सभी भागो से आते हैं। इनके माध्यम से स्थानीय सत्ता, स्थानीय आकाक्षाओ एव आवश्यकताओं के साथ घनिष्ट सम्बन्ध रख सकती है। सदस्यों का यह कार्य उन जिलों मे तथा काउन्टीज मे और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है जो कि बिखरे रूप मे बसे हुए होते हैं। यह बड़े आकार के क्षेत्रो मे भी महत्वपूर्ण समझा जा सकता है। सदस्य द्वारा सूचना प्रदान करने का जो कार्य किया जाता है वह द्विमार्गीय प्रक्रिया है। वह एक ऐसा माध्यम है जिसकी सहायता से स्थानीय भावना एवं ज्ञान सत्ता तक पहुंचाया जाता है तथा सत्ता के कार्यों एवं उन कार्यों के कारणों का ज्ञान स्थानीय लोगो

को दिया जाता है। सदस्यो के माध्यम से नागरिक सत्ता के सम्मुख अपनी शिकायतें भेज सकते हैं। स्थानीय सत्ता उन शिकायतो की जाच करती है। जनता ससद सदस्यो से भी अपनी समस्याओ की शिकायत कर सकती है किन्तु ससद सदस्य को प्राप्त करना सुगम नही होता। इसके अतिरिक्त शिकायत करने की कार्यवाही भी इतनी उलझी हुई तथा जटिल होती है कि जनसाधारण प्राय इसे नही कर पाता। स्थानीय सत्ता के सदस्य साधारण नागरिको की पहुच की सीमा मे रहते हैं उनको गलियो मे पाया जा सकता है, वे चर्च मे मिल सकते हैं अथवा आकस्मिक रूप से कही भी मिल सकते है। इस अनौपचारिक सम्पर्क के द्वारा सदस्यगण नागरिको की समस्यायें सुलझाने की शक्ति प्राप्त करते हैं। शिकायत करने की प्रक्रिया मे अधिक औपचारिकता नही बरतनी होती। शिकायत चाहे कितनी ही छोटी या महत्वहीन क्यो न हो किन्तु सदस्य द्वारा उसको इतना हल्का नही लिया जाता। हो सकता है कि दिखने मे महत्वहीन लगने वाला एक प्रश्न ही गम्भीर परिणाम उत्पन्न करने का कारण बन जाये। कुछ भी शिकायत करने वाले के जीवन के लिए तो यह प्रश्न उपयोगी एव महत्वपूर्ण ही रहता है। एक मरीज ही सही रूप मे जान सकता है कि दात के डाक्टर के आपरेशन का क्या प्रभाव हुआ, डाक्टर इस बात की जानकारी नही रखता। इसी प्रकार शिकायत करने वाले की समस्या छोटी होते हुए भी उसके लिए गम्भीर सिद्ध हो सकती है। प्रशासन का चाहिए कि इन सभी समस्याओ के निराकरण के लिए कोई आसान तरीका निकाले। सत्ता के सदस्यो को यह देखना होता है कि प्रशासन का लक्ष्य अर्थात् मनुष्य का अच्छा जीवन' अपना महत्व न भूल जाये।

सदस्यो का एक अन्य महत्वपूर्ण कार्य उच्च स्तर के अधिकारियो की नियुक्ति करना है। इस कार्य को सम्पन्न करने मे सत्ता की सफलता या असफलता ही उनके कार्य पर निर्णयात्मक प्रभाव डालेगी। इस शक्ति का पर्याप्त महत्व है। इसी कारण महत्वपूर्ण पदो पर मुख्य अधिकारियो की नियुक्ति की स्थानीय सरकार की शक्ति को केन्द्रीय सरकार द्वारा मर्यादित कर दिया गया है। कुछ मामलो मे अधिनियम द्वारा यह व्यवस्था कर दी जाती है कि नियुक्ति पर सरकारी विभाग की स्वीकृति प्राप्त की जाये ताकि इन अधिकारियो को उनका कार्य सम्पन्न करने मे गलत दबाव से सुरक्षित रखा जा सके। स्वास्थ्य के मैडीकल अधिकारी, सफाई निरीक्षक आदि को ऐसे अधिकारियों के उदाहरण के रूप मे प्रस्तुत किया जा सकता है। यह सीमा कई बार गम्भीर आलोचना का कारण भी बनती है। यह कहा जाता है कि इस से स्थानीय सत्ता अपने अधिकारियो को नियुक्त करने एव हटाने की शक्ति से वचित रह जाती है। यदि केन्द्रीय विभाग स्वेच्छाचारी रूप से निषेधाधिकार का प्रयोग करने लगे तो सत्तायें अपने उचित दायित्व से वचित रहेगी, साथ ही व्यक्तिगत अधिकारियो के साथ अन्याय का व्यवहार पनप सकता है।

अधिकारियों को उनके उचित कार्य क्षेत्र मे स्वतन्त्रता प्रदान करने का अर्थ है कि सदस्यों को उनके निर्णय मे तथा उनकी नियुक्ति मे विश्वास

है। व्यवहारिक रूप मे यह सम्भव नही है कि अधिकारीगण अपना प्रत्येक कार्य करने से पूर्व अनुमति प्राप्त करे क्योकि इस प्रक्रिया से पर्याप्त भ्रम एव देर होने की सम्भावना रहती है। इस सम्बन्ध मे जे एस मिल का यह कहना सच है कि प्रशासन के विषयो मे एक प्रतिनिधि सभा का उचित कार्य यह नही है कि वह स्वय ही निर्णय ले वरन् उसका कार्य यह देखना है कि जो लोग निर्णय ले रहे है वे उचित व्यक्ति होने चाहिए। सदस्यो एव अधिकारियो के बीच उचित सम्बन्ध यह मान कर चलता है कि इनमे से प्रत्येक एक दूसरे के कार्यों का उचित सम्मान करेगा। साथ ही यह दोनो ही पक्षो मे पूर्ण सद्भावना की माग करता है।

स्थानीय सरकार के सदस्यो एव अधिकारियो के पारस्परिक सम्बन्ध की समस्या को एक अन्य समस्या के भाग के रूप मे जाना जा सकता है जिसका सम्बन्ध सरकार एव प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र मे विशेषज्ञ एव गैर-विशेषज्ञो के कार्यो से रहता है। यह समस्या मत्री एव नागरिक सेवको के पारस्परिक सम्बन्धो मे उठती है एक व्यापारिक कम्पनी के हिस्सेदारो एव सचालको के पारस्परिक सम्बन्धो मे उठती है, एक विश्व विद्यालय की परिषद् एव सीनेट के बीच उठती है, एक अस्पताल के प्रबन्धकीय निकाय एव मैडीकल स्टाफ के बीच उठती है, एक स्कूल के प्रशासको एव हैडमास्टर के पारस्परिक सम्बन्धो मे उठती है। यह समस्या वर्तमान प्रशासन मे इतनी अधिक हो चुकी है कि प्रत्येक सरकार यह चाहती है कि विशेषज्ञता के साथ ले लोकप्रिय नियत्रण को समायोजित किया जाये। प्रशासन मे विशेषज्ञ एव गैर-विशेषज्ञ दोनो ही प्रकार के अधिकारियो एव कार्यकर्त्ताओ के लिए स्थान होता है किन्तु दोनो के कार्यों को निश्चित रूप से निर्धारित नही किया जा सकता। प्रशासन मे विशेषज्ञता की ओर बढती हुई प्रवृत्ति को तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर देखा जा सकता है। १६वी शताब्दी का प्रशासक एक सामान्य व्यवहार कर्त्ता मात्र था। वह अपना सारा समय प्रशासन के कार्य मे न लगा कर केवल आशिक समय ही इसमे लगाता था। शेष समय मे वह अपना अन्य कार्य करता था। यह व्यवस्था उस समय उपयुक्त थी जबकि सरकार के कार्य केवल नियमनकारी थे। किन्तु ज्यो-ज्यो सामाजिक सेवाओ का क्षेत्र बढता गया त्यो-त्यो विशेषज्ञतापूर्ण ज्ञान वाले अधिकारियो की नियुक्ति करना अपरिहार्य बनता गया। विशेषज्ञो के बढते हुए महत्व के साथ ही स्थानीय सरकार के अधिकारियो की सख्या भी बढती गई, उनका वेतन अधिक हो गया उनकी शर्तो करते समय अधिक शिक्षा के स्तर की माग की जाने लगी। स्थानीय सरकार के अधिकारी मुख्यत कार्य पर ही प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं। उनकी सामान्य शिक्षा को सीमित ही रखा जा सकता है। स्थानीय सरकार की सेवाओ की दशाओ मे जो सुधार हुआ है वह बहुत कुछ स्थानीय सरकार के अधिकारियो के राष्ट्रीय सघ के प्रयासो का परिणाम है।

अधिकारियो के सम्बन्ध मे एक अन्य समस्या यह उठायी जाती है कि इनको खुले तौर पर दलीय राजनीति मे भाग लेना चाहिए अथवा नही। यह समस्या इतनी अधिक गम्भीर नही बन पडी है क्योकि चारो ओर सद्भावना का वातावरण रहने के कारण मतभेद उत्पन्न होने का अवसर प्रायः कम ही रहता है।

स्थानीय सरकार के सम्बन्ध में प्रमुख समस्या यह है कि स्थानीय परिषद भवन की सीटों पर बैठने के लिए ऐसे व्यक्तियों की तलाश करना कठिन और कभी-कभी तो प्रायः असम्भव भी हो जाता है जिनमें कि पर्याप्त उत्साह हो तथा जिनके पास कार्य करने के लिए अतिरिक्त समय हो। यह एक तात्कालिक एवं गम्भीर समस्या है जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती तथा जिसके परिणाम-स्वरूप अन्य कई समस्यायें उठ खड़ी होती हैं। फ्रैंक जेसप (Frank Jessup) का यह कहना पूर्ण रूप से सही है कि सरकार का यंत्र चाहे कितना भी अच्छा क्यों न हो, सरकार का स्तर अन्त में उन पुरुषों एवं स्त्रियों, सदस्यों एवं अधिकारियों पर निर्भर करता है जो कि मानवीय एजेंन्ट हैं। यदि वे अच्छे हैं तो अच्छी सरकार भी सम्भव हो सकती है चाहे यंत्र अपूर्ण ही क्यों न हो। किन्तु यदि वे मानवीय एजेन्ट गरीब हालत के हैं तो सरकारी यंत्र के पूर्ण होते हुए भी असंतोषजनक सरकार सामने आयगी।* स्थानीय सरकार की बनावट के बारे में तो पर्याप्त विचार विमर्श किया जाता है किन्तु उस में कार्य करने वाले अधिकारियों पर विचार कम किया जाता है। बनावट पर तो विषय गत रूप से विचार किया जा सकता है क्योंकि उसके आंकड़े व तथ्य उपलब्ध हो जाते हैं किन्तु अधिकारियों से सम्बन्धित किसी भी वाद-विवाद में या विचारविमर्श में विषयगत पहलू का उत्पन्न होना अत्यन्त स्वाभाविक बन जाता है। यंत्र से सम्बंधित विचार विमर्श करना आसान भी होता है। अतः इन विभिन्न कारणों से मेंबर-वर्ग की समस्या पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता।

पर्याप्त योग्यता वाले निर्वाचित सदस्य क्यों नहीं मिल पाते हैं इसके अनेक कारण हैं जो प्रायः सर्व विदित है किन्तु फिर भी संक्षेप रूप में इनका वर्णन किया जाना उचित रहेगा। इसका प्रथम कारण यह है कि कई लोग प्रारम्भ से स्थानीय सरकार के कार्यों में रुचि लेना पसन्द नहीं करते क्योंकि ऐसा करना उनको रुचिकर प्रतीत नहीं होता। स्थानीय परिषद को जन जीवन में अनेक गलतियों एवं कार्य की अवहेलनाओं के लिए दोषी ठहराया जाता है। परिषद जिन कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं होती उनके सम्बन्ध में बढ़ने वाली समस्याओं के लिए भी उसी के ऊपर लोग प्रायः दोषारोपण करते हैं। स्थानीय परिषद के विरुद्ध लगाए जाने वाले लाछनों की प्रवृति सामान्य होती है। दैनिक व्यवहार की बात-चीत में स्थानीय सरकार के भ्रष्टाचारपूर्ण कारनामें आम विषय बन जाते हैं। स्थानीय परिषद का उम्मीदवार बनने से पूर्व प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में परिषद का यही दोष-

*"However good the machinery of Government may be the quality of Government depends in the end, upon the men and women, members and officials, who are the human agents. If they are good possibly good Government is possible, despite imperfect machinery, but if the human agents are poor, unsatisfactory government is the inescapable consequence, however perfect the machinery may be."

—Ibid, P. 112-113.

पूर्ण चरित्र रहता है तथा वह अपने आपको इसके साथ एकीकार नहीं करना चाहता। सौभाग्य से भ्रष्टाचार वर्तमान स्थानीय सरकार की समस्या नहीं है। भ्रष्टाचार के विरुद्ध अनेक कानून प्रावधान बनाए गए हैं। यदि किसी शिकायत के पक्ष में पर्याप्त प्रमाण प्राप्त हो जाए तो यह एक नैतिक कर्तव्य माना जाता है कि कानून उचित कार्यवाही करे। तथ्यों के ऊपर आधारित ईमानदारीपूर्ण आलोचना एक स्वस्थ प्रक्रिया मानी जाती है किन्तु सस्ती और घटिया प्रकार की अनुत्तरदायित्वपूर्ण बातों को समाज विरोधी समझा जाना चाहिए। किसी भी नागरिक को यह नहीं समझना चाहिए कि स्थानीय *सरकार में सक्रिय योगदान किसी प्रकार उसके व्यक्तित्व को नीचा गिराएगी।*

जो व्यक्ति अपने किसी विशेष स्वार्थ की दृष्टि से स्थानीय परिषदों के लिए उम्मीदवार बनते हैं तथा स्थानीय सरकार के कार्यों में रुचि लेते हैं वे कभी भी अच्छे पारषद नहीं बन सकते। मनोवैज्ञानिकों द्वारा यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि पारषद बनने के पीछे मूल उद्देश्य तो प्रायः सभी का एक ही होता है और वह है शक्ति का प्रयोग करने की इच्छा। इस तर्क में सत्यता होते हुए भी उम्मीदवारों को दो भागों में विभाजित किया जाता है। प्रथम में वे लोग आते हैं जो स्थानीय सरकार में अपना कुछ योगदान करना चाहते हैं। ऐसे लोगों को दूसरे प्रकार के उन लोगों से भिन्न देखा जाना चाहिए जो कि स्थानीय सरकार को अपने स्वार्थों की सिद्धि का साधन बनाना चाहते हैं।

योग्य व्यक्तियों के परिषद का सदस्य बनने के मार्ग में एक अन्य कठिनाई यह है कि जहां कहीं निर्वाचन दलीय आधार पर लड़े जाते हैं वहां यदि कोई व्यक्ति अपने पीछे शक्तिशाली दलीय पृष्ठभूमि नहीं रखता या वह अपने दल की नीति की कमजोरी तथा शक्ति दोनों को ही भली प्रकार देख पाता है तो उसका पारषद बनना कठिन होगा। जिस व्यक्ति को किसी दल का समर्थन नहीं प्राप्त होता और जो चुनाव में सफलता प्राप्त करने की आशा नहीं करता वह स्थानीय सरकार के लिए महत्वहीन बन जाता है। यह स्वाभाविक है कि एक राजनैतिक दल प्रायः उसी व्यक्ति का समर्थन करेगा जो कि समय-समय पर दल की नीतियों का प्रचार करता रहे। दलीय स्वामीभक्ति के साथ निर्णय की ईमानदारी को समायोजित करना कई बार बौद्धिक एकाग्रता पर एक गम्भीर भार बन जाता है।

केन्द्रीय सरकार का स्थानीय सरकार के कार्यों पर बढ़ता हुआ नियन्त्रण भी इस दृष्टि से एक महत्वपूर्ण तत्व बन जाता है। अत्यधिक केन्द्रीय नियन्त्रण की स्थिति में स्थानीय सरकार की स्वायत्तता समाप्त हो जाती है। वह एक प्रकार से कार्यों का अभाव सा महसूस करने लगती है। इस प्रकार की संस्था में बौद्धिक योग्यता वाले स्त्री और पुरुष आने में रुचि नहीं लेते। यद्यपि स्थानीय सरकार पूरी तरह से अधीनस्थ स्थिति में नहीं पहुंची है किन्तु फिर भी यह सच है कि स्थानीय सत्ताओं की स्वतन्त्रता को संकीर्ण बनाकर स्थानीय सरकार के कार्यों में भाग लेने से योग्य व्यक्तियों को विमुख कर दिया जाएगा। यदि ऐसे लोग रुचिहीन हो जाएं तो स्थानीय सरकार में बौद्धिक संकट उत्पन्न हो जाएगा।

कुछ लोग ऐसे भी हैं जो कि स्थानीय सरकार के कार्यों मे भाग लेने मे रुचि रखते है। इसके लिए पर्याप्त योग्य भी हैं किन्तु फिर भी अनेक आर्थिक परिस्थितिया उनको ऐसा करने से रोक देती हैं। जो व्यक्ति वास्तव मे स्थानीय सरकार के कार्यो मे रुचि लेता है और सामाजिक सेवाओ के क्षेत्र मे सचमुच कुछ योगदान करना चाहता है उसे अपना अधिकाश समय इस कार्य मे लगाना होगा किन्तु इतना अतिरिक्त समय जिन लोगो के पास होता है उनकी सख्या बहुत अधिक नही है। इसके परिणामस्वरूप स्थानीय सत्ताओ मे आने वाले सदस्यो का अनुपात या तो ऐसे लोगो मे से होता है जो कि अपने सक्रिय जीवन मे सेवानिवृत हो चुके हैं अथवा जो सम्पन्न घराने के हैं। केवल कुछ ही स्थानीय सत्ताए ऐसी है जो कि विभिन्न उम्र एवं आर्थिक स्थिति वाले लोगो का प्रतिनिधित्व करें। इसके अतिरिक्त परिषद की बैठकें प्रायः उस समय होती है जबकि काम करने के दिन होते हैं। इसलिए साधारण कार्य करने वाला व्यक्ति तो वैसे ही इसके बाहर हो जाता है। स्थानीय परिषद की बैठको मे रहने वाली उपस्थिति बहुत कम रहती है।

परिषद के कार्यों मे जो समय लगता है उससे कहीं अधिक समय उसकी समितियो, उप-समितियो एव सम्मेलनो की बैठको मे लगता है। इसके अतिरिक्त स्कूलो एव अन्य सस्थाओ का निरीक्षण करने मे समय लग जाता है। समय की इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए सध्याकालीन बैठको की व्यवस्था की जाती है किन्तु जहा सदस्यो को एक विस्तृत क्षेत्र से लिया जाता है वहा सध्याकालीन बैठकें असम्भव बन जाती हैं। इसके परिणामस्वरूप महत्वपूर्ण मसलो पर निर्णय दिन के अन्त मे लिया जाता है जब कि उपस्थित सदस्यगण शारीरिक एव मानसिक दोनो ही दृष्टियो से थक चुके होते हैं। अतः यह स्वाभाविक है कि निर्णय अधिक उपयुक्त नहीं होगे। कुछ जागरूक नियुक्तिकर्ता अपने किसी भी कर्मचारी को जो कि स्थानीय सत्ता मे निर्वाचित हो चुका हो, सार्वजनिक कार्य मे लगाए गए समय के लिए भी वेतन प्रदान करते हैं। नि सन्देह यह अभ्यास बढता जा रहा है किन्तु यह छोटे स्तर के नियुक्तकर्ताओ के लिए व्यावहारिक नही है। एक दुकानदार जिसके केवल दो सहायक कार्यकर्ता हैं वह अपने एक कार्यकर्ता को स्थानीय सत्ता के कार्यो मे भाग लेने के लिए कैसे अनुमति दे सकता है। यह एक ऐसा स्वेच्छापूर्ण वरदान है जिसके लिए जनता किसी भी नियुक्तिकर्ता पर दबाव डालने का अधिकार नही रखती।

कभी-कभी इस समस्या पर यह सुझाव दिया जाता है कि स्थानीय सत्ता के सदस्यो को वेतन प्रदान किया जाना चाहिए। जब ससद के सदस्यों को वेतन प्रदान किया जाता है तो उन सदस्यो को क्यों न प्रदान किया जाए जो कि स्थानीय सरकार के कार्यों का भार वहन करते हैं। इस प्रकार की तुलना करना अधिक उचित नहीं कहा जा सकता क्योंकि ससद के सदस्य अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने मे अधिकाश समय व्यतीत करते हैं और इस प्रकार यह उनका प्रमुख व्यवसाय बन जाता है। दूसरी ओर स्थानीय सत्ता की सदस्यता का मूल तत्व यह है कि यह एक अशकालीन सेवा है जिसको

कि प्रति दिन के कार्यों के साथ-साथ सम्पन्न किया जा सकता है, उनके स्थान पर नहीं। वेतन प्रदान करने के लिए सिद्धान्त के प्रति और भी कई आपत्तियाँ की जाती है। यह कहा जाता है कि यह व्यवहार इस सिद्धान्त के विपरीत होगा कि स्थानीय सरकार के कार्यों में योगदान सेवा की-भावना से किया जाना चाहिए। दूसरे, यदि वेतन की मात्रा कम होगी तो इससे कठिनाइयां दूर नहीं हो सकेंगी और यदि वेतन बहुत अधिक हुआ तो इन पदों को प्राप्त करने के लिए बड़े बड़े राजनैतिक दाव-पेंच लड़ाए जाएंगे। तीसरे, जब स्थानीय सरकार के सदस्यों को पुनः निर्वाचित होने में कोई सन्देह रहता है तो वे उस स्थिति की कल्पना कर लेते हैं जब कि परिषद की सदस्यता छोड़ने के बाद वे लोग बेरोजगार हो जाएंगे, उनकी जीविका का कोई साधन नहीं रहेगा। इस स्थिति से अपने आपको बचाने के लिए वे जनता का समर्थन प्राप्त करने हेतु घटिया साधनों को अपनाने में भी नहीं हिचकिचाते। चौथे, जब सदस्यों को वेतन देने की परम्परा प्रारम्भ हो जाएगी तो सवैतनिक विशेषज्ञ अधिकारियों एवं अवैतनिक गैर-विशेषज्ञ सदस्यों के बीच का अन्तर समाप्त हो जाएगा। पांचवें, मितव्ययता लाने के लिए परिषदों का आकार छोटा कर दिया जाएगा और ऐसी स्थिति में केवल कुछ ही लोगों को उनकी अपनी स्थानीय सरकार में निरन्तर सक्रिय भाग लेने का अवसर प्राप्त हो सकेगा। यद्यपि सवैतनिक सदस्यों के विरोध में अनेक तर्क प्रस्तुत किए जा सकते हैं किन्तु फिर भी ऐसे किसी साधन की तलाश करनी होगी जो कि साधारण स्त्री पुरुषों को भी स्थानीय सरकार के कार्यों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित कर सके।

उचित प्रकार के लोगों को स्थानीय सरकार की ओर आकर्षित करने की समस्या का अभी तक मान्य समाधान नहीं हो सका है। सुझाव चाहे कुछ भी रखा जाए और स्थानीय सरकार के कार्यों में योग्य व्यक्तियों की रुचि को जागृत करने के लिए चाहे कोई भी प्रयास किया जाए किन्तु यह एक तथ्य है कि स्थानीय परिषदों में निरन्तर सामर्थ्यवान् एवं सुचित स्त्री पुरुष आने चाहिए जो कि निःस्वार्थ भाव से अपने साथियों के कल्याण के कार्यों में स्वेच्छापूर्वक अपनी शक्ति एवं समय लगा सकें। जब भी कभी स्थानीय सरकार में सुधार की बात की जाती है तो सेवी वर्ग के तत्व को बहुत कम महत्व दिया जाता है तथा बनावट पर ही अधिकतर ध्यान केन्द्रित रहता है। यद्यपि ढांचे का भी अपना महत्व है, शरीर में अस्थिपिंजर का भी महत्व है किन्तु जिस मांस के द्वारा इसे ढका जाता है, जिस मस्तिष्क के द्वारा इसे प्रशासित किया जाता है और जिस आत्मा के द्वारा इसे चेतना दी जाती है वे इससे भी अधिक महत्वपूर्ण हैं। परिषद के निर्वाचित प्रतिनिधि न केवल इन बाद वाले गुणों को ही प्रदान करते हैं किन्तु वे ऐसे साधन भी है जो कि यन्त्र को चालू रखने के लिए शक्ति प्रदान करते हैं। जॉन स्टुअर्ट मिल का यह कहना बिल्कुल सही है कि यन्त्र की भांति राजनीति में भी इंजन को चलाने वाली शक्ति यन्त्र के बाहर से प्राप्त की जानी चाहिए। जो शक्ति स्थानीय सरकार के यन्त्र को सचालित रखती है वह उन लोगों की रुचि एवं उत्साह से प्राप्त होती है जो कि इसका प्रतिनिधित्व करते हैं।

जनता की उदासीनता

[Public Apathy]

प्रतिनिधि प्रजातन्त्र सरकार का रूप चाहे कुछ भी हो किन्तु यह बहुत कुछ प्रशासक एवं प्रशासितो के पारस्परिक सम्बन्धो पर निर्भर करती है अर्थात् वे लोग जिनमें सरकार की शक्ति इस समय निहित है और वे लोग जिनसे कि यह अन्तिम रूप से ली गई है, उनके बीच का सम्बन्ध ही सरकार के सचालन का आधार बनाता है। सैद्धान्तिक रूप से यह सरल है कि केन्द्रीय सरकार की अपेक्षा स्थानीय सरकार मे क्रिया-प्रतिक्रिया अधिक घनिष्ट एव निरन्तर रहे किन्तु व्यवहार के तथ्यो का अध्ययन करने के बाद यह कहा जा सकता है कि प्रशासितो द्वारा स्थानीय सरकार की व्यवस्था मे जो योगदान किया जाता है तथा स्थानीय सत्ता के कार्यों मे वे जो रुचि दिखाते हैं यह सन्तोषजनक नही होती। जनता स्थानीय कार्यों मे कितनी रुचि लेती है यह बात मतदान करने वाले लोगो की सख्या को देखने पर ज्ञात की जा सकती है। मतदान करना प्रत्येक नागरिक का कम से कम स्तर का नैतिक कर्त्तव्य है, किन्तु फिर भी मतदाताओ का प्रतिशत अधिक से अधिक पचास और कई बार दस से भी कम पड जाता है। जनता की रुचि के इस अभाव को देख कर स्थानीय सरकार के सगठन एव व्यवहार पर लगाया जाने वाला श्रम, शक्ति एव धन बहुत कुछ अपव्यय सा प्रतीत होता है। स्थानीय सरकार के चुनावो के अब तक के आकडो को देखने के बाद यह प्रतीत होता है कि ये अत्यन्त निराशाजनक हैं। जो लोग मतदान मे भाग लेते हैं उनके बारे मे भी यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि वे स्थानीय सरकार के कार्यों मे रुचि लेते हैं क्योकि अनेक मतो को डालने का आधार व्यक्तिगत भावना या दलीय स्वामी-भक्ति होती है तथा मतदाता निर्वाचन मे उठाए जाने वाले प्रश्नो में बहुत कम रुचि लेते देखे जाते हैं। निर्विरोध चुने जाने वाले सदस्यों का अनुपात नगण्य रहा है यद्यपि कुछ देहाती क्षेत्रो मे ये अब भी बहुत अधिक हैं। अनुपात के घटने का कारण स्थानीय जनता की राजनैतिक रुचि न होकर स्थानीय चुनावो का दलीय राजनीति के आधार पर होना है। दलीय राजनीति द्वारा किये जाने वाले चुनाव स्थानीय जनता मे राजनैतिक चेतना लाते हैं या नही यह एक विवादपूर्ण प्रश्न है। सन् १९४५ मे मताधिकार को बढ़ा दिया गया और अब केवल व्यस्क मतदाता या पति-पत्नि ही मत देने का अधिकार नहीं रखते किन्तु सभी व्यस्को को यह अधिकार प्रदान कर दिया गया। इसका बहुत अच्छा परिणाम निकला। मतदाताओ मे नया रक्त आने से स्थानीय परिषदो का रूप बदल गया।

स्थानीय सरकार के कार्यों मे जनता द्वारा रुचि न लेने पर पर्याप्त गम्भीर परिणाम हो सकते हैं। इनकी कल्पना जॉन स्टुआर्ट मिल (J. S. Mill) द्वारा कर ली गई थी। वे लिखते हैं कि जहा अधिकांश मतदाता अपनी सरकार को मत देने के लिए पर्याप्त रुचि नहीं लेते या मत देते भी हैं तो सार्वजनिक आधार पर अपने मताधिकार का प्रयोग नहीं करते वहा प्रतिनिधि सस्थाएं बहुत कम मूल्य की रह जाती हैं तथा वे तानाशाही या स्वेच्छाचारिता

के साधन मात्र बन जाती हैं।* सरकार की प्रक्रिया मे जनता द्वारा जो भाग लिया जाता है उसके प्रभाव का महत्व भी है और कुछ सीमाएं भी। जब प्रजातन्त्रात्मक शब्द का प्रयोग किया जाता है तो इसके द्वारा एक ऐसी सरकार का चित्र हमारे मस्तिष्क मे उभर आता है जिसमे कि समस्त जनता प्रशासक होती है किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से यह सर्वथा असम्भव होता है कि समस्त जनता प्रशासन करे। इसीलिए प्रतिनिधित्वपूर्ण व्यवस्थाओं को अपनाया जाता है। इनका कार्य सरकार के कार्य को नियन्त्रित करना है, स्वय सम्पन्न करना नही। पहले ससद द्वारा राजा के ऊपर जो नियन्त्रणकारी शक्तिया प्रयुक्त की जाती थी अब उनका प्रयोग जनता द्वारा ससद के ऊपर किया जाता है। सरकार के प्रत्येक कार्य के औचित्य का यह मापदण्ड माना जाता है कि जनता उसे चाहती है अथवा नही। ऐसे बहुत कम अवसर आते हैं जब कि जनता विधेयात्मक रूप में अपनी इच्छाओं को व्यक्त करे, वैसे सामान्यतः सरकार पर जनता का प्रभाव प्राय: निषेधात्मक होता है अर्थात् जनता उन सीमाओं को निश्चित कर देती है जिनके आगे के व्यवहार को सहन नही किया जा सकता। कोई भी बुद्धिपूर्ण सरकार इन सीमाओं को नही लाघती। जनमत को बदला जा सकता है इसे ईमानदारीपूर्ण या धृष्टतापूर्ण तरीको से बनाया भी जा सकता है किन्तु जब तक सरकार इसके द्वारा लगाई गई सीमाओं में व्यवहार नही करती तब तक क्रान्ति या तानाशाही का खतरा रहता है।

जनमत को मतदान के अतिरिक्त अन्य साधनो द्वारा भी अभिव्यक्त किया जा सकता है। यह कहा जा सकता है कि अब तक की स्थानीय सरकार के व्यवहार पर जनमत का पर्याप्त प्रभाव रहा है। स्थानीय सरकार के सदस्य प्रतिदिन का कार्य करते हुए या मनोरजन करते हुए भी जनमत का पता लगा सकते हैं। कई बार स्थानीय मामलो पर अपनी एक निश्चित भावना रखने वाले व्यक्ति या समूह सार्वजनिक सभा या प्रदर्शन करके उसे अभिव्यक्त करते हैं और कभी-कभी स्वय स्थानीय सत्ता महत्वपूर्ण प्रश्नों पर जनता के ध्यान को आकर्षित करने मे पहल करती हैं। स्थानीय सत्ताओ की बैठकें जनता के लिए खुली रहती हैं तथा स्थानीय अखबारों मे भी स्थानीय सरकार के कार्यों का कुछ उल्लेख रहता है किन्तु यह सच है कि थोडे ही लोग इनका लाभ उठा पाते हैं। इन परिस्थितियो को नियम का अपवाद मात्र माना जाता है। इनके आधार पर यह नही कहा जा सकता कि जनता निरन्तर रूप से स्थानीय सरकार के कार्यों मे रूचि लेती है। फ्रैंक जेसप (Frank Jessup) का यह कहना सच है कि साधारण नागरिक के लिए एक प्रशासकीय कार्य उतना ही अपूर्व, कल्पनीय एव अपमानीय है जितना कि ईश्वर का एक कार्य। वह इन

---

*"Representative institutions are of little value, and may be a mere instrument of tyranny or intrigne, where the generalitly of electors are not sufficiently interested in their own Govt. to give their vote or if they vote at all, do not vestow their sufferage on public grounds."
—*J.S. Mill.*

दोनों के लिए न किसी उत्तरदायित्व का अनुभव करता है और न ही नियन्त्रण की भावना रखता है।*

सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में इंगलैण्ड में जबकि संसद नियन्त्रण रखने के अपने कार्यों का पालन करने में असफल रही तो इसके परिणाम स्वरूप व्यक्तिगत शासन का जन्म हुआ और अब यदि नीति निर्धारण करने के कार्यों को जनता द्वारा सम्पन्न किया गया तो इसके परिणामस्वरूप नौकरशाही और केन्द्रीयकरण का जन्म होगा। जहां कहीं नौकर शाही और केन्द्रीयकरण का बोलबाला हो जाता है वहां सरकार लोचशील नहीं रह जाती और वह अपने आपको जनता की इच्छाओं के अनुरूप नहीं ढाल पाती। राजनीति के इस तरह से स्थायी बन जाने से अनेक दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम सामने आते हैं। राजनैतिक संस्थाओं को अपने आपको बदली हुई परिस्थितियों के अनुरूप समायोजित करते रहना चाहिए किन्तु केन्द्रीयकृत सरकार में उत्पन्न कठोरता परिवर्तन पर रोक लगा देती है। इसी क्रिया और प्रतिक्रिया के चक्कर में पश्चिमी रोमन साम्राज्य का पतन हो गया।

स्थानीय सरकार के कार्यों में इंगलैण्ड की जनता रुचि नहीं लेती तथा उदासीन रहती है। इसके लिए उत्तरदायी कई एक कारण हैं। इसका पहला कारण अज्ञान है। स्थानीय सरकार का क्षेत्र एवं तरीके, इसके द्वारा नियन्त्रित कार्य, इसकी उपलब्धियां, इसकी असफलताएं एवं समस्याएं, इसके प्रति नागरिकों के अधिकार एवं कर्तव्य आदि को बहुत कम समझा जाता है। उस अज्ञान का एक कारण अतीतकालीन शिक्षा है जो कि बहुत कम मात्रा में प्रदान की जाती थी। यह सच है कि भावी संतति अधिक शिक्षित एवं जागरूक होगी किन्तु स्थानीय सरकार की प्रगति की वर्तमान दर ऐसी है कि इस देश के जीवन का एक प्रभावशील भाग नहीं माना जा सकता। सन् १९४८ के अधिनियम में दो ऐसे सम्भाग थे जिनके अनुसार स्थानीय सत्ताएं सूचना केन्द्रों की रचना कर सकती थी, जो कि सूचना प्रकाशित करें, भाषणों का प्रबन्ध करें तथा स्थानीय सरकार के प्रश्नों पर विचार विमर्श एवं प्रदर्शन करें। ये अत्यन्त उपयोगी प्रावधान थे किन्तु इन पर पूरी तरह से निर्भर करना उसी तरह से बेकार है जिस प्रकार कि मशीन में ही शक्ति का स्रोत देखने का प्रयास करना है। स्थानीय सरकार की शिक्षा का प्रसार करने में प्रेस या सिनेमा अत्यन्त शक्तिशाली साधन सिद्ध हो सकते हैं। अब तक के तथ्यों को देखने पर यह ज्ञात होता है कि अखबारों में स्थानीय सरकार के कार्यों को जिस रूप में प्रतिवेदित किया गया वह पूर्णतः बचकाना था। हो सकता है इसका कारण यह हो कि सम्पादकों ने पाठकों की रुचि को कम मूल्यांकित किया हो या स्थानीय अखबारों द्वारा जो समाचार पत्र के कार्यकर्ता नियुक्त किए गए थे उनमें ही राजनैतिक शिक्षा का अभाव हो या अखबार को बेचने

---

*"To the ordinary citizen an administrative action is as unpredictable and unfathornable as an Act of God, and he feels no more sense of control over or responsibilty for the one than the other."

—*Frank Jessup*, op. cit., P. 124.

का केवल यही एक तरीका हो कि जो चीज व्यक्ति को सबसे अधिक भाती हैं उसको वही प्रदान की जाए। इन अखबारो मे स्थान भी कम रहता था जिसके परिणामस्वरूप सम्पादको को और भी अधिक कठिनाई थी। अखबारो मे जो समाचार प्रकाशित होते है वे सामान्य नागरिको के स्तर से अधिक नही होते और इसलिए उनसे यह आशा नही की जा सकती कि वे स्तर को और आगे बढाएगे।

कभी-कभी जिस रूप मे स्थानीय सत्ता अपने कार्यों को सम्पन्न करती है उससे भी जनता की रुचि मन्द पड जाती है। कुछ सत्ताओ द्वारा इस डर के आधीन कार्य किया जाता है कि कही उनके कार्यों की खबरें उन लोगो तक न पहुच जाए जिनकी ओर से वे कार्य कर रही है। प्रेस को एक सम्भावित मित्र समझने की अपेक्षा इसे सदेह की नजर से देखा जाता है और इसके कार्य को यथासम्भव कठिन बनाया जाता है। समिति के रूप मे कार्य को सम्पन्न करने के प्रत्येक अवसर का लाभ उठाया जाता है ताकि कानून के शब्दो को तोडे बिना ही जनता और प्रेस को बैठकों से बाहर रखा जा सके। यद्यपि यह सच है कि यदि हम नगरपालिका के प्रत्येक कार्य को प्रत्येक स्तर पर सार्वजनिक रूप मे करने का प्रावधान रखदें तो यह आज की अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति की भाति कम उपयोगी रहेगा किन्तु फिर भी वर्तमान व्यवस्था जिसमे कि महत्वपूर्ण विषयो पर गुप्त रूप से निर्णय लिया जाता है और निर्णयों की घोषणा कर दी जाती है जबकि उनके कारण अज्ञात ही रहते हैं। इस स्थिति को प्रजातन्त्रात्मक सरकार के विरुद्ध समझा जाएगा। कई बार इस स्थिति का सुधारने के लिए यह सुझाव दिया जाता है कि जन-सम्पर्क समितियो एव अधिकारियो की नियुक्ति की जाए। कुल मिलाकर प्रचार एव प्रकाशन प्रशासन का एक अविभाज्य भाग होना चाहिए। कोई भी चीज जो कि जनता और प्रशासन के सम्बन्धो को दूरस्थ बनाती है वह खतरनाक है। दूसरी ओर स्थानीय सत्ता द्वारा अपनाई जाने वाली सक्रिय जन सम्पर्क नीति का भी खतरा स्पष्ट है क्योकि व्यवस्था मे कई एक आवश्यक तथ्यो को छिपाया जा सकता है जबकि सभी तथ्य जनता के सम्मुख रखे जाने चाहिए। यदि स्थानीय सत्ता अपने मतदाताओं के प्रति अधिक निश्चित रूप से उत्तरदायी रहे तो निश्चय ही स्थानीय कार्यों मे जनता की रुचि बढेगी। जिन कार्यों मे स्थानीय सत्ताए केवल कनिष्ठ व भागीदार बन गई है अथवा केन्द्रीय सरकार के एजेन्ट मात्र है वहा उनका दोहरा उत्तरदायित्व है एक सरकारी विभाग के प्रति दूसरा मतदाताओ के प्रति। जनता की अभि-रुचि का स्थानीय सरकार के कार्यो मे अत्यन्त महत्व है। यदि यह न हो तो प्रजातन्त्र जिन्दा न रहे। जब तक प्रत्येक नागरिक मे व्यक्तिगत एव सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना नही है तब तक प्रजातन्त्र का अस्तित्व नही रह सकता।*

---

*"Democracy cannot survive the withdrawal of the people's interest, it cannot exist unless, in every citizen, there is a sense of personal and social responsibility."

—Ibid, 133.

SELECTED READINGS

1. L. Golding—Local Government, English Universit'es Press Ltd. London, 1955.

2. Sir A. S. Mac Nalty—Local Government, Methuen & Co. Ltd., London, 26 Essex Street, Strand, W.C. 2, 1948.

3. J. H. Warren—The English Local Government System. George Allen and Unwin Ltd., Museum Street, London 4th Ed., 1955.

4. John J. Clarke—The Local Government of the United Kingdom, London, Sir Issac Pitman and Sons, Ltd, .5th Ed , 1955

5. R. M. Jackson—The Machinary of Government Macmillan & Co Ltd., 1958.

6. Harold J. Laski—A Grammar of Politics, George Allen and Unwin (1934), 4th Ed. (10th impression).

7. A. Lowrence Lowell—The Government of England, Macmillan, 2 vols., 1917.

8. Sir J.A R. Marriott—English Political Institutions, Oxford University Press, 4th Ed , 1938.

9. Arnold's Law Relating to Municipal Corporations, 7th Ed., F.C. Minshull, Butterworth 1935.

10. C. R. Attlee and W. A. Robson—The Town Councillor, Labor Publishing Co. Ltd , 1925.

11. C. Barrat—Your Local Authority, Pitman, 2nd Ed., 1949.

12. R. J. Beattie—Ultra Vires in its Relation to Local Authorities, Solicitors' Law Stationery Society. 1936.

13. Charles E. Scholefield and Richard Isdell Carpenter—Blackwell's The Law of Meetings, Butterworth, 1937.

14. J.J. Clarke—Outlines of Local Government of the United Kingdom, 7th Ed , Pitman, 1954.

15. J. J. Clarke—County Councils: Their Powers and Duties, Pitman, 1939.

16. A. Crew—The Law and Practice Relating to Meetings *of Local Authorities, Gree, 1934.*

17. A Dumsday—Local *Government Law and Legislation* Hadden, Best & Co., Published annually.

18. Dumsday's Statutes of Year—Annoted and Explained Parish Councils, Handbook by D. Neligan., Hadden, Best & Co., 1953.

19. Sir A. M. Trustram Eve—The Local Government Act, 1929, Knight, 1930.

20. Sir A. M. Trustram Eve—The Future of Local Government, Athlone Press of London University, 1951.

21. Herman Finer—English Local Government, 4th Ed., Methuen, *1956.*

22. R. A. Glen—*Local Government Act, 1929,* Byre and Spottiswoode, 1931.

23. Sir G. Laurence Gomme—Lectures on the Principles of English Local Government, *Constable O.P.*

24. J. A.G. *Griffiths & H. Streets*—Principles of Administrative Law, Pitman, 1953.

25. G.M. Harris—Local Government in many Lands, 2nd Ed , King, 1933.

26. G M. Harris—Municipal Self-Government in Britain, King and Staples, 1939.

27. C. E Schofield—Hart's Local Govt. Act, 1933, Butterworth, 1937.

28. W O. Hart—Hart's An Introduction to the law of Local Government and *Administration.,* Butterworth, 4th Ed., 1949.

29. E L Hasluck—Local Government in England, Cambridge University Press, 1936.

30. Sir Ernest Hiley—A Guide to Local Government Legislation since the great war, 1914–18. Eyre and Spottiswoode, Ltd., 1925.

31. L. Hill—The Local Government Officer, Allen & Unwin, 1938.

32. W. Ivor Jennings—The Law Relating to Local Authorities, Knight, 1934.

33. H.J. Laski, W.A. Robson, W.I. Jennings (Editors)—A century of Municipal Progress, 1835-1935 Allen & Unwin, 1935.

34. Local Government in England and Wales during the period of reconstruction, 1945, Cmd. 6579.

35. Professor William Anderson (Ed.)—Local Government in Europe, D. Appleton-century Co. 1930.

36. Local Government law and Legislation, Hadden, Best & Co. Ltd, Issued annually.

37 Lord MacMillan and others—Local Government Law and Administration in England and Wales, Butterworth, 14 vols.

38. J.P.R Maud—Local Government in Modern England, Thornton Butterworth, 1933.

39 R.C. Maxwell—Parish Councillor's Guide, Shaw, 5th Ed., 1935.

40. J B Morrell and A.G. Watson (Editors)—How York Governs itself, Allen & Unwin, 1928.

41. J. B. Morrel and A G. Watson (Editors)—Whitehall at work, Allen & Unwin, 1930.

42. W. Blake Odgers—Local Government and Macmillan, English Citizen Series, 1913.

43. Josef Redlich—Local Government in England, Macmillan, 2 vols, 1903.

44. W. A. Robson—Development of Local Government, 2nd Ed., Allen & Unwin, 1932.

45. Royal Commission on Local Government—

First Report (Cmd. 2506, 1925) H. Stationary office.
Second Report (Cmd. 3 13 1928)
Third Report (Cmd. 3436 1929)
Minutes of Evidence in Seven Parts, H.M. Stationary office

46. H. Samuels—The Local Government Act, 1929, Hadden Best & Co. Ltd., 1929

47. A. N. Schofield—Byelaws of Local Authorities, Butterworth, 1939.

48. A. N. C. Shelley—The Councillor, Nelson, 1939.

49. Sir E. D Simon—A city council from within, Longmans, 1926

50. H. E. Smith—English Local Government Law, Pitman, 1938.

51. F, H Spencer—Municipal origins, Constable, 1911.

52. A.R Taylour & J. Moss—Local Government Act, 1933, Hadden, Best and Co. Ltd., 1934.

53. J, H. Thomas—Town Government in the Sixteenth century, Allen & Unwin, 1933.

54. Sidney and Beatrice Webb—English Local Government from the Revolution to the Municipal corporations Act, Longmans.

Vol. 1.—The Parish and the county, 1906.
Vol. 2 & 3—The Mayor and the Borough, 1924, 2 vds.
Vol. 4—Statutory Authorities for Special Purposes, 1922.
Vol. 5—The Story of the king's Highway, 1920.
Vol 6. English Prisons under Local Govt.
Vol. 7.—English Poor Law History.
Vols. 8 & 9—English Poor Law History.

55. C. Winter—Post-Entry Training for Local Government, officers, Hodge, 1939.

56. C. Kent Wright—The A.B.C. of Local Government Evans Bros. Ltd., 1939.

57. Sir Robert & Henry Hobhouse—An outline of Local Govt & Finance in England and wales (Excluding London) Sweet and Maxwell, 1937, 8th Ed.

58. J. H. Warren, Municipal Trading, Labour Publishing Company Ltd., 1923.
59. R. B. Suthers—Mind your own Business, Allen & Unwin, 1929.
60. George Bernard Shaw—The common sense of Municipal Trading, Fifield, 1912.
61. W. A. Robson—The Public Utility Services, Allen and Unwin, 1935.
62. Leonard Darwin—Municipal ownership, Murray, 1908.
63. Herman Finer -Municipal Trading, Allen and Unwin 1941.